ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सूक्ष्म वित्त : भारत में महिला सशक्तिकरण का यंत्र

डॉ. (श्रीमती) स्नेहा तिवारी
सहा. प्राध्यापक, श्री गुरुनानक महिला महाविद्यालय जबलपुर

प्रस्तावना :– भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी, बेरोजगारी, आर्थिक–सामाजिक असमानता एक प्रमुख समस्या है। देश की आबादी का लगभग 50 प्रतिशत हिस्सा महिलाओं का है। विगत कुछ दशकों में महिलाओं की हिस्सेदारी में व्यापक वृद्धि हुई है। वर्तमान में महिलाओं ने सामजिक एवं आर्थिक विकास के परिप्रेक्ष्य में उन्नति की है, किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी महिलाएँ आर्थिक–सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी हुई दशा म हैं। इसी को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा महिला सशक्तिकरण हेतु अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। इसके अंतर्गत सूक्ष्म वित्त एक महत्वपूर्ण प्रयास है। वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व में सूक्ष्म वित्त व्यवस्था को एक सबल विकासात्मक आधार के रूप में माना जा रहा है।

सूक्ष्म वित्त से आशय :– सूक्ष्म वित्त से आशय बचत, साख व बीमा सेवाओं से है जिसके अंतर्गत् समाज के सामाजिक व आर्थिक लघु क्षेत्रों की बुराइयों को सम्मिलित नहीं किया जाता है, भारत के संदर्भ में छोटे व सीमांत कृषक, ग्रामीण महिलाएँ तथा आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ वर्ग सूक्ष्म वित्त के बहुत बड़े उपभोक्ता हैं, वर्तमान में सूक्ष्म वित्त से आशय लघु कोषों हेतु प्रावधान साख व अन्य वित्तीय सेवाएँ तथा गाँव में रहने वाले ग्रामीण, अर्द्ध ग्रामीण और पिछड़े हुए क्षेत्रों के लिए एक छोटी राशि को एकत्रित करना है, जोकि उनके आय स्तर व जीवन स्तर में वृद्धि करने हेतु आवश्यक हो। वर्तमान समय में महिला वर्ग का एक बहुत बड़ा भाग सूक्ष्म साख तथा इन सेवाओं का प्रयोग करने में लगा हुआ है।

सूक्ष्म वित्त की विशेषताएँ :– सूक्ष्म वित्त की कुछ विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं :–

1. सूक्ष्म वित्त निर्धन ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण का साधन है।
2. स्व–रोज़गार हेतु सूक्ष्म वित्त आवश्यक है क्योंकि विकासशील देशों में मजदूरी भुगतान के अवसर सीमित हैं और रोज़गार में भी वृद्धि नहीं हो पा रही है।
3. सूक्ष्म वित्त न केवल वित्त प्रदान करता है अपितु समाज में परिवर्तन भी लाता है, विशेषकर महिलाओं के लिए।
4. सूक्ष्म वित्त का लक्ष्य निर्धन वर्ग को अल्पकालीन वित्त प्रदान करना है।

सूक्ष्म वित्त की आवश्यकता :– सूक्ष्म वित्त का लक्ष्य ग्रामीणों को निम्न स्तर से उच्च स्तर पर लाना एवं उनके जीवन स्तर में सुधार लाना है। ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त करने हेतु वित्तीय स्त्रोतों को उन तक पहुँचाना जिससे कि वे आत्मनिर्भर बन सकें एवं स्वयं निर्णय ले सकें तथा अपने परिवार का भरण पोषण भलीभांति कर सकें।

भारत में सूक्ष्म वित्त की भूमिका :– भारत में बैंकिंग क्षेत्रों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात् (1969) एक बहुत बड़ा कोष गरीब तबके के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बनाया गया एवं राष्ट्रीयकरण के पश्चात् बैंकों ने विभिन्न उद्देश्यो को ध्यान में रखते हुए रणनीतियाँ बनायीं जिसमें वित्तीय संस्थाओं के विस्तार तथा पिछड़े हुए क्षेत्रों के विकास हेतु पिछड़े हुए क्षेत्रों में बैंक स्थापित करने हेतु रणनीतियाँ बनाई। इसी व्यूह रचना के परिणामस्वरूप आज बैंकिंग नेटवर्क का जाल संपूर्ण विश्व में बना हुआ है। सूक्ष्म साख के माध्यम से बहुत सारी रूग्ण व निर्धन इकाईयों की गरीबी हटाने हेतु प्रयास किया गया एवं बहुत सी लघु वित्तीय सेवाओं को राज्य व केंद्र की सहायता से लागू किया गया जिसमें साख सुविधाओं तथा गरीबों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न कार्यक्रम बनाए गए जिसमें विकास के उद्देश्यों को प्राप्त किया गया तथा गरीब तबके के लोग विशेष कर महिलाओं तक ये साख सुविधाएँ प्रदान की गईं। इसी क्रम में बैकिंग सेक्टर ने ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना तथा उत्तोलकों के आधार पर निर्धन वर्गों को बेहतर सेवाएँ प्रदान करने हेतु प्रयास किया। इसी श्रेणी में नाबार्ड की स्थापना

एक सराहनीय प्रयास था जिसके द्वारा ग्रामीण तबके के लोगों को साख की सुविधाएँ, तकनीकी सुविधाएँ तथा तरलता की सुविधाएँ प्रदान करने के लिए विभिन्न संस्थाएँ तथा अन्य विकासात्मक संस्थाओं की स्थापना की गई।

1980 के दशक में आई.आर.डी.ए. (एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम) की स्थापना की गई जो कि निर्धन वर्गों को साख तथा अनुदान प्रदान करती थो। इसका मुख्य उद्देश्य गरीबों को गरीबी रेखा से ऊपर लाना था। इसी दौरान नाबार्ड ने अनेकों अनुसंधान कार्यक्रम डल्त्व। की सहायता से प्रारंभ किये तथा गैर सरकारी संगठन जोकि उत्तरी भारत में स्थित थे, में अनगिनत बैंकिंग क्षेत्रों की नीतियाँ, कार्यप्रणाली, प्रविधियाँ, जमा और ऋण की दशाओं को दर्शाते हैं जिसमें गरीबों की आवश्यकताओं की पूर्ति की गयी थी।

यह अध्ययन इस बात को भी दर्शाता है कि वास्तव में निर्धन वर्ग की क्या आवश्यकताएँ हैं तथा उन्हें किस प्रकार की सेवाएँ व उत्पाद दिए जाने चाहिए न कि निम्न अनुदान। इनका अध्ययन करने के पश्चात् इस बात की आवश्यकता महसूस हुई कि इसकी नीतियाँ, कार्यप्रणालियाँ, प्रविधियाँ तथा बचत और ऋण संबंधी दशाओं में परिवर्तन की आवश्यकता थी ताकि ये और बेहतर सेवाएँ दे सकें तथा निर्धन वर्ग की आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति कर सकें, विशेषकर घर में रहने वाली महिला सदस्यों के लिए, साथ ही इस बात पर भी बल दिया गया कि सूक्ष्म साख प्रदान करने में निर्धन वर्ग को बेहतर सुविधाएँ प्रदान की जायें।

विगत 25 वर्षों में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों द्वारा विविध सूक्ष्म वित्त कार्यक्रमों का आयोजन किया गया, परंत् इसमें से कुछ कार्यक्रम सफल एवं कुछ असफल हुए इसीलिए इनके द्वारा बेहतर कार्यक्रम बनाने का अनुभव किया गया। यह कार्यक्रम प्रारम्भ से ही क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की सामाजिक आवश्यकताओं को देखते हुए वर्ष 1999 में एम.पी.आई. द्वारा बनाए गए। इसका प्रमुख उद्देश्य विभिन्न कार्यक्रमों को एकत्रित करने के लिए तथा पुनः संगठित और उद्घाटित करने हेतु था, इसके अतिरिक्त बहुत सारे नए कार्यक्रम भी बनाए गए जिसे हम स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के नाम से जानते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य निर्धन ग्रामीण वर्ग को बैंकिंग सेक्टर के माध्यम से अनुदान द्वारा साख प्रदान करना था जिससे कि स्व–रोज़गार एवं स्व–सहायता समूहों का निर्माण वृहत स्तर पर किया जा सके।

भारत में सूक्ष्म वित्तीय संस्थान की लोकप्रियता का प्रमुख कारण निर्धन वर्ग को वित्तीय सहायता प्रदान करने के कारण हुआ। इसके अंतर्गत् विभिन्न स्व–सहायता समूहों तथा ग्रामीण क्षेत्रों को शामिल किया गया जिसने कि ग्रामीण क्षेत्रीय संगठन में सराहनीय भूमिका निभाई जिसका जीवंत उदाहरण है, निगमीय विकास आधार। इसके अंतर्गत् विभिन्न योजनाएँ जोकि ग्रामीण व्यवसाय प्रारम्भ करने हेतु वित्तीय सुविधाएँ प्रदान करतीं थीं, उनमें प्रमुख थे ग्रामीण बैंक, निजी क्षेत्र, गैर सरकारी संगठन। निर्धनता दूर करने के सफल यंत्र के रूप में वर्तमान में सूक्ष्म वित्तीय संगठन ने संपूर्ण विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। इस योजना ने वार्षिक बजट में यह भी दर्शाया कि वह बाह्य वाणिज्यिक ऋणों को देने में भी सक्षम है, साथ ही साथ विभिन्न क्षेत्रों में निगमन भी कर सकती है। इसी के परिणामस्वरूप राष्ट्रीयकरण की व्यूह रचना में विभिन्न परिणाम सामने आए, जिसमें कुछ सफल तथा कुछ असफल हुए। वर्तमान में स्व–सहायता समूह एवं सूक्ष्म वित्तीय संस्थान दो बहुत बड़े वित्त प्रदाता हैं।

महिला सशक्तिकरण सूक्ष्म वित्त का योगदान :– निर्धनता कार्यक्षमता में कमी करती है। अमर्त्य सेन के अनुसार ''इन दोनों में अंतर करना महत्वपूर्ण है कि निर्धनता कार्यक्षमता में कमी करती है, साथ ही आय में भी कमी करती है, दोनों बातें समान नहीं हैं पर संबंधित हैं क्योकि आय कार्यक्षमता को समझने का महत्वपूर्ण आधार है।''

अमर्त्य सेन ने कहा है कि ''शिक्षा और स्वास्थ्य आय उपार्जन शक्ति को बढ़ाते हैं। साथ ही साथ यह किसी एक साधन को प्रयोग करने पर उनमें कमी लाते हैं।'' इस प्रकार निर्धनता एक खतरनाक चक्र को जन्म देती है जिससे स्वयं के विकास में बाधाएँ उत्पन्न होने लगती हैं तथा निर्धनता आगे बढ़ने से रोकती है। इस प्रकार आर्थिक विकास इस कमी को दूर करता है, वही कार्यक्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है। इस

प्रकार विकास के विभिन्न आयाम हैं जिसमें सबसे प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय विकास की ओर ध्यान देना है जिससे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक विकास हो सके। विकास का प्रमुख कार्य छुपे हुए ज्ञान का विकास करना है। इस प्रकार विकास सुधार, आधुनिकीकरण, विस्तार का ही एक रूप है। यह ऐसी प्रक्रिया है जिससे हमारी कार्यक्षमता निकलकर बाहर आती है। साथ ही जनसंख्या में निर्धनता की दर कम होने लगती है। अतः सूक्ष्म वित्त, सूक्ष्म साख, सूक्ष्म विनियोग या ऋण एक समानार्थी शब्दों के रूप में प्रयोग होते हैं।

पूर्व में ग्रामीण, बैंकों के माध्यम से होने वाली वाणिज्यिक गतिविधियों से स्वयं को अलग समझते थे साथ ही साथ उनकी जमाओं पर कोई भी प्रतिफल नहीं दिया जाता था और न ही उनके पास विकास के अवसर थे और न ही वे अच्छे बैंकर के रूप में कार्य कर सकते थे।

वर्ष 1976 में सूक्ष्म वित्त की एक लोकप्रिय कहानी के जनक के रूप में दक्षिण एशिया के प्रो. मोहम्मद युनूस को जाना जाता है, जिन्होंने इस चुनौती को स्वीकार किया और उसे सिद्ध करके दिखाया कि ग्रामीणों की बचत का उपयोग एक अच्छे बैंकर के रूप में किया जा सकता है। यह उन्हीं का संघर्ष, अनुभव और कठोर परिश्रम था जिससे कि बैंकिंग संस्थाओं में निर्धनों ने अपनी बचतों का बेहतर उपयोग किया और उन्हें बड़े पैमाने पर विनियोजित किया।

प्रो. मोहम्मद युनूस चितागोंग यूनिवर्सिटी, बांग्लादेश में अर्थशास्त्र विभाग के प्रमुख थे तथा गरीबी निवारण हेतु 1974 में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने अपनी एक गाँव की यात्रा के दौरान पाया कि निर्धनता की एक सबसे बड़ी समस्या साख की सुविधाओं का न होना है जिसकी पूर्ति वे ऊँची दरों पर स्थानीय पूँजीपतियों से ऋण लेकर करते हैं। इस वजह से उन्होंने महिलाओं के एक समूह को 27 डॉलर अपनी जेब से दिए। प्रो. मोहम्मद युनूस ने यह भी सोचा कि निर्धन इस ऋण का भुगतान कैसे करें। क्या उनके पास कोई अन्य अवसर है। प्रो. मोहम्मद युनूस सूक्ष्म वित्त के प्रयोग में प्रसिद्ध होने वाले पहले व्यक्ति नहीं थे, विशेषकर दक्षिण एशिया में उनके सराहनीय कार्य और ग्रामीण बैंकों के विकास के लिए उन्होंने नोबेल का शांति पुरस्कार जीता।

अतः ऐतिहासिक रूप से भारत में तीन बड़े प्रमुख अनौपचारिक वित्तीय संस्थान प्रदाता के रूप में महाजन, चिटफंड और साख सुविधाओं के संगठन (ROSCA) और मर्चेन्ट बैंकिंग हैं। इसके अंतर्गत् महाजन अपने व्यक्तिगत साधनों से ऋण प्रदान करते थे, किंतु इसे संगठित होने में 500 वर्षों से अधिक समय अर्थात् 1700 से 2200 ईसवी का समय लगा, इसी क्रम में चिटफंड भी एकीकृत औपचारिक रूप में संगठित होने लगे जिससे चिट एक्ट 1945 लागू किया गया, यह अन्य कानूनी प्रावधानों का पालन करता था, विशेषकर जो राज्य स्तर पर बैंकिंग संस्थाओं के मध्यस्थ के रूप में कार्य करते थे। इस प्रकार तीन संस्थाओं द्वारा भारत के इतिहास में साख के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई गई। इस क्रम में वित्तीय बाजार में मेयर और नागार्जुन ने अत्यंत जोखिम के साधनों को विभिन्न क्षेत्रों में बाँटा जिससे वित्त के क्षेत्र में सराहनीय वृद्धि हुई है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राष्ट्रीयकरण के साथ ही ग्रामीण बैंकों के विकास की ओर ध्यान दिया गया तथा हर एक शहरी शाखा की अन्य शाखाएँ ग्रामीण क्षेत्रों में बनाये जाने के लिए अनिवार्य किया गया। इस प्रकार इन बैंकों की शाखाओं में वर्ष 1973 से 1985 तक प्रतिवर्ष औसतन 15.2 प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि हुई, साथ ही साथ 32000 ग्रामीण शाखाएँ, 14000 सहकारी बैंक शाखाएँ, 98000 प्राथमिक कृषि साख समितियाँ, डाकघर आदि के रूप में जी. नागार्जुन द्वारा संपूर्ण एशिया में स्थापित की गई जिसमें से कुछ सफल एवं कुछ असफल सिद्ध हुई।

इसी के परिणामस्वरूप वाय.सी. नंदा परियोजना, नाबार्ड बैंक हमारे समक्ष है। इसी के साथ बहुत सी संस्थाएँ सूक्ष्म वित्त साख सेवाएँ प्रदान करने में लगी हुई हैं तथा भारत की निर्धन ग्रामीण जनता को वित्त प्रदान करने के साथ ही उनकी निर्धनता को दूर करने में तथा उनकी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए यह संस्थाएँ वृहद स्तर पर कार्य कर रही हैं।

अतः स्पष्ट है कि यदि स्वयं सहायता समूहों को सुचारू ढंग से चलाया जाए तो ये देश में निरक्षरता व बेरोज़गारी कम करने तथा गरीबी

उन्मूलन में कारगर सिद्ध हो सकते हैं। साथ ही गरीब ग्रामीण महिलाओं को अपनी योग्यता व कार्यदक्षता सुधारने का मौका मिलेगा, ऋण संस्थानों तक उनकी पहुँच बढ़ेगी, निवेश की प्रवृत्ति भी बढ़ेगी। इस तरह स्वयं सहायता समूह आर्थिक विकास व सामाजिक स्थिरता लाने मं सहायक हो सकते हैं। इसलिए स्वयं सहायता समूहों का यह आंदोलन पूरे भारत में फैलना चाहिए।

निष्कर्ष :– इस प्रकार हम कह सकते हैं कि ग्रामीण महिलाओं की ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने वाले साधन के तौर पर सूक्ष्म वित्त की अवधारणा नई नहीं है जिसकी पूर्ति औपचारिक एवं अनौपचारिक ऋण स्रोतों द्वारा ही की जाती रही है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडू, कर्नाटक और केरल जैसे दक्षिण के राज्यों में स्व–सहायता समूहों के विकास की तुलना में गैर–दक्षिणी राज्यों में सूक्ष्म वित्त की शुरुआत काफी देर से हुई है। हालांकि वर्ष 2000 के बाद से कई राज्यों में सूक्ष्म वित्त के दायरे का तीव्रता से विस्तार हुआ है। क्षेत्रीय सर्वेक्षणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 10वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक स्व सहायता समूह लगभग 60 प्रतिशत निर्धन परिवारों को अपने कार्यक्षेत्र में समेटे हुए हैं। इस प्रकार भारत क कई राज्यों में गरीबी उन्मूलन रणनीति निर्माण हेतु सूक्ष्म वित्त को सशक्त सहयोगी की भूमिका के रूप में देखा जा रहा है।

संदर्भ :–

1. चतुर्वेदी विनीता (2009); ''म.प्र. में महिला सशक्तिकरण में व्यष्टि वित्त व्यवस्था का अध्ययन (1990 से 2005 तक)'' वाणिज्य विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर.
2. पाठक एम.पी. (2012); ''स्व–सहायता समूह एवं महिला सशक्तिकरण'' उद्यमिता, फरवरी 2012
3. Rao Smt. Smita : Role And Impact Of Rural Banking In Micro Financing With Special Reference To KshetrayGrammen Banks In Mahakaushal Region' R.D.V.V. Jabalpur, 2013.
4. Shukla Dr. Narendra and Jain Ashu (2014); "Micro Finance : ATool for Empowerment of the poorest women." in Book Dr. Narendra Shukla and Sangya Shrivastava (eds) Title 'Women Empowerment : Challenges and Opportunities' Published by Sarup Bok Publishers, New Delhi, 2014
5. Singh Rajeev (2011); "Women Empowerment through Micro Finance : A Boon for Development", In Book Dr. Narendra Shukla and Dr. Mukesh Chansoria, titled "Women Entrepreneurship : Challenges and Opportunities", Published by Pointer Pulbishers Jaipur, 2011
6. थपलियाल डॉ. वीरेन्द्र (1997); ''समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं गरीबी निवारण (वर्तमान स्थिति एवं भविष्य की अपेक्षाएँ)'' ग्रामीण विकास समीक्षा, खण्ड–2, जुलाई–दिसम्बर, अंक–22, राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान हैदराबाद, 1997

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

युवा वर्ग में उद्यमिता विकास : वर्तमान युग की आवश्यकता

प्रीति साकेत
शोध–छात्रा, रा.दु.वि.वि. जबलपुर

उद्यमिता विकास एवं इसका महत्व :– भारत की जनसंख्या में दिन–प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। फलस्वरूप, खद्यान्न की समस्या और बढ़ती महंगाई के कारण बड़े परिवारों का सुचारू रूप से पालन पोषण करना घर के एक ही आय अर्जित करने वाले सदस्य हेतु असम्भव हो गया है। यदि ग्रामीण आंचल पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है कि कृषि सदृश्य एकमात्र जीविकोपार्जन वाले क्षेत्र में ग्रामीण युवाओं को सम्पूर्ण वर्ष रोजगार नहीं मिल पाता जिसके परिणामस्वरूप वे अर्द्धबेरोजगारी का शिकार हो जाते हैं। ग्राम के स्तर पर रोजगार की अनुपब्लधता के कारण ग्रामीण युवा प्रायः गांव छोड़ कर आस–पास के शहरों में रोजगार की तलाश में चले जाते हैं, जहाँ उन्हें अनेक कठिनाईयों का सामाना करना पड़ता है। बेरोजगारी की समस्या के निदान हेतु जितने प्रयास किये गये उतनी ही समस्या बढ़ती गई। बेरोजगारी में आज इस स्तर तक वृद्धि हो गई है कि युवा वर्ग ऐसी नौकरी करने हेतु विवश होते हैं जिसमें उनका शोषण एवं उनके साथ अन्याय होता है। फलतः उनमें कुंठायें घर कर जाती हैं। युवाओं की इस विवशता का लाभ असमाजिक तत्व उठाते हैं एवं वे ऐसे युवाओं को अपने चक्र में फंसा कर उन्हें भी अपराधी बना देते हैं। इस दल–दल में फंसने के बाद युवाओं के लिए इससे निकलना असंभव होता है एवं अपराध की नारकीय जीवन में रहने हेतु विवश रहते हैं और इसका परिणाम कभी भी अच्छा नहीं होता।

अनुपयुक्त शिक्षा पद्धति के कारण युवाओं में व्यवसायिक, प्रबंधकीय एवं तकनीकी ज्ञान की कमी होती है जोकि उद्यमों की विचारधारा के विकास में एक अवरोध है और इसीलिए बहुत से लोग स्वरोजगारी इकाइयों की स्थापना हेतु पहल नहीं करते। देश में स्वरोजगार की अल्प वृद्धि दर इसलिए भी है क्योंकि सरकार एवं औद्योगिक संगठन शोध विकास पर अधिक धन व्यय नहीं करते। भारत में, लोगों को उद्यमिता विकास हेतु प्रशिक्षित एवं प्रोत्साहित करने के लिए कोई उचित व्यवस्था नहीं है अतः स्वरोजगार के प्रचार–प्रसार हेतु उपयुक्त वातावरण निर्मित नहीं हो सका है।

भारतीय युवाओं की नौकरी करने की मानसिकता ने रोजगार की समस्या को और भयावह बना दिया है। सभी को नौकरी मिलना असंभव है। इन विषम परिस्थितियों का एक ही समाधान है जिससे समस्त समस्याओं का निदान हा सकता है, वह है उद्यमिता विकास। अतः आज यह अत्यंत आवश्यक है कि देश का युवा वर्ग एक सफल उद्यमी बनने का स्वप्न संजोए और रोजगार के लिए कहीं और न देखे बल्कि स्वयं अन्य युवाओं को रोजगार प्रदान करने वाले बनें। इसके लिए युवा वर्ग को तकनीकी क्षेत्र में स्वयं आगे आकर दक्षता प्राप्त करना आवश्यक है। उदाहरणार्थ तकनीकी क्षेत्र में फल एवं साग–सब्जी का परिरक्षण एवं प्रसंस्करण एक अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है और इसमें कृषि का अनुभव ग्रामीण युवाओं को अतिरिक्त सहायता प्रदान कर सकता है। ग्रामीण तथा शहरी युवा वर्ग इस क्षेत्र में प्रशिक्षण प्राप्त कर व्यवाहरिक ज्ञान प्राप्त करके स्वयं को रोजगार का साधन प्रदान कर सकते हैं।

उद्यमी एवं उद्यमिता विकास :– उद्यमिता विकास हेतु आवश्यक है कि युवा शक्ति स्वयं के अंर्तमन में उद्यमी व्यक्तित्व का विकास करे। उद्यमी अर्थात् एक क्रियाशील प्राणी, जिसके द्वारा विशेष कार्य, विशेषतः उद्यम से सम्बंधित कार्य को क्रियान्वित करने की पहल की जाती है। उद्यमी बनना और सफल होना एक व्यक्तिगत कौशल है जिसका कोई सम्बंध जाति, धर्म, समुदाय से नहीं है। उद्यमी बनने में स्वयं व्यक्ति की की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। वे युवा जो बड़ी ऊँची उपलब्धियाँ प्राप्त करना चाहते हैं, वे उद्यमी बनने का मार्ग स्वयं ही खोज लेते हैं।

वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति को उद्यमी में परिवर्तित होने हेतु प्रेरणा की आवश्यकता होती है और उसे यह प्रेरणा बाल्यकाल से अथवा विशेष प्रशिक्षण द्वारा दी जा सकती है। सामाजिक एवं आर्थिक कारक व्यक्ति की उद्यमिता की भावना को वृहद स्तर पर प्रभावित करते हैं। यदि युवाओं का भाग्य परिवर्तित करना है, तो उनमें उद्यमिता की भावना को विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। इस हेतु नियोजित ढंग से प्रभावी कदम उठाए जाने आवश्यक हैं। उद्यमिता की भावना के विकास हेतु ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में युवाओं को संगठित करके उनके मध्य व्यक्तिगत रूप से जाकर उद्यमिता के सम्बंध में चर्चा किया जाना अत्यंत आवश्यक है। उद्यमिता के महत्व एवं आवश्यकता से उन्हें परिचित कराना ही होगा। अभिभावकों को चाहिए कि वे अपने बच्चों में बाल्यकाल से ही उद्यमी बनने की महत्वाकांक्षा जागृत करें। इसके लिए अभिभावकों को भी स्वयं की सोच परिवर्तित करना आवश्यक है। अभिभावकों द्वारा यह समझा जाना अत्यंत आवश्यक है कि आज के परिवर्तित परिवेश में अपनी संतान के लिए नौकरी नहीं वरन् सफल उद्यमी बनने का स्वप्न देखें।

उद्यमिता विकास के लिए यह भो अत्यंत आवश्यक है कि देश में युवाओं तक उद्यमों से संबंधित नवीन ज्ञान, नई सूचनाऐं एवं आवश्यक जानकारियाँ पहुँचाई जायें ताकि वे आय एवं रोजगार परक तथ्यों की विवेचना कर सकें। उद्यमिता विकास के लिए युवाओं में उद्यमी बनने के गुणों को विकसित करना होगा उद्यमिता विकास हेतु कुछ आवश्यक गुण इस प्रकार हैं –

- उपलब्धियों हेतु महत्वाकांक्षा
- जोखिम उठाने की प्रवृति
- सकारात्मक दृष्टिकोण
- पहल करने की प्रवृत्ति
- भविष्य के प्रति आशावादिता
- समस्याओं का सदा समाधान करने की प्रवृति
- वातावरण को परिभाषित व विश्लेषित करने की इच्छा
- लक्ष्य निर्धारण की अभिलाषा
- सदैव प्रयासरत रहने का भाव
- सूचना संग्रहण एवं संकलन की इच्छा
- अवसरों को देखकर उन पर परिश्रम करने का भाव
- आदर एवं अनुनय करने का भाव
- कार्यों एवं प्रतिफल के उत्तरदायित्व स्वयं पर लेने का भाव
- सतत् स्वयं के अनुभवों से सीखने की तत्परता
- बात निश्चयात्मक ढंग से व्यक्त करने का गुण
- कार्यों का सतत् एवं सदैव अनुश्रवण करते रहना आदि।

वर्तमान काल में उद्यमिता विकास का महत्व :– आज के युग में उद्यमिता विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है एवं यह वर्तमान काल की एक आवश्यकता है। उद्यमिता विकास के महत्व का मूल्यांकन निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है –

- मानव संसाधन का सशक्तिकरण
- सामाजिक प्रतिष्ठा
- गरीबी में कमी
- रोजगार की उपलब्धता
- बेरोजगारी की समस्या में कमी
- राष्ट्रीय उत्पादकता में वृद्धि
- युवा वर्ग के असंतोष में कमी
- अपराधिक वृत्तियों में कमी
- प्रेरणा का स्त्रोत
- आय में वृद्धि
- जीवन स्तर में सुधार
- पारिवारिक कलह में कमी
- भावी पीढ़ी का उचित विकास
- महिलाओं की सिथति में सुधार

इस प्रकार स्पष्ट है कि आज के युग में उद्यमिता विकास अत्यंत महत्वपूर्ण विचारधारा है अतः देश के युवा वर्ग को व्यर्थ रोजगार हेतु इधर–उधर भटकने की अपेक्षा अपना जीवन सुखमय करने के लिए, साथ ही राष्ट्रीय विकास हेतु उद्यमिता विकास की ओर उन्मुख होना चाहिए, अतः उन्हें व्यवसायिक शिक्षा कों अपनाते हुए एक सफल उद्यमी के रूप में विकास कर अपनी आय में वृद्धि करनी चाहिए।

संदर्भ :–

- एस.पी. माथुर, भारत में उद्यमिता विकास, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुंबई, 2007
- उद्यमिता पत्रिका, सेडमेप, भोपाल
- Raj Gopal, Agriculture - Business & Entrepreneurship, Anmol Publishers New Delhi, 2003
- A. Ghosh, Capital Formation & Entrepreneurship in Indian Agriculture, Concept Publishers New Delhi, 2005

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

विभिन्न कालों में महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति : एक ऐतिहासिक अध्ययन

रूपा साकेत
शोध–छात्रा, रा.दु.वि.वि. जबलपुर

भारत में महिलाएँ पूर्व से ही सशक्त व सम्माननीय रही हैं, परन्तु मध्यकाल एवं ब्रिटिशकाल में महिलाओं की स्थिति कमजोर हो गयी थी। स्वतंत्रता के पश्चात् पुनः महिलाओं को देश में समानता का स्थान प्रदान किया गया। साथ ही उन्हें समाज में सशक्त व सम्माननीय स्थान प्रदान देने के लिए अनेक प्रयास किये गये। आज महिलाएँ किसी भी क्षेत्र में पुरूषों से पीछे नहीं हैं। वे कन्धे से कन्धा मिलाकर भारत के नवनिर्माण और प्रगति में सहयोग कर रही हैं। अतः महिला सशक्तिकरण के इस दौर में भारत की स्थिति में सुधार आया है, जिससे देश के स्वाभिमान व सम्मान में अभिवृद्धि हो रही है।

महिला समाज की प्रमुख इकाई है। महिला की समाज व्यवस्था की स्थापना में प्रारंभ से ही समान भागीदारी रही है। समाज में महिलाओं की स्थिति निरन्तर परिवर्तित होती रही हैं प्राचीन भारतीय संस्कृति का अध्ययन बताता हे कि भारत में महिलाएँ सदैव श्रद्धा एवं आदर का पात्र रही है। इसी आधार पर उसे देवी के रूप में चित्रित किया गया है और उसके प्रति आस्थावान और श्रद्धावान दोनों आवश्यक है। महिलाएँ समाज में शक्ति का केन्द्र रही है, महिलाओं के अभाव में समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अतः भारत में विभिन्न कालों के दौरान महिलाओं की स्थिति का अध्ययन निम्नानुसार संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है –

वैदिक काल :– वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी थी। इस काल में स्त्री की पुरूषों के समान स्वतंत्रता प्राप्त थी। साथ ही विद्याध्ययन, विवाह के अधिकारों के साथ–साथ सम्पत्ति रखने एवं धार्मिक कार्य करने का अधिकार दिया गया था। इस काल में स्त्रियों को पुरुषों के समान सामाजिक व धार्मिक अधिकार प्राप्त थे। इस समय लड़कियों का उपनयन संस्कार होता था और ये भी ब्रह्मचर्य आश्रम में लड़कों के समान ही शिक्षा प्राप्त करतीं थीं। इस समय स्त्री–पुरुष सहशिक्षा को बुरा नहीं माना जाता था। इस काल में लड़कियों का विवाह साधारणतः युवावस्था में ही होता था, बाल विवाह का प्रचलन नहीं था, लड़कियों को अपने जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता थी, विधवा अपनी इच्छानुसार पुनर्विवाह कर सकती थी। सती प्रथा नहीं थी, धार्मिक अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिये पत्नी का होना आवश्यक था। लेकिन महिलाओं की यह अच्छी स्थिति अधिक समय तक नहीं रह सकी।

उत्तर वैदिक काल :– उत्तर वैदिक काल में बाल विवाह का नियत होने से स्त्रियों की शिक्षा में बाधा पहुँची और उनकी शिक्षा साधारण स्तर पर आ गई। अनेक स्त्रियाँ धर्म प्रचार के कार्य में लगी हुई थीं। इन धर्मों के पतन के साथ ही स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आने लगी, मनुस्मृति में सर्वप्रथम स्त्रियों की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाया गया। उन्हें वेदों को पढ़ने व यज्ञ करने से रोक दिया गया। विधवा पुनर्विवाह पर प्रतिबंध लगा दिया गया। उपनयन संस्कार की व्यवस्था भी समाप्त कर दो गई। शिक्षित न होने के कारण वेदों का ज्ञान असंभव हो गया। वे धार्मिक संस्कार में भाग नहीं ले सकती थी। उनका प्रमुख कर्तव्य पति का आज्ञापालन करना हो गया। विधवा पुर्नविवाह निषेध था, बहुपत्नी प्रथा का प्रचलन बढ़ गया था। इस सबका कारण महिलाओं का अशिक्षित होना था।

स्मृति काल :– उत्तर वैदिककाल के पश्चात स्मृतिकाल में स्त्रियों की दशा अत्यंत कमजोर हो गयी थी, क्योंकि विवाह बहुत कम अवस्था में कर दिये जाते थे। बचपन से वृद्धावस्था तक वह स्वतंत्र नहीं रहती थी। महिलाओं के समस्त अधिकार छीन लिए गये थे। सतीप्रथा का प्रारंभ इसी युग में हुआ था। इस काल में स्त्रियों की स्थिति को गिराने में शास्त्रकारों ने भी प्रमुख भूमिका निभायी। मनु द्वारा स्वयं कहा गया कि स्त्रियाँ कभी भी स्वतंत्र रहने के योग्य नहीं हैं।

बाल्यावस्था में उन्हें पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में रहना चाहिए।

मध्य काल :– मध्यकालीन अर्थात् मुगल युग में महिलाओं की दक्षा अत्यधिक दयनीय हो गयी, क्योंकि उनकी शिक्षा पर प्रतिबंध, पर्दाप्रथा को बढ़ावा बाल विवाह पर जोर दिया गया। अतः महिलाएँ पुरूषों की दासी बनकर रह गयीं। इस काल में हिन्दू धर्म एव संस्कृति की रक्षा के नाम पर स्त्रियों पर अनेक प्रतिबंध लगाए गए, उन्हें अधिकारों से वंचित कर दिया गया और उन पर कई नियंत्रण लागू किए गए। इस समय तक स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं रहा। इस काल में बाल विवाह एवं सती प्रथा को बढ़ावा मिला। इस काल म धर्म के नाम पर स्त्रियों का सर्वाधिक शोषण हुआ।

ब्रिटिश काल :– ब्रिटिश काल में सतीप्रथा को गैर–कानूनी घोषित एवं प्रतिबंधित किया, पति की सम्पत्ति और वोट देने का अधिकार प्रदान किया। इससे भी महिलाओं की स्थिति में कोई सुधार नहीं आया। सामाजिक क्षेत्र में स्त्रियों को कोई अधिकार प्राप्त न होने के साथ–साथ उन्हें शिक्षा प्राप्त करने का भी अधिकार नहीं था। बाल विवाह, सती प्रथा जैसी कुरीतियों ने स्त्री शिक्षा में विशेष बाधा पहुँचाई। स्त्रियों के सम्बंधों का क्षेत्र पिता एवं पति के परिवार तक ही सीमित था। इस काल में स्त्री धन के अतिरिक्त इन्हें और कोई संपत्ति अधिकार प्राप्त नहीं था। स्त्री के द्वारा किसी प्रकार का आर्थिक कार्य करना अनुचित था और अनैतिक समझा जाता था। हिन्दू समाज में पुत्री के अधिकार को कानून के द्वारा समाप्त कर दिया गया। इस काल में स्त्रियों को पुरुषों की दया पर निर्भर रहना पड़ा।

19वीं शताब्दी के समाज सुधार आंदोलन एवं नारी :– 19वीं शताब्दी के आरम्भ से ही भारतीय समाज में वैचारिक परिवर्तन प्रारम्भ हो चुके थे। समाज सुधारकों ने इस प्रकार की स्थिति को अनुचित और अन्यायपूर्ण माना, इसका विरोध किया।

सती प्रथा कानून द्वारा 1829 में बंद कर दी गई। राजा राम मोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना कर सती प्रथा का अंत किया। आर्य समाज की स्थापना स्वामी दयानंद सरस्वती ने की। पर्दा प्रथा, बाल विवाह को समाप्त करने और स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया, लड़कियों के विवाह की आयु 14 वर्ष, अंर्तजातीय विवाह एवं विधवा विवाह को कानूनी मान्यता दी गई। श्री मलाबारी के प्रयत्नों से 12 वर्ष से कम आयु की लड़की के विवाह पर कानूनी प्रतिबंध लगा दिया गया।

स्त्रियों की स्थिति को उन्नत करने की दृष्टि से अनेक समाज सुधारकों द्वारा प्रयास किए गए। 11वीं शताब्दी के अंतिम वर्ष में स्वामी विवेकानंद ने स्त्रियों की स्थिति उन्नत करने के लिए लोगों को विशेष प्रेरणा दी। महात्मा गाँधी जी ने अपने राजनैतिक आंदोलनों में स्त्रियों को सम्मिलित होने के लिए प्रेरित किया। 19वीं शताब्दी मे किए गए विभिन्न प्रयत्नों के परिणामस्वरूप स्त्रियों में नव जागरण होने लगा व सशक्त स्त्री आंदोलन का सूत्रपात हुआ।

वर्तमान काल :– स्वतत्रंता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं की स्थिति में व्यापक सुधार हुआ है, क्योंकि स्वतंत्र भारत में महिला की स्थिति में बदलाव के लिये भारतोय समाज के परम्परागत मूल्य, विश्वास और आदर्श प्रतिमानों को कानून द्वारा परिवर्तित कर संस्थात्मक ढाँचे को सुदृढ़ करने के प्रयास प्रारंभ किये गये हैं। स्त्री–पुरूष को समानता प्रदान करते हुए "समान कार्य के लिए समान वेतन" स्त्रियों को शिक्षा और व्यवसाय में स्वतंत्रता प्रदान करने के साथ ही साथ हिन्दू विवाह अधिनियम 1956, हिन्दू अधिकार अधिनियम के माध्यम से सरकार ने भारतीय समाज के संस्थागत ढाँचे के मूल्य, विश्वास और आदर्शात्मक प्रतिमानों के परम्परागत एवं रूढ़िवादी तत्वों को अलग कर गुणात्मक सुधार के प्रयासों के फलस्वरूप ही महिलाओं को तलाक, विधवा, पुर्नविवाह, पारिवारिक सम्पत्ति में लड़कियों को भी लड़कों के बराबर का अधिकार एवं दहेज को कानूनन अपराध माना गया। लड़कियों के सर्वांगीण विकास बालिकाओं को शिक्षा की सुविधाएँ प्रदान की गयी है। वर्तमान में समाज के परम्परागत मूल्य, विश्वास और आदशर्त्मिक प्रतिमानों में प्रारंभ हुए बदलाव के परिणामस्वरूप समाज के सभी क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है।

नगरीय समाज में काम–काजी महिलाओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। परिवारिक निर्णयों में महिलाओं की भूमिका दखने को मिल रही है। महिलाएँ जीवन साथी चयन में भी मत व्यक्त करने लगी है। परिवार नियोजन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ने के साथ ही साथ समाज द्वारा कन्या जन्म को शुभ मानने के संकेत मिल रहे हैं। महिलाओं द्वारा पारिवारिक मामलों में परामर्श देने को मर्यादा का उल्लंघन नहीं माना जाता है। महिलाएँ सास–ससुर और परिवार की दासता से स्वतंत्र होने लगी है।

महिलाओं की स्थिति में हुए परिवर्तन का ही परिणाम हे कि आज की नारी संगठित हो पुरूषों के शोषण अमानवीय व्यवहार बलात्कार, छेड़खानी का विरोध कर अपने अधिकारों के प्रति संवेदनशील हो पुरूषों के बराबर अधिकार का उपभोग कर रही है। शहरों में ही नहीं बल्कि गांवों में भी महिलाओं द्वारा पति को परमेश्वर मानने की परम्परागत धारणा में बदलाव प्रारंभ आ गया है। पति को सहयोगी के रूप में देखा जा रहा है। महिला दासी नहीं सहचरी मानी जा रही है। महिलाएँ प्रेम विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा पुर्नविवाह के पक्ष में अपनी राय और विश्वास व्यक्त करने लगी हैं। महिलाओं को पुरूषा के समान ही व्यक्तित्व विकास के अवसर प्राप्त हो रहे हैं। समाज द्वारा पुरूषों के लिए निर्धारित कर्मकाण्ड महिलाएँ भी करने लगी हैं। इस तरह महिलाओं की स्थिति में हो रहे कर्मकाण्डीय, मूल्य विश्वासों में परिवर्तन विकसित होने के परिणामस्वरूप जहाँ महिला शक्ति सशक्त और आत्मनिर्भर हो रही है। वहीं भारतीय समाज परम्परा और रूढ़ियों क जाल से मुक्त हो एक आधुनिक और विकसित समाज की ओर अग्रसर हो रहा है।

संदर्भ :–

- डॉ. रीता सक्सेना, महिला अधिकार एवं कानून
- प्रो. मधुसूदन त्रिपाठी, महिला विकास एक मूल्यांकन
- नदीम हसनैन समकालीन भारतीय समाज
- राधा कुमार, स्त्री संघर्ष का इतिहास
- भारत में शैक्षिक नीतियों एवं कार्यक्रमों में महिला सशक्तिकरण – लेख–दयाशंकर सिंह यादव – मासिक पत्रिका योजना, नई दिल्ली–2016

नर्मदापुरम् संभाग में अनुसूचित जातियों की जातिगत विशेषताएँ

अशोक कुमार अहिरवार
शोधार्थी, भूगोल, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

शोध पत्र सारांश :– मध्यप्रदेश के 9 वें नर्मदापुरम् संभाग का भारत का 0.61%तथा मध्यप्रदेश का 6. 51% भू–भाग है जबकि जनसंख्यात्मक रूप से क्रमशः 0.29% व 0.90%भाग है। सामान्य जनसंख्या में संभाग भारत की 0.038% तथा मध्यप्रदेश की 0.635% जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है वही अनुसूचित जातियों की जनसंख्या में संभाग भारत की 2.37% तथा मध्यप्रदेश की 4. 31% जनसंख्या है। भारत में अनुसूचित जातियों उत्तरप्रदेश में 3.56 करोड़ सर्वाधिक, म.प्र. 1.13 करोड़ व संभाग में 4.43 लाख लोग है। जातिगत आधार पर भारत में 546, म.प्र. में48 तथा संभाग में 29 प्रकार की अनुसूचित जातियां पाई जाती है। भारत एवं म.प्र. में सर्वाधिक चर्मकार जाति है तथा नर्मदापुरम संभाग में महार जाति 32%सर्वाधिक रुप से एवं न्यूनतम रुप से चिकवा जाति 0.05: निवासरत है।

सूचक शब्द :– नर्मदापुरम् संभाग, महार, चर्मकार, चिकवा, अनुसूचित जाति, जातिगत प्रकार आदि।

प्रस्तावना **(Introduction:–** विश्व के 2.5% भू–भाग में 16.17% जनसंख्या भारत में निवासरत हैं। जनसंख्या अधिकता के कारण यहां जातियों का विभक्तिकरण भी अत्याधिक है। फ्रांस के भूगोलवेत्ता प्रो.ब्लांश, (1956) ने अध्ययन कर बताया कि विश्व में कई जाति एवं प्रजातिय समूह विभिन्न भौगोलिक दशाओं में जीवन यापन, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, रहन–सहन, खद्यान, वस्तु, आवास, तकनीक, धर्म, भाषा एवं साहित्य आदि का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अपनी क्षमता के अनुसार उपयोग करता है। भारत में जातियों पर सर्वप्रथम चर्चा सर हार्बट रिजले, (1915) ने अपनी पुस्तक भारत के लोग **(People of India)** मे की है, इनके अनुसार अनुसूचित जाति आर्यो की देन है, जो फारस देश में भारत आये व द्रविड़ो को पराजित करने के उपरान्त इनमें विजेता के भाव उत्पन्न हो गये फारस का समाज 4 वर्गो में विभक्त था उन्होने अपने को श्रेष्ठ मानते हुयें भारत में अपनी वर्ग व्यवस्था को प्रचलित कर दिया। प्रचलित कर दिया। डॉ. हेडन, (1952) व डॉ. घूरिये (1961) ने स्वीकार किया कि आर्यों ने मूल निवासियों को पराजित कर दास कहते हुए सम्बोधित किया। यही 'दास' वर्तमान में अनुसूचित जाति के लोग है। जिसे साइमन कमीशन, (1935) के 13 प्रकार जनगणना, 1921, 1931 का आधार संविधान की 5वीं अनूसूची (भाग 'क' राज्य) आदेश, 1950 तथा संशोधित आदेश अनुसूचित क्षेत्रों (बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश) के राज्य प्रमुखों से परामर्श कर राष्ट्रपति जी द्वारा विशेष उपबंधों के अन्तर्गत 'अनुसूचित जाति' में वर्गीकृत कर दिया गया है।

अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक वितरण **(Geographical Distribution of Study Area)** :– मध्य प्रदेश के दक्षिणी उपांत पर स्थित नर्मदापुरम् संभागकाभौगोलिक क्षेत्रफल 20080 km^{2}है जो भारत का 0.61: तथा मध्यप्रदेश का 6.51% भाग है। संभाग का अक्षीय विस्तार 21^{0}5'–22^{0}50' (उत्तर) तथा देशान्तरीय विस्तार 76^{0}55'–78^{0}35' (पूर्व) है। संभाग की लम्बाई 190 Km (उ.से.द.) तथा चौड़ाई 206 Km (पू.से प.) में फैला हुआ है। भौतिक स्थिति में 5 प्रकार (सतपुड़ा पर्वत श्रृंखला, बैतूल का पठार, ताप्ती घाटी, नर्मदा घाटी एवं तवा घाटी) तथा भूगर्भिय स्थिति 6 प्रकार (आर्कियन, विजाबर, पर्मियन, क्रिटेसस, अभिनूतन एवं अभिनव) है। प्रवाह प्रणाली में 7 प्रमुख नदी (नर्मदा, ताप्ती, तवा, देनवा, दुधी, गंजाल एवं वर्धा) तथा 6 प्रमुख मिट्टी (काली, मोरंड, मुतबर्रा, वर्दी, सितर तथा सिहर) आदि पाई जाती है। संभाग की जलवायु दक्षिण–पश्चिम मानसून को छोड़कर ऊष्णकटिबंधीय है वर्षा 1302 mm, तापमान 38.49°C औसतन समुद्रतल (1330 HM–282 lm) है। संभाग में 5 प्रकार के वन (अर्ध पर्णपाती, शुष्क पर्णपाती, मिश्रित, सलाई एवं बांस) है। संभाग रवी फसलीय क्षेत्र है। जिसे

स्थानीय भाषा में 'उन्हारी' के नाम से जानते है मुख्य फसल गेंहू के अतिरिक्त ज्वार, चना, धान, तिल, सोयावीन आदि है। संभाग के 34.88% (7024 Km^2) भाग में वन, 43.96% (8808Km^2) में कृषि क्षेत्र तथा शेष 21.16% (4248 Km^2) भाग में मानव बस्तियाँ पाई जाती है इन्हीं मानव बस्तियों में 'अनुसूचित जाति' के लोग भी रहते हैं।

शोध प्रविधि :– इस शोध–पत्र में मुख्यतः जनगणना, 2011 के आंकडों का प्रयोग किया गया है। भौगोलिक वितरण तथा अनुसूचित जातियों के लिए संबंधित जिलों के गजेटियरों, जिला सांख्यिकीय पुस्तिकाओं, आर्थिक–सामाजिक संकेताक तथा मध्यप्रदेश के प्रलेखों को संम्मिलित किया गया है यह शोध–पत्र द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है।

भारत में अनुसूचित जातियों की जातिगत स्थिति –अनूसूचित जाति एवं विजातीय समूह है एवं सामाजिक एवं आर्थिक प्रतिष्ठा लगभग एक जैसी है जिसमें अधिकांश आर्थिक रुप से विपन्न है। वास्तव में अनुसूचित जाति भौगोलिक न हो कर सामाजिक व्यवस्था है। भारत के अनुसूचित जातियों की सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था संक्रमणकालीन स्थिति में है।

सन् 1935 में अनुसूचित जातियों की जातिगत संख्या 277 थी जो जनगणना 2001 में 542 एवं 2011 में 547 प्रकार की पाई गई है इसके उपरान्त भी समय–समय पर अनुसूचित जातियों की संख्या में वृद्धि की जा रही है। जनसंख्या आधार पर अनूसूचित जातियों की सर्वाधिक जनसंख्या 3.56 करोड़ उत्तर प्रदेश में तथा कुल जनसंख्या से सर्वाधिक प्रतिशत 28.30 पंजाब प्रान्त का है अनूसूचित जातियों में सर्वाधिक कम जनसंख्या मिजोरम प्रान्त में 272 है जबकि न्यूनतम प्रतिशत 1.90 दादर एवं नागर हवेली का है। भारत में सर्वाधिक रुप से चमकार जाति पाई जाती है जो कुल जनसंख्या की 4.75 प्रतिशत तथा कुल अनुसूचित जाति जनसंख्या में 23.02 प्रतिशत है जातियों की उपजाति समूह में भी चर्मकार जाति की सर्वाधिक 64 प्रकार की उपजातियाँ है। भारत की 60 प्रतिशत से अधिक अनुसूचित जातियाँ की जनसंख्या हिन्दी प्रदेश (जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, बिहार, झारखंड एवं उत्तराखंड) में पाई जाती हैं।

मध्यप्रदेश में अनुसूचित जातियों का जातिगत वितरण –राज्य में अनुसूचित जाति का प्रयोग विभिन्न राज्यों के राज्यपालों के विचार विमर्श के पश्चात राष्ट्रपति द्वारा, 1950 के तहत जारी, 1956 में संशोधित आदेश हुआ इस आदेश को पुनः संशोधित, 1976 में किया गया था। श्री बी.एन.लोकुर, (1967) में अपने प्रतिवेदन में 14 राज्यों में अनुसूचित जाति में वर्गीकृत करने के लिये मध्यप्रदेश में श्री बी. के. दुबे की अध्यक्षता मे समिति का गठन हुआ है उनके प्रतिवेदन में जातिगत आधार पर, 1971 में 34 प्रकार की अनुसूचित जातियों का उल्लेख है। मध्यप्रदेश में मध्यप्रदेश राजपत्र भाग 4(ख) में दिनांक 1 जुलाई, 1977 को प्रकाशित प्रथम अनुसूची (धारा 3) संविधान (अनुसूचित जाति) अध्यादेश, 1950 एवं जनगणना, 2011 में कुल 48 प्रकार की अनुसूचित जातियाँ पायी जाती है।

नर्मदापुरम् संभाग में अनुसूचित जातियों के प्रकार :–जनगणना, 2011 अनुसार मध्यप्रदेश में 47 प्रकार की अनुसूचित जातियाँ पायी जाती है तथा नर्मदापुरम् संभाग में 38 प्रकार की जातियाँ पायी गयी है जिनके कई उपवर्ग एवं समूह है। अधिकांश जातियाँ प्रवासीय है जो पड़ोसी राज्य महाराष्ट्र से सर्वाधिक प्रवासीय है। शारीरिक बनावट जैसे लम्बें सिर, मोटे एवं लटके हुये होठ, कद अधिकांश नाटा, रंग सामान्य सा या काला, बाल मोटे, मजबूत एवं घुँघरालें पाये गये हैं। इनमें बी रक्त समूह 22.34 प्रतिशत के आसपास पाया जाता है। जातिगत आधार पर सर्वाधिक जनसंख्या महार जाति की है जो संभाग की कुल जनसंख्या में 5.30 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति जनसंख्या का 32 प्रतिशत है दूसरे क्रम में चर्मकार जाति 26.20 प्रतिशत, बलाई 11.39 प्रतिशत तथा न्युनतम स्तर पर बहना 0.05 प्रतिशत एवं चिकवा 0.05 प्रतिशत हैं।

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

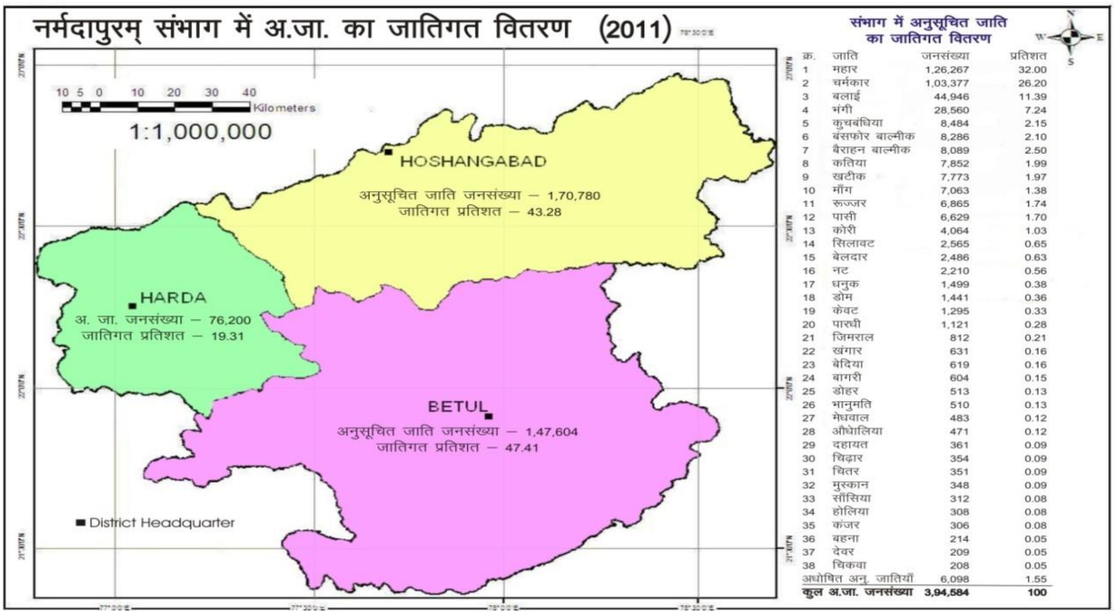

क्र.	जाति	जनसंख्या	प्रतिशत
1	महार	1,26,267	32.00
2	चर्मकार	1,03,377	26.20
3	बलाई	44,946	11.39
4	भंगी	28,560	7.24
5	कुचबंधिया	8,484	2.15
6	बंसफोर बाल्मीक	8,286	2.10
7	बैराहन बाल्मीक	8,089	2.50
8	कतिया	7,852	1.99
9	खटीक	7,773	1.97
10	मॉंग	7,063	1.38
11	रूज्जर	6,865	1.74
12	पासी	6,629	1.70
13	कोरी	4,064	1.03
14	सिलावट	2,565	0.65
15	बेलदार	2,486	0.63
16	नट	2,210	0.56
17	धनुक	1,499	0.38
18	डोम	1,441	0.36
19	केवट	1,295	0.33
20	पारधी	1,121	0.28
21	जिमराल	812	0.21
22	खंगार	631	0.16
23	बेदिया	619	0.16
24	बागरी	604	0.15
25	डोहर	513	0.13
26	भानुमति	510	0.13
27	मेधवाल	483	0.12
28	औधोलिया	471	0.12
29	दहायत	361	0.09
30	चिढ़ार	354	0.09
31	चितर	351	0.09
32	मुस्कान	348	0.09
33	सॉंसिया	312	0.08
34	होलिया	308	0.08
35	कंजर	306	0.08
36	बहना	214	0.05
37	देवर	209	0.05
38	चिकवा	208	0.05
	अधोषित अनु. जातियाँ	6,098	1.55
	कुल अ.जा. जनसंख्या	**3,94,584**	**100**

जातिगत वितरण :– नर्मदापुरम् संभाग की अनुसूचित जातियों के 38 प्रकार को जातिगत रूप से पृथक–पृथक विश्लेषित किया जा रहा हैः–

1. महार :– रसल एवं हीरालाल, (1916) के अनुसार इन जाति के नाम की उत्पत्ति मांस+आहार त्र मांसाहार अर्थात जो जाति जानवरों के मांस को ही खाती हों, वो महार जाति है। यह जाति महाराष्ट्र राज्य के नागपुर एवं उसके आस पास के क्षेत्रों से 100 वर्ष पूर्व मध्यप्रदेश के बालाधाट जिले में प्रवास कर आये और मध्य प्रदेश के अन्य स्थानों मे बसते चले गये। यह जाति पूर्व में संभाग में नर्मदा धाटी के आस–पास के गाँव की रखवाली करते थे। यह जाति भारत में सर्वाधिक रूप से महाराष्ट्र राज्य में पायी जाती है, इसके अतिरिक्त कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, गोवा, गुजरात एवं मध्यप्रदेश में पायी जाती है। नर्मदापुरम संभाग में इस जाति के तीन उप समूह 1.सौमास, 2.अधवान, 3.तिलवान पाये जाते हैं। महार अपने उपनाम रंगरारी, रामटेके, लाईवान, बवनियाँ, खातरकर, सोमकुंवर आदि लिखते हैं।

2. चर्मकार जाति समूह :– यह जाति भारत सहित प्रत्येक प्रांतों विशेषकर पूर्वोत्तर क्षेत्रों में अधिकता से पायी जाती है इस जाति का नाम संस्कृत शब्द ‘‘चर्मकाराः’’ से बना है जिसका आशय चमड़े का कार्य करने वाली जाति से है कुक, (1916) इसकी 16 उपजातियाँ बताते हैं। नर्मदापुरम् संभाग में चर्मकार जाति को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

अ. मोची :– रसल एवं हीरालाल, (1916) इनकी उत्पत्ति संस्कृत शब्द ‘मोचिकाः’ से मानते हैं, जिसका आशय पैर को मोड़ना करना होता है। दूसरे शब्दों में जो पैर में मौजे या जूते पहनाने का कार्य करते हों वह मोची जाति का चर्मकार है। इस जाति के अन्तर्गत चमार, चम्मारी, बेरवा, भंबी, जाटव आदि आते हैं ये अपने उपनाम दोहरे, चबरलीहीया, सप्ताह, मंड़लोई, वर्मा तथा अहिरवार आदि लिखते हैं। ब. सूर्यवंशी चर्मकार :– यह जाति अपने को सूय से उत्पन्न मानती है तथा अपने को छत्तीसगढ़ प्रान्त से आये हुए मानते हैं। ये चमड़े का व्यवसाय नही करते एवं अपने को मोची जाति से श्रेष्ठ मनाते हैं जिससे इससे इनमे रोटी–बेटी का आपस में सम्बन्ध नही रहता। ये अपना नाम झारिया, कनौजिया, औड़िया, कुर्रे, भिरी, जनार्दन, बन्गाले, सोनवानी तथा सोनवाने आदि लिखते हैं।

3. बलाई :– बलाई हिन्दी शब्द ‘बुलाई’ का रूपान्तरण है जिसका अर्थ बुलाना या सन्देशवाहक के रूप में किया जाता है रसल एवं हीरालाल,

(1916) मध्यप्रदेश के बलाई की गाँवों का चौकीदार समूह का मानते हैं तथा इन्हें कोरी जाति से जोड़ते हैं। यह जाति अलग–अलग प्रांतों में अलग–अलग नामों से जानी जाती है जैसे राजस्थान में मेघवाल या मेहवंशी, उत्तरप्रदेश में मीणा, दिल्ली में बलाही या बुलबूही आदि। बुलाही से आशय बुलाने वाला जो गाँवों में सन्देशवाहक का कार्य करते हैं। नर्मदापुरम् संभाग में बलाई जाति 3 उपजातियों 1.कतिया 2.गनोरिया 3.निमारे में विभाजित हैं। ये अपने उपजातियों के अलग अलग उपनाम जैसे चोरे, पटनकर, दूधिया, मंडोलकर, विल्लारें, सुग्गुले एवं लोचकारे आदि लिखते हैं।

4. भंगी :– रोव, (1934) ने इन्हें चुरा, चुरहा एवं चुहरे उपजातियों में बाँटा है। इस्बेस्टन, (1916) के अनुसार चुरहा जाति आदिवासियों की चुराहा जनजाति की सहात्री है। यह जाति हिन्दुओं में हिन्दू बाल्मीक, मुस्लिम में मुसाली व सिख समुदाय में मजहवी उपजाति में विभक्त है। इस जाति में लगातार प्रवास होता रहता है अतः यह किस प्रदेश से आये कहना सम्भव नही है। ये जाति मुख्य रूप से सफाई कार्य करती है ये अपनी उत्पत्ति गुरू बाल्मीक से बताते हैं तथा 'लालबेगी' कहलाते हैं।

5. कुचवंधियाँ :– ये जाति उत्तरप्रदेश के फतेहपुर जिला से प्रवास कर मध्यप्रदेश में आयी मानी जाती है, परन्तु कुछ अपने को गुजरात से प्रवासीय मानते हैं, कुचवंधियाँ नाम पलाश (टेसू) वृक्ष की जड़ को खोदकर कूंची (पुताई क लिये इस्तेमाल उपकरण) बनाने के कारण पड़ा। ये जाति मुख्य रूप से पुराने कपड़े बेचकर अपना जीवन यापन करते हैं। इनमें सानी–सोहदा, बंजारी– सोहदा, भायर, उतवार, लोहिया, सरतुहिया, लखेरिया एवं रारा आदि उपजातियाँ पायी जाती है। शारीरिक बनावट मजबूत, रंग सांवला, आँखों में निर्भिकता के भाव परिलक्षित होते हैं।

6. बंसफोर बाल्मीक :– इस जाति के बाल्मीक अपनी उत्पति राजा बानू (बेनू) जो स्वयं बाँस का व्यवसाय करते थे मानते हैं। रसल एवं हीरालाल, (1916) ने भी बंसफोर का आशय बाँस व्यवसाय से सम्बंधित बताया है जबकि कुक, (1916) इन्हे बुन्देलखण्ड क्षेत्र में आदिवासी समूह से मानते हैं। इन्हे बसोर, बन्सोर, बंसफोर, बन्सोडी, बांसकर या बुरुद अदि नामों से जाना जाता है। मुख्य कार्य बाँस की लकड़ियों से उपयोगी वस्तुएँ बनाने से है।

7. बेराहन बाल्मीक :– बेराहन बाल्मीक मुख्य रूप से कब्रिस्तान मं कब्र (डेड बॉडी) खोदने का कार्य करते है तथा लाशों को दफनाने में मदद करते हैं। यह जाति मुस्लिम धर्म मानती है। इनमे निकाह, मेहर, तलाक आदि प्रथाएँ प्रचलित हैं। यह जाति हैला, मोहम्मद आदि उप नाम लिखती हैं। इस जाति में बहु पत्नी प्रथा प्रचलित है। सुअर का माँस तथा शराब आदि का सेवन करते हैं। यह जाति आर्थिक रूप से विपन्न तथा रूढ़िवादी होती है। ये अपनें को बंसफोर बाल्मीक से पृथक मानते हुए रोटी–बेटी का सम्बन्ध नहीं रखते। वर्तमान में यह जाति अनुसूचित जाति में वर्गीकृत है फिर भी ये अपने को मुस्लिम समुदाय का मानते हैं।

8. कतिया :– कतिया का शाब्दिक अर्थ है 'काटना' रिसले, (1915) के अनुसार ये जाति पानी में रहने वाले जीव–जन्तुआ (विशेषकर मछली को) पर अश्रित रहने वाली जाति है। इस जाति का विस्तार उड़ीसा प्रान्त के पुरी, कटक जिलों में अन्य राज्यों में हुआ है। रसल एवं हीरालाल, (1916) इन्हे सूत (कपास) काटने वाली जाति से जोड़तें हैं। इस जाति के लोग नर्मदापुरम् संभाग के होशंगाबाद जिले में सतपुड़ा एवं नर्मदा धाटी के आस–पास तथा हरदा जिले में चौकीदारीकरते हुए देखे गए हैं। इस जाति की तीन उपजातियाँ (1) महिलवार (2) गेंदेवाल (3) पठारी हैं कतिया जाति के लोग अपने उपनाम नागौतिया, गोहिया, अंबावंशी, लांजीवार, धाकरवार आदि लिखते हैं।

9. खटीक :– खटीक शब्द संस्कृत शब्द 'खटीका%' से बना है। जिसका आशय हंटर या बूटचर आदि होता है, जो जानवरों को पीटने के काम आता है। यह जाति पूरे देश में खटीक नाम से जानी जाती है। मध्यप्रदेश में तथा नर्मदापुरम् संभाग में खटीक जाति महाराष्ट्र राज्य से प्रवासीय है। यह जाति अधिकांश जानवरों विशेषकर बकरा, बकरी, भेड़ आदि के व्यवसाय से जुड़े हुये होते हैं।

10. माँग :– वास्तव में इतिहासकारों के अनुसार पूर्व में यह ग्रामीण क्षेत्रों में बजाने (Musician)का कार्य करते थे। मराठी पुस्तकों में इन्हें शूद्र कलाकार माना गया तो वेदों के अनुसार यह जाति वेश्य पिता एवं ब्राम्हण स्त्री से उत्पन्न है। सत्रहवी शताब्दी में यह जाति राजा को बधाई देने के उद्देश्य से ड्रम बजाकर राजा को खुश करते थे। मध्यप्रदेश तथा संभाग में यह जाति महाराष्ट्र राज्य से प्रवासीय है। म.प्र. के कई स्थानों में इन्हें मंतग नाम से जाना जाता है, जो पत्र चिठ्ठी एकत्रित करने का कार्य करते हैं। इस जाति की तीन उपजातियाँ 1.मांग, 2.मांग गरौदी 3.मांग गरुदी आदि है। इस जाति की 50 प्रतिशत जनसंख्या का पलायन होता रहता है।

11. रूज्जर :– यह जाति मूलतः कृषि कार्य में संलग्न होती है। ये अपने को भीनसेन व दसई ठाकुर से जोड़ते हैं। जबकि यह जाति नर्मदापुरम् संभाग में सतपुड़ा पठार के आदिवासियों से उत्पन्न है, जिन्हं पूर्व में राजभर, राजगोड़, राजकोराकू आदि नाम से जाना जाता है। बरार क्षेत्र (नागपुर के समीप) इन्हें 'लज्जर' के नाम से जानते हैं। यह मिश्रित जाति से उत्पन्न माने जाते हैं, इसलिये ब्राम्हण से उत्पन्न को बहनिया, सुनार से उत्पन्न सुनारिया, राजपूत से उत्पन्न बकसरिया, अहीर से उत्पन्न अहिरिया आदि उपनामों को लिखते हैं।

12. पासी :– पासी शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के शब्द 'पाशिका' से हुई है जिसका आशय (Noose)है। यह जाति एक द्रविड़ जनजाति है जो प्राचीनकाल में अवध (उ.प्र.) में रहते थे उन्हें 'भर' के नाम से जाना जाता था। सर सी ईलीयॉट, (1967) ने अपनी पुस्तक 'क्रानिकल आर्फ उन्नाव' में उल्लेख किया है कि अयोध्या में महान सूर्यवंशी राम के शासन काल के उपरांत राजवंश का ह्रास होने के पश्चात पूर्वी भारत में केरा, मध्य में पासीस एवं पश्चिम में राजपासीस का उदय हुआ। कुक महोदय, (1916) के अनुसार पूर्व में इस समुदाय में राज प्रथा रही जिसमें खेरी, हरदाई तथा उन्नाव जिले सम्मिलित थे। रामकोट के अंतिम राजा संथार पासी समुदाय से सम्बन्धित थे। मध्यप्रदेश में यह जाति जबलपुर तथा संभाग में होशंगाबाद जिले में अधिकता में पायी जाती है। मध्य क्षेत्र की सबसे प्रमुख उपजाति राजपासीस है। केथवास, कैथवास जातियाँ कायस्थ से उत्पन्न है।

13. कोरी :– इस बार जाति को कुक, (1916) कोल जनजाति से निकाला गया मानते हैं, जबकि रसल एवं हीरालाल, (1916) के अनुसार कोरी मध्य क्षेत्र में एक अलग से समुदाय हैं जिन्होंने स्वंय ही अपनी कला को विकसित किया हैं। कोरी शब्द 'कोरा' शब्द से बना हैं जिसका आशय नया कपड़े या कपड़े बुनने की कला से है या जो कपास के सूत से कपड़े बनाते हो। यह जाति माँसाहारी होती है पर गाय, भैस एवं सुअर का माँस नही खाती। इस जाति को महाराष्ट्र राज्य के अमरावती, नागपुर एवं भण्डारा जिले में बीदे, कुन्तारे, खोदस, दीवान आदि, उत्तरप्रदेश में धीमन, जैसबार, कुमरिया, माहुरे, अहरदार आदि एवं मध्यप्रदेश में ''कबीर'' नाम से जाना जाता है। नर्मदापुरम् संभाग में कोरी जाति के छह उपवर्ग 1.राठौर 2.अघौरे 3.सोहानर 4.गोयल 5.चेतबा तथा 6.सोलंकी आदि पाये गये हैं ।

14. सिलावट :– सिलावट से आशय पत्थर में कलाकारी कर सामग्री बनाने से है, अर्थात वह जाति जो पत्थर (शिला) से सामग्री बनाकर जीवन–यापन करती हो सिलावट हैं। जानकारी के अनुसार वह जाति राजस्थान प्रान्त के अजमेर जिले से प्रवासीय है। यह जाति शाकाहारी होती हैं फिर भी यह बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू तथा शराब का सेवन करते हैं। सिलावट जाति 8 उपजातियों में विभक्त हैं 1.मेरेवारा 2.रिवेरिया 3.पालामा 4. कोतिया 5.बोदारिया 6.मोरारया 7.भीदोरिया (वर्तमान में भदौरिया) 8.मतोलिया आदि में विभक्त हैं।

15. बेलदार :– यह जाति मध्यप्रदेश के रीवा संभाग के रीवा, सीधी, सतना एवं शहडोल संभाग के शहडोल, उमरिया एवं अनूपपुर जिले में प्रमुखता से पायी जाती है इन्ही जिलों से ये अन्य जिलों से प्रवास कर ये नर्मदापुरम् संभाग में आयी है। इस जाति का मुख्य व्यवसाय है मिट्टी (Clay)तथा गारा का कार्य जो मकान आदि बनाने की सामग्री हैं इस कार्य को बेलदारी प्रथा कहते हैं इसके अतिरिक्त 'गधा' पालना इनका अन्य मुख्य व्यवसाय है। कुछ संभागों में इन्हें 'सोनकर'

के नाम से भी जानते हैं जो चूने का व्यवसाय करते हैं।

16. नट :– नट शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द 'नाटा%' से हुयी है। जिसका आशय नाचना (Dance)है। व्यवासायिक रूप से भी नट जाति नाचनें एवं गाने का कार्य कर अपनी जीविका चलाते हैं। मध्यप्रदेश एवं नर्मदापुरम् संभाग में नट जाति उत्तरप्रदेश से प्रवासीय है। अपना उपनाम 'प्रसाद' आदि लिखते हैं रिजले, (1915) के अनुसार नट, नर, नर्तक, नाटक आदि जातियाँ पश्चिम बंगाल की नृत्य एवं संगीतज्ञ (Dancing & Musiciation) जाति है। इसी प्रकार से रोज, (1919) के अनुसार ये जाति धुमक्कड़ जाति हैं।

17. धनुक :– धनुक शब्द की उत्पत्ति 'धनुष' से हुयी है जिसका आशय धनुष चलाने वाले या तीरंदाज से होता है। ये अपने नाम के अनुरूप अच्छे तीरंदार होते हैं ये जाति निम्न वर्ग की जाति है, जबकि डॉ. बुचानन, (1964) के अनुसार वह कृषि करने वाली जाति हैं। धनुक की तीन उपजातियाँ 1.धाकर 2.केथिया 3.कथारिया आदि है। अपने उपनाम हजारी, कथारिया, लाकारिया, अटारिया, जालारिया कचवाहा, जेसबार, मगही एवं दाजवार आदि लिखते हैं।

18. डोम :– यह जाति 19वीं शताब्दी से अस्तित्व में आयी प्रो. एच.एच. एलीट, (1917) के अनुसार यह जाति आदिवासी से उत्पन्न हुई है। इनका मुख्य कार्य साफ–सफाई एवं बाँस की लकड़ी के सामान आदि बनाना हैं। भारत में यह जाति पंजाब, उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा में अधिकता से पायी जाती है। मध्यप्रदेश में यह जाति उत्तरप्रदेश से प्रवासीय हैं। नर्मदापुरम् संभाग में इन्हें डोम या मेहतर नाम से जानते है।

19. केवट.सर हावर्ट रिजले, (1915) के अनुसार केवट, 'केवरता' शब्द से उत्पन्न है, जिसमें के त्र पानी (जल) तथा बरता त्र वासी (रहने वाले) जो जाति पानी में रहने वाले जीवो पर आश्रित है। जबकि लासन, (1957) के अनुसार इन्हें 'कीवर्ता' मानते है। जिसका आशय जो किसी नियम का पालन करता हो। प्रथम केवट की संतान की नाव में जन्म दिया गया ब्रम्हपुराण के अनुसार यह केयत्रा जाति से उत्पन्न (क्षत्रीय पिता व वेश्य माता उत्पन्न संतान) जबकि कुक, (1916) इन्हें मिश्रित जाति तथा मल्लाहों से उत्पन्न मानते हैं। संभाग में इनकी उपजाति 'लारिया' है।

20. पारधी :– पारधी मराठी शब्द 'पराध' से उत्पन्न है। जिसका हिन्दी आशय शिकारी (Hunter)होता है। बरार के मैदान में तकनकर, तकना (जाल) जिसका आशय जाल में फँासना होता है। वह जाति मराठा समुदाय के अन्तर्गत खानदेश से सम्बन्धित है। पूर्व मान्यता के अनुसार गौड़ जनजाति इनके पूर्वज थे। मध्यक्षेत्र में बहेलिया व पारधी इस तरह मिश्रित हो गयें कि इन्हें पृथक करना अत्यंत कठिन हो जाता है। इस जाति के चार उपवर्ग 1.शिकारी 2.भील पारधी 3. फाँसी पारधी 4.लगौंटी पारधी आदि होते हैं।

21. जिमराल :– मध्य प्रदेश में यह जाति इन्दौर संभाग के खरगोन जिले से अधिकता में पायी जातो हैं और वही से वे नर्मदापुरम् संभाग सहित अन्य जिलों में कम संख्या में असमान रुप से बिखर गये हैं। इस जाति का मुख्य व्यवसाय टोकरी बनाना है। वर्ण व्यवस्था के अनुसार जिमराल शूद्र प्रवर्ग का है। मुख्य रूप से वे माँसाहारी है। फिर भी अनाज, चावल, दलहनों का प्रयोग करते हैं। वह जाति अपने उपनाम में परिवर्तिन करती रहती है जैसे बसारे से बसोरे, करैत से खरैत, चौहान से चोहान, निकलसा, सौलिया, फूलपगारे आदि उपनाम लिखते हैं।

22. खंगार :– इस जाति को ऐतिहासिक रूप से टीकमगढ़, रियासत के खेत सिंह एवं भूपत सिंह के राज्य में राजपूत कस्तारिया वंशजों से जोड़तें हैं। पुराणों के अनुसार इन्हें 'खस्तरिया' नाम से पहचाना जाता है। मध्यप्रदेश में यह जाति नर्मदापुरम् संभाग के होशंगाबाद जिले से सम्बन्धित है। नाम के आगे सिंह उपनाम लिखना पसंद करतें हैं।

23. बेदिया/बेरिया, रसल एवं हीरालाल, (1916) पूर्व साहित्य के अनुसार मानते हैं कि बेदिया एवं संसिया दो भाई सें जो वर्तमान में पृथक–पृथक हो गये हैं। वह सभी बेदिया जाति को राजस्थान के कस्तारिया राजपूत से जोड़ते हैं। यह जाति राजस्थान प्रवास करके मध्यप्रदेश में आये, ये जाति मुख्य रूप से गाँवो में रहने की आदि होती

है। इस जाति के लोग सम्पन्न किसान होते हैं तथा महिलाएँ बड़े शहरो में सुविधायुक्त मकान शहर के बाहरी क्षेत्रों में बना कर रहना पसंद करती हैं। यह जाति अपने उप नाम चादी, गंदर्भ तथा कलखोत आदि लिखते हैं।

24. बागरी :– इन्थ्रोबन, (1922) महोदय के अनुसार बागरी जाति पूर्वी पकिस्तान (अब बांग्लादेश) से प्रवासीय है। ये बागरी को राजपूतों का मिश्रण मानते हैं जिसकी उपजाति जाट है। ये अपना नाम बधक, बाबरिया तथा पारधी आदि लिखते हैं। ऐसा माना जाता है कि 75 प्रतिशत जनसंख्या महेश्वरी (वेश्य) जाति है जो अब इनसे पृथक होकर वेश्य जाति में सम्मलित हो चुकी है। सर्वेक्षण में बताया गया है कि यह जाति जो खेतों से फसल की सुरक्षा हेतु बाढ़ (Boundary) लगाने का कार्य करते थे उनका नाम 'बाबरी' था जो वर्तमान में 'बागरी' हो गया है।

25. डोहर :– डोहर जाति 150 वर्ष पूर्वी उत्तर प्रदेश से प्रवास कर मध्यप्रदेश में आई। रसल एवं हीरालाल, (1916) इस जाति की मूल रूप से चर्मकार जाति से उत्पन्न मानते हैं। इनके दो उपवर्ग 1.डोहर 2.परदेशी डोहर हैं। इस जाति के लोग अपने उपनाम खरपुरिया, बाजिया, नागौइया, सिलोरिया, रोमिया, चिहिरिया, कलशिया, तिर्किया, गौरमिया तथा कौटटोबार आदि लिखते हैं। यह जाति सामान्य सी दिखती है। इनका रंग काला सा या सांवला पाया जाता है। विवाह हिन्दू रीति से वयस्क होने पर करते हैं विवाह विच्छेदन को 'छोरछुटटी' तथा पुर्नविवाह को 'बैठादिया' कहते हैं। विधवा, विदुर विवाह तथा तलाक सामाजिक सहमति से मान्य किया जाता है।

26. भानुमति :– इस जाति को 'भनमता' कहा जाता हैं इस जाति का मुख्य कार्य जादूगरी से कला का प्रदर्शन करना होता हैं। यह जाति राजस्थान प्रान्त के कोटा एवं बूँदी जिले से म.प्र. में प्रवास होकर आयी है। ये हिन्दी, मालवी तथा राजस्थानी भाषा को लिख, पढ़ तथा बोल सकते हैं। भानुमति जाति 2 उपजातियों 1.सोलंकी 2. बिहारी में विभक्त हैं। यह अपने उपनाम में सिंह का उपयोग करते हैं। माँसाहारी होते हैं गाय के मांस छोड़कर अन्य पशु का माँस खाते हैं। मामा–चाचा–बुआ आदि के पुत्र–पुत्रियों के विवाह मान्य है। तलाक मान्य है। स्त्री के बाँझ होने पर, विधवा या विदुर को दूसरे विवाह की अनुमति है।

27. मेघवाल :– यह जाति भारत के राजस्थान प्रान्त में सर्वाधिक तथा महाराष्ट्र, गुजरात एवं मध्य प्रदेश में कम जनसंख्या में फैली हुई है। मेघवाल 'मेघबराई' शब्द से सम्बन्धित है जिसका अर्थ बादलों द्वारा वर्षा होना होता है परन्तु (इंथ्रोवन महोदय, 1922) इनके विपरीत मेघ अर्थात बादल है, जिसका आशय बादलों को रोकना है। भारत में मेघवालों की चार उप वर्ग 1. मारवाड़ी मेघवाल 2.गुजराती मेघवाल 3.चरानियॉ मेघवाल 4.माहीश्री मेघवाल हैं। संभाग में माहेश्वरी, काछी मारवाड़ा, गुजरा, काछी मारवाड़ी, चारनियाँ आदि होते हैं, जो अपना उपनाम मकवाना, मोगरें, मैत्रे, खरवाह, राठौर आदि लिखते हैं।

28. औधोलिया :– इस जाति की उत्पत्ति 'अदेलिया'शब्द से हुई है जिसका अर्थ सीधे मार्ग से न चलने वाले लोग हैं। यह जाति मध्य प्रदेश में उत्तर प्रदेश से प्रवास कर आई है छत्तीसगढ़ राज्य के बिलासपुर जिले के आसपास अधिक संख्या में पाये जाते हैं। नर्मदापुरम् संभाग में ये कम संख्या में पाये जाते हैं।

29. दहायत :– इस जाति की 'दाहिया' नाम से जानते हैं रसल एवं हीरालाल, (1916) के अनुसार यह जाति खंगार जाति से निकाले गये तथा वन में रहने वाले आदिवासी समुदाय से सम्बन्धित हैं। दहायत शब्द 'देहात' शब्द से बना है जिसका आशय गाँव/ग्रामीण क्षेत्र होता है। इस जाति का मुख्य कार्य ही गाँव की चौकीदारी करना होता है।

30. चिढ़ार :– इस जाति का नाम संस्कृत शब्द 'चिरकार' से पड़ा है जिसका आशय बुननेवाले से हैं। इस जाति को अतिया एवं पवार नाम से जानते हैं। रसल एवं हीरालाल, (1916) चिढ़ार की दो उपजातियाँ1.परमेसूरिया 2.अतिया बताते हैं परमेसूरिया चढ़ार के लोग अपने उपनाम बागर, राठौर, खत्री, ब्रम्हा, चन्द्रा, गावाया, बेल, अश्व, बचिया, बहलोत, चरन आदि तथा आतियाँ उपवर्ग के लोग ठाकुर, सिंह, लाल, ओसद, पवार आदि लिखते हैं। ये अपने उपनाम परिवर्तित करते रहते हैं।

31. चितर :– चितर संस्कृत शब्द 'चित्रकार' का रुपान्तरण हैं जिसे हिन्दी एवं मराठी भाषा में 'कलाकार' या लकड़ी या दीवालों में चित्र बनाने वाली जाति से हैं। चितर जाति के दो उपवर्ग 1. चित्रकार चितर 2.जिन्गार चितर पायें जाते है। दोनों ही अपने को श्रेष्ठ मानते हैं तथा ये रोटी–बेटी का सम्बंध नहीं रखते। इस जाति का मुख्य कार्य चित्रकारी करना हैं

32. मुस्कान :– मुस्कान जाति उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद एवं वाराणसी नामक जिलों से मध्यप्रदेश के रीवा जिले में आकर बसे हैं। इसके पश्चात मध्यप्रदेश के अन्य जिलों में फैलते चले गये। संभाग में यह कम जनसंख्या में पाये जाते हैं। मुस्कान शब्द 'मुसाहर' या 'मुशर' का विकृत रूप है जो कि मुसा और हेरा शब्दों से उत्पन्न हुआ हैं जिसका आशय चूहों को खाने वाली जाति से हैं। ये अपने उपनाम बिंदा, लोहा–लंगर, साईलाता, जंगिहारा एवं कटाइवा आदि लिखतें है। विवाह हिन्दू प्रथा से होते हैं विधवा एवं तलाकशुदा के पुर्नविवाह होते हैं। इस जाति का मुख्य कार्य पत्तियों को एकत्रित कर दोना, पत्तल आदि बनाना होता है।

33. सांसियाँ/साँसी :– फ्राक्स, (1981) के अनुसारसाँसी जाति पंजाब प्रान्त के लुधियाना से आयी। रोस, (1919) इनकी उत्पत्ति राजस्थान प्रान्त के मेवाड़ के 24 मील दूर क्षेत्र "विसुनगर" एवं "सगुन" से राजपूत समुदायों से मानते हैं। शाबेर, (1965) इस जाति के 2 उपवर्ग 1.कलकर 2.मेहला बताते हैं। इस जाति के लोग बनेरिया, झारे, चन्देल, चरैल, घापन, डुला, रंगू, कारखोर तथा उपनाम के पूर्व सिंह शब्द का प्रयोग करते ह। मध्यप्रदेश में यह जाति राजस्थान प्रान्त से प्रवासीय हैं। ये इंदौर, झाबुआ, अलीराजपुर, देवास, शाजापुर सहित संभाग के होशंगाबाद एवं हरदा में कम संख्या में तथा राजगढ़ जिले में अधिकता से पाये जाते हैं।

34. होलिया :– रसल एवं हीरालाल (1916) के अनुसार होलिया 2 उपवर्ग 1.गोलान 2.तेलूगु अहिर में विभक्त है। होलिया समुदाय पारंपरिक रूप से डफली बजाने का कार्य करते हैं जबकि गोलान उपसमूह के लोग खेती करते हैं। मध्यप्रदेश में यह जाति बालाधाट जिले में अधिकता से पायी जाती है। संभाग में ये जाति महाराष्ट्र राज्य से प्रवासीय है। बैतूल जिले में सर्वाधिक व हरदा जिले में सबसे कम संख्या में पाये जाते हैं। हिन्दी एवं मराठी भाषा का प्रयोग करते हैं।

35. कन्जर :– कुक, (1916) के अनुसार कंजर नाम 'कुरन' एवं 'काँसा' (जंगली घास) से उत्पन्न हुआ है। रोस, (1919) लिखते हैं कि जो जाति काँसे की वस्तुयें बनाकर बेचते हों वह कन्जर है। संभाग में सर्वेक्षण के दौरान इन्होनें बताया कि ये महाराणा प्रताप के सिसौधिया वंशज से सम्बन्धित हैं तथा राजस्थान प्रान्त से आये हैं। ये जाति शराब एवं मांस का सेवन अत्याधिक रूप में करती है। ये मुख्य रूप से आपराधिक प्रवृत्तियों के होते हैं। इनके स्थायी घर नहीं होते टेन्ट एवं तिरपाल लगाकर कुछ दिनों के लिये घर बना लेते हैं इस जाति का लगातार पलायन होता रहता है। इसलिये इन्हें 'गोहर कंजर' भी कहा जाता है |

36. बहना :– भारत सरकार तथा राज्य सरकार की अधिसूचना, न्यायालय तथा सर राबर्टसन, (1891) एवं भारतीय जनगणना के अनुसार इस जाति को हिन्दू जाति के अन्तर्गत अनुसूचित जाति में रखा गया है। परन्तु संभाग में सर्वेक्षण के दौरान ज्ञात हुआ हैं कि ये अपने को मुसलमान धर्म का मानते हैं। बहना, पिन्जन शब्द का हिन्दी अर्थ है जिसका आशय कपास बिनने वाला। इस जाति में दो उपवर्ग 1.पिंजारा बहना तथा 2. धोनिका बहना है। धोनिका बहना को धुनक पठान भी कहा जाता है, जो रूई धुनाई का कार्य करते हैं।

37. देवर :– देवर शब्द हिन्दी शब्द 'दियाबार' से उत्पन्न हैं। जिसका आशय 'मशाल' जलाने वाली जाति से है। कई देवर अपने को देवी से उत्पन्न मानते हैं। यह जाति मुख्यतः भिखरियों व जादूगारों की द्रविड़यन जाति है। यह जाति देश में छत्तीसगढ़ राज्य में अधिकता से पायी जाती है। नर्मदापुरम् संभाग में इनके दो उप जातियाँ 1. रामपूरिया 2.रतनपूरिया हैं। रामपूरिया सारगी बजाकर भीख तथा रतनपूरिया घुँघरू बजाकर भीख मांगते हैं। इस जाति के लोग अपने उपनाम सोनबनिया, मरकास, मराई, कुर्वे, ओझा आदि लिखते हैं। इनके विवाह समारोह में सुअर का माँस व शराब अनिवार्य है। इसलिये इस जाति के

लोग सुअर को आवश्यकता रूप से पालते हं। जिससे इन्हें बाल्मीक समाज का समझ लिया जाता है।

38. चिकवा :– इस जाति के उत्पत्ति उड़ीसा प्रांत के संबलपुर नामक क्षेत्र से हुई है यहाँ से यह छत्तीसगढ़ प्रान्त के रायगढ़ जिले की जशपुर तहसील से मध्यप्रदेश में आये 'गंडा' जनजाति के साफ–श्वेत रंग वाले लोगों को पूर्व 'चीकन–चीकन' कहते थे, जो वर्तमान में 'चिकवा' नाम से जाने जा रहे हैं। मध्यप्रदेश तथा नर्मदापुरम् संभाग में यह जाति चिकवा जाति में वर्गीकृत है। देखने में यें हष्ठ–पुष्ट शारीरिक रूप से मजबूत होते हैं परन्तु इनकी प्रवृत्ति आपराधिक होती है। हिन्दी भाषा के अतिरिक्त अपनी जातिय भाषा का प्रयोग करते हैं।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों की अलग– अलग जातिगत श्रेष्ठताएँ है संभाग में कुल 38 प्रकार की अनुसूचित जातियाँ पाई गई है जिसमें अधिकांशतः प्रवासीय हैं। एक ही जाति में अलग–अलग उपजातियों मे भी ऊंच–नीच की भावना विद्यमान है अधिकांश लोग अपनी ही जाति को श्रेष्ठ मानते हैं। पृथक–पृथक जाति में विभाजित होने के पश्चात भी एक बात समान रुप से कही जा सकती है कि ये जातियाँ आर्थिक रुप से विपन्न हैं और जीवनयापन के लिए संघर्षरत हैं।

निष्कर्ष (Conclusion) :–

शोध के उपरान्त प्राप्त निष्कर्षो को सूचीबद्ध किया गया है :–

- भारत में विश्व के 2.5 क्षेत्रफल में 16.87 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। जनसंख्या अधिकता के कारण यहाँ जातियों का विभक्तीकरण भी अधिक है।
- 'अनुसूचित जाति' शब्द भारतीय संविधान के अनुच्छेद 341 (1), (2) के तहत 1950 में उल्लेखित किया गया।
- संभाग के कुल क्षेत्रफल में 34.88 प्रतिशत भाग में वन क्षेत्र, 43.96 प्रतिशत कृषि क्षेत्र व 21.16 प्रतिशत भाग में मानव बस्तियाँ है इन बस्तियों में ''अनुसूचित जाति'' के लोग रहते हैं।
- भारत, मध्यप्रदेश की तरह नर्मदापुरम् सभाग में अनुसूचित जातियों में लगातार जनसंख्या वृद्वि हो रही है।
- भारत में 2001 में 542 तथा 2011 मे 547 प्रकार तथा मध्यप्रदेश में 48 प्रकार की अनुसूचित जातियाँ हैं। सर्वाधिक अनुसूचित जातियों की जनसंख्या उत्तरप्रदेश में है। सर्वाधिक जनसंख्या चर्मकार जातियों की पायी जाती है।
- नर्मदापुरम् संभाग का अंक्षीय विस्तार 21°15'. 22°50' उत्तर तथा देशान्तीय विस्तार 76°55'. 78°35' पूर्व में है। संभाग का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 20,080 कि.मी. है जो भारत एवं मध्यप्रदेश के भौगोलिक क्षेत्र का क्रमशः 0.61 प्रतिशत व 6.51 प्रतिशत है।
- नर्मदापुरम् संभाग मध्यप्रदेश का 9वां नया संभाग है। जो मध्यप्रदेश राज्य की अधिसूचना क्र. एफ–1–12–08–सात–शा–6 भोपाल, 26 अगस्त, 2008 कों अस्तित्व में आया है। यह तीन जिले क्रमशः होशंगाबाद, बैतूल, हरदा तथा 15 तहसील 20 विकासखण्ड में विभक्त है। संभागीय मुख्यालय होशंगाबाद है।
- अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक जनसंख्या ''महार'' जाति 32 प्रतिशत तथा न्यूनतम जनसंख्या 0.05 प्रतिशत ''चिकवा'' जाति का है। अध्ययन क्षेत्र में चर्मकार जाति के दो भेद मोची और सूर्यवंशी पाये गये हैं।
- अध्ययन क्षेत्र की अनुसूचित जातियाँ, हिन्दू रीति–रिवाज को सर्वाधिक रूप से मानती हैं। इनकी परम्पराओं में भिन्नता देखने को मिलती है। जातिगत रूप से ऊँच–नीच की भावना विद्यमान है। अधिकांश लोग अपनी ही जाति को श्रेष्ठ मानते हैं।
- अध्ययन क्षेत्र के अनुसूचित जातियों से पृथक–पृथक जाति में एक बात समान रूप से कहीं जा सकती है कि ये जातियाँ आर्थिक रूप से विपन्न हैं व जीवन–यापन के लिये संघर्षरत है।

संदर्भ ग्रंथ–सूची :–

- B.N. Lokur (1967). Review of the list of Scheduled Caste/Scheduled Tribes, Govt. of India, The report of the advisory committee on the revision of the listed of SC/ST Govt. of India, New - Delhi
- G.S. Ghurye (1961). Caste and Race in India, Bombay Popular Prakashan, Bombay.
- K.S. Singh (1994). The Scheduled Caste (Anthropological Survey of India), Oxford University Press, New Delhi.
- Mumtaj Ali Khan (1980). Scheduled Caste and their Status in India, Uppal Publishing House, New Delhi
- रामशरण शर्मा (1979), शूद्रों का प्राचीन इतिहास, मेकमिलन कम्पनी आफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली – 2
- डॉ. गोविन्द प्रसाद, डॉ. गीतांजली एवं डॉ. प्रमोद कुमार सिंह (2007), जनसंख्या संसाधन एवं समाजिक आर्थिक रूपान्तरण डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली– 02
- डॉ प्रमिला कुमार (2006), म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
- जिला गजेटियर, बैतूल/होशंगाबाद, (1991) संस्कृति संचालनालय, भोपाल
- जिला संख्यिकी पुस्तिकाएँ, हरदा, बैतूल, होशंगाबाद (2009), जिला प्रशासन
- अनुसूचित जाति प्राथमिक जनगणना सार (2001),जनगणना निदेशालय, नई दिल्ली।
- दैनन्दिनी (Diary)2011, म.प्र. शासन, भोपाल

अनुसूचित जाति की शिक्षित महिलाओं में जनसंचार के प्रतिमान (भोपाल जिल के सन्दर्भ में अध्ययन)

प्रभुदयाल यादव
शोधार्थी,समाजशास्त्र विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, (म0प्र0) 462026 (भारत)

श्रीमति डॉ. रंजना श्रीवास्तव
शोध निर्देशिका,प्राध्यापक (समाजशात्र), शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर, (स्वशासी) महाविद्यालय भोपाल (म0प्र0)

शोध–पत्र सारांश (Research Paper Abstract) :- भोपाल जिला मध्य प्रदेश राज्य की राजधानी है, जिसमें एक प्रशासनिक मुख्यालय भी है। भोपाल को झीलों की नगरी भी कहाँ जाता है क्योंकि यहाँ कई छोटे–बडे ताल है। भोपाल जिले की जनसंख्या (2011 की जनगणना के अनुसार) 23,67,145 है, पुरूष की जनसंख्या 12,39,378 तथा महिलाओं की 11,28,767 है कुल साक्षरता 82.26 प्रतिशत है (पुरूष 87.44 प्रतिशत ओर महिला 76.57 है) अनुसूचित जाति की शिक्षित महिलाओं की जनसंख्या 9,40,276. जिसमें जनसंचार में रूचि रखने वाली महिलाओं को जनसंख्या 568 जो तीन विधानसभा क्षेत्र के अन्तर्गत है, 151, नरेला, 153, भोपाल मध्य, 154, गोविन्दपुरा। शोध–पत्र में यह स्पष्ट किया गया है।

प्रस्तावना (Introduction) :– सामान्य तौर पर किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिये एक ही स्थान से बहुत बडे जन–समूदाय तक संदेश का सम्प्रेषण करते है उसे जनसंचार कहा जाता है।आजादी के 69 वर्षो के बाद अनुसूचित जाति की शिक्षित महिलाओं के जनसंचार और वैधानिक विज्ञानिक औद्योगिकी क्षेत्र में काफी बड़ी हुई है, महिलाओं में मल्टीमीडिया दूरसंचार और आकाशवाणी, पत्रिका परिकारिता, टेलीविजन, इन्टरनेट समाचार के प्रति काफी सहयोग दायक सिद्ध हुई है। जिससे दैनिक खबरों का प्रकाशन दिन प्रतिदिन फैलता ही जा रहा है। पुरानी चीजों की अपेक्षा नई चीजों की ओंर आकृष्ट होते है, महिलाओं में जन जागरूकता की जन–भावनाओं में एक विशाल मोड लिया है। इलेक्ट्रोनिक्स औद्योगिक क्षेत्र में परिवर्तन से महिलाओं में एक विज्ञापन का संचार उत्पन्न हुआ जिससे मनुष्य अपने भाव को दूसरों पर प्रकट करता है। मन के भाव प्रकट करने का सबसे अच्छा सुगम ओर सुलभ उपाय भाषा ही है। आज का युग जनसंचार का युग है। जनसंचार के माध्यमों से ही विश्व–बन्धुता, समानताऐं स्वतंत्र मूल्यों को पुष्ट करना और अन्तरक्षेतीय अन्तरदेशीय और अन्तरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करने में जनसंचार माध्यामों का महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

जैसे आकाशवाणी, चलचित्र, फिल्म, समाचारों पत्रों, दूरदर्शन, संगणक, इन्टरनट त्यादि को काफी समृद्ध बल मिला।

अध्ययन के क्षेत्र में किये गये कार्य की एक संक्षिप्त विवेचना :–

1. इस योजना में जनसंचार के नये और पुराने माध्यमों को ओर अच्छी तरह विकासित किया गया जिससे नये जनसंचार के वैज्ञानिक ओर औद्योगिक क्षेत्र में शिक्षित महिलाओ को ओर अधिक प्रोस्साहन मिला जिससे वह जनसंचार के विभिन्न माध्यमों में अपनी भूमिका का परिपक्त दिया।

2. महिलाओ में श्रव्य माध्यम ओर दृश्य–श्रव्य माध्यम का विकास हुआ जिससे जनसंचार के क्षेत्र में अनुसूचित जाति की शिक्षित महिलाओं में जनसंचार के माध्यमों का ओर अधिक ज्ञान प्राप्त हुआ जिससे वह रेडियों टेलीविजन चैनलों संगीत, फिल्म, नाटकों, ज्ञानवर्धक वृत्तचित्रों इत्यादि का कार्य किया गया।

3. जनसंचार से महिलाओं के जीवन को एक बहुत बडी विरासत मिली जिससे इलेक्ट्रोनिक मीडिया का युग भारतीय नारी समाज में बहुत अह्म भूमिका निभाई जिससे शिक्षित महिलाओं में

रोजगार के साधन प्राप्त हुए और जनसंचार के माध्यमों को भी उन्होंने अपने जीवन को एक कार्यशैली बना दिया जिससे वह पूरे भारत ही नही पूरे विश्व में अपना जनसंचार का प्रभुत्व बना दिया, ओर आर्थिक और सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिको में प्रभाव डालती है।जिससे निम्न वर्ग की महिलाओं में रोजगार के साधन के अवसर प्राप्त हुऐ और उन्हें आत्मनिर्भर होने की भी प्रेरणा का स्त्रोत प्राप्त हुआ।

4. जनसंचार माध्यमों द्वारा नयी तकनीकी व सूचनाओं को ग्रामीणों तक पहुॅचाया जावेगा जिससे वे लाभान्वित होगे।

5. रूढिवादी, अंधविश्वासी, परम्परावादी, कट्टरसमाजवादी व्यक्तियों जो विकास में बाधक कारकों को दूर करने एवम् सरकारी तथा निजीसंस्था में व्यक्तियगत संचार व्यवस्था को जानना के लिय निस्वार्थ संचार का कार्य करती है।

तालिका कमांक–1

भोपाल के तीनो विधान सभा क्षेत्र की शिक्षित महिला कुल जनसंख्या 151 नरेला, 153, भोपाल मध्य, 154, गोविन्दपुरा।	जनसंचार में रूचि रखन वाली महिलाऐं की कुल संख्या	कुल चयनित परिवारों की संख्या	कुल चयनित परिवारों का प्रतिशत	चयनित परिवारों में उत्तरदाताओं की संख्या	चयनित महिलाओं का प्रतिशत	औसत प्रति परिवार
1	2	3	4	5	6	7
9,40,276	568	200	94,5	200	284	1.42

अध्ययन के उद्देश्य :–

1. वर्तमान में महिलाओं में जनसंचार केप्रयोग कि प्रवृत्ति का अध्ययन।
2. जनसंचार से प्रभाव का अध्ययन।
3. जनसंचार के माध्यमों से महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार एवं परिवर्तन।

शोध कार्य में जनसंचार के अनेक प्रकारों के बारे में अध्ययन किया गया है जो कि तालिका कमांक–2 में स्पष्ट किया गया है।

तलिका कमांक–2 में स्पष्ट है।

स.क.	जनसंचार के प्रकार	आयु समूह अनुसार जनसंचार माध्यमों की स्थिति				कुल संख्या	प्रतिशत
		10–15	15–20	20–25	25–50		
1.	समाचार संकलन	02	13	21	22	58	14.5
2.	लेखन संपादन	10	20	29	37	96	24
3.	मुद्रण पत्रकारिता	15	30	35	20	100	25
4.	मौखिक एवं दृश्य संचार	18	27	32	29	108	27
5.	फोटो पत्रकारिता	08	30	21	15	74	18.5
6.	मीडिया	08	31	35	30	104	26
7.	एनिमेशन विधियों	05	08	10	09	32	8

भोपाल जिले के तोनों विधानसभा क्षेत्रों के 200 परिवारों की उत्तरदाताओं के सर्वेक्षण के दौरानतालिका अनुसार तथ्य ज्ञात करते हुऐ सर्वाधिक रूप से प्रथम स्थान मौखिक एवं दृश्य संचार में 27 प्रतिशत और दूसरे स्थान पर मीडिया के 26 प्रतिशत और तीसरे स्थान पर मुद्रण पत्रकारिता 25 प्रतिशत है चौथा स्थान पर लेखन संपादन पांचवा स्थान पर फोटो पत्रकारिता, छः स्थान पर समाचार संकलन और सातचा स्थान एनिमेशन विधियों जो सबसे कम है, मौखिक एवं दृश्य संचार सबसे सस्त तरीखे है जो हर महिलाओं में साधन मोजूद रहते है, ओर मीडिया उससे महिलाओं में एक दूसरे से कम जोड़ती है इसलिये कम है, मुद्रण पत्रकारित से महिलाओं को पेपर करना आसान होता है, लेखन संपादन से महिलाओं में लिखने की क्षमता होती है जिससे वह अपनी बात कहती है, फोटो पत्रकारिता मंहेगे होता है जिससे के लिये मंहेगे कैमरे की आवश्यकता होती है, और समाचार संकलन से महिलाओं में देखा गया हे कि वह किसी भी समय घर से दूर नही रह सकती है, औन अन्त में एनिमेशन विधियों बहुत मॅहेगे कोर्स होते है हर कोई महिलाओं नही कर सकती है इसलिये सबसे कम प्रतिशत है।

शोध प्रविधि (Research Mathodology) :- प्रस्तुत शोध पत्र में 200 महिलाओं का चयन निदर्शन विधि द्वारा किया गया है तथा अध्ययन हेतु साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया है। अध्ययन क्षेत्र भोपाल जिले की तीन विधान सभा क्षेत्र 151–नरेला, 153–भोपाल मध्य, 154–गोविन्दपूरा का बोध किया गया है।

इन शोध निम्नलिखित सुझाव सम्मिलित कर सकते है।

1. सम्प्रेषण या संचार के बारे में जनता से उसकी प्रतिकियाऐं जाननी चाहिये ओर सर्वेक्षण, साक्षात्कार, प्रश्नावाली पत्र द्वारा या जनता की भावनाओं की प्रतिकियायों को आकंलन कर वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर जनसंचार की समीक्षा हेतु प्रेरित करनी चाहिये।
2. पराम्परावादी, अंधविश्वासी ओर रूढीवादी व्यक्तियों को आकंलन कर जनसंचार के फायदे प्रस्तुत करनी चाहिये जिससे उनमें जनसंचार से उत्पन्न गलत सोच को दूर किया जाये।
3. जनसंचार के प्रति महिलाओं को प्रोत्साहित करना चाहिये, समय समय पर आवश्यक सहयोग देकर प्रेरित करे।
4. जनसंचार की कम्पनियों में जो राष्ट्रीय या अन्तराष्ट्रीय स्तर पर है उन्हें महिलाओं के लिये विशेष आरक्षण देना ओर अच्छा वेतन दिया जाना चाहिये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. जायसवाल नवल, फोटो–पत्रकारिता, सामाजिक प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. मिश्र कृष्ण बिहारी, हिन्दी पत्रकारिता, प्रकाशक भारतीय , नई दिल्ली।
3. कुमार भवेश चंद्र, रिपोटिंग से एकटिंग, प्रकाशक ज्ञानविज्ञान एजूकेशन नई दिल्ली।
4. रैणा गौरीशंकर, टेलीविजन चुनौतिया की सम्भावनाऐं, बाणी प्रकाशक, नई दिल्ली।
5. डॉ0 शैलेज ब्रेजमोहन, स्मार्ट, रिर्पोटर, प्रकाशक वाणी, नई दिल्ली।
6. वर्णवाल रमेश कुमार, समाचार का भाषा विज्ञान, प्रकाशक नई दिल्ली।
7. शर्मा कुसूस, विज्ञापन की दूनिया, प्रकाशक प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ग्रामीण भारत में महिलाओं की स्थिति

डॉ. रश्मि तिवारी
अतिथि विद्वान अर्थशास्त्र शासकीय स्नातक महाविद्यालय शहपुरा डिन्डौरी

''भारत की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है। ग्रामीण महिलाएँ कृषि उत्पादन में मुख्य भूमिका निभाती है। महिलाएँ खेती की प्रक्रिया में तमाम चरणों में सक्रिय रहती है, लेकिन खेत में क्या बोया जाए? इस संबंध में महिलाओं की राय नहीं ली जाती है। महिलाएँ हल चलाने को छोड़कर रोपाई, गुड़ाई, खाद डालने, छँटाई, कुटाई, सुखाने, ढेर लगाने, फटकने और कृशि उत्पादन की ढुलाई में सक्रिय भ्मिका निभाती है। रोजगार की बात है उसमें भी महिलाओं का एक बड़ा भाग परंपरागत कृषि व्यवसाय में लगा हुआ है। जहाँ उनके शरीर का बेरहमी से शोषण किया जाता है। महिलाओं से काम अधिक लिया जाता है बदले में मजदूरी कम दी जाती है। अपने काम के प्रति ईमानदार महिला अपने परिवार के खातिर मौन रहकर सब कुछ सहती है। इस पुरूष सत्तात्मक समाज में पुरूषों का अनाचार सहना उसकी नियति बन गई है। इन सबका परिणाम है कि ग्रामीण महिलाओं की स्थिति चिंताजनक है।

ग्रामीण क्षेत्र में स्त्रियाँ आज भी अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के पति जागरूक नहीं हैं। हमारे संविधान में स्त्री और पुरूष दोनों को समानता का दर्जा दिया गया है। कोई भी व्यक्ति चाहे वह किसी भी जाति, वर्ग, लिंग, सम्प्रदाय का हो, उसे शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अधिकार है। ग्रामीण क्षेत्र में आज भी शिक्षा प्राप्त करने की प्राथमिकता पुरूषा को दी जाती है। स्त्रियों की शिक्षा को अनावश्क समझा जाता है। इस कारण वे शिक्षा से अनभिज्ञ हैं।

एक दिन में ग्रामीण महिला आसतन 16 से 18 घंटे काम करती है, परंतु उस शारीरिक श्रम की तुलना में उसे उतना पर्याप्त पौष्टिक भोजन नहीं मिलता है जिसके कारण बचपन से एक लडकी कमजोर रहती है तथा समाज में उसके ऊपर पारिवारिक दायित्व का बोझ आ जाता है जिससे उसके शारीरिक, मानसिक, या व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में बाधा आती है।

''ग्रामीण समाज में महिलाओं की स्थिति पर दृष्टिपात करें तो आज भी महिलाएँ महज उपभोग को वस्तु तथा बच्चा पैदा करने की मशीन हैं। वास्तव में सामाजिक, सांस्कृतिक मापदंड भी बहुत हद तक महिलाओं के पिछड़ेपन के कारण हैं। ग्रामीण पृष्ठभूमि में पाँच साल तक पहुंचते–पहुंचते लड़कियों का घरेलू कार्य में हाथ बटाने के लिए तैयार हो जाना पड़ता ह। जैसे कुएँ से पानी भरना, पशुओं के लिए चारा इकट्ठा करना, बर्तन साफ करना, आदि कार्य करने लगती हैं। इसके लिए उनका स्वास्थ्य उन्हें अनुमति प्रदान करे अथवा नहीं परन्तु उन्हें गृह कार्य को अपनी नियति मानकर करना है। ग्रामीण परिवारों की बालिकाएँ प्रतिदिन 9 घंटे कार्य करते हुए वर्ष में औसतन 315 दिन कार्य करने के लिए लाचार होती हैं। यदि उसे रूपयों में आंका जाये तो यह 9 वर्ष से 18 वर्ष तक 39,000 रूपये का श्रम के रूप में अपने परिवार को योगदान देती है।

औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया के बावजूद भी हमारे गाँव आज भी विकास कार्य से अछूते हैं। ग्रामीण अंचल में बसी महिलाएँ भी विकास की बाट जोह रही हैं। सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से महिलाओं का जीवन भी सउन्नत हो एवं उनकी स्थिति में परिवर्तन आए इसके लिए, पहले जरूरी है कि ग्रामीण महिलाओं को पर्याप्त जानकारी हो, ताकि वे अपने अधिकारों एवं लाभ के अवसरों से वंचित न रह जाए। ''ग्रामीण क्षेत्र में बच्चियों का कम आयु में विवाह कर दिया जाता है, जब वे 14 से कम या 14 वर्ष की होती है, जिससे उन्हें पढ़ने लिखने के सभी अवसर खोने पड़ते हैं, तब वे तन मन से न विकसित रहती है, जिससे इसका प्रभाव उनके बच्चों व उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है। बीमार रहने से बच्चे बच्चियाँ स्कूल नहीं जा पातीं।''

समय के बदलते दौर में ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

समाज की सोच, चिंतन और व्यवहार में परिवर्तन लाना आवश्यक है। ग्रामीण महिलाओं का शिक्षा के प्रति जागरूक किया जाए क्योंकि देश की आजादी के बाद गाँव में स्कूल खोले गए, बच्चों को उसमें पढ़ाया जाने लगा और साक्षरता अभियान का श्रीगणेश किया गया परंतु ग्रामीण महिलाएँ फिर भी लाभ नहीं उठा सकी। लड़की को स्कूल भेजना न तो लाभदायक न आवश्यक समझा जाता था। ''80 के दशक के पश्चात् कुछ ग्रामीण महिलाओं ने साक्षरता अभियान में भाग लिया और स्कूल जाने वाली लड़कियों की संख्या में वृद्धि हुई एवं 60 प्रतिशत लड़कियाँ साक्षरता की श्रेणी में सम्मिलित हुई। आज महिलाओं में मानवीय अधिकारों तथा समाजों व राष्ट्रों के विकास दोनों ही संदर्भों में महिला शिक्षा की अनिवार्यता को स्वीकार किया जाने लगा। यही कारण है कि भारत में महिला सशक्तिकरण हेतु शिक्षा प्रमुख नीति विषयक तत्व बन गया।''

जिन ग्रामों में महिलाएँ साक्षरता अभियान में जुटी, अपनी रूढ़ियों–परंपराओं की दीवारें तोड़कर बाहर आई, उनमें प्रशंसनीय परिवर्तन हुए। वे सामाजिक आर्थिक परिवर्तन तथा आर्थिक विकास के सरोकारों को समझने लगी। उनका आत्मविश्वास बढ़ा। ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को और अधिक बेहतर, अधिक सुधारने के लिए महिलाओं को चौक–चूल्हे की दुनिया से निकलकर परिवार, समाज और प्रदेश के निर्माण में सहभागी बनाने के लिए साथ ही उसकी भलाई के लिए अनेक नए काम मध्यप्रदेश सरकार ने किए, जिससे ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है।

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने हेतु निम्न महत्वपूर्ण कार्यों को किया गया है–

1. ग्रामों में सरकारी जमीन के पट्टे संयुक्त नाम से बनाना।
2. ग्रामीण महिलाओं के लिए महिला नीति बनाकर उस पर अमल करवाना।
3. ग्रामीण महिलाओं के लिए सरकारी, अर्द्धसरकारी स्थानीय और सहकारी संस्थाओं में 30 प्रतिशत स्थान आरक्षित करना।
4. ग्रामीण महिलाओं के लिए निराश्रित पेंशन योजना के अंतर्गत 50 वर्ष या ज्यादा की विधवा परित्यक्ता महिलाएँ पात्र घोषित।
5. ग्रामीण महिलाओं के लिए कानूनी अधिकार संपन्न महिला आयोग गठित करना।
6. 50 वर्ष से अधिक आयु की पात्र विधवा को 150 रुपये मासिक पेंशन करना।
7. तेंदूपत्ता संग्रहण के कार्य में लोगों के कार्ड में पति–पत्नि दोनों के नाम डालने, लेकिन भुगतान सिर्फ महिलाओं को करने का फैसला करना।
8. तेंदूपत्ता संग्रहण में फड़ मुंशियों के 50 प्रतिशत पद महिलाओं के लिए आरक्षित करना।
9. राष्ट्रीय मातृत्व कल्याण योजना में गरीब परिवार की ग्रामीण महिला को प्रसव से 12 से 8 सप्ताह पूर्व 300 रु. एकमुश्त देने की योजना।
10. उसी ग्राम को साक्षर माना जाएगा, जहाँ 85 प्रतिशत महिलायें साक्षर हो जाएगी।
11. किसी भी क्षेत्र की 50 प्रतिशत महिलाओं की माँग पर वहाँ से शराब दुकान बंद करने, हटाने का प्रावधान लागू करना।
12. गाँव में हैण्डपम्प स्थापना समितियों से संबंधित गांव, वार्ड की महिला प्रतिनिधि को शामिल करना जरूरी।
13. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के शेष भारत में 40 प्रतिशत की जगह मध्यप्रदेश में 50 प्रतिशत सहायता महिलाओं को देना अनिवार्य है।
14. ''केन्द्र सरकार द्वारा महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने की दिशा में ऐतिहासिक कदम उठाते हुए पंचायतों में

महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण देने के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी है।''

स्वतंत्रता के 65 वर्षों के बाद भी ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर चिंतन करे तो कोई बहुत अधिक सुधार या परिवर्तन नहीं हुआ लेकिन धीरे–धीरे समय के साथ एवं शासन द्वारा किए जा रहे रचनात्मक कार्यों से परिवर्तन की संभावना व ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में सुधार की आशा की जा सकती है।

संदर्भ सूची :–

1. साहस गाथा, यूनीसेफ अरेरा कालोनी, भोपाल द्वारा प्रकाशित, दिसंबर, 1999
2. समाज कल्याण, अगस्त, सितम्बर, 1997, पृ. 70
3. डावरे, एस.एल., कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, पृ. 2
4. पंचायती राज, उत्तर पश्चिमी पंचायती राज सम्मेलन – 1989
5. समाज कल्याण, मार्च 1999, पृ. 13
6. कुरूक्षेत्र, मार्च 1999, पृ. 4–6
7. कुरूक्षेत्र, मार्च 1999, पृ. 5

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भारतीय संस्कृति और परिवार में आश्रम व्यवस्था

आरती पांडेय
शोधार्थी, एम.फिल्. (हिन्दी साहित्य)

हिन्दी साहित्य एक जीवन्त साहित्य है और इसीलिए वह समाज परिवार से गहनता से जुड़ा हुआ हैं। जब हिन्दी कहानियों की चर्चा होती है तो परिवार का एक विस्तृत स्वरूप नत्रों के समक्ष आ खड़ा होता है। किसी भी पारिवारिक सामाजिक या मनोवैज्ञानिक कहानी में लेख कपह दृष्टा होता हैं जो उसके एक–एक पहल पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि डालता हैं। और परिवार के एक–एक सूत्रों को बटोर कर जिस रचना की कल्पना कर लिपिबद्ध करता है, वह एक–एक पहलू जीवन्त घटना का साक्षात् स्वरूप बन जाता हैं। हमारा जीवन प्रत्येक पल एक नाटकीय घटनाक्रम से आबद्ध होता है। यदि इन घटनाक्रमों को संजोया जाये तो वह एक जीवन्त यथार्थवादी कहानी बन जाती हैं। वास्तव में एक सच्चा लेखक वहीं होता हैं जो अपने आस–पास के अनुभूत पलों को स्मृतियों में संजोता है और खान विशेष में सभी अंकों को अभिव्यक्त कर अपने लेखन कौशल का परिचय देता हैं। जब एक घटनाक्रम विश्लेषित किया जाता है। तो वह कहानी का स्वरूप धारण कर लेती है। इन्हीं के आधार पर पात्रो का सृजन और चयन किया जाता है। ये पात्र हमारे आस–पास के ही होते है और इनकी विचार, सोच, भावना सब कुछ हमारी जानी पहचानी होती है इसीलिए वे हमारे हृदय के अधिक निकट है।

भारतीय जीवन में आश्रम व्यवस्था, वण व्यवस्था आदि का बहुत स्थान है। चूंकि कहानी जीवन की आत्मिक अभिव्यक्ति होती है इसीलिए इन व्यवस्थाओं का वर्णन किसी न किसी रूप में मिलता है इन्हीं व्यवस्थाओं के प्रयोग से कथ्यवस्तु में यथार्थ बोध होता है और हम अपने अधिक निकट पाते हैं। इन दृष्टियों से हमें अपने समाज में परिवार, आश्रम व्यवस्था, वर्णव्यवस्था आदि पर समाजशास्त्रीय दृष्टि से विचार करना आवश्यक होगा तभी हम विषय के साथ न्याय कर पायेंगे तो सवप्रथम विभिन्न विचारों के विचारों का प्रस्तुत करना हमारे लिए अभिप्रेम होगा।

''मानव जिज्ञासु प्राणी है और इसी प्रवृत्ति के कारण समाज में कुछ व्यवस्था का जन्म और विकास हुआ है। परिवार वह मानव समूह है जिसका संगठन कुछ निश्चित उद्‌देश्यों की प्राप्ति के लिए हुआ है, इन्हीं विशिष्ट उद्‌देश्यों की पूति के लिए सभी सदस्य परस्पर सहयोग करते हैं।''[1]

परिवार मानव जीवन की पूर्णतः मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है। यह एक प्राथमिक समूह हैं रोल्फ लिप्टन के अनुसार ''माता–पिता और बच्वें का किसी अन्य मानव संबंधों की अपेक्षा अधिकाधिक उतार–चढ़ावों के बावजूद विद्यमान रहता है।''[2]

1. बर्गेस एवं लॉक के अनुसार :– ''परिवार व्यक्तियों का एक समूह हैं, जो विवाह, रक्त एवं गोद लेने वाले संबंधों से जुड़े होते हैं, जो एक गृहस्थी का निर्माण करते है, जो पति–पत्नी, माता–पिता, पुत्र–पुत्री तथा भाई–बहन के रूप में अपनी–अपनी सामाजिक भूमिकाओं को निभाते हुए एक दूसरे से अन्तः संचार तथा अन्त क्रिया करते रहत हैं तथा एक सामान्य संस्कृति का निर्माण करते हैं।''[3]

2. मैकाइवर एवं पेज के अनुसार :– ''परिवार पर्याप्त निश्चित यौन संबंध द्वारा परिभाषित एक समूह है, जो पूर्ण तथा निश्चित रूप से सन्तान के जन्म तथा पालन पोषण की व्यवस्था करने की क्षमता रखता है।''[4]

3. इलियट एवं मैरिल के अनुसार :– ''परिवार को पति–पत्नी तथा बच्चों की एक जैविक सामाजिक इकाई के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। परिवार एक सामाजिक संस्था भी है और समाज द्वारा मान्य एक ऐसा संगठन भी है जिसके द्वारा कुछ मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है।''[5]

परिवार की उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि परिवार को

समिति, संस्था तथा एक सामाजिक इकाई के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसके सदस्य विवाह, रक्त–संबंधों या विधिवत् गोद लिये जान के कारण परस्पर जुड़े होते है। उनमें परस्पर स्नेह, सहानुभूति, सेवा और त्याग की भावना पाई जाती है।

''सामाजीकरण की दृष्टि से भी परिवार का सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि जन्म से व्यक्ति की विकासात्मक, संवेगात्मक और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार के भीतर ही होती है।''[6]

हिन्दी कथा साहित्य में परिवार का बहुत महत्व हैं। वास्तव में जब हम यह कहते हैं कि ''साहित्य समाज का दर्पण है'' तथा समाज की सबसे महत्वपूर्ण इकाई परिवार और उसके सदस्य हमारे समक्ष प्रत्यक्ष होते है और हम उनका विभिन्न स्थितियों, परिस्थितियों, समय आदि के अनुसार विश्लेषण करते है। कथा साहित्य को पारिवारिक परिवेश के मुख्य धारा से जोड़ने के लिए कथाकार अपनी कथा–वस्तु में परिवार के विभिन्न आयु–वर्ग के स्त्री–पुरूष, युवा, बच्चों की क्रियाओं का चित्रण करते है । प्रेमचंद साहित्य इस प्रकार के चित्रों भरा पड़ा है चाहे आप बूढ़ी काकी के रूप में परिवार की परित्यक्ता विधवा बूढ़ी स्त्री को देखें या मातृ–भक्त हामिद की बाल–सुलभ चेष्टाओं को देखें और मेले से चिमटा खरीद करवह किस तरह अपनी आवश्यकताओं का परित्याग कर बूढ़ी दादी की पीड़ा को दूर करने का प्रयास करता है। या फिर मृदुआ गर्ग की कहानियों में छिपी बालसुलभ चेष्टाओं या मन्नू भण्डारी की बाल मनोविज्ञान को कथाओं या फिर शिवानी की सुन्दर युवतियों का मनोविज्ञान या मृणाल पाण्डे क युवा नारी चरित्र चित्रित पाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि हर आयुवर्ग के पारिवारिक सदस्यों को कथाकार अपने कथा–फलक पर उतार कर व्यक्ति के मनोविज्ञान चरित्र उसकी सोच की ओर इंगित कर किसी न किसी रूप के परिवार को अपनी लेखनी की परिधि में बांध लेता है।

बाल–सुलभ क्रियाओं को चित्रित कर बाल मनोविज्ञान की ओर इंगित कर अथवा किशोरावस्था के हठीले, उमंगित, स्वप्नों या युवावस्था की मस्त प्रेममयी स्वप्न धारा में विचरते जीवन या प्रौढ़ावस्था के दायित्वों और वृद्धावस्था के वर्चस्वहीन जीवन का चित्रण अपने कथानकों में चित्रित कर कथा–विभिन्नता का स्वरूप कथाकार प्रदान कर पाता है।

भारतीय संस्कृति और परिवार में आश्रम व्यवस्था का चित्रण भी हिन्दी कथा साहित्य में एक विचारणीय बिन्दु होता है। समाजशास्त्रियों ने आश्रम व्यवस्था पर अपने विचार रखे हैं। प्रत्येक समाज में सामाजिक स्तरीकरण की एक व्यवस्था पाई जाती है। व्यक्तियों की आवश्यकताओं में, शारीरिक व मानसिक योग्यताओं में वैयक्तिकता होने के कारण व्यक्ति समूहों में विभाजित हो जाते है, जे उच्वतर और अधीनता के आधार पर सामाजिक संगठन का निर्माण करते हैं इन संगठनों की एक व्यवस्था होती है, जिसे सामाजिक स्तरीकरण के नाम से जाना जाता है। देशकाल और परिस्थितियों के अनुसार स्तरीकरण के आधार में अंतर होता है। इस स्थिति को भारतीय जीवन में वर्ण व्यवस्था का नाम दिया जाता है। वर्ण व्यवस्था का अर्थ है सामाजिक दायित्वों के निर्वाह का एक योजनाबद्ध तरीका जिसमें सामान्यतः ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र की व्यवस्था हैं।

ऋग्वेद में मानव जीवन की व्याख्या ''जीवेम् शब्दः शतम्'' हैं। उन्होंने मनुष्य की आयु 100 वर्ष मानी है जिसकी 25 वर्ष की आयु से चार भागों में विभाजित किया है। और प्रत्येक 25 वर्ष की अलग–अलग अवस्थाओं से नामांकित किया है। एक वर्ष से 25 वर्ष तक बम्हचर्य आश्रम, 26 से 50 वर्ष तक ग्रहस्थ आश्रम 51 से 75 वर्ष तक वानप्रस्थ तथा 76 से 100 वर्ष की आयु तक सन्यास आश्रम निश्चित किया गया है।

''जीवन के चार आश्रम व्यक्तित्व के विकास की चार सीढ़ियाँ है जिन पर क्रम से चढ़ते हुये व्यक्ति ब्रम्ह की प्राप्ति करता है।''[7]

''आश्रम का तात्पर्य तपस्वियों की कुटियाँ है जहाँ वे मानव की चार अवस्थाओं का अध्यापन करते हैं।''[8]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि आश्रम व्यवस्था वह व्यवस्था है जो व्यक्ति को संसार की सभी वास्तविकताओं से परिचित कराते

हुए प्रयासरत और क्रियात्मक जीवन व्यतीत करके परम सत्य को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती हो यह समाज और व्यक्ति के अन्योन्याश्रितता को व्यक्त करती है तथा उत्तम व्यक्तित्व के निर्माण की प्रेरणा देकर आदश समाज के निर्माण पर बल देती है। जिस प्रकार समाज को व्यवस्थित बनाने के लिये चार अवस्थाएँ अर्थात चार आश्रम बनाये गये है। उसी प्रकार जीवन को व्यवस्थित बनाने के लिये पुरूषार्थ की अवधि निर्धारित की गई है तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की स्थापना की गई है।

जिसमें इन्होंने समाज और परिवार के प्रत्येक पक्ष का स्पर्श करते हुए उसे कथा का रूप दिया है। इस प्रकार जयशंकर प्रसाद ने प्रेम जैसी कोमल भावना को आधार बनाकर अनेक कथाएँ लिखी है। चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने ''प्रथम दृष्टता प्रेम'' जैसी अमर स्थाई प्रेम भावना प्रस्तुत की है। इसी प्रकार जैनेन्द्र कुमार यशपाल, वृंदावन लाल वर्मा, भगवती चरण वर्मा, उपेन्द्र नाथ अश्क, कमलेश्वर राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी, शिवानी, मृदुला गर्ग, मृणाल पाण्डे, सुदर्शन, हिमांशु जोशी, चित्रा मृदुगल, ज्ञान रंजन तथा मालती जोशी, आदि ने परिवार पर केन्द्रित अनेक कहानियाँ लिखी हैं।

पारिवारिक सत्ता में भी परिवर्तन आया है। क्योंकि पहले आयु के अनुसार कर्ता को सवाच्च शक्तिमान माना जाता था अब वैयक्तिक योग्यता को महत्व दिया जाता है इसी प्रकार परिवार का प्रत्येक सदस्य निजी स्वार्थो से ग्रसित हो गया है।

कथा साहित्य में नारी के विभिन्न रूपों पर चर्चा की जाती है। उसकी सामाजिक स्थिति पर अनेक प्रश्न चिन्ह उठते रहे हैं। स्त्री शिक्षा, स्त्री स्वातंत्र्य पर सदा से स्त्री विमर्श होते रहे हैं। पौराणिक काल से आज तक नारी कथा साहित्य में एक सशक्त पात्र के रूप में चित्रित हुई है। जिसके विभिन्न रूपों को सदैव ज्वलंत विषय के रूप में चित्रित किया जाता है। आज भी स्त्री पात्रों के अभाव में कथालेखन कठिन माना जाता हे। क्योंकि समाज रचना में स्त्री–पुरूष की समान भागीदारी है। इसीलिए नारी के विभिन्न रूपों और चरित्रों का चित्रण लेखन का महत्वपूर्ण अंश माना जाता है।

भारतीय समाज में नारियों की स्थिति प्रत्येक युग में अनेक उतार–चढ़ाओं को देखती रही है। ''यत्र नार्यस्तु पुज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'' इसके पश्चात् भी अवस्था में थी। उन्हें समाज तथा परिवार में सभी प्रकार के पुरूषों के समान ही अधिकार प्राप्त था। यहाँ तक की ब्राम्हण ग्रंथों में लिखा गया है, कि पुरूष नारी के बिना धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। महाभारत काल में भी महिला शिक्षा का उचित प्रबंध था।

पी.एच. प्रभु के अनुसार ''जहाँ तक शिक्षा का सम्बंध था स्त्री पुरूषों में कोई भेद नहीं था इस युग में दोनों की सामाजिक स्थिति समान थी इस काल में स्त्रियों की रक्षा करना वीरता माना जाता था किन्तु फिर भी पुत्र प्राप्ति का महत्व था।''[9]

उत्तर वैदिक काल में नारी की स्थिति पुरूष के समान थी। किन्तु नारियों को वेदपाठ की मनाही थी और यज्ञ करने पर भी प्रतिबंध लगाया गया था। विधवा विवाह का निषेध था। किन्त् बाल विवाह प्रारंभ हो गया था। पुत्रो का जन्म अभिशाप माना जाता था।

धर्मयुग जिसे स्मृति युग भी कहा गया है। यहॉ पर नारी को सेविका और अबला का स्थान दिया गया। बाल्यपन में पिता युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में नारी को अनिवार्य रूप से रहना था।

मध्यकाल आते–आते बाल विवाह, पर्दा प्रथा, सतोप्रथा, बहु पत्नी प्रथा मानी गई। आर्थिक पराधीनता रही। जिसके कारण यह युग भारतीय संस्कृति में काल युग माना गया।

आधुनिक युग आते–आते नारी की स्थिति में सुधार होने लगा। समाज सुधारक सामने आने लगे। राजा राम मोहन राय ने सन् 1828 में ब्रहम समाज की स्थापना की और इन्हीं के प्रयत्न से सन् 1829 में सती प्रथा बंद की गई। स्वामी दयानन्द ने सन् 1875 में बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की। इसके पूर्व देवेन्द्र नाथ ठाकुर तथा केशवचंद्र सेन ने विशेष विवाह कानून पास करवाया। श्री भण्डारकर व रानाड़े आदि ने भी स्त्री शिक्षा तथा नारी अधिकारां के लिए आन्दोलन प्रारंभ किये। ईश्वरचंद विद्या

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सागर ने स्त्रियों का उद्धार किया। स्त्री शिक्षा का प्रचार–प्रसार किया, बहु विवाह प्रथा का विरोध किया, पुनर्विवाह को सरकार द्वारा वैद्य घोषित करवाया। गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन में स्त्रियाँ घरों से बाहर आकर बाहरी कार्य क्षत्र में प्रवेश करने लगी थी। गाँधी जी ने कहा है– ''जिस देश और समाज में नारी का सम्मान नहीं होता, वह सभ्य समाज नहीं कहा जा सकता। गाँधी जी के विचारों से प्रभावित हो कर स्त्रियों ने पर्दा प्रथा का विरोध कर चार दीवारी के बाहर निकलने का अवसर प्राप्त किया। स्वतंत्रता आंदोलन में भाग ले कर जल के सीखचों के भीतर भी गई। सन् 1921 में सर्वप्रथम अखिल भारतीय महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया और सन् 1941 में विश्व विद्यालय महिला संस्था की स्थापना हुई। सन् 1995 में कस्तूरबा गाँधी राष्ट्रीय स्मारक निधि की स्थापना की गई। इस संघ ने नारियों को आर्थिक सहायता प्रदान की तथा ग्रामोद्धार के लिए ग्राम सेविकाएँ तैयार की। इसी प्रकार भारतीय महिला राष्ट्रीय समिति तथा ईसाई पुत्री–समिति आदि ने भी अनेक कार्य किये।''[10]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्त्री स्थिति में सुधार के अनेक प्रयास तेज किये गये। अखिल भारतीय महिला संगठन ने महिला शिक्षा को विस्तृत रूप देने के लिए अखिल भारतीय शिक्षा कोश की स्थापना की और इसकी सहायता से अनेक महिला शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की जो ग्रामीण स्त्रियों की शिक्षा के लिये प्रयासशील थी। इन आन्दोलनों के फलस्वरूप सन् 1948 में हिन्दू विवाह अधिनियम, बाल–विवाह निरोधक अधिनियम, आदि के लिए सन् 1955 में उल्लेखनीय सामाजिक विधान पारित किये गय, जिनसे नारी स्थिति में निश्चय ही सुधार हुआ।

समाज में नारी की इन बदलती हुई स्थितियों को शंभूरत्न त्रिपाठी ने स्पष्ट किया है – ''वर्तमान का यह यथार्थ विवेचन भविष्य के लिये संकेत देता है कि भारत की भावी हिन्दू नारी अपनी सामाजिक बुराईयों से मुक्त होगी, अपना उत्तरोत्तर मानसिक विकास करेगी, पुरूषों के समान संसार के विविध क्षेत्रो में कार्य करेगी, आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होगी अर्थात् अबला से सबला होगी। उसकी प्रगति के चरण मानवता की ओर बढ़ेंगे और उनके विकास की गति कल्याण की ओर उन्मुमख होगी।''[11]

आज सरकार ने भी महिला कल्याण कार्यक्रम प्रारंभ किये हैं – जिनसे नारी उत्थान, सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार, प्राकार्यात्मक साक्षरता कार्यक्रम, स्व. रोजगार को प्रथम, प्रौढ़–शिक्षा, ग्रामीण महिला मण्डलों को कल्पना, विभिन्न व्यवसायों में प्रशिक्षण, समाज कल्याण बोर्ड द्वारा महिलाओं को रोजगार या नौकरी में सहायता, अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस का आयोजन कर महिलाओं क विकास पर कार्य प्रारंभ किया, जरूरतमंद एवं गरीब महिलाओं के लिए राष्ट्रीय ऋण कोश की स्थापना की गई, महिला समृद्धि कोश की स्थापना कर डाकघर में अपने खाते में 300/– जमा कर खाता प्रारंभ करने की नीति आई। राजनीति में 50 प्रतिशत महिलाओं का आरक्षण, राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना से गर्भवती महिलाओं को आर्थिक सहायता देना, महिला शिक्षा के लिए महिला विश्वविद्यालय, महिला बैंकिंग सुविधा के लिए महिला बैंक आदि के कारण भारत में नारी स्थिति मं अनेक बदलाव दिखाई पड़ते हैं।

वास्तव में अब प्रेमचंद पूर्व या प्रेमचंद की कहानियों की अबला या दु:खी विधवा नारी या परिवर्तन के लिए स्वतंत्रता के लिए खुली हवा में श्वास लेने के लिए तरसती नारी के स्थान पर प्रेमचंदोत्तर काल में स्वतंत्रता काम काजी, घर के बाहर खुली हवा में श्वास लेती, पुरूषों के कंधे से कंधा मिला कर चलती, आर्थिक रूप से स्वतंत्र, स्वावलंबी स्वयं के पैरों पर खड़ी आत्म विश्वास से भरी नारी के रूप में अपने अस्तित्व को स्थापित करती खड़ो दिखाई पड़ती है।

हिन्दी कथा साहित्य में नारी की पहचान एक सामान्य परमुखापेक्षी अबला से प्रारंभ हो कर समाज में अपने महत्वपूर्ण स्थान पर सबला रूप में स्थापित नारी तक चित्रित हैं वह माँ हैं, सास है, पत्नी है, बहू हैं, बेटी हैं किन्तु वह उच्च पदों में पदस्थ उच्चाधिकारी भी हैं, वह डाक्टर हैं इंजीनियर हैं, कलेक्टर हैं, न्यायाधीश हैं और राजनीति के सर्वोच्च पदो पर भी आसीन भारतीय नारी हैं। प्रेमचन्द ने अपन साहित्य में नारी का पुरूषों को अपने प्रेमजाल में फसाने वाली नारी

और उनके हृदय परिवर्तन के अनेक दृश्यों को भी चित्रित किया हैं जैसे गबन की जोहरा बाई।

हिन्दी कथा साहित्य में नारी अपने अनेक रूपों में वर्णित हुई हैं। सभी उम्र की स्त्रियों के विभिन्न चरित्र हिन्दी कथा साहित्य को समृद्ध बना सके हैं। यदि युवा सुन्दरी नारी चित्रण शिवानी की विशेषता हैं तो वृद्धा पात्रों के चित्रण में प्रेमचन्द सिद्धहस्त हैं जयशंकर प्रसाद ने भी नारी की कोमल भावनाओं का स्पर्श करते हुए नारी के प्रति अपनी अपार श्रद्धा चित्रित की हैं। तात्पर्य यह ह कि जिस प्रकार नर के बिना नारी अधूरी होती हैं, उसी प्रकार नारी के बिना कथा अधूरी–सी प्रतीत होती है क्योंकि नारी पात्रों के विविध रूप कथा को पूर्ण बनाते हैं, कथा को समृद्ध बनाते हैं और कथा विकास में सहयोगी होते हैं।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. श्रीमति सुरजीत – समाज मनोविज्ञान पृ.सं. 3, प्रकाशन लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
2. रॉल्फ लिप्टन – दि फैमिली पृ.सं. 13।
3. ई.डब्ल्यू. बर्गेस एण्ड एच.जे. लोक – दि फैमिली पृ.सं. 8।
4. आए.एम.मैकाइवर एण्ड सी.एच. – सोसायटी एन इन्ट्रोडक्ट्री एनालिसिस पृ. सं. 182।
5. सी.एम.ए. इलियट एण्ड एफ.ई. मैरिल – सोशल डिसऑगनाइजेशन पृ.सं. 329।
6. सुरजीत कौर – समाज मनोविज्ञान पृ.सं. 25।
7. महाभारत शांति पर्व – पृ.सं. 241।
8. मनोरमा जौहरी – वर्णाश्रम व्यवस्था – पृ.सं. 87।
9. पी.एच.प्रभु – भारतीस समाज में नारी की स्थिति – पृ.सं. 25।
10. श्रीमति सुरजीत – समाज मनोविज्ञान पृ.सं. 57।
11. इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका – पृ.सं. 80।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

जबलपुर रेल मंडल : परिचयात्मक विश्लेषण

अभिलाषा मिश्रा
शोधार्थी, जबलपुर

जबलपुर भारत के मध्यप्रदेश राज्य का एक शहर है। यहां पर मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय तथा राज्य विज्ञान संस्थान है। इसे मध्यप्रदेश की संस्कारधानी भी कहा जाता है। थलसेना की छावनी के अलावा यहां भारतीय आयुध निर्माणियों के कारखाने तथा पश्चिम मध्य रेलवे का मुख्यालय भी है।

ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर जबलपुर ब्लॉक रेल यातयात का प्रारंभ 8 मार्च 1870 से हुआ।

<u>इतिहास</u> – पुराणों और किवंदतियों के अनुसार इस शहर का नाम पहले जाबालिपुरम् था। क्योंकि इसका सम्बन्ध महर्षि जाबालि से जोड़ा जाता है। जिनके बारे में कहा जाता है कि वह यहीं निवास करते थे। 1781 के बाद ही मराठों के मुख्यालय के रूप में चुने जाने पर इस नगर की सत्ता बढ़ी। बाद में यह सागर और नर्मदा क्षेत्रों के ब्रिटिश कमीशन का मुख्यालय बन गया। यहां 1864 में नगर पालिका का गठन हुआ था। यहां पर एक पहाड़ी पर मदनमहल स्थित है जो लगभग 1100ई. में राजा मदनसिंह द्वारा बनाया गया एक गौंड़ महल है। इसके ठीक पश्चिम में एक गढ़ है जो 14वीं शताब्दी के चार स्वतंत्र गौंड़ राज्यों का प्रमुख नगर था। भेड़ाघाट, ग्वारीघाट और जबलपुर से प्राप्त जीवाश्मों से संकेत मिलता है कि यह प्रागैतिहासिक काल के पुरापाषाण युग के मनुष्य का निवास स्थान था। मदनमहल नगर में स्थित कई ताल गौंड़ राजाओं के द्वारा बनवाये गये कई मंदिर इस स्थान की प्राचीन महिमा की जानकारी देते हैं। इस क्षेत्र में कई बौद्ध हिन्दू और जैन भगनावशेष भी हैं। कहते हैं कि जबलपुर में स्थित 52 प्राचीन ताल तलैयों ने यहां की पहचान को बढ़ाया ।

<u>भौगौलिक स्थिति</u> – विंध्य पर्वत श्रृंखला में स्थित यह नगर पवित्र नर्मदा नदी के तट पर स्थित है। जबलपुर भारत के प्रमुख शहरों–दिल्ली तथा मुम्बई से हवाई मार्ग से जुड़ा हुआ है।

<u>जनसंख्या</u> – 2001 की जनगणना के अनुसार जबलपुर नगरनिगम क्षेत्र की जनसंख्या 9,51,469 है। जबलपुर छावनी क्षेत्र की जनसंख्या 66,482 और जबलपुर जिले की कुल जनसंख्या 21,67,469 है।

<u>उद्योग और व्यापार</u> – यह नगर सामरिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। यहां तोप गाड़ी बनाने का केन्द्रीय कारखाना, शस्त्र निर्माण खाना और एक शस्त्रागार स्थित है। यहां के प्रमुख उद्योगों में खाद्य प्रसंस्करण आरामिल और विभिन्न निर्माण शामिल हैं। कृषि तथा खनिज – इसके आसपास के क्षेत्रों में नर्मदा नदी घाटी के पश्चिम छोर पर स्थित एक अत्यधिक उपजाऊ गेंहू की खेती वाला इलाका हवेली शामिल है। चावल, ज्वार, चना और तिलहन आसपास के क्षेत्रों की अन्य महत्वपूर्ण फसलें हैं। यहां लौह अयस्क चूना पत्थर बॉक्साइड, चिकनी मिट्टी, अग्निसह मिट्टी, शैलखड़ी, फेल्स्पार और मैगनीज और गेरू का व्यापक पैमाने पर खनन होता है।

पश्चिम मध्य रेल 1 अप्रैल 2003 को अस्तित्व में आया, इसका मुख्यालय जबलपुर है। पश्चिम मध्य रेलवे को मध्य रेल के जबलपुर मंडल एवं पश्चिम रेलवे के कोटा मंडल को मिलाकर गठित किया गया है। यह रेलवे भारतीय रेल का हृदय है, क्योंकि इसमें दिल्ली–मुम्बई राजधानी मार्ग का प्रमुख मार्ग दिल्ली–चेन्नई, ट्रंक मार्ग एवं मुम्बई–हावड़ा मार्ग शामिल हैं। यह रेलवे उत्तरी क्षेत्र को पश्चिम एवं दक्षिण क्षेत्र से जोड़ती है और साथ ही भारत के पश्चिमी क्षेत्र को पूर्वी क्षेत्र से जोड़ती है। पमरे के फुल ट्रंक किलोमीटर का 73 प्रतिशत मध्यप्रदेश में 25 प्रतिशत राजस्थान में एवं 2 प्रतिशत उत्तर प्रदेश में है। पमरे में कुल 296.4 रूट किलोमीटर है। जिसमें 1517 रूट किलोमीटर विद्युतिकृत है। महत्वपूर्ण मूल यातयात

में सीमेंट, किलंकर तथा खाद शामिल है। सीमेंट एवं किलंकर का लदान जबलपुर मंडल के सीमेंट उद्योग क्षेत्र में पड़ने वाले स्टेशनों – झुकेही, मईहर, सतना, दमोह, तुर्की रोड, हिनौता, रामबन और ब्यौहारी तथा कोटा मंडल के लाखेरी, दाड़देवी, मोडक स्टेशनों से को जाती है। उर्वरकों का लदान कोटा मंडल के उर्वरक उत्पादन क्षेत्र के पास के स्टेशनों – दाड़देवी एवं भौंरा स्टेशनों तथा भोपाल मंडल के लाखेरी दाड़देवी मोडक स्टेशनों से की जाती है। उर्वरकों का लदान कोटामंडल के उर्वरक उत्पादन क्षेत्र के पास के स्टेशनों दाड़देवी एवं भौंरा स्टेशनों तथा मंडल के विजयपुर स्टेशनों से किया जाता है। पमरे पर लदान की जाने वाली अन्य उपभोक्ता वस्तुओं में से जबलपुर मंडल चूना पत्थर, डोलोमाइट, खाद्यान, लौह अयस्क, रॉक, फास्फेट एवं डीओसी, भोपाल मंडल से एलपीजी पीओसी कंटेनर, खाद्याान एवं लौह अयस्क तथा कोटा मंडल से डीओसी कंटेनर खाद्यान एवं सरसों के तेल का लदान किया जाता है। इस रेलवे में दैनिक औसत लदान लगभग 1361 वेगन है तथा जनवरी 2011 तक 25.84 मीट्रिक टन का लदान किया गया जो वर्ष 2009–10 की समतुल्य अवधि से 13.88 प्रतिशत अधिक ह। वर्ष 2010–11 (अप्रैल से दिसम्बर तक) में इस रेल का सम्भाजित माल भाड़ा अर्जन रूपए 2876 करोड़ है। जो पिछले वर्ष की तुलना में 3.45 प्रतिशत अधिक है।

पमरे का क्षेत्र प्राकृतिक सुंदरता से भरा पड़ा है। पमरे के कार्यक्षेत्र में या आसपास कान्हा, बांधवगढ़, शिवपुरी आर रंणथम्बोर का विश्व प्रसिद्ध राष्ट्रीय वन अभ्यारण है। जहां विश्व के कोने–कोने बड़ी संख्या में पर्यटक आते हैं। कान्हा टाइगर रिज़र्व में 940 वर्ग किलोमीटर में अपने नैसर्गिक व्यापकता के साथ फैला है। कान्हा एशिया में सर्वश्रेश्ठ राश्ट्रीय उद्यान का दर्जा पाने का हकदार है। क्योंकि यहां का माहौल वन्य प्राणियों को स्वर्गिक अनुभूति प्रदान करता है। इस कारण यह वन्य प्राणियों के प्रेमी–प्रेमियों का आकर्शित करता है। बांधवगढ़ एक छोटा राश्ट्रीय उद्यान है, परंतु यहां भारत में सबसे ज्यादा बाघों की संख्या का घनत्व है। रणथम्बोर तथा अरावली के सुदूर पूर्वोत्तर में 932 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला टाइगर रिजर्व है। बाघों के अलावा यहां पर सांभर, तेंदुआ, चीता, जंगली सुअर, लकड़बग्घा, सियार एवं अन्य जानवरों की प्रजाति पाई जाती है। केवला देव पक्षी अभ्यरण जो राजस्थान के भरतपुर में स्थित है एक अन्य प्रसिद्ध पर्यटन क्षेत्र है। जहां विश्व के अन्य भागों से पक्षी प्रवास हेतु यहां आते हैं। सतपुड़ा और विंध्याचल पहाड़ी क्षेत्र में प्राकृतिक सुंदरता से भरपूर अन्य सुरम्य स्थल हैं। जिनमें से एक पचमढ़ी है। जबलपुर के पास भेड़ाघाट में नर्मदा नदी के दोनों संगमरमर क पहाड़ों के मध्य से निकलती नर्मदा में नौकायन करते समय उत्कृश्ठ दृश्य उत्पन्न होता है। यहां नर्मदा का जल इस तरह गहरी खाई में गिरता है मानो जैसे धुंआ निकल रहा हो। यह मनोरम दृश्य देखते बनता है। खजुराहो के मंदिर साँचो का स्तूप तथा भीमबेटका की गुफाएं चित्र ऐतिहासिक एवं सांस्कृति धरोहरें है। धर्म परायण पर्यटकों हेतु मईहर स्थित माँ शारदा देवी मंदिर, श्रीधाम स्थित श्री राजेश्वरी मंदिर, बांधकपुर के नज़दीक महादेव मंदिर, श्री महावीर जी और विक्रमगढ़ आलोट में स्थित, भोपाल स्थित जामा मस्जिद और ईमाम बाड़ा कुछ प्रमुख आकर्षण स्थलीय हैं।

पश्चिम मध्य रेल जो भारत के हृदय स्थल में परिचालित है में, मालभाड़ा एवं यात्री यातायात खण्ड में विकास की काफी संभावनाएं हैं। यह रेल अपने लगभग 60 हजार कर्मचारियों के अनुशासन, कठोर परिश्रम, समर्पण एवं नवीन विचारों के माध्यम से अपन सम्मानीय ग्राहकों की उच्चतम् मानक वादी सेवाएं देने के लिये प्रतिबद्ध हैं।

कर्मचारियों की संगठनात्मक संरचना

कुल कर्मचारियों की संख्या 31–12–2014 के अनुसार 19425

ग्रुप ए	66
ग्रुप बी	66
ग्रुप सी	10383
ग्रुप डी	8879
अन्य	31

लिंग आधार पर कर्मचारियों का वर्गीकरण

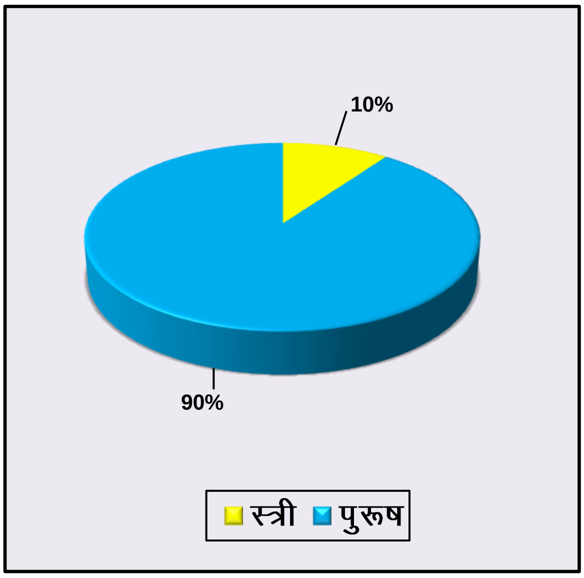

विभागीय आधार पर कर्मचारियों का वर्गीकरण

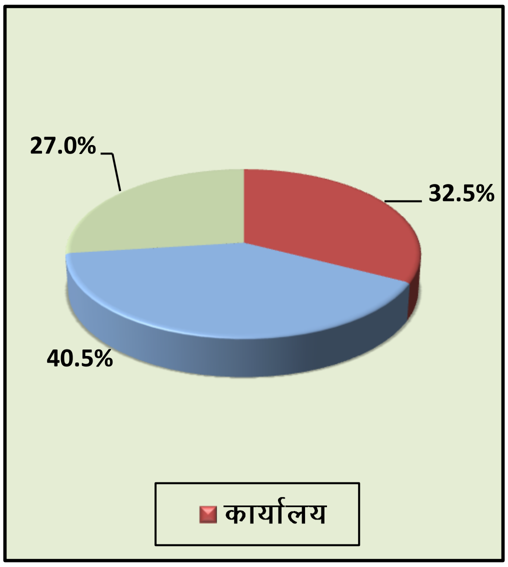

कार्य की श्रेणी के आधार पर कर्मचारियों का वर्गीकरण

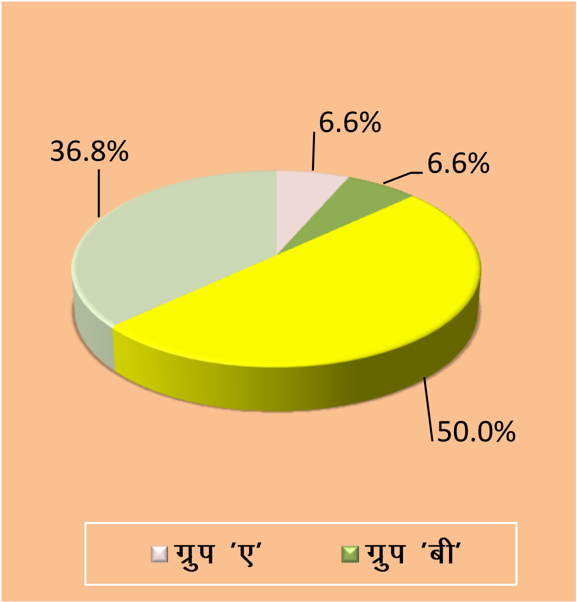

आयु के आधार पर कर्मचारियों का वर्गीकरण

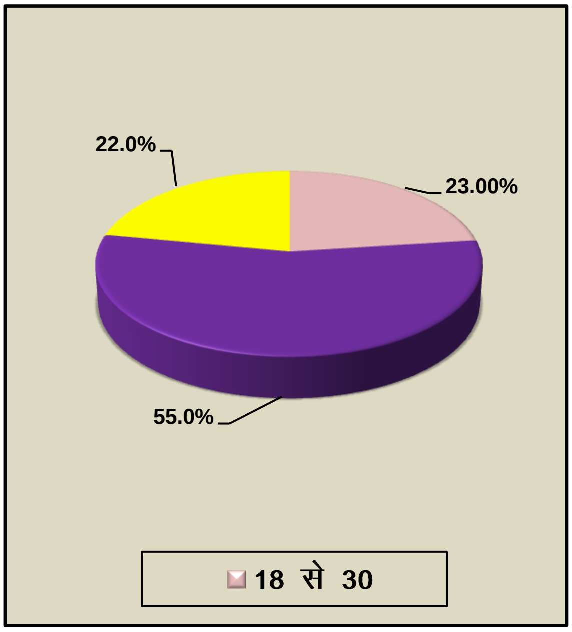

जबलपुर रेल डिवीजन एवं प्राप्तियाँ (रूपये करोड़ में)

वर्ष	औसत प्रतिदिन	मल ढुलाई से प्राप्तियाँ	औसत पतिदिन	यात्री संख्या
2008-9	3.26	1191.70	1.16	423.40
2009-10	3.60	1338.99	1.25	455.56
2010-11	4.22	1454.39	1.33	484.46
2011-12	4.23	1546.63	1.47	537.33
2012-13	4.85	1768.44	1.58	574.91
2013-14	5.30	1934.41	1.54	562.26
2014-15	6.05	2209.94	1.47	538.31
अगले वर्ष हेतु लक्ष्य	6.62	2416.91	1.59	579.81

प्राप्तियों जबलपुर रेल डिवीजन द्वारा विभिन्न वर्शों की प्राप्तियाँ– वर्ष 2008–09 में माल ढुलाई पाप्तियाँ 1191.81 तथा यात्री थोड़े से प्राप्तियाँ 423.40 लाख (पैसेंजर) यात्री द्वारा भाड़ा प्राप्त किया गया। 2009–10 में माल ढुलाई से प्राप्ति 1338.99 करोड़ थी वहीं यात्री 455.56 लाख यात्रियों द्वारा यात्रा की गई। वर्ष 2010–11 माल ढुलाई प्राप्ति 1541.39 करोड़ भी वहीं यात्री भाड़ा 484.46 लाख यात्रियों से प्राप्त किया गया। वर्ष 2011–12 में माल ढुलाई से प्राप्तियाँ लगभग 1546.61 करोड रही वहीं 537.33 यात्रियों से यात्री भाड़ा प्राप्त किया गया। वर्ष 2012–13 में माल ढुलाई से प्राप्तियाँ 1768.44 करोड़ रही वहीं 574.91 लाख यात्रियों से यात्री भाड़ा प्राप्त किया गया। वर्ष 2013–14 में माल ढुलाई से प्राप्तियाँ 1934.41 करोड़ की प्राप्तियाँ हुई तथा वहीं 562. 26 लाख यात्रियों से यात्री भाड़ा प्राप्त किया गया। वर्ष 2014–15 में माल ढुलाई से प्राप्तियाँ 2209.94 करोड़ थी वहीं 562.26 लाख यात्रियों से यात्री भाड़ा प्राप्त किया गया।

संदर्भ ग्रंथ

1. रेलवे सेवा नियम एवं कानून संहिता, बाहरी ब्रदर्स 2013
2. Annual Reports and Accounts of Indian Railways 2008-2009.
3. गुप्ता आर. ''भारतीय रेलवे'' रमेश पब्लिशिंग हाउस.
4. वार्ष्णेय डॉ.जे.सी. ''भारत में परिवहन'' पुस्तक सदन ग्वालियर.
5. ''भारतीय रेल एक परिचय'' उपकार प्रकाशन.

अन्य संदर्भ

1. भारतीय रेलवे की वार्षिक सांख्यिकीय रिपोर्ट.
2. जबलपुर डिवीज़न की वार्षिक रिपोर्ट.
3. भारतीय रेल मासिक पत्रिका.
4. विविध समाचार पत्र–पत्रिकाएँ
5. भारतीय रेलवे वेबसाइट : www.wcr.indianrailways.gov.in
6. ''भारतीय रेलवे पोर्टल''

बघवार सीमेण्ट प्लाण्ट में कार्यरत कर्मचारियों की वर्तमान स्थिति

महेन्द्र कुमार रैना
अर्थशास्त्र विभाग शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी) महाविद्यालय रीवा जिला–रीवा (म.प्र.)

प्रस्तावना : सीमेण्ट उद्योग देश के वृहत् उद्योगों की श्रेणी में शामिल है, अतएव इसमें चूना पत्थर के उत्खनन से लेकर उत्पादन व विचलन तक अनेक विभाग है जिनमें कार्यरत स्थाई व अस्थाई कार्मिकों का कार्य विभाजन पृथक–पृथक किया गया है। साधारणतः कार्मिक एवं प्रशासनिक विभाग उपकम का प्रमुख विभाग होता है इसमें पदस्थ अधिकारी व कर्मचारी स्टाफ समूह में सम्मिलित किये जाते है। बघवार स्थित जे.पी. सीमेण्ट प्लाण्ट में मानव संसाधन विभाग के अतिरिक्त लेखा/वित्त, विपणन, खदान, कय, यांत्रिकी–मैकेनिकल, सिविल, इलक्ट्रिकल, पावर हाउस, स्टोर इत्यादि विभाग है। प्रत्येक विभाग में उपाध्यक्ष महाप्रबंधक एवं उपाध्यक्ष–उपमहाप्रबंधक होता है। इसके बाद कमशः प्रबंधक, उपमहाप्रबंधक, विभागाध्यक्ष, उपविभागाध्यक्ष, यंत्री, फोरमैन तथा श्रमिक में कुशल व अर्द्धकुशल श्रमिक सभी विभाग में होते ह किन्तु तकनीकी विभाग में सलाहकार एवं विशेषज्ञ भी नियुक्त किये जाते है। इन विभागों में स्थाई कार्मिकों को ही चिकित्सा, आवास, सवैतानिक अवकाश, अध्ययन अवकाश, बोनस इत्यादि लाभ प्रबंधन द्वारा किये जाते है।

खदान एवं परिवहन में कार्यरत अस्थाई मजदूरों को शिक्षा एवं साक्षरता की कमी तथा चा रहता है। नशा, जुआ, सट्टा की बुरी लतें होने से तथा सीमेण्ट तथा चूना पत्थर की धूल से इनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव अधिक होता है फिर भी उन्हें चिकित्सकीय सुविधा से वंचित रखा जाता है। सीमित आय व अधिक अपव्यय से आर्थिक तंगी की स्थिति में होने से सूदखोरों के चंगुल में फंस जाते हैं, जिससे इनका आर्थिक शोषण बढ़ जाता है। आवासीय सुविधा न मिलने से झुग्गी झोपड़ी में जीवन–यापन करते है।

उपकम व खदान में कार्यरत नियमित अधिकारियों/कर्मचारियों को रियायती आवासीय चिकित्सीय, विद्युत सुविधाओं के अतिरिक्त बोनस, अवकाश नगदीकरण, उच्च अध्ययन अवकाश, संवैतानिक अवकाश इत्यादि लाभ प्राप्त होते हैं। वेतन से नियमानुसार कटौती व नियोक्ता के अंशदान से सेवानिवृत्ति के उपरांत भी आय की सुनिश्चितता बनी रहती है। नियमित कार्यरत कार्मिक के अशिक्षित होन तथा नशा, जुआ, सट्टा की गंदी आदतों से दूर रहने से अपव्ययी नहीं होते फलस्वरूप इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी रहती है जो इनके रहन–सहन व खानपान से झलकती है। इनका सामाजिक व आर्थिक जीवन स्तर ऊं

किसी उपकम की सफलता वहां कार्यरत कर्मचारियों की स्थिति निम्नानुसार है –

सारणी – 1
बघवार सीमेण्ट प्लाण्ट में कार्यरत श्रमिक

क.	श्रम के प्रकार	संख्या	कुल	प्रतिशत
1.	प्रबंधकीय	110	110	11.0
2.	पर्यवेक्षक	517	517	51.7
3.	कुशल	647	647	64.7
4.	अर्द्ध–कुशल	893	893	89.3
5.	अकुशल	567	567	56.7
6.	लिपिक	476	476	47.6
	याग	3210	3210	

स्रोत : बघवार सीमेण्ट प्लाण्ट बघवार

सारणी – 2

क.	श्रम के प्रकार	मूल वेतन
1.	प्रबंधकीय	13575–27575 रूपये
2.	पर्यवेक्षक	8575–13575 रूपये
3.	कुशल	3010–3600 रूपये
4.	अर्द्ध–कुशल	2953–3240 रूपये
5.	अकुशल	2940–3066 रूपये
6.	लिपिक	2035–6235 रूपये

स्रोत : बघवार सीमेण्ट प्लाण्ट बघवार

कार्य के घंटे :– कारखाने में कार्यरत श्रमिकों एवं कर्मचारियों से 4 शिफ्टों के अंतर्गत कार्य लिया जाता है। प्रथम तीन शिफ्ट, शिफ्ट 'ए' पाली 'बी' व शिफ्ट 'सी' के नाम से जानी जाती है इन तीन शिफ्टों में संयंत्र में कार्यरत श्रमिक अपनी–अपनी निर्धारित पाली में संयंत्र में कार्य करते है।

1. पहली शिफ्ट सुबह 6 बजे से दोपहर 2 बजे तक
2. दूसरी शिफ्ट दोपहर 2 बजे से रात्रि 10 बजे तक
3. तीसरी शिफ्ट रात्रि 10 बजे से सुबह 6 बजे तक
4. सामान्य शिफ्ट सुबह 8 बजे से दोपहर 1 बजे तक एवं दोपहर 2:30 से शाम 9:30 बजे तक।

इसके अतिक्ति एक सामान्य शिफ्ट भी है जिसमें इकाई से प्रशासकीय अधिकारी एवं कर्मचारी अपने–अपने निर्धारित विभागों में प्रशासकीय सेवाएं करते है। सामान्य शिफ्ट सुबह 8 बजे से शाम 5:30 तक चलती है इसमें दोपहर 1 से 2:30 बजे तक डेढ़ घंटे का समय भोजन अवकाश का रहता है। अन्य शिफ्टों में कारखाना अधिनियम की व्यवस्था के अधीन अवकाश की व्यवस्था है।

बघवार सीमेण्ट प्लाण्ट में श्रमिकों की आपूर्ति :– कारखानें में कार्यरत कुशल श्रमिकों में 80 प्रतिशत कुशल श्रमिक सीधी जिले से बाहर के है, 20 प्रतिशत श्रमिक सीधी जिले का प्रतिनिधित्व करते है। अकुशल श्रमिकों में से 70 प्रतिशत श्रमिक सीधी जिले के व 30 प्रतिशत श्रमिक देश के अन्य भागों से है। इससे स्पष्ट है कि सीधी जिले में कुशल श्रमिकों का अभाव है जो कि जिले की बेरोजगारी की समस्या का प्रमुख कारण है।

मजदूरी नीति :– मजदूरी से आशय उस भुगतान से है जो श्रमिकों को मालिक/नियोक्ता द्वारा उनके किये गये कार्य के प्रतिफल स्वरूप दी जाती है। उद्योग तथा अन्य उपक्रमों में नियोक्ता से श्रमिक द्वारा किये गये संविदा की आय से मजदूरी कहा जाता है जिसे श्रमिक द्वारा श्रम के प्रतिफल रूप में स्वीकारा जाता है। जब उपक्रम में श्रमिकों की भर्ती की जाती है उसी समय मजदूरी राशि निर्धारित कर ली जाती है। किसी भी वस्तु का मूल्य निर्धारण प्रायः मांग पूर्ति के आधार पर किया जाता है, किन्तु मजदूरी का निर्धारण कार्य की उत्पादकता व महत्ता के आधार पर किया जाता है परतु मजदूरी को श्रम बाजार में स्वतंत्र छोड़ दिया जाये तो देश में जनसंख्या आधिक्य के कारण श्रम की आपूर्ति अधिक होने से श्रमिकों, नियोक्ता की सौदाबाजी शक्ति अधिक होगी। फलस्वरूप श्रमिको को शोषण से बचाना दुष्कर हो जाएगा और प्राप्त मजदूरी से उनका जीवन निर्वाह करना मुश्किल। जिससे औद्योगिक अशांति निर्मित होगी। इसलिए श्रमिकों को शोषण से मुक्त करने सरकारी हस्तक्षेप नितांत आवश्यक हो गया। फलस्वरूप सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 में पारित कर न्यूनतम मजदूरी नीति निर्धारित की गई। वर्तमान में वेज बोर्ड द्वारा निर्धारित दरों के अनुसार ही बघवार सीमेण्ट उद्योग मजदूरी का भुगतान करता है।

संदर्भ सूची :

1. ममोरिया डॉ. चतुर्भज एवं दशोरा मोहनलाल – सेवीवर्गीय प्रबंध एवं

औद्योगिक संगठन, साहित्य भवन प्रकाशन 2001

2. व्यक्ति सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी।

3. E.F.L. Breach (Ed) Principles & practicw of Management 1959

4. Sharma M.P., public Administration in theory & practice, Kitab Mahal Allahabad 1972

A Thrust on Edward Said's Orientalism: Politics of Representation

Dr. Mahendra Jagannath Dutte
Assistant Professor, Department of Education Social Science and Humanities
Regional Institute of Education, Bhopal

Abstract :- Edward Said, a cultural theorist in twentieth century, raises question of cultural difference and politics of representation in his most coveted book Orientalism. He elaborates on the prejudiced, biased view of the European about the cultures of erstwhile colonies. He has thrown light on the aspects of Orientalism and succeeded to raise voice against the Western cultural hegemony and to provide a methodology of writing back to power. The book paved the ways of new thinking in the domain of postcolonial studies. It has been a foundation text that examines the history of colonial and postcolonial east. Orient and occident are binary concept. These terms are used as cryptic short hand way to denote not just geographical spaces but also to certain cultural values. Said stated that instances of orientalism as a binary way of thinking can traced as far back as the Greek tragedies of 5th century. He illustrated, citing certain examples, how the orient was presented through Eurocentric point of view. This can be taken as politics of representation to justify their rule over colonized.

Keywords :- Orientalism, politics, binary, discourse etc.

The Arab-Israel war in 1967 and its aftermath, off course, remained instrumental to change the course of Said's life and he had been transformed from a literary critic into cultural theorist. He started taking interest in politics and became critical of Zionist expansionism and western misrepresentation of the Arab and Palestinians. He authored more than twenty books, several essays and articles and delivered lectures in various colleges and universities all over the globe.

Before Said, different thinkers wrote on western representation of orient and criticised its falsifying nature. The 1960s and early 1970s saw a series of books dealing with the depiction of Islam and Orient in literary and cultural texts in West. To cite some of the texts that published during this time are: Norman Daniel's Islam and the West: The Making of an Image (1960), which records the biased view about the Islamic Middle East in Western literature since the middle ages. He states that Christian civilization developed a negative image of Islam in medieval period for defence mechanism to deal with civilization that was far superior to European. A. L. Tibwai in his English Speaking Orientalism: A critique of their Approach to Islam and Arab Nationalism (1964) criticises Orientalits' stereotyped perception of medieval image of east. Sayed Hussain Alatas in his work, The Myth of Lazy Native (1977) tries to reveal how myths of Orientals persist in the writings of westerners and he insists to dismantle such myths. But above all, Edward Said's towering book, Orientalism (1978) which untie the link between colonial power and Orientalist knowledge and examines the denotations and connotations of orientalism and the history of colonial and postcolonial east.

Orientalism (1978), the first book of oriental trilogy, the other two being Covering Islam (1981) and The Question of Palestine (1979) is about the cultural representations that are bases of orientalism. It is defined as West's patronizing representations of the east. It is perhaps the most influential book in the last four decades in the field of literature, history, political science, culture, anthropology etc. and remained a magnum opus of the twentieth century. Orientalism, as Said puts it, is "a way of coming to terms with the orient that is based on the Orient's special place in European Western experience."(Said:1978) His main argument is that European colonial domination was integrally associated with how orient was conceptualized, researched and talked

about in Europe. In other words what Said wants to say that the economic and military domination of the orient was tied up with the discourse about orient and it is this discourse about the orient that Said refers as 'Orientalism'. This is built upon Michel Foucault's argument on discourse, he theorizes it in his Archaeology of Knowledge (1967) and other works as the way in which knowledge is constituted by dominant groups in society by imposing specific knowledge and values upon dominated groups. He strongly argues that power, knowledge and discursive manifestation of knowledge are integrally related to each other.

Structurally the text is divided into three parts. The first part "The Scope of Orientalism" throws light on western representation of the orient. Said calls it "orientalising the orient" in the second part "Orientalist Structures and Restructures" Said tries to reveal how the literary, historical and philological writers in the late eighteenth and nineteenth century have looked upon it. In the third part, "Orientalism Now" he examines modern orientalism, which, he talks, is continuation of the practices of British and French orientalism in the contemporary American discourses on orient.

Orientalism refers to east and things related to east and the reference point is Europe. The terms orient and occident are binary concepts as stated by Rudyard Kipling in his The Ballad of East and West as "East is east and west is west and never shall the twain meet." They are used as cryptic short hand way to denote not just geographical spaces but also to certain cultural values that include things like food habits, dress code, bodily postures and even moral conduct. These terms offer a kind of matrix to conceptualize the world by dividing it into two mutually exclusive categories. Said states three aspects of Orientalism.

(1) Orientalism is a particular way of thinking

(2) Orientalism is an academic discipline

(3) Orientalism as a corporate institution for dealing with the orient.

According to Said instances of orientalism as a binary way of thinking can be traced as far back as the Greek tragedies of 5th century. Orient was imagined not just as a land of Asia but as the other of European self. Whatever Europe stood for, the orient stood for the foil, exactly opposite thing. If occident considers itself to be a pinnacle of civilization, then off course, by contrast orient came to represent the depths of barbarism and moral and cultural depravity. It means orientalism presents the orient as dark and ingenerate counterpart of occident which is simultaneously foreign, loathsome and excitingly exotic. This has been prevalent in Europe for more than million years but during the heydays of European colonialism this discourse enjoyed special relevance and it muted itself into an academic discipline. Hence we came to second aspect of orientalism.

"Anyone who teaches, writes about or researches the orient" is an orientalist and what this person does is orientalism. During late18th century, when European powers started military conquering, it emerged as academic discipline so, there is inherent connection as Said states, between military conquest of orient and emergence of orientalism as an academic discipline. Earlier European access to the orient was limited but military conquest allowed European scholar to scrutinize the orient more closely. In 1798 Napoleon Bonaparte led a military expedition to Egypt. The scholars and scientists transformed the occupied territory into an object of enquiry and a field of systematic knowledge. It no longer remained just a distant exotic land but became one of the objects of scientific enquiry.

Such an exercise to systematically know the conquered country is also visible in the effort of Warren Hastings (1732-1818), the first Governor General of India. Hastings, along with two colonial officers: William Jones and Nathanial Hollhead researched, compiled and published voluminously

on various aspects related to India. Oriental studies by the end of the 19th century had become an integral part of the western academia. The huge amount of documents that this academic orientalism produced was soon acknowledged in Europe as the most authentic way of knowing about the orient so much so that someone like J. S. Mills could justify writing a multivolumed history of India just by consulting the available documents on India available in England without visiting India. Mills himself refers in the Preface, Volume I The History of British India\

"This writer (…) has never been in India; and, if he has any, has a very slight, and elementary acquaintance with any of the languages of the east. (…) (Yet) it appeared to me, that a sufficient talk of information was now collected in the languages of Europe, to enable the inquirer to ascertain every important point, in the history of India."

Macaulay dismisses the whole tradition of Indian or rather Sanskrit or Arabic literature without knowing about any of these languages, "I have no knowledge of either Sanscrit or Arabic. But (…) I have conversed both here and at home with men distinguished by their proficiency in the Eastern tongues… I have never found among them who could deny that a single shelf of a good European library was worth the whole native literature of India and Arabia."

Now this question is easily understood and explained if we go back to insight of Michel Foucault who pointed out that the discourse that is generated, circulated and ratified by the institutions of powerful is the discourse which gains acceptance as the truth. Said uses this notion of discourse to comment on the organized discipline of orientalism "by which the European culture was able to manage- and even produce- the orient politically, sociologically, ideologically, and imaginatively during the post- Enlightenment period." (Said:1978) Similarly after the European conquest of the orient it was the discourse of orientalism which was validated and circulated by the institutions of the occident with all its prejudices, with all its problematic research methodology. These various institutions which included colonial legislature and judiciary, schools, colleges and universities set up in the colonized part of the world to propagate western learning. These institutions together they formed what Edward Said identifies as a third aspect of orientalism. These were the institutes which connected colonial power with colonial knowledge. On the one hand as Institutes representing the authority of the colonizing people it ratified the biased views and partial researches as the truth about orient, on other hand it enabled the colonial power to justify its rule over the orient by using the myths of orientalism. Thus the institutionally ratified discourse identified the occident as seat of civilization and the orient as a den of barbaric customs. Hence they assumed, they should have control over the orient not simply because it was economically profitable to them but also it was morally right thing to do. In other words it was precisely this institutional framework which supported the discourse of orientalism that repackaged the profit making motives of European colonialism into civilizing enterprise.

Said's orientalism beautifully unfolds the power-knowledge nexus that connects the discourse of orientalism with the military and economic domination of orient by Europe, his main purpose is not just to reveal this connection but to disrupt this and the way in which he seeks to bring out this disruption is through what he calls contrapuntal reading of the text that uses the discourse of oriental. His other work, Culture and Imperialism (1993), shows his theory in practice. In it he advocates a method/ pedagogy of reading literary texts which he defines as 'contrapuntal', a term he borrows from musical tradition. It is an attempt to read the orientalist text against the grain, against the way in which author intends it to be read and to read it with whole knowledge of the history of the colonizers and also of the colonized. His exploration opened up new

possibilities for speaking on the politics of representation and the role that cultural text played in this. The book is not only the condemnation of western cultural hegemony, but it also paved the way for deconstructing other relationship of domination and subordination.

Works cited :-

Foucault, Michel. (1989) Archaeology of Knowledge. London: Routledge

Macaulay's Minute on Education, February 2, 1835

Said, Edward (1978) Orientalism. London: Penguin

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

INDIN BANKING AND MAJOR REFORMS

Beena Fernandez, Jabalpur

India has a long history of both public and private banking. Modern banking in India began in the 18th century, with the founding of the English Agency House in Calcutta and Bombay. In the first half of the 19th century, three Presidency banks were founded. After the 1860 introduction of limited liability, private banks began to appear, and foreign banks entered the market.

The beginning of the 20th century saw the introduction of joint stock banks. In 1935, the presidency Banks were merged together to form the Imperial Bank of India, which was subsequently renamed the State Bank of India. Also that year, India’s central bank, the Reserve Bank of India (RBI), began operation. Following independence, the RBI was given broad regulatory authority over commercial banks in India. In 1959, the State Bank of India acquired the state-owned banks of eight former princely states. Thus, by July 1969, approximately 31 percent of scheduled bank branches throughout India were government controlled, as part of the State Bank of India.

The post-war development strategy was in many ways a socialist one, and the Indian government felt that banks in private hands did not lend enough to those who needed it most. In July 1969, the government nationalized all banks whose nationwide deposits were greater than Rs. 500 million, resulting in the nationalization of 54 percent more of the branches in India, and bringing the total number of branches under government control to 84 percent.

For the past three decades India's banking system has several outstanding achievements to its credit. The most striking is its extensive reach. It is no longer confined to only metropolitans or cosmopolitans in India. In fact, Indian banking system has reached even to the remote corners of the country. This is one of the main reasons of India's growth process.

The government's regular policy for Indian bank since 1969 has paid rich dividends with the nationalization of 14 major private banks of India. The first bank in India, though conservative, was established in 1786. From 1786 till today, the journey of Indian Banking System can be segregated into three distinct phases. Those are:-

1. Early phase from 1786 to 1969 of Indian Banks
2. Nationalizations of Indian Banks and up to 1991 prior to Indian banking sector Reforms
3. New phase of Indian Banking System with the advent of Indian Financial and Banking Sector Reforms after 1991

The steps taken by the Government of India to Regulate Banking Institutions in the Country:

1. 1949: Enactment of Banking Regulation Act.
2. 1955: Nationalization of State Bank of India.
3. 1959: Nationalization of SBI subsidiaries.
4. 1961: Insurance cover extended to deposits.
5. 1969: Nationalization of 14 major banks.
6. 1971: Creation of credit guarantee corporation.
7. 1975: Creation of regional rural banks.
8. 1980: Nationalization of seven banks with deposits over 200crore.

MAJOR REFORMS INITIATIVES

Some of the major reform initiatives in the last decade that have changed the face of the Indian banking are:-

1. Interest Rate Deregulation-Interest rates on deposits and lending have been deregulated with banks enjoying greater freedom to determine their rates.
2. Government equity in banks has been reduced and strong banks have been allowed to access the capital market for raising additional capital.
3. New private sector banks have been set up and foreign banks permitted to expand their operations in India including through subsidiaries.
4. New areas have been opened up for bank financing like- insurance, credit cards, infrastructure financing, leasing, gold banking, besides of course investment banking, asset management, factoring, etc.
5. Banks have specialized committees to measure and monitor various risks and have been upgrading their risk management skills and systems. Adoption of prudential norms in terms of capital adequacy, asset classification, income recognition, provisioning, exposure limits, investment fluctuation reserve, etc.

Reform of 1991

In 1991, the RBI had proposed to from the committee chaired by M. Narasimham, former RBI Governor in order to review the Financial System viz. aspects relating to the Structure, Organisations and Functioning of the financial system. The Narasimham Committee report, submitted to the then finance minister, Manmohan Singh, on the banking sector reforms highlighted the weaknesses in the Indian banking system and suggested reform measures based on the Basle norms. The guidelines that were issued subsequently laid the foundation for the reformation of Indian banking sector.

The main recommendations of the Committee were: -

Reduction of Statutory Liquidity Ratio (SLR) to 25 per cent over a period of five years.

1. Progressive reduction in Cash Reserve Ratio (CRR).
2. Phasing out of directed credit programmes and redefinition of the priority sector.
3. Deregulation of interest rates so as to reflect emerging market conditions.
4. Stipulation of minimum capital adequacy ratio of 4 per cent to risk weighted assets by March 1993, 8 per cent by March 1996, and 8 per cent by those banks having international operations by March 1994.
5. Adoption of uniform accounting practices in regard to income recognition, asset classification and provisioning against bad and doubtful debts.
6. Imparting transparency to bank balance sheets and making more disclosures.
7. Setting up of special tribunals to speed up the process of recovery of loans.
8. Setting up of Asset Reconstruction Funds (ARFs) to take over from banks a portion of their bad and doubtful advances at a discount.
9. Restructuring of the banking system, so as to have 3 or 4 large banks, which could become international in character, 8 to 10 national banks and local banks confined to specific regions. Rural banks, including RRBs, confined to rural areas.
10. Abolition of branch licensing.
11. Liberalising the policy with regard to allowing foreign banks to open offices in India.
12. Rationalisation of foreign operations of Indian banks.
13. Giving freedom to individual banks to recruit officers.
14. Inspection by supervisory authorities based essentially on the internal audit and inspection reports.
15. Ending duality of control over banking system by Banking Division and RBI.
16. A separate authority for supervision of banks and financial institutions which

would be a semi-autonomous body under RBI.

17. Revised procedure for selection of Chief Executives and Directors of Boards of public sector banks.
18. Obtaining resources from the market on competitive terms by DFIs.
19. Speedy liberalisation of capital market.
20. Supervision of merchant banks, mutual funds, leasing companies etc., by a separate agency to be set up by RBI and enactment of a separate legislation providing appropriate legal framework for mutual funds and laying down prudential norms for such institutions, etc.

Several recommendations have been accepted and are being implemented in a phased manner. Among these are the reductions in SLR/CRR, adoption of prudential norms for asset classification and provisions, introduction of capital adequacy norms, and deregulation of most of the interest rates, allowing entry to new entrants in private sector banking sector, etc.

Reform of 1997

Keeping in view the need of further liberalisation the Narasimham Committee II on Banking Sector reform was set up in 1997. This committee's terms of reference included review of progress in reforms in the banking sector over the past six years, charting of a programme of banking sector reforms required to make the Indian banking system more robust and internationally competitive and framing of detailed recommendations in regard to make the Indian banking system more robust and internationally competitive.

16.

This committee constituted submitted its report in April 1998. The major recommendations are:

1. Capital adequacy requirements should take into account market risks also.
2. In the next three years, entire portfolio of Govt. securities should be marked to market.
3. Risk weight for a Govt. guaranteed account must be 100 percent.
4. CAR to be raised to 10% from the present 8%; 9% by 2000 and 10% by 2002.
5. An asset should be classified as doubtful if it is in the sub-standard category for 18 months instead of the present 24 months.
6. Banks should avoid ever greening of their advances.
7. There should be no further re-capitalization by the Govt.
8. NPA level should be brought down to 5% by 2000 and 3% by 2002.
9. Banks having high NPA should transfer their doubtful and loss categories to ARCs which would issue Govt. bonds representing the realisable value of the assets.
10. International practice of income recognition by introduction of the 90-day norm instead of the present 180 days.
11. A provision of 1% on standard assets is required.
12. Govt. guaranteed accounts must also be categorized as NPAs under the usual norms.
13. There is need to institute an independent loan review mechanism especially for large borrowal accounts to identify potential NPAs.
14. Recruitment of skilled manpower directly from the market be given urgent consideration.
15. To rationalize staff strengths, an appropriate VRS must be introduced.

A weak bank should be one whose accumulated losses and net NPAs exceed its net worth or one whose operating profits less its income on recap bonds is negative for 3 consecutive years.

To start with, it has assigned a 2.5 per cent risk-weightage on gilts by March 31, 2000 and laid down rules for provisioning; shortened the life of sub-standard assets from 24 months to 18 months (by March 31, 2001); called for 0.25 per cent provisioning on standard assets (from fiscal 2000); 100 per cent risk weightage on foreign exchange (March 31, 1999) and a minimum capital adequacy ratio of 9 per cent as on March 31, 2000.

The first year after nationalization witnessed the total growth in the agricultural loans and the loans made to SSI by 87% and 48% respectively. The overall growth in the deposits and the advances indicates the improvement that has taken place in the banking habits of the people in the rural and semi-urban areas where the branch network has spread. Such credit expansion enabled the banks to achieve the goals of nationalization, it was however, achieved at the coast of profitability of the banks.

Consequences of Nationalization:

1. The quality of credit assets fell because of liberal credit extension policy.

2. Political interference has been as additional malady.

3. Poor appraisal involved during the loan meals conducted for credit disbursals.

4. The credit facilities extended to the priority sector at concessional rates.

5. The high level of low yielding SLR investments adversely affected the profitability of the banks.

6. The rapid branch expansion has been the squeeze on profitability of banks emanating primarily due to the increase in the fixed costs.

There was downward trend in the quality of services and efficiency of the banks.

Reforms 1999-2000

In line with the recommendations of the second Narasimham Committee, the Mid-Term Review of the Monetary and Credit Policy of October 1999 announced a gamut of measures to strengthen the banking system. Important measures on strengthening the health of banks included:

1. Assigning of risk weight of 2.5 per cent to cover market risk in respect of investments in securities outside the SLR by March 31, 2001 (over and above the existing 100 per cent risk weight) in addition to a similar prescription for Government and other approved securities by March 31, 2000.
2. Lowering of the exposure ceiling in respect of an individual borrower from 25 per cent of the bank's capital fund to 20 per cent, effective April 1, 2000.

Capital Adequacy and Recapitalisation of Banks

Out of the 27 public sector banks (PSBs), 26 PSBs achieved the minimum capital to risk assets ratio (CRAR) of 9 per cent by March 2000. Of this, 22 PSBs had CRAR exceeding 10 per cent. To enable the PSBs to operate in a more competitive manner, the Government adopted a policy of providing autonomous status to these banks, subject to certain benchmarks. As at end-March 1999, 17 PSBs became eligible for autonomous status.

Prudential Accounting Norms for Banks

The Reserve Bank persevered with the on-going process of strengthening prudential accounting norms with the objective of improving the financial soundness of banks and to bring them at par with international standards. The Reserve Bank advised PSBs to set up Settlement Advisory Committees (SACs) for timely and speedier settlement of NPAs in the small scale sector, viz., small scale industries, small business including trading and personal segment and the agricultural sector.

The guidelines on SACs were aimed at reducing the stock of NPAs by encouraging the banks to go in for compromise settlements in a

transparent manner. Since the progress in the recovery of NPAs has not been encouraging, a review of the scheme was undertaken and revised guidelines were issued to PSBs in July 2000 to provide a simplified, non-discriminatory and non-discretionary mechanism for the recovery of the stock of NPAs in all sectors. The guidelines will remain operative till March 2001.

Recognising that the high level of NPAs in the PSBs can endanger financial system stability, the Union Budget 2000-01 announced the setting up of seven more Debt Recovery Tribunals (DRTs) for speedy recovery of bad loans. An amendment in the Recovery of Debts Due to Banks and Financial Institutions Act, 1993, was effected to expedite the recovery process.

Asset Liability Management (ALM) System

The Reserve Bank advised banks in February 1999 to put in place an ALM system, effective April 1, 1999 and set up internal asset liability management committees (ALCOs) at the top management level to oversee its implementation. Banks were expected to cover at least 60 per cent of their liabilities and assets in the interim and 100 per cent of their business by April 1, 2000. The Reserve Bank also released ALM system guidelines in January 2000 for all-India term-lending and refinancing institutions, effective April 1, 2000. As per the guidelines, banks and such institutions were required to prepare statements on liquidity gaps and interest rate sensitivity at specified periodic intervals.

Risk Management Guidelines

The Reserve Bank issued detailed guidelines for risk management systems in banks in October 1999, encompassing credit, market and operational risks. Banks would put in place loan policies, approved by their boards of directors, covering the methodologies for measurement, monitoring and control of credit risk. The guidelines also require banks to evaluate their portfolios on an on-going basis, rather than at a time close to the balance sheet date. As regards off-balance sheet exposures, the current and potential credit exposures may be measured on a daily basis. Banks were also asked to fix a definite time-frame for moving over to the Value-at-Risk (VaR) and duration approaches for the measurement of interest rate risk. The banks were also advised to evolve detailed policy and operative framework for operational risk management. These guidelines together with ALM guidelines would serve as a benchmark for banks which are yet to establish an integrated risk management system.

Technological Developments in Banking

In India, banks as well as other financial entities have entered the domain of information technology and computer networking. A satellite-based Wide Area Network (WAN) would provide a reliable communication framework for the financial sector. The Indian Financial Network (INFINET) was inaugurated in June 1999. It is based on satellite communication using VSAT technology and would enable faster connectivity within the financial sector. The INFINET would serve as the communication backbone of the proposed Integrated Payment and Settlement System (IPSS). The Reserve Bank constituted a National Payments Council (Chairman: Shri S. P. Talwar) in 1999-2000 to focus on the policy parameters for developing an IPSS with a real time gross settlement (RTGS) system as the core.

Revival of Weak Banks

The Reserve Bank had set up a Working Group (Chairman: Shri M. S. Verma) to suggest measures for the revival of weak PSBs in February 1999. The Working Group, in its report submitted in October 1999, suggested that an analysis of the performance based on a combination of seven parameters covering three major areas of

1. Solvency (capital adequacy ratio and coverage ratio)
2. Earnings capacity (return on assets and net interest margin)

3. Profitability (operating profit to average working funds, cost to income and staff cost to net interest income plus all other income) could serve as the framework for identifying the weakness of banks.

PSBs were, accordingly, classified into three categories depending on whether none, all or some of the seven parameters were met. The Group primarily focused on restructuring of three banks, viz., Indian Bank, UCO Bank and United Bank of India, identified as weak as they did not satisfy any (or most) of the seven parameters. The Group also suggested a two-stage restructuring process; whereby focus would be on restoring competitive efficiency in stage one, with the options of privatisation and/or merger assuming relevance only in stage two.

REFERENCES :

1. Dick, A. and A. Lehnert (2010) Personal bankruptcy and credit market competition. Journal of Finance, Vol. 65, pp. 655-686
2. Pooja Malhotra & Balwinder Singh, (2009), The Impact of Internet Banking on Bank Performance and Risk: The Indian Experience, Eurasian Journal of Business and Economics 2009, 2 (4), 43-62.
3. Zarutskie, R. (2009) Competition and specialization in credit markets. Paper presented at the 45th Bank Market Structure Conference. Federal Reserve Bank of Chicago.
4. Kuisma, T., Laukkanen, T. and Hiltunen, M., (2007). Mapping the reasons for resistance to internet banking: a means-end approach. Int J Inform Manage, 27(2), pp.75–85.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

रेडीमेड वस्त्र उद्योग का इतिहास

डॉ. योगिता अरजरिया

प्रस्तावना :– वस्त्र, मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं में से एक है। भोजन के बाद वस्त्र ही मानव की दूसरी नितांत आवश्यकता है। वस्त्र निर्माण मानव के सबसे प्राचीन उद्योगों में से है। वस्त्र उद्योग विश्व में संभवतः सर्वाधिक प्रचलित उद्योग है और हर सभ्यता एवं हर देश में व्यापक है। विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में वस्त्र निर्माण का कार्य होता था। सिंधु घाटी की सभ्यता, मैसापो–राभिया, यांगटीसीक्यांग, होहागंहो, मीनांम आदि की सभ्यताओं में सूती वस्त्रों की प्राप्ति हुई है। इन सभ्यताओं के पश्चात् से निरंतर उच्च कोटि के वस्त्रों का निर्माण होता आया है एवं वैज्ञानिक तकनीकियों ने इन्हें उच्च गुणवत्ता प्रदान की है।

वस्त्रों का निर्माण कई प्रकार के रेशों से होता है जैसे– वनस्पति से प्राप्त रेशे – कपास (सूती), फ्लेक्स (लिनेन) और जूट क वस्त्र, जन्तुओं से प्राप्त रेशे– ऊन या रेशम के वस्त्र, कृत्रिम रेशों–रेयर, नाइलोन, टेरीलीन, ट्राइसेल, मिश्रित रेशों के वस्त्र जैसे रेयन सूती या रेयन ऊनी, सूती टेरीलीन या ऊनी टेरीलीन वस्त्र ।

प्रारम्भ में आदि मानव ने शरीर ढंकने के लिए पेड़ की छाल तथा पत्तों का प्रयोग किया। आहार की खोज में वह पशुओं का शिकार करता था, जिससे उसे शरीर–आवरण के निमित्त पशुओं की खालें भी मिलने लगीं। तदुपरान्त पक्षियों के घोंसला बनाने तथा बेलों लताओं के आपस में गुंथ जाने से, मानव को तिनकों एवं टहनियों से बटकर और गुंथकर रस्सियाँ, चटाईयाँ, डलियाँ तथा टोकरियाँ बनाने की प्रेरणा मिली। परन्तु इन वस्तुओं को तैयार कर लेने की क्षमता उसमें धीरे–धीरे आई।

इनसे उनकी सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति हुई। मकान, छप्पर एवं झोपड़ी, डोंगियों एवं नावों के परिवहन में काम आने वाली रस्सियाँ, सामान ले जाने तथा ले आने के साधन तथा शिकार करने के सामान, बिछावन के लिए चटाईयाँ तथा इसी प्रकार की अनेक आवश्यक एवं उपयोगी सामानों को बनाने की सफलता से उसे संतोष की उपलब्धि हुई। इन्हीं सफलताओं और संतोष ने मानव को वस्त्र–संबंधो खोजों के लिए प्रेरित किया।

वस्त्रों के निर्माण की प्रेरणा मानव को प्रकृति से ही मिली। चटाई, रस्सी, टोकरी, डलिया, आदि पेड़–पौधों से ही प्राप्त कोमल रेशों को बटकर डोरा और धागा बनाते समय उसे, वस्त्र रूप में भी बुनने की कला की प्रेरणा मिली। पशुओं की त्वचा, पत्ते, छाल इत्यादि शरीर के आवरण के रूप में प्रयुक्त होते थे, परन्तु वे कड़े, रूखड़े तथा खुरदुरे होते थे। ये सब शारीरिक गतियों एवं क्रियाओं जैसे मुड़ने, झुकने, चलने आदि में बाधक होते थे। कोमल रेशे से बटकर एवं बुनकर तैयार किए गए वस्त्र मानव के लिए सुविधाजनक सिद्ध हुए।

रेडीमेड वस्त्र उद्योग की वर्तमान स्थिति :

भारत में वस्त्र उद्योग प्राचीन काल से ही चलता आ रहा है। उस समय चरखे से सूत काटने का कार्य होता था। तथा हाथ से ताना–बाना बुनकर वस्त्र तैयार किया जाता था। उस कपड़े का प्रयोग स्थानीय लोग और व्यापारी लोग करते थे। अंग्रेजों के आगमन के बाद वस्त्र का व्यापार विदेशों में भी होने लगा। अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् वस्त्र उद्योग का आधुनिकीकरण हो गया सूत और वस्त्र दोनों मशीन से बनाए जाने लगे। देश में कॉटन मिल स्थापित होने लगी। जहां आधुनिक तकनीकी से बड़े स्तर पर वस्त्र का निर्माण होने लगा। इस काल में अंग्रेजों द्वारा विदेशी वस्त्रें का व्यापार देश में किया जाने लगा। इनके वस्त्र रेडीमेड होते थे। अर्थात् इसी दौरान रेडीमेड वस्त्र का प्रचलन प्रारंभ हो गया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार किया गया और विदेशी खादी के प्रयोग पर विशेष जोर दिया जाना लगा। लेकिन रेडीमेड वस्त्रों का प्रचलन

जारी रहा। स्वतंत्रता के बाद भी धनाड्य वर्ग रेडीमेड वस्त्रों के प्रयोग करने लगे। इसीलिए देश में रेडीमेड वस्त्रों का निर्माण कार्य होने लगा। यही परंपरा म. प्र. मे भी प्रारंभ हो गई।

मध्यप्रदेश में रेडीमेड वस्त्र उद्योग का विकास :

मध्यप्रदेश में वस्त्र उद्योग स्वतंत्रता के पूर्व से ही संचालित हो रहा है। इन्दौर में अनेक कपड़ा मिलें थीं। मध्यप्रदेश राज्य हस्तशिल्प हथकरघा विकास निगम की स्थापना मध्यप्रदेश शासन के एक उपक्रम के रूप मं 1981 ई. में हुई थी। निगम की स्थापना का मुख्य उद्देश्य हस्तशिल्प के विभिन्न डिजाइन तैयार करने एवं तकनीकी रूप से इनका विकास करना है। मध्यप्रदेश के हस्तशिल्प कलाकारों की कलाकृतियों को मध्यप्रदेश शासन द्वारा विक्रय के लिए मृगनयनी एम्पोरियम की स्थापना की गई है। मध्यप्रदेश उद्योग निगम 'मृगनयनी' के नाम के 10 एम्पोरियम संचालित कर रहा है, जो भोपाल, इन्दौर, जबलपुर, ग्वालियर, रायपुर, भिलाई, रीवा, उज्जैन, नई दिल्ली व कलकत्ता में संचालित हैं।

अंग्रेजी शासन से स्वतंत्रता के पश्चात् तक अनेक वर्षों तक इन्दौर शहर में वस्त्र उद्योग कार्यरत था। इन्दौर में अनेक कपड़ा मिलें थीं, जो कपड़े का निर्माण करती थीं, यहाँ का वस्त्र प्रदेश के अलावा अन्य प्रदेशों में भी जाता था। धीरे–धीरे ये सभी वस्त्र मिलें बंद होती गई । वस्त्रोद्योग के नाम पर अब सिर्फ रेडीमेड वस्त्रों का निर्माण होता है। इसके अलावा इन्दौर के पास महेश्वर में साड़ियों का निर्माण कार्य होता है। मालवा के क्षेत्र में वस्त्रें पर बाघ प्रिंटिंग और ठप्पा पेंटिंग का कार्य भी होता है। मध्यप्रदेश में इन्दौर, जबलपुर, ग्वालियर विशेष रूप से आधुनिक रेडीमेड वस्त्रों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध शहर है । यहाँ के सिले–सिलाए वस्त्र देश के अनेक शहरें में जाते हैं। यहाँ के कारीगर वस्त्र निर्माण में विशेष दखल रखते हैं।

म.प्र. में खादी उद्योग का विकास :

म.प्र. में वस्त्र उद्योग के क्षेत्र में खादी का उत्पादन होता है। खादी का प्रयोग सरकारी कार्यालयों एवं अस्पतालों में होता है । कुछ राजनैतिक दल के कार्यकर्ता भी खादी का उपयोग करते हैं। खादी के बढ़ते प्रयोग के कारण म.प्र. शासन द्वारा खादी ग्रामोद्योग निगम की स्थापना की गई है। खादी ग्रामोद्योग क्षेत्र में विकास की संभावनाओं की पूर्णतया पहचान करते हुए सरकार ने केवोआईसी (खादी ग्रामोद्योग आयोग) को एशियाई विकास बैंक की सहायता से समग्र खादी सुधार एवं विकास कार्यक्रम (केआरडीपी) शुरू किया है । केआरडीपी खादी को ज्यादा टिकाऊ बनाने, रोजगार और आमदनी में वृद्धि, कारीगरों के कौशल निर्माण, सशक्तिकरण और बेहतर आमदनी के जरिये उनके बेहतर कल्याण तथा चुनिंदा परम्परागत ग्राम उद्योगों के विकास के साथ खादी ग्रामोद्योग क्षेत्र में नये सिरे से प्राण फूंकने पर बल देता है।

यह कार्यक्रम 300 चुनिंदा खादी संस्थाओं द्वारा तीन वर्ष की अवधि में लागू किया जाएगा जो मार्च 2010 में केवीआईसी (खादी ग्रामोद्योग आयोग) को 96 करोड़ रूपये की पहली किश्त जारी होने के साथ ही पहले ही शुरू हो चुका है। इस कार्यक्रम के तहत सुधार कार्यान्वित कर रही प्रत्येक खादी संस्था (केआई) को निर्धारित सुधार संबंधी गतिविधियां चलाने के लिए करीब 1 करोड़ 19 लाख रूपये की सहायता उपलब्ध कराई जाएगी। कच्चे माल के उत्पादन से लेकर बेहतरीन गुणवत्ता और कम लागत वाले खादी उत्पादों, कारगर विपणन, बिक्री संबंधी नेटवर्क, बेहतर वस्तु सूची प्रबंध और बेहतर डिजाइनों के रूप में प्रबुद्ध पेशेवर समर्थन से सुधारों की परिकल्पना की गई है।

हथकरघा उद्योग :

प्रदेश का हथकरघा उद्योग एक प्राचीनतम परम्परागत एवं कलात्मक उद्योग है। इस उद्योग के विकास हेतु चलाये जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों का उद्देश्य वस्त्र उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ हथकरघा बुनकरों के परम्परागत उद्योग तथा औद्योगिक अन्य गतिविधियों के कुशल कारीगरों की कलाओं को प्रोत्साहित कर आधुनिक प्रशिक्षण, कच्चे माल की पूर्ति तथा विपणन हेतु मेले/प्रदर्शनियों का आयोजन तथा औद्योगिक सहकारी समितियों को वित्तीय आधार पर सुदृढ़ीकरण, धनवेष्ठन, मार्जिन मनी, अंशपूंजी, ऋण तथा अनुदान उपलब्ध कराकर आर्थिक सहायता प्रदान करना है।

पावरलूम उद्योग :

पावरलूम उद्योग के विकास हेतु राज्य शासन द्वारा विभिन्न योजनाओं में सहकारी समितियों तथा पावरलूम बुनकरों को उनका वित्तीय आधार सुदृढ़ करने, विद्यमान पावरलूमों का नवीनीकरण करने, साइजिंग, प्लाण्ट एवं प्रोसेसिंग की स्थापना करने एवं संस्थाओं को सूत उपलब्ध कराना, प्रचार–प्रसार तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था हेतु आर्थिक सहायता तथा ब्याज अनुदान, अंश पूंजी ऋण, शासकीय धनवेष्ठन एवं पावरलूम क्रय करने हेतु आर्थिक सहायता व बुनकरों का बीमा की योजनाएं प्रमुख रूप से संचालित की जा रही हैं।

अंग्रेजों के शासन काल के दौरान म. प्र. में भी मालवा क्षेत्र में कॉटन मिलों की स्थापना की गई थीं। स्वतंत्रता के बाद भी यह कॉटन मिलें निरन्तर वस्त्र निर्माण करती रहीं। यहां निर्मित वस्त्र प्रदेश के साथ–साथ देश के विभिन्न राज्यों में भी जान लगे। रेडीमेड वस्त्रों के बढ़ते प्रचलन के कारण प्रदेश में भी रेडीमेड वस्त्रों का निर्माण कार्य प्रारंभ हुआ। 19वीं सदी रेडीमेड वस्त्रों का फैशन जोरों पर बढ़ गया। रेडीमेड वस्त्रों की मांग को देखते हुए प्रदेश में रेडीमेड वस्त्र उद्योग बढ़ने लगा। म.प्र. में देश के विभिन्न रेडीमेड वस्त्र निर्माताओं द्वारा निर्मित रेडीमेड वस्त्रो का व्यापार बढ़ने लगा। बाजार में बढ़ती प्रतिस्पर्धा के कारण म.प्र. के रेडीमेड वस्त्र निर्माताओं ने भी अपना व्यापार वृहद स्तर पर बढ़ाने का प्रयास किया। म. प्र. में रेडीमेड वस्त्रोद्योग का प्रारंभ इंदौर से हुआ। इसके बाद भोपाल, जबलपुर, ग्वालियर में भी यह उद्योग स्थापित होने लगा। रेडीमेड वस्त्रों के निर्माण के लिये आवश्यक कच्चा माल जैसे–वस्त्र, बटन, सुई, धागा जैसी सामग्री प्रदेश के बाहर से इन शहरों में आती है, और रेडीमेड वस्त्रों का निर्माण किया जाता है। म. प्र. मे निर्मित रेडीमेड वस्त्रों का व्यापार प्रदेश के साथ–साथ देश के अन्य प्रदेशों में भी होता है। वैसे म. प्र. में रेडीमेड वस्त्रों के निर्माण के लिये अत्याधुनिक उद्योग कम हैं। प्रायः वस्त्र निर्माण का कार्य विभिन्न स्तरों पर अलग–अलग ठेका देकर कराया जा रहा है। जैसे–कटिंग, सिलाई, बकरम, काज, बटन लगाने का कार्य अलग–अलग जगह पर अलग–अलग व्यक्तियों द्वारा किया जा रहा है। फिर भी रेडीमेड वस्त्रोद्योग प्रदेश में लाभदायक व्यवसाय स्थापित हो रहा है। वर्तमान काल में महिलाओं पुरूषों और बच्चों के प्रायः सभी कपड़े बाजार में रेडीमेड उपलब्ध हैं। इन रेडीमेड वस्त्रों में देश की कुछ बड़ी नामी कम्पनियों के रेडीमेड वस्त्र बाजार में उपलब्ध हैं। देश प्रदेश में बढ़ते रेडीमेड व्यवसाय के कारण देश प्रदेश के आर्थिक विकास में अच्छा सहयोग मिल रहा है। इस उद्योग से हजारों लोगों को रोजगार मिल रहा है। वैसे मध्यप्रदेश में रेडीमेड वस्त्रोद्योग में कार्यरत कर्मचारी अर्धकुशल हैं। अतः इनकी मजदूरी भी कुशल कर्मचारियों की अपेक्षा बहुत कम है।

रेडीमेड वस्त्रों का वर्गीकरण रेडीमेड वस्त्रों को स्कूल जाने वाले बालक–बालिकाओं के वस्त्र, युवा वर्ग के परिधान, महिलाओं के परिधान एवं पुरूषों के परिधानों में वर्गीकृत किया गया है।

इनका विस्तृत विवरण निम्नानुसार है –

(अ) स्कूल जाने वाले बालक–बालिकाओं के वस्त्र

बालक–बालिकाएँ शीघ्रता से बढ़ते हैं तथा खेल–कूद के कारण उनके वस्त्र फटते भी जल्दी हैं। उनके परिधान, स्कूल के लिए हों अथवा घर के लिए, उन्हें चुनते समय जलवायु तथा मौसम का ध्यान रखना चाहिये। बढ़ते बच्चों के परिधानों के लिए वस्त्र से थोड़ा अधिक ले लेना चाहिए। कुछ ढीला और बड़ा रखने से वे अधिक दिन तक काम आते हैं। बालक–बालिकाओं के लिए सघन संरचना के वस्त्र पसन्द करने चाहिए। ऐसे वस्त्र मजबूत रहते हैं और धोने से सिकुड़ते नहीं हैं। जो वस्त्र सिकुड़ने वाले होते हैं उन्हें कदापि नहीं चुनना चाहिए, क्योंकि उनमें धन अधिक लग जाने से अभिभावक उन्हें जबरदस्ती बच्चों को पहनाते हैं, जबकि बच्चों के लिए ऐसे वस्त्र अत्यधिक कष्टदायी होते है। शरीर की स्वतंत्र क्रियाओं तथा अंग–संचालन में, सिकुड़ जाने वाले वस्त्रों से बने परिधान बाधक होते हैं। ये सामान्य वृद्धि में भी बाधक होते हैं, और सबसे बढ़कर बालक–बालिकाओं के लिए बेचैनी का कारण बन जाते हैं। कसे–तने वस्त्रों को पहनने की लाचारी से उनके मस्तिष्क में कुंठाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। वे चिड़चिड़े–से रहने लगते हैं, जिससे उनका सारा व्यक्तित्व ही बिखरा–सा

लगता है। अतएव, बच्चों के वस्त्र सुन्दर, ढीले एवं आरामदायक होने चाहिए।

बच्चों के परिधान खेल–कूद के कारण जल्दी गंदे होते हैं। अतः इन्हें अक्सर धोने की जरूरत पड़ती है। सादे एवं साधारण परिधान ही इस आयु के बच्चों के लिए दैनिक प्रयोग के निमित्त अच्छे रहते हैं। अतएव, इनके लिए कम मूल्य का मजबूत, चिकना हल्का आसानी से धुल सकने वाला तथा साधारण घरेलू शोधक पदार्थों से नष्ट न होने वाला वस्त्र चुनना चाहिए। अत्यधिक कीमती वस्त्रों से उनके लिए जो परिधान बनाए जाएँ, उन्हें विशेष अवसरों पर ही प्रयोग करने के निमित्त रखना चाहिए।

मूल्यवान परिधान यदि खेल–कूद में गंदे हो जाते हैं या फट जाते हैं, तो बच्चों को अभिभावकों के रोष का शिकार होना पड़ता है, जिससे उनका मानसिक विकास कुंठित हो जाता है और उन्हें कीमती वस्त्र जबरदस्ती पहना भी दिए जाते हैं तो वे अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति, अर्थात् स्वतंत्र रूप से खेलने की इच्छा का दमन करते हैं जो उनके शारीरिक तथा मानसिक विकास दोनों को अवरूद्ध करता है। तात्पर्य यह है कि उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही परिधान से प्रभावित होता है। अतः यदि उनके वस्त्रें में धन लगाया जाए, तो थोड़ा–सा विवेक भी लगाना चाहिए। दूसरी ओर, यदि बच्चों के कपड़े बेढब और भद्दे होते हैं, तो भी बच्चे हीन–भावना से त्रस्त हो जाते हैं और साथियों के साथ मिलने तथा खेलने में संकोच का अनुभव करते हैं। अतः निष्कर्ष यही निकलता है कि स्कूल जानेवाली आयु के बच्चों के वस्त्र सादे एवं साधारण, साथ ही देखने में सुन्दर लगने वाले होने चाहिए।

बच्चों के वस्त्रों का रंग भी बाल स्वभाव के अनुरूप होना चाहिए। इन्हें सुन्दर चटकीले रंग पहनाए जा सकते हैं, परन्तु रंगों की ऐसी शेड नहीं चुननी चाहिए, जो भद्दी हो और आंखों को अखरने वाली हो। गर्म रंगों के परिधानों में ठंडे रंगों के छिट–पुट छींटे अच्छे रहते हें तथा ठीक इसके विपरीत ठंडे रंगों के परिधानों में थोड़ा–सा गर्म रंग प्रयोग करके उसे जीवनमय बना देना चाहिए; जैसे नेवी ब्लू आदि प्रमुख रंग के रूप में प्रयोग किया जाय तो आसमानी नीले रंग के कफ, कॉलर, टाई, वो फूल आदि उस पर लगा देने से परिधान के रंगों की गहराई अखरनेवाली नहीं रहने पाती हैं। श्वेत वस्त्र विद्यालय–गणवेश (स्कूल–यूनिफार्म) के लिए तो लेने ही पड़ते हैं, परन्तु घर के वस्त्र रंगीन ही रहें तो अच्छा रहता है; क्योंकि श्वेत वस्त्र बड़ी जल्दी गंदे हो जाते हैं। नमूनों एवं डिजाइनों के चुनाव में भी थोड़ी सूझ–बूझ लगानी चाहिए। बच्चों के वस्त्रें में बड़े–बड़े नमूने अच्छे नहीं लगते हैं। नन्हें छोटे–छोटे फूलों वाले नमूनों तथा डिजाइनों के वस्त्र देखने से ही बालोचित लगते हैं। चमकदार रंग तथा उससे सजे नमूनवाले वस्त्र बच्चों को रूचिकर लगते हैं। लाल, पीला, और नारंगी रंग, प्रसन्नता एवं युचलता के द्योतक हैं और इन्हीं गुणों के कारण बाल–स्वभाव क अनुरूप माने जाते हैं। लाइनदार या धारीदार वस्त्रों से बच्चों के लिए अच्छे नमूने के परिधान बनते हैं, जिनमें उनका बाल्य–जीवन मुखरित हो उठता है। वस्त्र के मुख्य रंग तथा नमूनों के रंग, दोनों के पक्केपन की जांच भी कर लेनी चाहिए। बच्चों के परिधान के लिए ऐसे वस्त्र चुने जाने चाहिए, जिनके रंग धुलाई, प्रकाश पसीने आदि की दृष्टि से पक्के हों। उनके वस्त्रों को बराबर धोना पड़ता है, अतः धोने के लिए पक्कापन देखना सबसे जरूरी है। धुलाई से यदि वस्त्र का रंग धुंधला पड़ जाता है तो बच्चे दोबारा उस वस्त्र को धारण करना पसन्द नहीं करते हैं। अतः रंगों के चयन में भी सचेत रहना जरूरी हो जाता है।

वस्त्र इस हिसाब से खरीदने चाहिए, जिससे बच्चों के लिए तैयार किए जानेवाले परिधान की फिटिंग ढीली हो सके। ढीली फिटिंग से वस्त्र भद्दे भी नहीं लगते हैं तथा वे स्वतंत्र रूप से अंग–संचालन में सहायक होते हैं, साथ ही इस आयु में शीघ्रता से होने वाली शारीरिक वृद्धि के कारण जल्दी छोटे भी नहीं होते हैं। सरंघ्र तथा अवशोषकता के गुण वाले वस्त्र चुनने से वे बच्चों की त्वचा के लिए सुखद और आरामदायक रहते हैं। बच्चों के परिधान के लिए मटमैले एवं धुंधले रंग के वस्त्र कदापि नहीं चुनने चाहिए। उन्हें तो रंग–बिरंगे वस्त्र रूचिकर लगते हैं।

(ब) युवा वर्ग के परिधान :

युवक–युवतियों के परिधान का चुनाव सबसे कठिन है; क्योंकि वे परंपरा से प्रचलित परिधानों से हटकर 'प्रति–वयोवर्ग की नवीनतम

उपनतियों' के अनुकरण वाले परिधानों के प्रति झुकाव दिखाते हैं, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इस आयु के लोग अनोखे तथा असाधारण परिधान धारण करना चाहते हैं। परिधान–संबंधी साज–सज्जा का आकार, आकृति और शैली–संबंधी धारणाओं में अनवरत परिवर्तन होता है। नई पीढ़ी को पुरान की शैली अदभुत और विलक्षण लगती है। परन्तु; प्रत्येक धारणा अपने पुराने युग में तत्कालीन नवीनतम फैशन का प्रतिनिधित्व करती है। अपने परिधानों में वह पुरानी पीढ़ी का हस्तक्षेप नहीं सहन कर सकती है। प्रत्येक पीढ़ी, दल और सामाजिक वर्ग अपने ही वर्ग की स्वीकृत रीति (Accepted mode of the group) को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहती है। विनगो के इस कथन "Often an adolescent girl is denied aceptance by her classmates, because her clothes are not those of the groupa approved standard" की व्यावहारिक सत्यता हमें आए–दिन कॉलजों में देखने को मिल जाती है। नई पीढ़ी नए आयाम ढूंढती है, तो परम्परा की श्रृंखला टूटती ही है। इस बात को देखकर अभिभावक को परिधान संबंधी निजी आस्थाओं और भावनाओं को बदलने के लिए तैयार रहना चाहिए।

युवा वर्ग के लिए उनकी उमंग के अनुरूप ही वस्त्र सुन्दर रंगों के होने चाहिए। बहुरंगी (Multi-coloured) परिधानों में युवाकाल की तरुणाई मुखरित हो उठती है, नई उमंग, नया उत्साह एवं नई ताजगी का आभास उचित ढंग में संयोजित परिधानों से मिलता है। कहा जाता है कि सम्पूर्ण परिधान (Total Costume) का संयाजन भावाभिव्यक्ति और आत्म–प्रकाशन का एक शक्तिशाली माध्यम है।

लम्बी लड़कियों के लिए प्रवाहित रेखाओं (Flowing-lines) वाले वस्त्र उत्तम रहते हैं। आयु एवं प्रकृति के अनुरूप उनके परिधानों के लिए कोमल, लचीले एवं सुन्दर संरचना के वस्त्र चुनने चाहिए। वैसे दुबले–पतल शरीर पर भरे–पूरे परिधान (Fulliness in costume) अच्छे लगते हैं। अतः इन्हें झालर, फ्रिल, चुन्नट आदि से सजाने के लिए अतिरिक्त वस्त्र ले लेने से सुन्दर परिधान बनते हैं। नाटी, छोटी, लम्बी आदि विभिन्न प्रकार की शरीर आकृतियों के परिधान–संयोजन के लिए उन्हीं के अनुरूप रंगों, नमूनों, डिजाइनों के वस्त्रों को चुनना चाहिए। जैसे, मोटी लड़की के परिधान के लिए लम्बबद्ध रेखाओं वाले तथा उन्हीं पर आधृत नमूनों के वस्त्र खरीदने चाहिए। दुबली एवं लम्बी लड़की के लिए नाड़ी या समतल (horizontal) रेखाओं पर आधृत नमूने वाले वस्त्रो को चुनना चाहिए, और यदि वह स्कर्ट पहनती है, तो समतल रेखाओं वाले वस्त्र पर चौड़ी बेल्ट लगाने से अखरने वाली लम्बाई कुछ कम होती सी प्रतीत होती है। तात्पर्य यह है कि युवाकाल में वैसे तो सब रंगों के परिधान पहने जा सकते हैं, परन्तु फिर भी व्यक्तित्व की खूबियों को उभारनेवाले रंगों के परिधान बनाने चाहिए तथा उन्हीं के अनुरूप रंगों के वस्त्रों का चयन करना चाहिए। चटक रंग युवतियों पर फबते हैं, परन्तु वे उतने चटक न हों कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ही दबा दें। सुन्दर संरचना के साथ–साथ उनके लिए बाह्य सज्जा से भी भरपूर वस्त्रों का चुनाव करना चाहिए, परन्तु समय और प्रयोजन के अनुरूप उनमें अपूर्व भव्यता का भी पुट होना चाहिए। परिधान–संयोजन सुरुचि एवं कल्पनापूर्ण तथा कवितवमय हों, तो रूप में निखार आ जाता है। Caroline Wingo us fy[kk gS &ßResearch finding shows, that to the youth, the appropriateness or a costume the becomingness colour of quality, style and neatness and cleanliness in clothing help to build self-confidence and even a sense of security. To them the clothes were important for the impression made on others, for getting a job more easily or for what they termed as social achievement or social contribution. Good grooming helps in making the personality more pleasing." इस प्रकार युवा वर्ग के लिए सम्पूर्ण परिधान का उनके व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है।

युवक–युवतियों के परिधानों के लिए, वस्त्रों के चुनाव में फैशन का ध्यान रखना अनिवार्य है। जो वस्त्र फैशन में आते हैं, उन्हें ही युवावर्ग पसंद करता हैं। परन्तु इसके साथ ही यह भी देख लेना चाहिए कि 'फैशन अनुकूल' वस्त्र किसी शरीर पर तो खिलेगा, परन्तु किसी पर बेढ़ब भी लग सकता है। फिर भी युवक–युवतियों के परिधान के लिए वस्त्र के चुनाव में उनकी विशेष रुचि को प्रधानता देनी चाहिए। फैशन में

आए वस्त्र को शरीर–विशेष के अनुरूप परिवर्तन करके पहनने में कोई हानि नहीं होती है। फिर भी वस्त्रों का चुनाव सभ्यता और संस्कृति की सीमाओं के अन्दर ही होना चाहिए परन्तु इस बात को भी भूलें नहीं कि युवक–युवतियां अद्यतन (Up-to-date) रहना चाहते हैं, इसलिए उनकी इस इच्छा की संतुष्टि अनिवार्य है। Caroline E.Wing us viuh iqLrd 'The clothes you buy and make' esa fy[kk gS & "To be well dressed does not require a great deal of money, but money makes it easier. It does require time, study, developed taste and a sense of values."

(स) महिलाओं के परिधान

महिलाओं के परिधानों का चयन एक तरफ आसान भी है तो दूसरी तरफ कठिन भी है। महिलाओं की बढ़ती आयु तथा परिवर्तित शरीराकृति के अनुकूल परिधान–संयोजन करने के हिसाब से ही वस्त्र चुनने चाहिए।

रंगों के अतिरिक्त, वस्त्रों के नमूने एवं डिज़ाइनों का भी महत्व है। इनका चुनाव भी शरीर आकृति के अनुरूप ही करना चाहिए। मोटी शरीर–रचनावाली महिला के लिए हल्के एवं मद रंग, छोटे नमूने तथा पतला बार्डर या बिना बार्डर वाला वस्त्र लेना चाहिए। लम्बबद्ध धारियों वाले नमूने रहें, तो बहुत ही अच्छा रहता है, क्योंकि इनसे मोटाई कम दिखाई देती है, चौड़े स्कर्ट बार्डर से शरीर नाटा सा दिखलाई देता है, जिससे मोटापा अधिक मालूम होता है। दुबली एवं लम्बी महिलाओं को हल्के कड़ेपन वाले वस्त्रों का चयन करना चाहिए। ऐसे वस्त्रों से दुबला शरीर भी कुछ भरा–भरा सा लगता है। कुछ मोटी संरचना वाले वस्त्र से दुबली–पतली देह अच्छी लगने लगती है। दुबली–पतली देह के लिए आड़ी, अर्थात समतल रेखाओं पर आधृत नमूने वाले वस्त्र अच्छे रहते हैं। बड़े–बड़े फूल, नमूनों एवं आवर्तों वाले डिज़ाइनों में शरीर भरा–पूरा सा लगता है। उक्त दोनों प्रकार की शरीर–रचनाओं के बीच में आने वाली अनेक प्रकार की शरीराकृतियों के अनुरूप उनपर फबने वाले नमूनों एवं रंगों वाले वस्त्रों का चयन करना चाहिए। थोड़ी–सी सूझबूझ तथा थोड़े विवेक से ये काम सहज हो जाते हैं। परन्तु वस्त्रों का चयन आयु, त्वचा के रंग, शरीर के आकार, एवं गठन का सूक्ष्म निरीक्षण करने के बाद ही करना चाहिए। इनमें से किसी एक भी बात की उपेक्षा कर देने से परिधान बेढब–सा लगता है और व्यक्तित्व को भद्दा एवं हास्यास्पद बना देता है। वस्त्र की संरचना भी शरीर के स्वरूप के अनुरूप ही होनी चाहिए। मोटे शरीर के अनुरूप हल्के एवं मुलायम वस्त्र होते हैं। दुबले–पतले शरीर पर आरगेंडी, टेफ्टा आदि वस्त्र सुन्दर लगते हैं, जिनमें कुछ कड़ापन भी रहता है आर जिनकी रचना भी कुछ भारी रहती हैं। तीखे रंगों से प्रौढ़ एवं वृद्धावस्था की ओर अग्रसर होने वाली आयु की महिलाओं की त्वचा का कड़ापन और बढ़ता–सा दिखाई देता है। आयु के साथ–साथ परिधान संयोजन में भी कलात्मक परिपक्वता का पुट देना अच्छा रहता है।

विशष अवसरों, जैसे शादी–विवाह समारोह, रात्रि भोज, क्लब आदि के लिए सुन्दर चटकीले रंग का प्रयोग प्रौढ़ महिलाएं भी कर सकती हैं। परन्तु, इन सांध्यकालीन वस्त्रों का प्रयोग दिन में उन्हें कदापि नहीं करना चाहिए। किसी भी समय के परिधान (वस्त्र) चुनना हो तो इस बात को अवश्य देख लीजिए कि इनके प्रयोग से व्यक्तित्व भव्य लगे और उसमें भद्दापन न आए तथा वह बचकाना–सा न लगे। परिधान अशोभनीय न हो, बल्कि ऐसा हो, जो उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व में शालीनता एवं सौम्यता की भावना को प्रदर्शित करे और अवसर, व्यक्ति एवं परिधान में नेत्रों को सुखद लगने वाला ताल–मेल दिखाई दे। कुल मिलाकर, सुरुचिपूर्ण परिधान–संयोजन, महिलाओं के लिए भी अनिवार्य है। महिलाओं के परिधान के रूप में साड़ी ही भारत का प्रतिनिधित्व करती है, परन्तु कई पड़ोसी देशों का भी यही मुख्य परिधान है। अतः इससे एकरसता आ जाती है और अन्य प्रान्तीय पोशाकों की विविधता, सुन्दरता और अनोखेपन का पता ही नहीं लग पाता है। प्रान्तीय परिधानों में घाघरा (लहंगा), चोली और ओढ़नी आदि, तीज–त्यौहारों पर पारस्परिक आभूषणों के साथ धारण किए जा सकते हैं। ऐसे परम्परागत (Traditional) परिधान, रंग–बिरंगे, नारीत्वपूर्ण तथा गरिमामय लगते हैं। ओढ़नी प्रायः महीन, झिलमिल तथा पारदर्शी कपड़े की होती है, जिससे सम्पूर्ण व्यक्तित्व में नजाकत का आभास परिलक्षित होता है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

(द) पुरूषों के परिधान :

पुरूषों के वस्त्र के लिए मजबूती, धुलाई की क्षमता, धुलने की सहजता, इस्तरी करने की सुविधा आदि महत्वपूर्ण बातें हैं। बिजनेस के समय की पोशाकों में गंभीरता एवं शिष्टता की छाप होनी चाहिए। रंग मंद रहें, तो अच्छे लगते हैं, वैसे श्वेत वस्त्र पुरुषों पर खूब फबते हैं। रंग के चुनाव में समय एवं अवसर के अतिरिक्त थोड़ा–बहुत, त्वचा के रंग से अनुरूपता को भी देख लेना चाहिए।

जिन पुरूषों को अपने पेशे में अधिक यात्रा करनी पड़ती है, उनके परिधानों के लिए ऐसे वस्त्र चुनने चाहिए, जिन्हें धोना सहज हो, इस्तरी न करनी पड़े और जो निद्रा आदि विश्राम की अवस्था में असुविधा न प्रस्तुत करें। साथ ही, उठने–बैठने पर देखने में खराब न लगें और अपने–आप ठीक–ठाक हो जाएं। इस प्रकार के गुण टेरिलिन, टेरीकॉट, डेकरॉन तथा टेबुलाइज्ड वस्त्रों में होते हैं। विशेष रूप से सरंध्र पोलिएस्टर के कपड़े भी पुरुषों के लिए अच्छे सिद्ध होते हैं।

19वीं शताब्दी से दुनिया में बदलते फैशन के साथ भारत में भी रेडीमेड वस्त्रों का प्रचलन बढ़ने लगा है। रेडीमेड वस्त्रों की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए मध्यप्रदेश और अन्य शहरों में रेडीमेड वस्त्रों के उद्योग और दुकानें आरम्भ होने लगी। रेडीमेड वस्त्र व्यवसाय में अनेक व्यापारिक वर्ग छोटे–बड़े उद्योग करने लगा है। बच्चों महिलाओं और पुरूषों के प्रायः सभी वस्त्र रेडीमेड मिलने लगे हैं। इसमें होजरी, कॉटन, सिल्क, केनवास, जीन्स, सभी प्रकार के कपड़े अलग–अलग साईज में उपलब्ध होने लगे हैं।

रेडीमेड वस्त्र निर्मित करने वाली विभिन्न देशी एवं विदेशी कम्पनियाँ :

मध्यप्रदेश में सर्वप्रथम मालवा क्षेत्र में कॉटन मिलों की स्थापना की गई जो वर्तमान समय में भी वस्त्रें का निर्माण कर रही है। यहां से कपड़े देश एवं विदेश के विभिन्न नगरों को भेजे जाते हैं। वर्तमान समय में रेडीमेड वस्त्रें का प्रचलन अधिक बढ़ जाने के कारण प्रदेश के साथ–साथ देश एवं विदेशों में भी रेडीमेड वस्त्रों को भेजा जाता है। यहां पर न केवल हमारे देश की बड़ी–बड़ी कंपनियों ने रेडीमेड वस्त्र तैयार करने के कारखाने लगाये बल्कि बहुत सी विदेशी कम्पनियों ने भी परिधान निर्मित करने के कारखाने स्थापित किये हुये हैं। इंदौर रेडीमेड वस्त्र निर्माण करने के क्षेत्र में सबसे अग्रणी है। इसके पश्चात् रेडीमेड वस्त्र निर्मित करने के कारखाने भोपाल, जबलपुर एवं ग्वालियर में भी स्थापित हैं। इन सभी कारखानों में स्कूली बच्चों की यूनीफाम, पुरूषों के परिधान (पेंट, शर्ट, कोट, लोवर, टी–शर्ट, ग्लेजर, शेरवानी, कुर्ता, पैजामा इत्यादि) महिलाओं के परिधान (सलवार सूट, गाउन, साड़ी, टॉप, स्कर्ट, लहंगा चोली, चुनरी, दुपट्टा इत्यादि) तैयार किये जाते हैं। रेडीमेड वस्त्रों का निर्माण करने वाली देशी एवं विदेशी प्रमुख कम्पनियों का विवरण निम्न तालिका द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका – 1

रेडीमेड वस्त्र निर्मित करने वाली देशी एवं विदेशी कम्पनियां

क्र.	परिधान निर्मित करने वाली देशी कंपनियाँ	रेडीमेड वस्त्र निर्मित करने वाली विदेशी कम्पनियाँ
1	रेमण्ड	केम ब्रिज
2	एस. कुमार	पीटर इंग्लैण्ड
3	विमल	पार्क ऐवेन्यू
4	गरवारे	ऑडिडास
5	सियाराम	

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि विदेशी कम्पनियों में केम ब्रिज, पीटर इंग्लैण्ड, पार्क ऐवेन्यू, ऑडिडास कम्पनियाँ प्रदेश में रेडीमेड परिधानों का निर्माण कर विक्रय कर रही हैं। वहीं हमारे देश की बड़ी कम्पनियों में रेमण्ड, एस. कुमार, विमल, गरवारे, सियाराम, मयूर, फेब इंडिया, डी.सी.एम., न्यूरो ऊनो, दिनेश मिल्स इत्यादि भी रेडीमेड परिधानों के निर्माण व विक्रय में लगी हुई है।

मध्यप्रदेश में पुरूषों के परिधान निर्मित करने वाली प्रमुख कम्पनियों का विवरण :

प्रदेश में पुरूष परिधान निर्मित करने वाली प्रमुख कम्पनियां मुख्य रूप से इंदौर में स्थापित हैं। इसके अलावा होशंगाबाद, सागर, रतलाम, भोपाल एवं जबलपुर में भी कुछ प्रमुख कम्पनियों के कारखाने स्थापित हैं। इन कंपनियों का विवरण, इनके द्वारा निर्मित किये जाने वाले परिधान, कर्मचारियों की संख्या तथा इनसे सम्पर्क आदि का विवरण निम्नानुसार प्रस्तुत किया गया है:

- सांई राज मेन्स वेयर : यह कम्पनी पुरूष परिधानों का निर्माण करती है । इसके द्वारा पुरूषों के पेंट, शर्ट, टी–शर्ट, शॉट्स, बरमुड़ा, ट्राउजर इत्यादि बनाये जाते हैं । ये वस्त्रों को निर्मित करने के साथ ही साथ इन्हें विक्रय हेतु अपने वितरकों एवं थोक विक्रेताओं को भेज देती है । यह कंपनी पुरानी इटारसी राजमार्ग, होशंगाबाद जिले में स्थापित हैं।
- कॉटन क्रियेटर : यह पुरूष एवं महिलाओं के शर्ट, ट्राउजर्स, स्कर्ट्स एवं केप्री की विस्तृत श्रेणी के परिधानों की उत्पादक, पूर्तिकता, थोक व्यापारी एवं निर्यातक है। इन परिधानों की सभी नापों की पक्के रंगों, टिकाऊपन, सिकुड़न रहित एवं व्यवस्थित रूप से सिलाई की जाती है। इसकी स्थापना वर्ष 1986 में की गई । इस व्यवसाय में लगे कर्मचारियों की संख्या 20 है। यह वर्ष में लगभग 1 करोड़ रूपये से अधिक का व्यवसाय करती है। इसका कारखाना शिव विलास पैलेस इंदौर में स्थित है। इसका स्वरूप व्यक्तिगत है।
- राज राजेश्वरी प्राइवेट लिमिटेड : इस कम्पनी द्वारा पुरूषों के परिधान, शर्ट, पेंट, ट्राउजर्स आदि बनाये जाते है। यह कंपनी केवल परिधान बनाती है तथा उसे थोक विक्रेताओं को विक्रय करती है। इस कंपनी द्वारा बनाये गये उत्पाद टिकाऊ होते हैं। यह कंपनी अपने उत्पादों में पक्के रंगों का उपयोग करती है। इस कंपनी में 50 कर्मचारी काम करते हैं ।इसका व्यवसाय प्रतिवर्ष 5 करोड़ रूपये से अधिक का है। यह कंपनी श्रीकृष्णा काम्पलेक्स, एम.जी. रोड, इंदौर में स्थित है।
- गिरीराज उद्योग : इस साझेदारी फर्म की स्थापना वर्ष 2006 में हुई थी । यह फर्म रेडीमेड वस्त्रों को न केवल बनाती है बल्कि उनका विक्रय पूर्तिकर्ताओं एवं थोक व्यापारियों को भी करती है। इस फर्म द्वारा पुरूष एवं महिला परिधानों का निर्माण किया जाता है । पुरूषों के शर्ट, पेंट, टी–शर्ट, ट्राउजर तथा महिलाओं के केप्री, लेडीज जैकेट, फैन्सी जैकेट, लेडीज डिजाइनर जैकेट, इत्यादि तैयार किये जाते है। इसका कारखाना आर.एन.टी. मार्ग इन्दौर में स्थित है।
- शिवालिक ऐपरल्स प्राइवेट लिमिटेड : इस कंपनी की स्थापना 1997 में की गई थी। इसके प्रबंध निदेशक श्री करन सिंह चौधरी हैं। यह परिधानों को निर्मित करती है, उन्हें देश एवं विदेशों में विक्रय हेतु निर्यात करती है। इसका बाजार सम्पूर्ण विश्व है। इसके उत्पाद विश्व के सभी देशों को निर्यात किये जाते हैं। यह कंपनी डिजायनर रेडीमेड वस्त्रों की बहुत बड़ी उत्पादक कम्पनी है। रेडीमेड वस्त्रों की श्रृंखला, इसकी उत्तम सिलाई, पक्के रंगों, स्टेण्डर्ड साइजिंग एवं उच्च गुणवत्ता के लिये यह कंपनी जानी जाती है। यह कंपनी बालक एवं बालिकाओं के डेनिम वस्त्र, महिलाओं एवं पुरूषों के डेनिम वस्त्र तैयार करती है। यह बच्चों, महिलाओं एवं पुरूषों के निटेड वस्त्र भी तैयार करती है। महिलाओं की कॉटन केप्री एवं पुरूषों के कॉटन वस्त्रों का निर्माण करती है। यह पीथमपुर (इंदौर) के औद्योगिक क्षेत्र में स्थित है। इसका वार्षिक व्यवसाय 1 अरब रूपये से अधिक का है।
- रियो शर्ट : पुरूष परिधान निर्माण के क्षेत्र में रियो शर्ट जाना पहचाना नाम है। इस कंपनी द्वारा मुख्यतः 8 से 16 वर्ष के बच्चों के वस्त्र तैयार किये जाते हैं। यह कंपनी बच्चों के टी–शर्ट, शर्ट तैयार करती है। पुरूष कुर्ता, ब्रीचेस, डिजाइनर एपरेल्स आदि भी इस कंपनी द्वारा तैयार किये जाते हैं। यह वस्त्रों का निर्माण करके उन्हें निर्यात कर्ताओं एवं थोक विक्रेताओं को विक्रय करती है। इस कंपनी की स्थापना वर्ष 2008 में की गई इसका वार्षिक व्यवसाय लगभग 2.5 करोड़ रूपये है। इस कंपनी के कारखाने में लगभग 50 व्यक्ति कार्य करते हैं। इसका उत्पाद देश के महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्यप्रदेश एवं

छत्तीसगढ़ में विक्रय किया जाता है। यह कंपनी इंदौर में खजूरी बाजार में स्थित है।

- होली फेथ मिनिस्ट्री : इस कंपनी की स्थापना वर्ष 1997 में जबलपुर में की गइ। यह कंपनी पुरूषों के पेंट, शर्ट, टी–शर्ट, इत्यादि का निर्माण करती है। यह उत्पादन के साथ–साथ पूर्तिकर्ताओं को थोक विक्रय एवं निर्यात का कार्य भी करती है। देश के भी लगभग सभी प्रान्तों में इसके उत्पादों का विक्रय किया जाता है। इसका वार्षिक व्यवसाय 2 से 3 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष है। यहां लगभग 50 कर्मचारी कार्य करते हैं। श्री नीलेश मासी इस व्यवसाय के संचालक हैं।
- भसीन इन्टरप्राइजेज : इस कंपनी की स्थापना वर्ष 1980 में की गई थी। इसकी वार्षिक बिक्री लगभग 2.5 से 5 करोड़ रूपये है। यहाँ काम करने वाले कर्मचारियों की संख्या 20–50 है। यह कंपनी उत्पादक का कार्य करती है। यह जूते, दास्ताने, ऐप्रॉन, कैप, सिक्यूरिटी यूनीफॉर्म, बॉइलर सूट, जम्प सूट, टी–शर्ट, लैब कोट, लैब सूट, डुंगारी, सफाई वस्त्र एवं औद्योगिक गणवेशों को बनाने का कार्य करती है । यह इंदौर के देवास नाके के पास स्थित है।
- वियर वेल : यह कम्पनी पुरूषों के रेडीमेड वस्त्रों का उत्पादन करती है। पुरूष परिधानों में जीन्स, टी–शर्ट, शर्ट्स, पेन्ट्स, ट्राउजर्स, कैजुअल्स, फॉर्मल्स, लेडीज वियर्स, लेडीज टॉप, स्कर्ट आदि क उत्पादक एवं थोक पूर्तिकर्ता है। यह कंपनी 2–3 करोड़ रूपये का वार्षिक व्यवसाय करती है। यह कंपनी सागर के सिविल लाइन्स में स्थापित है।
- ऑरेंज गैलरी : यह कंपनी केवल पुरूषों की टी–शर्ट का उत्पादन करती है। यह अपना उत्पाद थोक विक्रेताओं एवं पूर्तिकर्ताओं को विक्रय करती है। यह कंपनी इंदौर के कैलाश पार्क में स्थापित है। श्री सचिन कोहली इस कंपनी के प्रबंध निदेशक हैं ।
- ब्लू लैग्स : इस फर्म की स्थापना वर्ष 2011 में हुई थी। यह फर्म ब्रांडेड जीन्स, पुरूषों की ब्लू जीन्स, पुरूषों की ब्लेक जीन्स, डिजायनर शर्ट, गोल कॉलर वाली टी शर्ट, पोलो टी–शर्ट, पुरूषों की कैजुअल शर्ट इत्यादि का उत्पादन करती है। यह फर्म पूर्तिकर्ताओं एवं थोक विक्रेताओं को उत्पाद का विक्रय करती है। इसका वार्षिक उत्पादन 1 से 3 करोड़ रूपये का है। इस फर्म की रेडीमेड परिधानों का विक्रय करने की स्वयं की फुटकर दुकानें भी हैं जहां पर इनके द्वारा बनाये गये उत्पादों की बिक्री की जाती है, यह फर्म रतलाम के काटजू नगर में स्थित है।
- पाय इंटरनेशनल : इस कंपनी की स्थापना वर्ष 1999 में हुई। इस कंपनी का वार्षिक व्यवसाय 0.5 करोड़ रू. से कम का है। इसके कर्मचारियों की संख्या लगभग 20–50 है। इस कंपनी के प्रमुख उत्पाद शर्ट एवं टी–शर्ट निर्मित करता है। यह कंपनी अपने उत्पादों को सम्पूर्ण विश्व में विक्रय करती है। यह निर्यातकों को एवं थोक पूर्तिकर्ताओं को माल का विक्रय करती है। इस कंपनी की स्थापना इंदौर के नवलखा में विशाल टॉवर, इंदिरा काम्पलेक्स में की गई है।
- डी.एम. डेनिम : यह कंपनी डेनिम जीन्स, शर्ट एवं टी–शर्ट का उत्पाद करती है। इसके उत्पाद मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, दिल्ली में बेचे जाते है। यह थोक विक्रेताओं एवं पूर्तिकर्ताओं को माल का विक्रय करती है। इसका वार्षिक व्यवसाय 1 से 2 करोड़ रूपये का है। यह कंपनी इंदौर में ट्रेड सेन्टर में स्थापित है। श्री महेन्द्र दिवानी इस कंपनी के निदेशक हैं।
- जे.के. इन्टरप्राइजेस : यह कम्पनी पुरूषों के ऊनी निटवेयर, फैशन वेयर, बच्चों के परिधान, टी–शर्ट, पुरूषों के स्वेटर, नाइट वेयर, अंडरवेयर की उत्पादक है। यह कंपनी थोक विक्रेताओं एवं पूर्तिकर्ताओं को अपने उत्पाद को विक्रय करती है। इस कंपनी का वार्षिक व्यवसाय लगभग 2 करोड़ रूपये का है। इस कंपनी में कार्य करने वाले कर्मचारियों की संख्या 50–70 है । इसके उत्पाद पूरे विश्व में बेचे जाते हैं। इस कंपनी की स्थापना 1999 में इंदौर के डायमंड सेन्टर में की गई।
- गोइंग टू स्टार्ट : यह कंपनी केवल पुरूषों के शर्ट का उत्पादन करती है। यह अपने उत्पाद को थोक विक्रेताओं एवं पूर्तिकर्ताओं को विक्रय करती है। इसका वार्षिक टर्न

ओवर लगभग 1 करोड़ रूपये का है। यहां लगभग 50 कर्मचारी कार्य करते है। यह कंपनी कटंगा (म.प्र.) में स्थित है।

- नागल वस्त्र उद्योग प्रा.लि. : यह एक ISO 9001-2000 प्रमाणित व्यापारिक संगठन है। हमारी फर्म एक प्रतिष्ठित फर्म है जो पुरूषों एवं महिलाओं हेतु रेडीमेड वस्त्रों की विशाल श्रृंखला का निर्माण एवं प्रेषण करती है। हमारे द्वारा प्रस्तुत की गई वस्त्रों की श्रृंखला में निम्न प्रकार के वस्त्र सम्मिलित हैं – मन्सवियर, शर्ट, टी–शर्ट, जैकेट, जीन्स, ट्राउजर्स, लेडीज वियर, लेडीज शर्ट, लेडीज टी–शर्ट, लेडीज जीन्स, लेडीज ट्राउजर्स एवं अन्य हम हमारी इस वस्त्रों की विशालतम श्रृंखला द्वारा टैक्सटाइल एवं वस्त्रोद्योग की विभिन्न आवश्यकताओं को पूर्ण करत हैं। अपनी परम्परागत व्यावसायिक पॉलिसियों द्वारा हमने सम्पूर्ण भारत में ग्राहकों की एक विशाल सूची अर्जित की है। नागल वस्त्र उद्योग प्रा.लि, नागल ग्रुप का एक भाग है, जिसके व्यावसायिक क्रियाकलाप सम्पूर्ण देश में फैले हुए हैं। हमारे द्वारा बनाए गए डिजाइनर वस्त्र निम्न तीन ब्रान्ड्स के अंतर्गत प्रदर्शित किये जाते हैं – क्लब फॉक्स, फॉक्स एवं एमबीए। हमें विदेशी बाजार में भी लेडीज एवं मेन्स वियर के एक प्रतिष्ठित निर्माणकर्ता एवं प्रेषक के रूप में जाना जाता है।

हमने एक विशालतम औद्योगिक संरचना स्थापित की है जो कि 30,000 वर्गफीट के क्षेत्र में फैली हुई है। हमारा उक्त उद्योग तकनीकी रूप से मशीनरी एवं यंत्रों से लैस है जो हमें सर्वाधिक संतोषजनक रेडीमेड वस्त्रों के संग्रह को ग्राहकों तक पहुंचाने में सहायक है।

हमारे द्वारा अत्याधुनिक मशीनों द्वारा उत्पादन किया जाता है। तकनीकी रूप से परिपूर्ण इन मशीनों एवं यंत्रों द्वारा हम प्रतिमाह 1,50,000 यूनिट्स का उत्पादन करते हैं। ये मशीनें हमें त्रुटिरहित एवं नवीनतम फैशन पद्धति के वस्त्रों के निर्माण में सहायक है। कंपनी के कर्ता धर्ता श्री राजेन्द्र अग्रवाल एवं श्री प्रदीप अग्रवाल हैं। यह कंपनी वर्ष 1997 में स्थापित हुई थी।

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

BRICS AND NEW INTERNATIONAL WORLD ORDER : AN ECONOMIC EMERGENCE BASED ON POTENTIAL AND OPPORTUNITIES

Dr. Sunil Kumar Padhi

ABSTRACT : Since the world war-II there has been a unipolar world in which the developed countries mainly US set the agenda for the developing countries. **BRICS** as such is an emerging blocs of nation based on mostly economic interest. BRICS, an economic emergence of BRAZIL, RUSSIA, INDIA, CHINA& SOUTH AFRICA who are going to be important in the next 20 years. BRICS which covered 26% of the world land mass, represents 18% of world trade, has a total GDP of $11 trillion and 46% of the world population. The group power is based on its potential rather than present commonalities and identities. It seeks to bring about a multi polar world. Countries especially **INDIA AND CHINA** with enormous amount of population to be uplifted from the level of poverty, the idea of establishing a development bank will help to preserve the growth .This idea has come from India last year. BRICS wants to change the way world bank, IMF,UN secretary council and WTO function, want to establish its own bank which will cater the needs of developing countries and seek cooperation with each other in various field of development and security. BRICS will have their own monetary policy and not to be affected by US monetary policy which has witnessed huge upheavals and volatility in the value of their currencies due to FIIS. The **New Development Bank** can enhance it leverage in the global markets. Though there are lots of differences in BRICS but which unites them is the huge growth potential. As big economies and large pool of resources they will have an important role in the future and their voice will be heard in the working of all international institutions including the IMF which has failed to enact reform in quota and voting rights.

STRAGEGIC IMPORTANCE OF BRICS FOR THE WORLD : The name BRICS was coined in 2002 for a group of emerging countries by Goldman Sach. Today BRICS has become important forum that is challenging the existing world order. Since the world war -II there has been a unipolar world in which the developed countries mainly USA set the agenda for the developing countries. Today we have a new category emerging counties that include BRAZIL, RUSSIA, INDIA, and CHINA & SOUTH AFRICA who are going to be important in the next 20 years. The group power is based on its potential rather than present commonalities and identities.

Another thing that seems to be nagging the Western world is that a powerful group is rising which will not be directly or indirectly under their control like the NATO, the Security Council and the WTO. America was not able to isolate Russia during the recent Ukraine crisis. India and china were the main countries that played the spoilsports' .Now the two countries, along with Russia and even American neighbours like Brazil and Argentina, are moving towards forming a powerful bloc that may have an influential stake in strategic and financial affairs of the entire world. Call it an anti-Western rhetoric or whatever you feel like, the problem with the current worlds order is that too much revolve around America and Europe. If America is the big daddy, the major European countries are the big moms (pardon the hint of polygamy). They may be a decent group of countries over and all, but it in one way or another, they are able to exert their influence over major international decision through financial arm-twisting and embargo-based real politic. They control big and small economies of the world through the Bretton woods institution like the

World Bank and the IMF that came into existence after the Second World War. There no other major financial institutions with so much money and influence. Complete economies have been ruined because of direct or indirect interference of these agencies. Additionally, various global economies are intertwined these days. It's literally like the butterfly effect. Even tiny fluctuations in a country can have a cascading in America triggered a domino effect causing economic depression all over the world. The unsteady euro wreaked havoc in many economies including India's. The 40 percent of the world population (the BRICS member countries) would like create a workable distance from the euro-dollar nexus and if possible, create an equally strong common currency that can be used internationally as well as nationally. It might be something like the euro. It is also being contemplated that the member countries be able to transact with each other with this new or common BRICS currency[1].

BRICS OBJECTIVES

- Seeks to bring about a multi-polar world not to be dominated by USA and EU
- Wants to change the way world bank , international monetary fund, united nation security council and world trade organisation functions
- Wants to establish its own bank which will cater to the needs of developing countries
- Seeks cooperation with each other in various fields of development and security.

STRATEGIC IMPORTANCE OF BRICS FOR INDIA :

Co-operation on the economic front is one of the focus areas of India's policy towards BRIC. It believes that global challenges can only be addressed by co-operative effort, with the full and equal participation of major and emerging powers and economies. For India, on the one hand, cooperation with other BRIC member-states provides an excellent opportunity to share its development experiences with them as well as learn from their experiences. This is more so since they share common challenges as developing countries and global challenges often affect them in a similar way. In addition to discussions about how to respond to the financial crisis, India exchanged ideas and experiences on food security, agriculture, disease, foreign aid, energy and global warming.

Sharing these experiences not only helps the BRIC member-states themselves, it also allows them to share experiences and "best practices" with the developing world and thereby expand South-South cooperation. Moreover, India has also tried to use BRIC as a forum to engage China as the latter has become the largest market for the fast-industrializing countries of East Asia. The volume of China-India trade has soared in recent years, and is likely to reach $60 billion by the end of 2010[2]. Not only that, India also wants to resolve the age-old mistrust and complicated relationship between the two countries since the 1962 war between them. India shares land border with China, Pakistan and Bangladesh and faces many potential threats. Although Sino-Indian relations have improved in recent years, India is threatened by China's expanding presence through bases in Myanmar, Pakistan, Bangladesh and Sri Lanka, leading to a possible encirclement around the Indian subcontinent as well as potential competition in the Indian Ocean area. By improving relations with China and by co-operating in a multilateral forum like BRIC, India would like to stabilize the regional environment by neutralizing China in the simmering issues between India and Pakistan. India was Russia's close ally in the Cold War years, with the latter even helping India in its war with Pakistan in 1971. India wants to strengthen its ties with Russia within the multiple co-operative networks, given that it depends on its support in its efforts to counter terrorism emanating from Pakistan. India believes that Russia being a great power can influence the conduct of Pakistan. India seeks co-operation with Russia to devise effective counter-terror strategies by co-ordinating intelligence and information gathering systems between the two countries. On the other hand, there are immense

opportunities to expand trade, investment and technology flow between the two countries. Co-operation in the fields of energy, nuclear energy program and defence are the other important aspects of co-operation between the two countries, besides shared views on issues like economic slowdown, climate change and global governance. With Brazil, India has a unique partnership arrangement that has attracted international attention. Both countries have directly challenged Western nations over free trade during various rounds of WTO negotiations, most notably at the 2003 Cancun meeting.

Aside from the bank and the easy availability of money being made available to smaller as well as economically weaker countries, this association may also work to India's advantage, maybe later on, strategically, vis-à-vis Pakistan. The western world –especially America and Britain – has so far been treating Pakistan with kid gloves. All its indiscretions are over looked because of its strategic advantage which in reality is a cold war hangover. Maybe they want to keep the south Asia simmering due to whatever diabolical reason. Having its own bloc as a founding member will give India an important platform not just to voice its concern but also exert enough pressure to make a difference in such matters.

Benefits of India from Brazil association : The potential benefits of cooperation are especially clear in the case of Brazil. India and Brazil have declared inclusive development an imperative and have engineered creative solutions to meet their development an imperative and have engineered creative solutions to meet their development challenges. But both also face many obstacles to equitable development some of which can be overcome through learning and targeted bilateral investment. Brazil's zero hunger strategy, for instance, has been successful at reducing poverty, inequality and hunger by developing profitable small farms and delivering cash to poor families through innovative payment systems. As the debate rages in India about how best to reduce poverty, curb growing inequality and boost agricultural production, Brazil's experience can help. Brazil's social schemes are among the world's best targeted and they're transparent. They have demonstrated how to streamline the delivery of services across all levels of government. By collaborating with Brazil, India can improve the reach and efficiency of its own, notoriously leaky schemes, including the public distribution system, whose losses are estimated to be around 44% a year[3].

Benefits of India from Russia association : India and Russia can launch such initiative as government – funded study trips for representatives of innovative IT business to visit their counterparts in India or Russia and, even more crucially, create the first-ever indo- Russian IT forum. Private initiatives, e.g. co-sponsored by organizations like NASSCOM in the two countries, can add to the existing joint IT centre by encouraging the formation of joint ventures between IT organizations and scientists. This can create venture funds for collaborative Russian-Indian projects which would benefit from Indian relationship in the outsourcing industry and Russian relationships in higher-end computer science research in third countries. For instance, Russian specialists have experience in the automation of embedded system programs, which they can coordinate with Indian IT professionals. Together the two can excel in such joint projects that involve scientific programming, to be used, among others, in space exploration- an area which India is trying to rapidly develop. This is the time for India to really push for sophisticated, high technology cooperation with its old friend and strategic partner. The best opportunities in the bilateral relationship which promise immediate results are those that incubate Russian science and hi-tech concepts by using India's technological eco-system and infrastructure for joint projects. Information technology in particular is an area where India should capitalize on the plethora of educated and talented Russian professionals and

Russian can benefit form the size as well as expertise of the Indian labour pool. For India, the size and scope of the teams and trials involved will not only promote innovation but also provide employment and encourage market growth in new technology[4].

Benefits of India from china association : As the world's two most populous and largest developing countries as well as the founding members of the BRICS, China and India are firm supporters and active participants of the cooperation among the BRICS countries, and always take cooperation with other BRICS countries as one of the priorities in their foreign policy. China and India are also good neighbours, good friends and good partners that have established a strategic and cooperative partnership for peace and prosperity. Both countries are now facing a historical mission of growing the economy and improving people's livelihood. The China-India bilateral cooperation and their cooperation under the BRICS framework are complementary to each other. Our major projects include the BCIM Economic Corridor, the Chinese-style industrial parks in India, railway cooperation, and initiatives of the Silk Road Economic Belt and cooperation along the 21st Century Maritime Silk Road. We are also working for a "Trans-Himalayas Economic Growth Region" driven by double-engine of China and India. All the cooperation can be benefited from the BRICS cooperation mechanism. China and India should establish a closer partnership of development to promote more integration of market, greater financial linkage, better connectivity of infrastructure as well as closer people-to-people contacts, and thus to bring our people tangible benefits. India recently announced its railway and Union budgets, indicating that India is determined to accelerate economic development. As India's only neighbour in BRICS, China hopes and believes that, under the strong leadership of Prime Minister Narendra Modi, India's economy will return to a healthy track and develop better. China will enhance its cooperation with India by proactive and practical action. Chinese railway department has recently sent officials and technical experts to India for substantive consultation on cooperation of the speedup of existed railway lines and the up gradation of railway stations. China is also working on a number of leading Chinese enterprises to invest in India, so as to enhance our overall investment level as well as balance our bilateral trade. In addition, China and India will also explore possibilities of cooperation in other areas such as urbanisation and agriculture. We firmly believe that, with our joint efforts, a wide-ranging, multilevel and high-quality economic cooperation between China and India will be achieved with more convergence of our two emerging markets. The common development of China and India will ensure the Asian century's arrival. There are still challenges for the BRICS countries to move forward. As an old saying goes, 'If you want to go fast, go alone; if you want to go far, go together.' As long as China, India and other BRICS members insist on building their strong partnership, deepening economic cooperation, a better future is achievable for BRICS[5].

Emergence of New development bank (NDB) as a collective strength of BRICS:

“With money comes power and with power comes influence” : BRICS will have their own monetary policy and not be affected by US monetary policy which has witnessed huge upheavals and volatility in the value of their currencies due to FIIS.

NDB can enhance its leverage in global markets. The Development Bank with an initial pooling of $ 50 billion coming from each country, the idea was first mooted in 2012 summit in New Delhi and since then lots of progress has been made. Later on, the funding is projected to increase to $100 billion. This money can be used as a contingency reserve arrangement to tackle situations similar to what happened in Italy. China, a country that always comes with its own posturing, initially only wanted to invest the maximum amount,$41 billion, but also insisted that the headquarters of the bank be based in

shanghai, which in all likelihood, will be accepted by the members. But the propose contribution of $ 41 billion by china was opposed by India and other countries because then again this would have increased the influence of one particular country. India especially wants member countries to have an equal stake based on contributions rather than economic weight .Other countries can join the bank but the BRICS share cannot fail below 55 %.

CONCLUSION :

- Lots of differences among the BRICS but which unites them is their huge growth potential.
- As big economies and large pool of resources they will have an important role in the future.
- Their voice will be heard in the working of all international institutions including the IMF which has failed to enact reforms in quotas and voting rights.
- In fact, the member countries may also enjoy a greater lobbying power in international matters and they will also try to remove the hurdles so that the member countries can do business with each other and wield better negotiating powers than WTO.
- It will aim at bringing about Co-operation in food security, health education, urbanization, inclusive growth, trade and investment and water stress, clean energy, tackling terrorism, cyber security and climate change, preserving bio diversity and economical base ,promoting sustainable development, high end manufacturing, HRD, IT, Technology, R&D and sharing of resources to strength the global south
- They will have a young population that will be prominent in the labor force of the world in the future as Europe and japan age.

REFERENCES :

1. http://www.niticentral.com/2014/07/15/brics-summit-is-of-strategic-importance-to-india-233346.html
2. "China-India to realize 60 bln USD trade target in 2010", http://english.peopledaily.com.cn/90001/90778/90857/90862/6679516.html, *June 16, 2009*
3. India and Brics summit 2012 / Indian council on global relation / India-Brazil: pioneers of a new development agenda / by :estefania marchan
4. India and Brics summit 2012/ Indian council on global relation /India-Russia :taking each other seriously/ by:Katherine foshko
5. http://articles.economictimes.indiatimes.com/2014-07-19/news/51744780_1_the-brics-brics-countries-cooperation

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

आंदोलन समाज द्वारा उत्पन्न समस्याओं के परिणाम

श्रीमती निकिता सिंह
श्रीमती रामकुमारी महिला पी.जी. महाविद्यालय, मुकुन्दगढ़ मण्डी, जिला झुन्झुनू (राज.)

आंदोलन चाहे कोई भी हो किसी के द्वारा चलाया जाए, चाहे वह जनजातियाँ हो या फिर किसान, व्यापारी, राजनीति दल या कोई व्यक्ति धार्मिक आंदोलन के लिए धर्म गुरू बन जाए, लेकिन ये सभी आंदोलन सामाजिक आंदोलन होते हैं, क्योंकि इन पर सामाजिक प्रभाव पड़ता है। ये आंदोलन समाज द्वारा उत्पन्न समस्याओं के परिणाम होते हैं, जो समाज को प्रभावित करते हैं।

जनजातियों में बहुत से लोगों के जीविका के साधन कृषि श्रमिक, वानिकी, मछली पालन, शिकार, बागवानी, झूम कृषि थे। इनके कार्यों में आवश्यक ज्ञान की कमी थी, जैसे – पैमाना, वजन, थोक बिक्री आदि। भारत में अंग्रेजों के सत्ता में आने से इनके वन सम्पदा उपभोग पर पाबंदी लग गई, जिसके विरोध में इन्होंने संघर्ष किये। आजादी के बाद जब सरकार ने वनों को नियंत्रण में लेना प्रारम्भ किया तो वन विभाग ने उन्हें बड़ी संख्या में रोजगार उपलब्ध कराया। आजादी के बाद भारत में अनेक सामाजिक आंदोलन हुए जिनमें जनजातिय आंदोलन भी सम्मिलित है। सामान्यतः जनजातियों द्वारा किये जाने वाले आंदोलनों को जनजातिय आंदोलन कहा जाता है, लेकिन इन आंदोलनों का प्रमुख कारण जनजातिय आधार कभी नहीं रहा। भारत में जो भी जनजातिय आंदोलन हुए है वे सभी आंदोलन कभी भूमि विस्थापन के कारण हुए, कभी धर्म परिवर्तन के फलस्वरूप, कभी जमींदारी प्रथा में लूट या आर्थिक कारणों से हुए। सैकड़ों वर्षों से जनजातियाँ हमेशा हानि में ही रही है। इनके द्वारा किये जाने वाले आंदोलनों के कारण मुख्यतः आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक शोषण के अलावा भी अनेक ऐसे आंदोलन हुए जिनमें जनजातियों में खुलकर भाग लिया।

मध्य प्रदेश में सरदार सरोवर बाँध की ऊँचाई और विस्थापन के सवाल को लेकर ''मेघा पाटकर'' ने जो आंदोलन चलाया उनमें झाबुआ जिले के भीलों की सहभागिता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही है।

बैतूल जिले में सुनीलम के नेतृत्व में आदिवासियों ने अपने हितों के संरक्षण के लिए आंदोलन में भाग लिया। मध्य प्रदेश से ही बालाघाट जिले में कंकर मुन्जारे एवं अन्य आदिवासी नेताओं की भूमिका आंदोलन में महत्त्वपूर्ण रही।

मध्यप्रदेश की किशोर भारती नामक संस्था ने आदिवासियों के विकास हेतु सामाजिक आंदोलन की नींव रखी थी। आज इसी क्षेत्र में सुनीलम ''आदिवासी किसान मजदूर संगठन'' केसला जिला होशंगाबाद के नाम से आदिवासियों को एकत्रित कर उन्हीं के हितो, अधिकारों के लिए आंदोलित करने का कार्य कर रहे है।

भारत में नक्सली आंदोलन का यथार्थ :

स्वतंत्रता से पहले चाहे जनजातियाँ हो या गैर जनजातिय लोग यदि संघर्ष करते है तो उनके कारण समझ में आते हैं, लेकिन स्वतंत्रता के बाद नक्सलवाद की गूँज का सुनाई देना, इस बात का संकेत है। लाकप्रशासन की ब्रिटिशवादी मनोवृत्ति को जल्द दूर होना चाहिए।

नक्सलवादी आंदोलन का जन्म पश्चिम बंगाल के सिलीगुड़ी क्षेत्र के नक्सलवाड़ी ग्राम में 1967 ई0 में हुआ था। इस आंदोलन के जन्मदाता चारू मजूमदार, कनु सन्थाल, सारेन बोस तथा उनके अन्य साथी थे। यह आंदोलन मार्क्सवादी नीतियों पर आधारित है।(1) ये आंदोलन के लिए हिंसा को साधन के रूप में स्वीकार करते हैं। पश्चिम बंगाल से शुरू होने वाला ये आंदोलन आज भारत के 602 जिलों में से 156 जिलों और 16 राज्यों में फैला है। इनमें मुख्यतः छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, मध्य प्रदेश तथा आसाम की जनजातियों में ज्यादा फैला है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

आज देश के समाचार पत्रों में बस्तर के नक्सलवादी आंदोलन की चर्चा सुर्खिया बनी रहती है। बस्तर के अनेक ग्रामों में आज इस आंदोलन ने अपना वर्चस्व इस सीमा तक बना लिया है कि वहा प्रशासन की पकड़ कमजोर पड़ती जा रही है। नक्सलवादी अपनी हिंसात्मक गतिविधियों को कार्यरूप देने के लिए मुख्यतः राजतंत्र पर हमले और सिविल सेवकों के अपहरण एवं फिरौती वसूली को अपनाते हैं। ये अपनी गतिविधियों को अंजाम ज्यादातर स्वतंत्रता दिवस् और गणतंत्र दिवस के अवसर पर देते हैं। सबसे बड़ा साहसिक नक्सली हमला 14 नवम्बर, 2005 ई0 को जहानाबाद बिहार में हुआ था। जहाँ विधानसभा चुनाव के अंतिम दौर की पूर्व संध्या पर 1000 से अधिक हथियारबंद नक्सलियों ने जहानाबाद शहर को घेर रखा था और जेल पर हमला कर अपने 300 से अधिक कार्यकर्ताओं को मुक्त करा लिया था।

नक्सलवादी द्वारा कार्यान्वित कुछ महत्वपूर्ण पहलू : –

नक्सलवादियों ने हिंसा को माध्यम बनाकर देश में कई ऐसी बड़ी–बड़ी घटनाओं को अंजाम दिया है, जहां सरकार के सुरक्षा तंत्र पूरी तरह नाकाम साबित हुए है। इन्ही हिंसात्मक कार्यों के कुछ पहलू –

30 अप्रैल, 2007 – छत्तीसगढ़ में एक ओर पुलिस दल पर हमला किया ये घटना कांकेर जिला रायपुर से 175 किलोमीटर दक्षिण में मिय गांव में गुरूवार को घटी जहां विस्फोट में 18 पुलिसकर्मी घायल हुए। 7 गंभीर रूप से घायल हुए और 4 मौके पर ही मारे गए।(2)

रायपुर में 27 मई, 2007 रविवार के दिन प्रतिबंधित नक्सलवादी संगठन ने माओवादी कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर एक रेल्वे पुल रेल्वे लाईन को उड़ाया और छत्तीसगढ़ के दंतेवाडा जिले में ²ेत`जममस ब्वउचंदल के जल सम्पति के एक बड़े हिस्से को दो भूमिगत सुरंग में विस्फोट कर नुकसान पहुंचाया, लेकिन वहां किसी के गंभीर रूप से घायल होने की कोई सूचना नहीं मिली।(3)

नक्सली आंदोलन का सबसे चिंताजनक पहलू माओवादी नेपाल और श्रीलंका में लिट्टे के साथ संबंधों का है। नक्सलवादियों और बांग्लादेशी इस्लामवादियों के बीच उभरते रिश्ते भी आज गंभीर चिंता के विषय हैं।

इसके अलावा भी अनेक जनजातियां ऐसी स्थिति में पहुँच चुकी है कि वे कभी भी हिंसा या आतंकवाद की ओर कदम बढ़ा सकती है। बिहार के झारखण्ड मुक्ति मोर्चा द्वारा चलाए जाने वाला आंदोलन, असम का बोडो आंदोलन या पूर्वी भारत के जनजातिय आंदोलन, ऐसे ही वर्ग में रखे जा सकते हैं। देश में हो रही इन चिंताजनक गतिविधियों ने हमें यह सोचने पर मजबूर कर दिया है कि आखिर हमारे शासन तंत्र में ऐसी कौन सी कमियां रह गई है जो आज देश के अपने ही लोग उसे हिंसा का शिकार बना रहे हैं।

- ये नक्सलवादी, मार्क्सवादी, लेनिनवादी तथा माओवादी विचारधारा से प्रभावित है।
- गुरिल्ला युद्ध पद्धति को अपनाते हैं।
- साहुकारों भू–स्वामियों के शोषण के विरूद्ध छोटे किसानों तथा भूमियों का आंदोलन है।
- भूमि पर कब्जा करना इनका मुख्य उद्देश्य है।

झारखण्ड आंदोलन

बीसवी शताब्दी के चौथे दशक से जनजातियों द्वारा चलाया गया यह आंदोलन एक लम्बे समय तक चलने वाला अहिंसात्मक आंदोलन है। इस आंदोलन का गैर जनजातियों ने भी समर्थन किया। इस आंदोलन द्वारा आंदोलनकारियों की माँग बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश के 16 जिलों को मिलाकर एक अलग राज्य 'झारखण्ड' राज्य की स्थापना रही है। इनका उद्देश्य उन सभी क्षेत्रों को एकत्रित करना रहा जो कभी छोटा नागपुर प्रशासित डिवीजन के तहत आने वाले बंगाल, उड़ीसा, बिहार, मध्य प्रदेश राज्यों के जनजातिय क्षेत्र थें।(4)

झारखण्ड शब्द दो शब्दों झार और खण्ड से मिलकर बना है। झार को जनजातियों की भाषा में जंगल कहते हैं और खण्ड का अर्थ भू–भाग अर्थात वन क्षेत्र जहाँ कुछ लोग रहते हो। इन लोगों द्वारा अलग राज्य की मांग का कारण

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

बढ़ता क्षेत्रीय राजनीतिक असंतुलन, जनजातियों का शोषण तथा वचन बोध रहा है।

सबसे पहले शिक्षित ईसाई आदिवासियों ने 1918 ई0 में छोटा नागपुर सुधार समिति का गठन किया जो 1938 ई0 से 1947 ई0 के दौरान आदिवासी महासभा के नाम से प्रतिष्ठित रही।[5]

एक संगठित क्षेत्रीय आंदोलन ने एक नई दिशा की शुरूआत की छोटा नागपुर का गठन उन्नत समाज के साथ हुआ इस गठन का उद्देश्य जनजातियों की समस्या की तरफ सरकार का ध्यान आकर्षित करना था 1937ई0 के प्रथम चुनाव की तरफ सरकार का धन आकर्षित करना था। 1937ई0 के प्रथम चुनाव के बाद आदिवासी महासभा के गठन के साथ ही इसका राजनैतिक आधार विस्तृत हुआ इसकी सदस्यता सिर्फ झारखण्ड को समर्पित लोगों के लिए ही थी।[6] इस तरह इस पार्टी की विचारधारा में परिवर्तन हुआ, जो जातिवाद से क्षेत्रवाद की ओर थी, जो वृहद् राजनीति एवं धर्म निरपेक्षता की विचारारा के अनुकूल था। 1950 ई0 के दशक में झारखण्ड आंदोलन अपनी लोकप्रियता के शिखर पर पहुँच चुका था जब जनजातिय विधायक श्री जयपालसिंह के नेतृत्व में झारखण्ड पार्टी ने बिहार विधानसभा में 1952 व 1957 ई0 में आम चुनावों में विजय हासिल की थी।

मयूर भंज के संथाल सोनाराम सोरेन के नेतृत्व में उड़ीसा विधानसभा चुनावों में 1952 ई0 में भी सीटे हासिल हुई थी, लेकिन 1963 ई0 में झारखण्ड पार्टी का कांग्रेस में विलय होने से आंदोलन को गहरा झटका लगा सन् 1985 ई0 के चुनावों में झारखण्ड आंदोलन के दलों ने मिलकर विधानसभा सीटे जीती, किन्तु उड़ीसा में खाता नहीं खोल पाये थे। 1952 ई0 और 1957 ई0 के चुनावों में पार्टी सरकार को प्रभावित कर सकी। 1967 ई0 में एन.ई. होरो और बगुन सुम्बुरूई के नेतृत्व में अखिल भारतीय झारखण्ड पार्टी बनाने के लिए एकजुट हो गए, किन्तु पार्टी ईसाई और गैर ईसाई के अंतर के आधार पर दो दलों में विभाजित हो गयी थी। बगुन सम्बुरूई का अंततः 1973 ई0 में बी.बी. महला और सीबू सोरेन के नेतृत्व में जनजातिय नेताओं के दल द्वारा अलग झारखण्ड राज्य की मांग करने के लिए झारखण्ड मुक्ति मोर्चा का गठन किया गया।[7] 1973 में ये मोर्चा गठित हुआ इस मोर्चे ने अलग झारखण्ड प्रदेश की मांग की और इनके कुछ प्रश्न सामने रखे, जैसे– जमींदारों से भूमि की वापसी तथा संस्कृति के पुर्नजागरण का प्रश्न।[8]

अतः 15 नवम्बर, 2000 ई0 से बिहार राज्य के अधिकांश उपरी भाग (झारखण्ड क्षेत्र) को एक अलग राज्य के रूप में मान्यता मिल गई। इस नये राज्य की राजधानी रांची को बनाया गया।[9]

इस प्रकार झारखण्ड आंदोलन में जनजातिय क्षेत्रों को लेकर अलग राज्य की मांग की गई। राजमोहनी देवी द्वारा किया सामाजिक आंदोलन जिसमें उन्होंने गांधी के मार्ग पर चलकर लोगों को सत्य और अहिंसा का पाठ पढ़ाया। जब ईसाई मिशनरियों ने जनजातियों को अपने प्रभाव में लिया तो बहुत अधिक संख्या में जनजातियों ने ईसाई धर्म अपनाया और वे अपनी संस्कृति से भी दूर हुए। ईसाई मिशनरियों के जनजातियों पर सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव पड़े।

संदर्भ सूची

1. शर्मा श्रीनाथ, जनजातिय समाशास्त्र, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2003
2. 30 अप्रैल, 2007 DNA News Paper
3. 28 मई, 2007 ई0 मम छमू
4. श्रीवास्तव, ए.आर.एन., जनजातिय संस्कृति, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2002 पृ0सं0 91
5. श्रीवास्तव, ए.आर.एन., मानव विज्ञान, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, इलाहाबाद, 1990 पृ0सं0 112
6. श्रीवास्तव, ए.आर.एन., जनजातिय संस्कृति, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2002 पृ0सं0 92
7. श्रीवास्तव, ए.आर.एन., मानव विज्ञान, पूर्वोक्त 112
8. पूर्वोक्त पृ0सं0 112
9. पूर्वोक्त पृ0सं0 92

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

महात्मा गाँधी के स्वच्छता संबंधी विचार : एक विश्लेषण

डॉ. रणवीर सिंह
अतिथि व्याख्याता, राजनीति एवं लोकप्रशासन विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय वि.वि. सागर म.प्र.

2 अक्टूबर 1869 को जन्मे मोहनदास करमचंद गाँधी जिन्हें बाद में महात्मा गाँधी राष्ट्र कहा गया उनके आदर्श और सिद्धांतों की आवश्यकता है। यदि हम यह सोचते हैं कि गांधी को 69 वर्ष हो गए हैं तो यह हमारा भ्रम है। गांधी युग की तो अभी शुरूआत हुई है क्योंकि हमें इस शुरूआत के पहले संकेत देखने को मिल रहे हैं। आने वाला कल गांधी का है। जहां कहीं भी जानलेवा घटनाओं से संघर्श करना पड़ेगा, वहीं हमें गांधी की मौजूदगी के दर्षन होंगे। हमने बात को पक्की तौर पर समझ लिया है। गाँधी का स्वच्छता का विचार जिसकी वर्तमान में भारत को आवश्यकता है। गाँधी का ही देन है।[1]

हमारे सामने प्रश्न यह है कि हम उनके जीवन से किस प्रकार की प्रेरणा ले सकते हैं। उनकी सोच और उनके बौद्धिक ज्ञान के प्रकाष से हमारी समस्यायें प्रकाशित होकर समाधान पाएंगी। उनके जीवन की षैली हमारे निजी और लोक कार्यों को पूरी तरह से प्रभावित करती हैं। गाँधी के विचारों में स्वच्छता का विचार सर्वोपरि है। जो वर्तमान में साकार होता नजर आ रहा है।

गांधी जी के अचानक (1948) के देहावसान के पश्चात पंडित जवाहर लाल नेहरू के शब्द भविष्यवाणी सिद्ध हुये थे। उन्होंने कहा था, ‘‘प्रकाश लुप्त हो गया है, फिर भी हजारो वर्षों तक यह हमारे पथ को प्रकाशित करती रहेगीं’’ उन्होंन महात्मा गांधी की तुलना एक शाश्वत दीप–स्तंभ से की थी।[2]

डॉ. मार्टिन लूथर किंग, जूनियर, 1959 में एक यात्री के रूप में भारत आये थे। गांधी जी की धरती पर 1 महीने तक रूकने के पष्चात् विदा होने के अवसर पर, उनसे दिल्ली में एक संवाददाता सम्मेलन में एक बहुत ही रूखा सा प्रश्न पूछा गया था। आज गांधी जी कहां है? उन्होंने हम कहीं नहीं देखते। डॉ. किंग ने बड़ी सहजता से उत्तर दिया था कि गांधी हमारे लिये अपरिहार्य हैं। यदि मानवता को प्रगति करनी है तो गांधी जी का होना आवष्यक है। मानववाद द्वारा प्रेरित उनकी जिंदगी और सोच और उनके कार्य शांति और सद्भाव की दुनिया को कायम रखे हुए हैं। यदि हम उनकी उपेक्षा करेंगे तो हमें यह समझ लेना चाहिए कि हम एक बहुत बड़ी जोखिम उठा रहे हैं। यदि हम गांधी जी को आज प्रासंगिक बनाना चाहते हैं तो हमें उनके सिद्धांतों को सहेज कर रखना होगा। यह देखना होगा कि उन्हें वर्तमान परिस्थितियों में कैसे अमल में लाया जा सकता है और क्या हम इन सिद्धांतों को सही दिशा में ले जा सकने के लिए समर्थ हैं।

जाने माने गांधीवादी, राजनेता और दार्शनिक आर.आर. दिवाकर का कहना है कि गांधी जी की दृष्टि में मानव एक मापदंड है। गांधी जी का दृष्टिकोण उनके स्वयं के प्रति, अपने जीवन के प्रति यह था कि वे सत्य के चाहने वाले थे और अहिंसा अथवा प्रेम के उपासक थे।[5] उनका मस्तिष्क एक वैज्ञानिक मस्तिष्क की भांति था और उन्होंने जीवन के कानून की इच्छा की थी। उनके अनुसार इससे सामान्य बातों को बढ़ावा मिलता है। इससे व्यक्तियों को सदविवेक की उच्चतम सीढ़ी तक पहुंचने में मदद मिलती है। उन्होंने उस प्रेम को महसूस किया था। यह मानव प्रगति और प्रादुर्भाव का सुगम उपाय है। प्रगामी अहिंसा सेवा, आत्म–पीड़ा और आवश्यक होने पर, सपूर्ण त्याग के माध्यम से श्रेष्ठ तरीके से उन्होंने अपनी सोच, वाणी और कार्यों में अभिव्यक्ति किया था।[3]

उसके जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू पर्याप्त रूप से इस बात में यह जोड़ता है कि वे क्या सोचते थे और क्या करते थे। उनका जीवन एक मंच था। रात–दिन सामान्य जनता के साथ मेल–मुलाकात करते रहते थे। महात्मा गांधी न केवल अपने कार्यों के संबंध में चर्चा करने के

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

लिए बल्कि उन्हें भी प्रेरित करने के लिए लोगों, यहां तक कि अपने विरोधियों को भी विश्वास में लेते थे।[4] इसका परिणाम यह हुआ था कि इतिहास में ऐसा कुछ शष नहीं था जो छूट गया हो। उनकी सोच और उनके कार्यों के बारे में सभी बातों के प्रत्यक्ष प्रमाण मौजूद हैं उनका प्रलेखीकरण किया गया है। इसके अलावा, उन्होंने स्वयं भी हर विषय के बारे में इतना अधिक लिख है कि उनके कृतित्व को समेटने के लिए 60 खण्ड बनाए गए और प्रत्येक खण्ड में 500 पृष्ठ हैं। वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए गांधी की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करने में याह सारी सामग्री बहुत ही सहायक सिद्ध हो रही है। गांधी के जीवन और उनकी शिक्षा जो कि हमारे आज के समय और वातावरण के लिए प्रासंगिक हं, के सभी पहलुओं को कुछ पृष्ठों में समाहित करना असंभव है। गाँधी की सामूहिक स्वच्छता की शिक्षा भी वर्तमान में प्रासंगिक है।

सामूहिक स्वच्छता –

सेवाग्राम आश्रम जिसकी स्थापना 1936 में महात्मा गांधी ने की थी। वहां के सफाई अभियान बेडोर था। अपने बड़ों के नेतृत्व में हर सुबह अपनी झाड़ू, टोकरी, एक छोटी खुरपी, फावड़ा, लेकर टोलियों के रूप में लोग लिए आवंटित क्षेत्र में सामुदायिक सफाई अभियान में हिस्सा लेने निकल जाते थे। लोग शौचालय की सफाई करने से लेकर हर जगह सामूहिक सफाई में हिस्सा लेते थे।[5] हर जगह बिल्कुल साफ–सुथरा माहौल होता था और मल को कंपोस्ट बनाते थे जो जादुई तरीके से खाद बन जाती थी, जिसे खेती में उपयोग किया जाता था।

सदियों पहले, शायद सामंती दौर या जब सफाई हीन मानव क्रियाओं का हिस्सा मानी जाती थी। यह काम एक विशष जाति के लोगों द्वारा किया जाता था, जिनसे समाज में अलग लोगों की तरह व्यवहार किया जाता था, हालांकि माता अपनी बच्चों की सफाई करती थी और महिलाएं पूरे घर का झाड़ू लगाती थीं, सड़क और शौचालय की सफाई का काम तथा कथित अछूत लोगों के लिए छोड़ दिया जाता था।

गांधी जी बचपन में कभी इस छुआछूत के विचार को स्वीकार नहीं कर पाए थे। जब पोरबंदर में ड़ेढाभाई गांधीजी के घर की सफाई करने आते थे तो उनकी मां पुतलीबाई मोहन को उनके साथ खेलने से रोकती थी। यह बात मोहन को बर्दाष्त नहीं होती थी। अथवा एक बार उन्होंने उनका निर्देश मानने से मना कर दिया था। धीरे–धीरे साथ खेलते–खेलते वे दोनों दोस्त बन गए। कई सालों बाद उन्होंने डॉ. अम्बेडकर से कहा था कि उन्होंने कस्तूरबा के साथ षादी करने से कई साल पहले ही अछूतों को अपना लिया था। छुआ–छूत के खिलाफ उनके अभियान ने निश्चित रूप से देष की मूल व्यवस्था को हिलाकर रख दिया था। हालांकि छुआ–छूत को अभी भी देश से समाप्त नहीं किया जा सका। आज गांधी जी के अभियान और डा. अंबेडकर के संविधान और कानून के बावजूद छुआ–छूत की व्यवस्था विद्यमान है। आज भी समाज में छुआ–छूत, भेद–भाव, नीच–ऊँच का भेद–भाव भारतीय समाज में कलंकित कर रहा है।

फोनिक्स बस्ती –

गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका में भी शौचालयों की सफाई करना शुरू कर दिया। तब तक उन्होंने फोनिक्स में एक समुदाय कायम कर दिया था, उन्होंने आश्रम में सफाई को लोगों की दिनचर्या में शामिल कर दिया था। शौचालयों की सफाई करना सबसे गंदे कामों में माना जाता था, यह काम गांधी जी ने खुद अपने हाथों में लिया और तब तक किया जब तक कि यह सामान्य सफाई के कार्यों के साथ शुमार नहीं किया गया।[6]

सेवा ग्राम में भी, सामूहिक स्वच्छता एक कलात्मक कार्य बन गया था और इसको एक वैज्ञानिक गतिविधि में शामिल कर लिया गया था। जब अधिसंख्य लोग सफाई के काम में जुट जाते थे और उनमें से कुछ पूरे समुदाय के लिए गतिविधियां आयोजित करने की योजना बनाने तथा कार्यक्रम पर अमल के लिए नेता बन जाते थे। गांधी जी से लेकर आश्रम के छोटे बच्चे तक सभी सिर पर टोकरी लेकर घूमते थे।

शौचालयों को दुर्गंध रहित बनाने और मिट्टी का उपयोग खेतों में करने के लिए वहां

नित नए प्रयोग किए जाते थे। इस क्रम में अलग–अलग तरीके के शौचालय बनाना भी शामिल था। यह सब एक धीरे–धीरे प्रक्रिया के तहत हुआ जिसने इसे स्वास्थ्य कर और आर्थिक रूप से लाभकारो बना दिया लेकिन शायद प्रक्रिया का महत्वपूर्ण आयाम हमेशा सामाजिक ही बना रहा। जिस काम को उच्च वर्गीय हिंदू परिवारों में घृणा की दृष्टि से देखा जाता था, उसे आश्रम में गाँधी जी ने दैनिक क्रियाकलापों में शामिल कर दिया था। आश्रम में नए आने वाले लोगों को आश्रम की जीवन चर्या सिखाने के लिए शौचालय की सफाई का काम दिया जाता था। ऐसा उनकी इच्छाशक्ति के परीक्षण और आश्रम जीवन शैली अपनाने के लिए किया जाता था।

लंदन स्कूल ऑफ इकॉनोमिक्स से षिक्षा प्राप्त श्रीमन्नारायण सेवाग्राम आश्रम में गांधीजी से मिलने आए थे। वह राष्ट्र में बदलाव लाने के एक बड़े सपने के साथ पहुंचे थे, वह गांधीजी से अपनी बात कहने के लिए व्यग्र थे। अपनी मुलाकात के दिन उनके कुछ कहने से पहले ही गांधीजी ने नम्र भाषा में उन्हें सामूहिक सफाई अभियान में षामिल होने का निर्देश दिया। जहां वह जाने के लिए तैयार था।[7] उस समय नारायण भाई देसाई युवावस्था में थे और उन्हें इस अभियान में पहली बार शामिल होने वालों के लिए सीनियर पार्टनर की भूमिका निभाने की जिम्मेदारी थी। उन्होंने कहा कि प्रारंभ में नावागंतुकों को इस मानसिक संकट से गुजरते हुए देखना उन्हें अच्छा लगता था। उनका काम उस प्रक्रिया को उतने सुगम तरीके से पेष करना था जितना वह कर सकते थे।

कार्यप्रणाली –

आश्रम के साथियों को उब से बचाने के लिए समय–समय पर जिम्मेदारियां बदल दी जाती थीं, तथा वहां रहने वालों को सभी प्रक्रियाओं की जानकारी हो जाती थी। कुछ काम जैसे झाड़ू बनाना, खाद तैयार करना आदि भी स्वच्छता की गतिविधियों का एक हिस्सा थे। सामुदायिक स्वच्छता सामाजिक परिवर्तन के लिए गांधीजी का एक क्रांतिकारी कदम था। जब गांधीजी ने अपने कदम गांवों की आरे बढ़ाए तो उन्होंने ऐसे गांवों का चयन किया जो समृद्ध भारतीयों की कल्पना से परे थे। मगनवाड़ी में रूकने की शुरूआत से ही गांधीजी ने सड़कों की सफाई शुरू कर दी थी, जहां लोग आमतौर पर राहत महसूस करते थे। यह सब रेलवे ट्रेक से दूर कोई गांव या जंगल नहीं था, बल्कि शहर के ठीक पास स्थित वर्धा गांव था।[8]

इस काम के दो मकसद थे। पहला लोगों को सफाई की अच्छी आदतों के प्रति प्रोत्साहित करना और दूसरा विशद्ध हिंदू भी इस तरह का काम कर सकें। झाडू लगाने का काम एक छोटे समुदाय के जिम्मे था, वही इस काम को करते थे। लेकिन ग्रामीणों को इस तरह के काम समझना कोई आसान काम नहीं था, जैसा कि हम आज के समय में भी देखते हैं। आखिर में कई महीनों बाद ग्रामीणों ने गांधीजी, महादेव भाई और उनके साथियों को एक सामान्य झाडू लगाने वाले की तरह देखा। सिर्फ ये ही बेहतर था, क्योंकि उन्होंने इस काम के कोई पैसे भी नहीं लिए थे। जो गंदगी से सटे स्थानों की तरफ इशारा करते हुए कहता था 'वहां जाओ। वहां ज्यादा गंदा है।[9] साबरमती आश्रम में वह मल की बाल्टी उठाकर उसे कंपोस्ट बनाने के लिए गड्डे में डालता था, और नारियल के पेड़ की पत्तियों सेबने झाडू से बाल्टी को सफ करता था। लेकिन यहां स्थिति बिल्कुल अलग थी। जब गांधीजी से प्रश्न किया कि जिस काम ने लोगों को प्रभावित किया उसमें क्या अच्छा था, तो गांधीजी ने कहा 'हमारे समाज पर लगा छुआछूत का दाग कोई सामान्य अभिषाप नहीं है। इसे हटाने के लिए लंबे समय तक खुद पश्चाताप करना होगा।' गांधीजी सफाई के प्रति बेहद संजीदा और स्वच्छता के प्रति बेहद आग्रही थे। यदि वे अपनी पर आ जाए तो सड़कों की सफाई खुद करने लगते थे। सिर्फ सफाई ही नही बल्कि वे रोजाना फूल के पौधे लगाने और उन्हें पानी देने का काम भी करते थे। जहां कहीं कचरे का ढेर लगा होता है, वहां वे बगीचे बना देते। वे कहते थे, झाडू लगाना अपने आप में एक कला है।[10]

ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम –

गांवों में सफाई कार्यक्रम के परिणाम स्वास्थ्य स्वच्छता और संदरता में दिखने लगे थे, गांधीजी चाहते थे कि मानव और पशुओं के मल

से बने प्राकृतिक खाद के जैविक स्त्रोत की समस्याओं से वे खुद निपट पड़े। शाय स्वास्थ्य के प्रति उनकी संजीदगी की आदत उनमें उनकी मां पुतलबाई से आई थी जो हमेषा धार्मिक पवित्रता का विषेश ध्यान रखती थी।

शायद यह जापानी लोगों से सीखने का भी समय है कि आस–पास के वातावरण को कैसे साफ रखा जाए। अक्टूबर 2014 में तोक्यो और क्योटो में वृद्ध लोगों के ऐसे समूह जो यूनिफार्म पहने, झाडू और सफाई सामग्री लिए रास्तों, होटलों, कमरों, सड़कों और सार्वजनिक स्थानों को साफ करती रहे। उनके समर्पण, संकल्प और लगन की भावना से काफी कुछ सीखा जा सकता है। जापान में बच्चों को बचपन से साफ रहना सिखाया जाता है। तथाकथित 'ओ–सोजी' यह उनकी शिक्षा का एक हिस्सा है।[11]

फुटबॉल वर्लड् कप के दौरान जापानी दर्शकों ने भी दुनिया को दिखाया कि वे किस तरह सफाई को महत्व देते हैं। जब उनकी टीम हार गई और मैच खत्म हो गया तबभी वे सब उठे और स्टेडियम को ऐसे साफ कर दिया जैसे आसपास का माहौल साफ रखने का यह उनका रोज का काम हो। क्या हम उनस कुछ सीख सकते हैं? बहरहाल, सिर्फ 66 साल पहले हमारे राष्ट्रपिता ने बताया था कि स्वच्छता का भगवान के बाद दूसरा स्थान है।

वर्तमान समय में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने महात्मा गाँधी का सफाई अभियान स्वच्छता अभियान अपनाकर देश को एक सूत्र में बांधकर गाँधी के कार्यक्रम को जन–जन तक पहुंचाया है और गाँधी की विचारधारा को भी वर्तमान में बल मिला है। अतः हम स्पश्ट रूप से कह सकते है कि आज भी हमें गाँधी की आवश्यकता है, और 70 वर्श बाद भी गाँधी युग समाप्त नहीं हुआ है।[12]

इससे स्पष्ट है कि हमने इस बात को पक्के तौर पर समझ लिया है कि हमें गाँधी की आवश्यकता है क्योंकि गाँधी हमारे लिये अपरिहार्य है और यदि मानवता को प्रगति करनी है तो गाँधी जी की सोच का होना आवश्यक है क्यांकि उनकी सोच ही भारत की प्रतिष्ठा को आगे बढ़ा रही है।

संदर्भ सूची :–

1. कांग्रेस संदेष 131 वां स्थापना दिवस अंक 5, जनवरी 2016–17
2. शोभना राधाकृष्ण, महात्मा गाँधी द्वारा नेतृत्व के आदर्शों का निर्धारण कांग्रेस संदेश जनवरी 2016 पेज 35
3. शोभना राधाकृष्ण, महात्मा गाँधी द्वारा नेतृत्व के आदर्शों का निर्धारण कांग्रेस संदश जनवरी 2016 पेज 37
4. शोभना राधाकृष्ण, महात्मा गाँधी का सामूहिक स्वच्छता अभियान कांग्रेस संदश जनवरी 2015 पेज 34
5. भारत गाँधी के बाद रामचन्द्र गुहा 2014 गुडगॉव 2012 हरियाणा (ए पेगुइन रैडम हाउस कम्पनी) पेज 205
6. ग्राम प्रवीण डाबर–युवा नेतृत्व में गाँधी जी का विश्वास पेज 19 24 अकबर रोड, नइ दिल्ली 2016
7. डॉ लालती देवा महात्मा गाँधी का जीवन दर्शन 2011 पेज 40
8. दैनिक भास्कर संपादकीय 2 अक्टूबर 2014 पेज 07
9. शोभना राधाकृष्ण महात्मा गाँधी व सामूहिक स्वच्छता अभियान कांग्रेस संदेश जनवरी 2015 पेज 35
10. ज्ञानेन्द्र रावत पर्यावरण एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 2006, पज 32
11. डॉ लालती देवा महात्मा गाँधी का जीवन दर्शन 2011 पेज 42
12. ग्राम प्रवीण डाबर–युवा नेतृत्व में गाँधी जी का विश्वास पेज 21 28 अकबर रोड, नई दिल्ली 2016

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

पं.दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद की दार्शनिक अवधारणाऍ

डॉ. पूर्णिमा मड़ामे
(वरिष्ठ अध्यापक), शास.उ.मा.वि.जौलखेड़ा (बैतूल)म.प्र.

एकात्म मानववाद का दर्शन भारत की ओर से राजनितिक विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाज शास्त्र इौर आचार शास्त्र को दिया गया एक महत्वपूर्ण योगदान है। दम्मोपन्त ठेंढड़ी के अनुसार "एकात्म मानववाद" का विचार इस संसार को पंडित दीनदयाल उपाध्याय की श्रेष्ठतम देन है। एह उनके मूलगामी रचनात्मक चिंतन की अनुपम अभिव्यक्ति है। जिनकी जड़े भारतीय चिंतन के अतीत में है, परंतु दृष्टि भविष्य पर केन्द्रित है।अपनी इस दार्शनिक अभिधारणा के अंतर्गत उन्होने आधुनिक राजनीति, अर्थव्यवस्था तथा समाज रचना के लियें एक बहुरंगी भारतीय धरातल प्रस्तुत किया है। इसे उन्होंने आधुनिक युग की चुनौतियों एवं समस्याओं के भारतीय दृष्टिकोण से निदान के रूप में प्रतिपादित किया है, जो पूॅजीवाद एवं साम्यवाद् दोंनो के ही विकल्प के रूप में है।

"एकात्म मानववाद" के दर्शन के प्रतिपादन के समय दीनदयाल जी के मन में भारत की लम्बी पराधीनता के इतिहास की दुःखद स्मृतियॉ थी। परंतु उस से भी वह शिक्षा ग्रहण करना चाहते थे। क्योंकि उनके विचारआनुसार उसे भुलाया नही जा सकता दीनदयालजी के "एकात्म मानववाद" मुख्य आधार संस्कृति है, उन्होने न सिर्फ भारत की संस्कृति से विशेष लगाव है, अपितु किसी भी समस्या के निराकरण के संदर्भ में उनकी दृष्टि संस्कृति निष्ठ रहा करती थी। उनकी दृष्टि में सम्भवतः मानवीय चेतना एवं कर्म का कोई भी आयाम संस्कृति से बाहर नही है। राष्ट्र की राजनीति हमेशा समाज कि संस्कृति मं स्थापित रहती है। जैसी संस्कृति होगी वैसी ही राजनीति होगी। संस्कृति ही किसी राष्ट्रीय समाज की पहचान का आधार होती है। इसी लियें दीनदयाल जी स्वयं को एवं अपने दल को संस्कृ ति वादी कहते है।

दीनदयाल जी के प्राचीन भारतीय शास्त्रों के अनुसार चिति का अर्थ "राष्ट्र की आत्मा" स्वीकार किया है। उन्होने कहा है कि "व्यक्ति की भॉति राष्ट्र की अपनी एक आत्मा हाती है, उस आत्मा के अस्तित्व के कारण ही सारा राष्ट्र एकात्म बनता है, राष्ट्र की उस आत्मा को हमारे शास्त्र कारों ने चिति कहा है चिति की व्याख्या करते हुयें दीनदयालजी ने कहा है, कि प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक विशेष प्रकृति होती है। जो ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक कारणों का परिणाम नही अपितु जन्मजात है, उसे चित्ति कहते है। राष्ट्रो का उदयावपाद चिति के अनुकुल तथा प्रतिकुल व्यवहार पर निर्भर है चिति स्वयं को अभिव्यक्ति करने तथा व्यक्तियों को पुरूषार्थ के सम्पादन की सुविधा प्राप्त कराने के लिए अनेक संस्थाओं को जन्म देती है। जाति, वर्ग, पंचायत, संघ, विवाह, संपत्ति, राज्य आदि इसी प्रकार के संस्थाऍ है।

चिति न तो संपूर्ण मानवता की होती है और न राष्ट्र के भीतर निवास करने वाले अन्य जन–समुदायों की। वह तो सिर्फ राष्ट्रीय होती है तथा ईश्वर द्वारा निर्धारित भी। भारतीय संस्कृति का युगानुकूल विवेचन है तथा वह वैश्विक विचारों के लिए 'पूरक' भारतीय चिन्तन है। एकात्म मानववाद का विचार प्रचलित वादों में न्यूनताओं को दूर कर उन्हे परिपूर्ण बनाने के लिए किया गया है। इस एकात्म मानववाद का तात्विक सार दीनदयालजी के अनुसार यह है, कि "हमारी संपूर्ण व्यवस्था का केन्द्र मानव होना चाहिए। जो यत् पिण्डे तत् ब्रहाण्डे के न्याय के अनुसार समष्टि का जीवमान प्रतिनिधि एवं उसका उपकरण है। भौतिक उपकरण मानव के सुख के साधन है, साध्य नही। जिस व्यवस्था मं, भिन्न रूचि लोक का विचार केवल एक औसर मानव अथवा शरीर, मन बुध्दि व आत्मायुक्त अनेक ऐशणाओं से प्ररित पुरूषार्थ चातुष्ट्यशील, पूर्ण मानव के स्थान पर एकांगी मानव का ही विचार किया जाये, वह

अधूरी है हमारा आधार एकात्म मानव है, जो एकात्म समष्टियों का एक साथ प्रतिनिधित्व करने की क्षमता रखता है। एकात्म मानववाद के आधार पर हमें जीवन की सभी व्यवस्थाओं का विकास करना होगा।

वस्तुतः यह एकात्म मानववाद विचार धारा से भी अधिक व्यापक है तथा इसे विश्व–दृष्टि और जीवनपथ संकेत माना जा सकता है। इसके आदर्शो को समझात हुये ठेंगड़ी जी कहते है ‘एकात्म मानववाद प्रत्येक राष्ट्र अपनी अपनी प्रवृत्ति के अनुसार विकास करने की स्वतंत्रता देगा। जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपने गुण कर्म के अनुसार विश्वास कर विकास का संपूर्ण फल समाज पुरूष को समर्पित करता है, उसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र अपनी मानवता का एक अंग समझेगा। हम सभी मानवता के साथ अपने को एकात्म समझ ले और सम्पूर्ण मानवता की प्रगति के लिए अपने राष्ट्र की जो विशेषताए होगी प्रगति की जो विशेषताएँ होगी उसका परिपक्य फल मानवता के चरणों पर अर्पित करेगे। इस तरह हर एक राष्ट्र स्वायत रहते हुए अपना विकास भी करेगा, किन्तु विश्वात्मा का भाव मन में रहने के करण एक–दुसरे का पोषण सम्पूर्ण मानवता को पोषण विश्व राज्य पंडित दीनदयालजी के “एकात्म मानववाद” की रचना की दृष्टि से चरम परिणति होंगा।

एकात्म मानववाद आधुनिक युग की विभाजन प्रवृत्तियों, मानवीय समस्याओं, त्रासदियों तथा विषमरसताओं से निपटने का एक ऐसा दृष्टिकोण है जो प्राचीन भारतीय आदशों पर आधारित है परन्तु समय अनुकुल बनाने के लिये इन आदशों की व्याख्या आधुनिक संदर्भ में की गई है। एकात्म मानववाद का एक साथ विचारधारा विश्वदृष्टि तथा जीवन के प्रति दृष्टि को है अनुभवाश्रित राजनीतिक सिध्दांत में इसको शायद वह स्थान नही मिल पाया है, जो कई अन्य विचारबंधो को प्राप्त है, परन्तु जीवन के समष्टि–दर्शन का यह एक महत्वकांशी प्रयास अवश्य है। एकात्म मानववाद की अवधारणा के अंतर्गत विभिन्न अभिधारणाओं का वर्णन किया जो निम्न है।

संस्कृति :– दीनदयाल जी एकात्म मानववाद का एक प्रमुख आधार संस्कृति है। उन्हें न सिर्फ भारत की संस्कृति से विशेष लगाव है, अपितु किसी भी समस्या के निराकरण के संदर्भ में उनकी दृष्टि संस्कृतिनिष्ठ रहा करती थी राष्ट्र की राजनीति हमेशा समाज की संस्कृति में प्रति स्थापित रहती ह। जैसी संस्कृति होगी, वही ही राजनीति होगी। इसकी उनकी राष्ट्र कल्पना सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का प्रतिरूप है। तथा उनकी राजनीति संस्कृतिवादी है। वे अपने आपको एक राजनीतिक नेता या कार्यकर्ता के रूप में नही अपितु सदैव राष्ट्रीय स्वयंसेवक के रूप में मानते थे।

दीनदयाल ने संस्कृति को और भी व्यापक आाधार प्रदान करते हुए यह कहा है। संसार में एकता का दर्शन कर उसके विविध रूपों के बीच परस्पर पूरकता को पहचान कर उनमें परस्परानुकूलता का विकास करना तथा उनका संस्कार करना संस्कृति है।

प्रकार दीनदयालजी की दुष्टि प्रगतिगामी थी, रूढ़िवादी नहीं। साथ ही उनकी दुष्टि समन्वयवादी थी। वे किसी विदेशी विचार को न तो हेय समझते थे और न उसके अपनाये जाने के विरोधी थे, अपितु उनका यह विचार था हम मानव के ज्ञान और उपलब्धियों का संकलित विचार करे। अतः उन्होने कहा हम भारत को न तो किसी पुराने समय की प्रतिछाया बनाना चाहते है और न रूस या अमेरिका का अनुकृति।

चिति :– दीनदयालजी ने प्राचीन भारतीय शास्त्रों के अनुसार चिति का अर्थ राष्ट्र की आत्मा स्वीकार किया है। उन्होने कहा कि व्यक्ति की भांति राष्ट्र की भी अपनी एक आत्मा होती है। उस आत्मा के अस्तित्व के कारण ही सारा राष्ट्र एकात्म बनता है। चिति की व्याख्या करते हुये दीनदयाल जी ने कहा है प्रत्येक राष्ट्र की अपनी विशेष प्रकृति होती है। जो ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक कारणों का परिणाम नही अपितु जन्मजात है। उसे चिति कहते है। चिति स्वयं को अभिव्यक्ति करने तथा व्यक्तियों के पुरूषार्थ के सम्पादन की सुविधा प्राप्त कराने के लिए अनेक संस्थाओं को जन्म देती है। जाकम वर्ण पंचायत संघ विवाह सम्पत्ति राज्य आदि उसी प्रकार की संस्थाएँ है।

इसी प्रकार चिति की व्याख्या करते हुए एकात्ममानववाद में वे कहते है मेकडूगल के अनुसार समूह की एक मूल प्रकृति है वैसे ही चिति समाज की वह प्रकृति है जो जन्मजात है तथा ऐतिहासिक कारणों से नही बनी। इसी का वर्णन करते हुए आगे उन्होने कहा कि मनुष्य के व्यक्तित्व व आत्मा व्यक्तित्व व चरित्र तथा चरित्र व आत्मा इन सब में अन्तर रहता है। व्यक्ति जीवन भर में जितने कर्म करता है, जितने संस्कार उस पर होते हैं या जो विचार आते है, उन सबका उस पर एक संकलित परिणाम होता है।

दीनदयालजी एक सहयोगी दत्तोपन्त ठेंगड़ी ने चिति के रूप में स्वीकार किया है। उनके अनुसार प्रत्येक राष्ट्रका अपना अन्तकरण एक चित होता है। धर्म राष्ट्र के चित का संग्रहालय है। यदि धर्म नष्ट हो जाता है। तो राष्ट्र का भी नाश हो जाता है।

विराट :– चिति यदि राष्ट्र आत्मा है तो दीनदयालजी के अनुसार राष्ट्र की प्राण शक्ति विराट है। दीनदयालजी के अनुसार व्यक्ति न तो पृथक रूप से पूर्णसत्ता है तथा न ही अपूर्ण। वह तो समष्टि तथा सृष्टि के साथ एकात्म रहता है। अतः सृष्टि समष्टि एवं व्यष्टि एक अविभक्त इकाई है। उनके अनुसार बाह्य रूप से अलग–अलग प्रतीत होने वाले ये तीनों इकाईयॉ तत्वतः एक ही है इसे स्पष्ट करते हुए वे कहते है कि भारत ने अपने चिन्तन में इसीलिए यह निष्कर्ष निकला है कि व्यक्ति और समाज में विरोध मानना ही भूल है। विकृतियों की अव्यवस्था की बात छोड़ दे उन्हे दूर करने के उपाय भी जरूरी होते है किन्तु मूल सत्य यही है, कि व्यक्ति और समाज अभिन्न और अविभाज्य है। सुसंस्कृत अवस्था यही है कि व्यक्ति अपनी चिन्ता करते हुए भी समाज की चिंता करेगा।

इस प्रकार व्यक्ति के विकास और समाज की पूर्णता या यही समन्वित विचार विश्व को भारतीय चिन्तन की एक महत्वपूर्ण देन है। व्यक्ति जन्म लेता है समाज द्वारा उसे शिक्षित और संस्कारित किया जाता है। धीरे–धीरे व्यक्ति गुणवान बनता है तथा अपने अन्तर सुप्त श्रेष्ठताओं के विकास का अवसर पाता है। समाज उसकी देख भाल करता है व्यक्ति को बुध्दिमान, धैयेवना पराक्रमी, शक्तिमान और धनवान बनाने का काम समाज ही करता है।

इस प्रकार भारतीय विचार पध्दति के अंतर्गत व्यक्ति और समाज में सामंजस्य स्थापित होता है। समाज से ही व्यक्ति को शिक्षा मिली। अतः दीनदयालजी निष्कर्ष रूप में यह बताते है, हमारी दृष्टि में व्यक्ति और समाज परस्पर पूरक सहायक और अभिन्न है, दोनो अविरोध सत्ताये है।

समष्टि :– दीनदयाल जी ने समाज को जीवमान एवं प्राकृतिक संस्था माना जो केवल व्यक्तियों का समूह मात्र नही है समाज का निर्माण व्यक्तियों द्वारा सुविचारीत रूप से नही किया जाता, बल्कि वह तो स्वयं है। समाज का भी अपना एक सामूहिक मन होता है। सामूहिक बुध्दि होती है। तथा उसकी एक सामान्य इच्छा भी होती है।

वास्तव में समाज तो एक ऐसी सत्ता है, जिसकी अपनी आत्मा है। जिसका अपना एक जीवन है, इसलिए यह भी उसी प्रकार के जीवमान सत्ता है। जैसे मनुष्य जीवमान सत्ता है। समाज को हमने किसी प्रकार के कृत्रिम संगठन के रूप में स्वीकार नही किया इस प्रकार व्यक्ति के विकास और समाज की पूर्णता का यही समन्वित विचार विश्व को भारतीय चिन्तन की एक महत्वपूर्ण देन है।

धर्म :– भारतीय शास्त्रों के अनुसार धर्म शब्द का अर्थ अत्यन्त ही व्यापक है पर यह उर्दु के मजहब या अंग्रजी के रिलीजन का पर्यायवाची नही है। धर्म का अभिप्राय है धार्मिक विश्वास और कर्त्तव्य वैदिक विद्वानों के अनुसार धर्म वह है जिससे अभ्युदय व निःश्रेयस की सिध्दी हो। अभ्युदय से लौकिक तथा निःश्रेयस से परजौकिक दोनों पहलुओं से संबंधित है धर्म उन सिध्दांतो तत्वों तथा जीवन–प्रणाली को कह सकते हैं जिससे मानव जाति परमात्मा प्रदत्त शक्तियों के विकास से अपना ऐहिक जरवन सुखी बना सके साथ ही मृत्यु के पश्चात् जीवात्मा जन्म–मरण के झंझटो में न पड़कर शान्ति एवं सुख का अनुभव कर सके। राष्ट्र को संचेतन रखनेवालो यह शक्ति संपूर्ण शरीर में संचार करती है।जनतंत्र की सफलता की जागरूक विचार पर निर्भर रहती है। यह संचेतन ही राष्ट्र जीवन का सर्वांगीण विकास

करती है। अतः चिति के कारण जागरूक होने वाली शक्ति विराट कहा गया है।

विराट राष्ट्र का जीवन में वही स्थान है। जो शरीर में प्राण का, प्राण से ही सभी इन्द्रियों को शक्ति मिलती है, बुध्दि को चैतन्य प्राप्त होता है। और आत्मा शरीस्य रहती है। राष्ट्र में भी विराट के सबल होने पर उसके भिन्न–भिन्न अवयव अर्थात संस्थाएँ सक्षम और समर्थ होती है। विराट के आधार पर ही प्रजातंत्र सफल होता है।

राष्ट्र :– दीनदयाल जी का यह मत है, कि भूमि जन तथा संस्कृति के सम्मिलित से राष्ट्र बनता है। इसका वर्णन करते हुए वे कहते है कि संस्कृति राष्ट्र का शरीर चिति आत्मा तथा विराट उसका प्राण है। वे भारत के मौलिक एवं प्राकृतिक राष्ट्रवाद को हिन्दु राष्ट्रवाद की संज्ञा देते है तथा क्षेत्रीय राष्ट्रवाद की कल्पना का खंडन करते हुये सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का समर्थन करते है। इस अर्थ में भारत को प्राचीनतम राष्ट्र मानते हुये, वे यह लिखते है "राष्ट्रीयत्व के विकास में स्वदेश का महत्व सबसे अधिक होता है।

इस प्रकार दीनदयालजी प्राचीन काल से ही भारत को भौगालिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक रूप से एक राष्ट्र के रूप से वर्णित करते है। दीनदयालजी न सिर्फ प्राचीन भारत को राष्ट्र के रूप में स्वीकार करते है, अपितु मूल रूप से भारत के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के स्वरूप को स्वीकार करते हुये इसे एक हिन्दु राष्ट्र मानते है।

परन्तु दीनदयाल जी की राष्ट्र संबंधी अवधारणा काफी विवादास्पद रही है, क्योकि भारत की मिश्रित संस्कृति में विश्वास करने वाले लोगो ने इस दृष्टिकोण का विरोध किया। उनका यह मानना है कि भारतीय संस्कृति के विकास में हिन्दुओं के साथ–साथ मुसलमानों एवं इसाईयों का भी योगदान है और इस कारण आधुनिक समय में विभिन्नता में एकता के प्रतिपादन से ही भारतीय संस्कृति की राष्ट्रवादी व्याख्या की जा सकती है।

व्यष्टि :– वैसे तो दीनदयालजी का चिन्तन व्यष्टि से लेकर परमेष्टि का समन्वित रूप है परन्तु निःसंदेह ही उसके केन्द्र में व्यष्टि ही है। इन सभी में एक तारतम्य स्थापित करते हुए वे आरम्भ मानवच से ही करते है।उसके अनुसार मानव केवल एक व्यक्ति मात्र नही है। शरीर मन बुध्दि और आत्मा का समुच्चय है। व्यक्ति केवल एकवचन मै तक सीमिक नहीं उनका बहुवचन हमसे भी अभिन्न संबंध है।

अतः धर्म व्यक्ति एवं समाज का सबसे प्रमुख आधार है क्योकि यही आधारभूत पुरूषार्थ है। व्यक्ति में से धर्म अथवा सामाजिकता को निकाल दिया जाये तो सिर्फ पशुत्व ही बचेगा। चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः मनुष्य की सामाजिकता ही धर्म का परिचायक है। धर्म के द्वारा ही व्यक्ति बुराई को दुर भगा सकता हैऔर इस प्रकार प्रत्येक वस्तु धर्म पर ही आधारित है तथा धर्म पालन से ही अर्थकाम और मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है।

मोक्ष :– भारतीस संस्कृति से मोक्ष को परम पुरूषार्थ माना गया है उसका अन्तिम ध्येय जीवन मरण से दुःखो से छुटकारा है। जैसे कि गीता में कहा गया है कि व्यक्ति पूर्णतया निर्लिप्त हो जाये क्योंकि ज्ञान पूर्वक निश्पाक कर्म किए जाने से जो निवृत्ति कर्म की धारणा होती है। वही मोक्ष प्रदान करने वाला है। मोक्ष प्रार्पित के चार प्रमुख मार्ग बताये गये है– ज्ञान, कर्म, भक्ति और योग। परन्तु यह भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति एवं संस्कारित मन से आगे की स्थिति है, जो मनुष्य को अर्थ एवं काम संबंधी अभाव या प्रभाव प्रभावित नही करता।

इस प्रकार दीनदयालजी के एकात्म मानववाद की दार्शनिक अभिधारणाएँ अत्यंत ही अलग तरह की है जिसका प्रेरणा स्त्रोत प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन हैउन्होने इसकी दार्शनिक व्याख्या के क्रम में इसकी बार–बार पुनरावृत्ति की और इसी पर उसकी संपूर्ण चिन्तन प्रक्रिया का विवेचन आधारित है। यह माना जा सकता है कि पाश्चात्य विचार श्रृंखला की पृष्ठभूमि में स्वतंत्र हुए भारत को जिस युगानुकुल एवं स्वदेशानुकुल विचार–दर्शन की आवश्यकता थी, उसे दीनदयाल जी ने एकात्म मानववाद के दर्शन के रूप में प्रतिपादन किया जिसमें एकात्मकता का तत्व मानव तथा वाद दोनों को भारतीयकृत करता है।

हम सभी मानवता के साथ अपने को एकाम्त समझ ले और संपूर्ण मानवता की प्रगति के लिए अपने राष्ट्र की जो विशेषताये होगी उसका परिपव्य फल मानवता के चरणों पर अर्पित करेगे। इस तरह हर एक राष्ट्र स्वायत रहते हुये अपना विकास भी करेगा। किन्तु विश्वात्मा का भाव मन में रहने के कारण एक दुसरे का पोषक, सम्पूर्ण मानवता का पोषक विश्व राज्य पंडित दीनदयालजी के एकात्म मानववाद की रचना की दृष्टि से चरम धरिणति होगा। एकात्म मानववाद के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यह आधुनिक युग की विभाजन प्रवृत्तियों, मानवीय समस्याओं, त्रासदियों तथा विषमरतासताओं से निपटने का एक ऐसा दृष्टिकोण है जो प्राचीन भारतीय आदर्शो पर आधारित है परन्तु समयानुकूल बनाने के लिए इन आदर्शो की व्याख्या आधुनिक संदर्थ में ही गयी है। एकात्म मानववाद का एक साथ विचारधारा विश्व दृष्टि तथा जीवन के प्रति दृष्टिकोण है। अनुभवाश्रित राजनीतिक सिध्दांत में इसको शायद वह स्थान नही मिल पाया है, जो कई अन्य विचार बन्धो को प्राप्त है, परन्तु जीवन के समष्टि दर्शन का यह एक महत्वकांक्षी प्रयास अवश्य है।

संदर्भ :–

1. उपाध्याय दीनदयाल एकात्म मानव दर्शन।
2. उपाध्याय दीनदयाल राष्ट्रवादी की सही कल्पना एकात्म मानव दर्शन।
3. ठेंगड़ी दतोपन्त एकात्म मानववाद एक अध्ययन पूर्व उध्दत।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं की भाषा शैली

डॉ. अंजली सिंह
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, शा0 माधव सदाशिवराव गोलवलकर महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

भाषा भावों और विचारों के आदान–प्रदान का सामाजिक माध्यम है और समाज गतिशील ईकाई है समाज मे वर्ग है सम्पति है, शोषण है और संघर्ष है इन गतिविधियों का हिसाब–किताब भाषा सुरक्षित रखती है भाषा की अपनी ध्वनि–प्रकृति होती है अपनी भाव–प्रकृति होती है और अपना शब्द भण्डार होता है । सब तरह से समर्थ भाषा बेहतर लेखन में बेहद सहायक होती है वास्तविकता को जब–जब वाणी दी जाती है, तब–तब भाषा को सब तरह के बनाव–सिंगार त्यागकर बोली हो जाना पड़ता है। कहने को व्यंग बना देना बोली के ही वश की बात है।

परसाई के व्यंग्य–लेखन में भाषा का जो स्वरुप व्यवहत हुआ है, वह ध्वनि, रुप और शब्द के धरातल पर बोली की ताकत और ताजगी वाला रुप है। परसाई देख–परख कर लिखते है, सोच समझ कर लिखते है। उन्होने जो कुछ लिखा है, उनसे लिख नही गया। वे शब्द चयन में से उठाते है, बेचैनी पैदा कर देने वाला भाव पैदा कर देते है और इस तरह शब्द में भाव उपजता है वह एक बिरली ध्वनि को बोध कराता है, इसी से उनके व्यंग्य को निरक्षर भी बैठकर दुहरा लेता है। बिना लिहाज किये प्रहार करने की जब–जब जरुरत होती है तब–तब ध्वनि भाव और शब्द सीधे बोली से ही उठाने पड़ते है। बोली सीधे–सीधे जन से जुड़ी है। बोली सामान्य से आमू–सामू बतिया लेती है। परसाई के व्यंग्य लखन में अहम–भूमिका रखती है।

परसाई का व्यंग्य–लेखन दायरा विशेष का मुहताज नही है, समाज की एक–एक पर्त उन्होनें उधेड़ कर देखी है और विसंगति उन्हें जहॉ भी दिखी, वहॉ उन्होने चोट की है चोट करने के लिए जब–जब उन्होनें आक्रमक–रुख अपनाया है तब–तब भाषा समर्थ हथियार के रुप में उनके हाथ में रही है, और उनका व्यंग्य–लेखन दिनों दिन धारदार हुआ है। स्वार्थ को सर्वोपरि करके जब–जब पगडंडियॉ बनाई गई नौकरशाही के मजबूत शिकंजे मे जब–जब गणतंत्र ठिठुरता हुआ दिखा, पेशन की प्रतीक्षा में जब–जब भोलाराम का जीव विकल हुआ, कालेज जैसे शिक्षा केन्द्र जब–जब दुकानदारों के दर्जे पर उतरे थे प्रॉपर चैनल की दृष्टि ने जब–जब प्रतिभा को दबोचा, संस्कांरो और शास्त्रों की चालों मे से जब–जब मतलब सर्वोपरि हुआ, यथार्थ को जब–जब परेशान किया गया तब–तब परसाई के व्यंग्य लेखन मे अकेले शीर्षक ही चोट करने में समर्थ हो गए, विश्लेषण तो दूर की बात वह जो आदमी है न न्याय का दरवाजा, परत्मामा का लोटा, गुड़ की चाम , कर कमल हो गये, राम की लुगाई और गरीब की लुगाई कंधे श्रवण कुमार के वैष्णव की फिसलन–ऐसे ही समर्थ शीर्षक हैं, जो व्यक्तिवाचक की सीमा पार कर जातिवाचक हो गये है। जहॉ भाव, विश्लेषण की बाट नही रहती अर्थ एक भक्काटे की भॉति खुलता है और कहानी के समूचे बिन्दु वर्तुलाकार घूमने लगतें है। उनकी कहन जहॉ पैनी हुई है, भाषा और–और धारदार हुई है वहॉ–वहॉ उनके दिये शीर्षक पढ़ने वाले को अपने लगते है, इसी से व्यंग्य लेखन की भाषा वह रिश्ता सुगमता से कायम कर लेती है, जिसके लिए 'वेद' के जमाने से पृथु की रचना तक बिना रुके प्रयास किये गए है।

साहित्य पीढ़ियों तक प्रतिष्ठा के करीब रहा है और सुविधा बॉटने वालों के आस–पास जो शब्द होते थे, वे ही लेखन के काम आते रहे। भाषा पर विचार करने का सीधा–सीधा मतलब होता है शब्द विचार करना। शब्द अर्थ ढोतें हैं और 'अर्थ' ही तो अभीष्ट होता है शब्द बोली के घर जितना सुखी रहता है, उतना भाषा के घर नही। अपनी बात बेखटकें और सहो ठौर ठिकाने पर पहुॅचाने के लिए जीवंत लेखन बोली के घर से ही शब्द उठाता है। मुक्तलाल, सुरमादेवी,

जालिम सिह, फूलमती और करेला देवी नाम होने के बावजूद अपने आस–पास समूचा वातावरण लपेटे है। अस्तभान, विद्यादमन भयभीत सिंह की तत्समता भी व्यंग्य को रोक नही पाती, प्रंपचगिरि के साथ–साथ जब जोगी और निबलसिंह के साथ जब सौ वर्ष को संयुक्त कर दिया जाता है, तब व्यंग्य भी विशेषणधर्मी हो जाता है, रानी नागफनी की कहानी में व्यंग्य व्यक्ति वाचक संज्ञा पदों और विशेषणों क्रिया विशेषण के माध्यम से अर्थित हुआ है।

मुहावरे अभिव्यक्ति क्षमता बढाते हैं इसी से लेखन में उनकी अपनी महत्ता है। बरकाकर निकालकर, पूरा न पड़ना, धोबी पछाड़ देना, चेहरा उतरना, हीं–हीं करना, पोल खोलना, शोहरत हासिल होना, रंगे हाथों पकड़े जाना, बाजा न आना, पसीना आना, हाबी होना, रोम न दुखाना, नाम को रोना, मुँहजोरी करना, लंगोटी तक उतार कर देना ऐसे मुहावरे हैं जो अभिव्यक्ति को खानाी देने है। परसाई के व्यंग्यलेखन में से स्थान–स्थान पर व्यवहत हुए है।

डेरा उखाड़ना में जिस प्रयाण को अभिव्यक्ति दी गई है, वह हताशा और निराशा का उजागर करता है। गच्छा खा जाना और छड़क जाना में ध्वन्यात्मकता ऊपर आ गई है। टिटहरी होना, आजादी की घास, गुलामी का घी, राष्ट्रीय शोकश सरकारी शादी जैसे प्रयोग भी प्रभाव पूर्ण हैं, क्रांतिदेवी का शील, पेशेवर उखाड़, घोर करतलध्वनि, दुश्मन फटकार और पवित्र ग्लानि की व्यजना भाषा व्यवहार की व्यंजना है।

आखिर सत्य क्या है, बढिया कपड़े पहने झूठ अन्याय को क्या शर्म, सारा मामला सोर्स का है। सपना सुभीते की चीज है। रोशनी देने वाले दिशा नहीं बदलते, हर एम.एल.ए. शक्कर का बोरा है, राज बहुत बदमाश होती है, रिटायर्ड फादर से निभाना तलवार की धार पर चलना है और कुरुपा पत्नी सौन्दंर्य बोध बढाती है जैसे मुहावरे परसाई के व्यंग्य को पैना बनाते है। फादर की मृत्यु में पोलाहट हो गया, ट्रान्सफर ऑफ डिश, ब्यूटीफूल मुर्गा, झूठ को मेकप, अपनी रिक्स पर , सोर्सो की लिस्ट और दृष्टि दिला दीजिए न, में जिस तरह विदेशी शब्द भी घुले–मिले है, उसी तरह वत्स ब्राहम्ण कृपाल, मृत्यु, वरण, बटुक, सप्तर्षि और अंशुमाली जैसे तत्सम शब्द भी व्यंग्य के अच्छे हथियार हो गए।

परसाई ने उन शब्दों को भी हथियार बनाया है, जिनके आस–पास सांस्कृतिक वातावरण लिपटा है। स्थानों पर शब्द के साथ जो पुराना अर्थ है, वह पाठक के जेहन में खुलता है और नये अर्थ की बराबरी में आकर बोध को खरोंचता है। साहित्य मे जब–जब व्यक्ति, समाज में तिरोहित हुआ, तब–तब संज्ञा पदों को सर्वनाम भी एक के न होकर सबके है।

व्यंग्य लेखन के लिए परसाई ने ध्वनि तत्व, भाव तत्व और शब्द भन्डार के स्तर पर भाषा का जो स्वरुप स्थिर किया है, वह बोली के आंगन का है। इसी से उनका लेखन गॉव का मामूली पढा किसाान और मंजूर अपना मानता है और नगर का हर वह वर्ग जो सर्वहारा है अपना माने बैठा है।

हरिशंकर परसाई की भाषा में व्यंग्य की प्रधानता है उनकी भाषा समानवीय और संरचनास के कारण विशेष समता रखती है उनके एक–एक शब्द में व्यंग्य के तीखेपन को देखा जा सकता है। लोक प्रचलित हिन्दी के साथ–साथ उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का उन्होने खुलकर प्रयोग किया है।

हरिशंकर परसाई ने बहुत सी लघुकथाएँ और कहानियॉ भी लिखी हैं जिनकी भाषा विधित स्तरों और अनेक पर्तो के भीतर चलने वाली किसी करंट की अन्तर्धारा की तरह है। इनकी भाषा अत्यंत सहज, सरल और धारदार तो है ही साथ ही साथ उसमें विभिन्न अद्भुत क्षमता है। परसाइ जी की रचनाओं में प्रसंगानुकूल भाषा के इतने विविध रुप मिलते है कि अन्यत्र इस तरह का वैविध्य मिलना संभव नही है।

परसाई जी के कथासाहित्य का कितना युगान्तरकारी महत्व है, इस बात का पता इस तथ्य से चलता है कि नई कहानीधारा के दोनों चोटी के कहानीकारों भीष्मसाहनी और अमरकांत की सफलता का रहस्य भी बहुत कुछ व्यंग्य ही है। व्यंग्य की ओर उनकी उन्मुखता ही उन्हें उनके आरम्भिक आदर्शवाद और समानियत से क्रमशः मुक्त करती जाती है। यदि हम अन्य

आधुनिक कहानीकारों में ज्ञानरंजन और काशीनाथ सिंह की बात करें तो इनके गद्य में भो व्यंग्य की एक प्रकार से महीन बुनावट दिखाई देती है।

यद्यपि अन्य समकालीन कहानीकारों की अपेक्षा परसाई जी की सफलता इस विधा के रुप में इसलिए अधिक रही है क्योकि व्यंग्य उनके गद्य में सहायक या गौणतत्व के रुप में नही बल्कि उनके यथार्थवादी दृष्टि कोण और कलात्मक पद्धति के घुले मिले रुप में सामने आता है।

जिस प्रकार जनता से लिया गया पैसा जनता पर ही खर्च किया जाता है उसी प्रकार जनता के पैसों से बनी गोली जनता पर ही चलाई जाती है। एक मंत्री का भाषण और उस पर तालियों की गूंज की ओर संकेत कर परसाई जी ने कहा है कि यह ह आज की नीति। मुख्य रुप से परसाई जी ने ऐसे ही व्यंयात्मक तेवर अपनी लघु कथाओं मं अख्तियात किये है। महत्वपूर्ण बात यह है कि आपकी रचनाओं में एक अफसर से लेकर चपरासी, अध्यापक, मंत्री, ईश्वर को रिश्वत देने वाले व्यकित, रवयुवक, युवतियॉ पत्रकार आदि इन सबके चेहरे पर से नकाब उतारकर समाज के सामने लाकर खड़ा कर दिया है।

आज भी हमारे देश में सामंतवादी प्रणाली की जड़े अपना प्रभाव जमाये हुये है। साला ही साथ पूंजीवादी प्रणाली की बनती हुई नवीन व्यवस्था के बीच इस अत्यंत संकालिकालीन समय में आदमी आंतरिक रुप से विभक्त हो गया है। एक ओर यदि शोषित पीड़ित अधिकार विहीन वंचित आदमी का त्रासद यथार्थ है तो दूसरी ओर विशाल मध्यवर्ग की वैचारिक और व्यवहारिक पड़ता अधिकार सम्पन्न सम शक्तिशाली वर्गो का नग्न दमन हो रहा है। इस भयानक यथार्थ के बीच व्यापक सामाजिक और व्यक्तिक पाखण्ड और मूल्यहीनता के विरुद्ध संघर्ष करती हुई परसाई जी की व्यंग्य रचनाएॅ है। परसाई जी ने काफी संख्या में कहानियॉ भी लिखी है। परसाई जी की कहानियों का महत्व इसी बात से समझा जा सकता है कि हिन्दी कथा साहित्य मं घनघोर रुमानियत के दौर में वे अकेले ही एक मात्र ऐसे कहानीकार नजर आते है ˙ जिन पर रुमानियत का हल्का सा भी असर नजर नही आता है। इसके अलावा वे रुमानियत पर तीखों प्रकार भी अख्तियार करते है।

परसाई ने भारतीय व्यापारियो के चरित्र में पैदा होने वाली स्तरहीनता को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। लोहिया ने संस्कृति के नाम पर भारत में जिस वातावरण को देखा और भोगा था उसे उन्होने एक शब्द में नाम दिया कीचड़। यह कीचड़ हजारों वर्षो की सड़ी हुई परम्परा है जिसके नीति व्यापार और प्रचार मिलकर उस कीचड़ को सजा कर रखने की साजिश कर रहे है जिसे संस्कृति के नाम से पुकारा जाता है। परसाई ने विदेशी नकल की फिल्मों में पनपने वाली संस्कृति की तीखी आलोचना की है वे नकली मनोवृत्तियों का उपहास करत हुए लिखते है साधो वह फिल्म से अब सुधार रही है। मगर इस अफसरो का क्या होगा? ये तो टेम्स नदी को गंगा मानते है केलिफोर्निया को बद्रीनाथ मानते है। वे दुनिया में सबसे ऊॅची चोटी गौरीशंकर को नही मानते न्यूयार्क की एम्पायर बिल्डिंग को मानते है जवाहरलाल इन्हें बरबस भारतीय संस्कृति बनाकर रखते थे। वे मानते है कि इन नकली प्रेरणा स्त्रोतो से भारतीय संस्कृति को कुछ भी हासिल नही होगा केवल झूठी एवं नकली प्रतिष्ठा की महत्वाकांक्षा हमारे मानस पर धुंध की तरह छा गई है जो हर भारतीय को उसकी लोक संस्कृति से कट कर अलग होकर जीने के लिये विवश कर रही है।

परसाई रुढ अर्थ में धार्मिक नही है फिर भी यदि उन्हें धार्मिक कहा जाये तब हमें यह स्वीकार करना पडेगा कि उनकी धर्म भावना मानवीयता के व्यापक धरातल पर खडी है। वे मनुष्य को धर्म से भी बडा मानते है। आज धर्म का जो अर्थ समाज ग्रहण करता जा रहा है, परसाई उनके विरुद्ध है। वे नही चाहते कि धर्म का सत्य स्वरुप अडम्बरों से ढक दिया जाय। एक स्थान पर परसाई ने धर्म के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है।

परसाई का समूचा साहित्य एक निश्चित उद्देश्य से प्रेरित है। परसाई ने समग्र रुप में ही युग के सन्दर्भो को सच्चाई के साथ कहचाना है और अपने प्रखर विवेक एंव दूर दृष्टि से जीवन की उन असंगतियों की ओर संकेत किया ह जो कि मानवता में बाधक है। परसाई वर्तमान की

सडीगली और बिज – बिजबिजाता सामाजिक व्यवस्था का घोर विरोध करते है। समाज में फैली हुई उस सड़ांध की मूल वजह मात्र धन का असमान विवरण है और इसी मूल वजह ने मनुष्य को धनी और गरीब जैसे दो वर्गो में विभाजित कर दिया। पूॅजीवादी वर्ग का समर्थक सत्तारुढ़ दल है जो कभी प्रत्यक्ष और कभी अप्रत्यक्ष रुप से जनता का शोषण कर स्वयं की ओर स्वार्थ सिद्धि करना जिनका मूल मंत्र है। तो ऐसे ही समय की स्थिति और विद्रूपता की ओर संकेत करते हुए परसाई एक जगह लिखते है–

बिना व्यवस्था में परिवर्तन किये भ्रष्टाचार के मौके बिना खत्म किये और कर्मचारियों को बिना आर्थिक सुरक्षा दिये भाषणों, सर्कुलरों, सदाचार समितियों निगरानी आयोगो के द्वारा कर्मचारी सदाचारी न होगा। इसमें कोई उपदेश नही है। सिर्फ विशेष प्रभासों को सामने लाया गया है। परसाई के कुछ व्यंग्य व्यक्तिगत होते हुए भी उनमें यथा स्थान सामाजिक व्यंग्य देखने को मिलता है। ''परसाई सफेद बाल'' और ''कबिरा आपठगाइ'' तथा – मखमल की म्यान'' आदि ऐसे ही व्यंग्य है। कबिरा आप ठगाइए में संत की ुदा में दूसरो को ठगने वाले समाज के एक खास प्रकार के व्यक्तियों के बारे में परसाई ने लिखा है एक आदमी ने अपना प्रचार कर रखा था कि मै तो बालक की तरह भोला हूॅ और मुझे कोई भी ठग लेता है। उसके प्रशंसक कहते थे अरे भाई, उसे तो कोई भी ठग लेता है, कोई उससे उसकी लंगाटी भी मांगे तो वह उतारकर दे देगा। मैं एक दिल उस सन्त के पास गया। मैंने देखा कि उनके पास ही दूसरो की उत्त्वायी हुई 15–20 लेगोटियॉ रखी है। बात यह थी कि उसके सामने लोग जब जाते तो यह मानकर कि वह तो बहूत भोला है, अपनी लंगोटी की तरफ से असावधान हो और वे धीरे से गफलत में उसकी लंगोटी की तरफ से असावधान हो जाते है और पे धीरे से गफलत में उसकी लंगोटी उतार देते। मै फौरन अपनी लंगोटी बचाकर भागा''।

हिन्दी के बहुत से प्रसिद्ध साहित्य के विपरीत परसाई केवलद गद्य लेखक है। अर्थात वे जो कुछ कहना चाहते है वह गद्य के माध्यम से ही कहते है। कविता लिखने वाला तो गद्य दमें पहुॅच जाता है पर बहुधा ऐसा कम ही होता है कि गद्य लेखक को अपनी बात कहते के लिए गद्य छोड़कर काव्य का आश्रय लेना पड़े। वास्तव में गद्य आधुनिक युग का माध्यम है इस माध्यम की जो अनेक विधाएं हैं उसमें उपन्यास को प्रायः बासवीं शताब्दी की विधा कहा जाता है पर परसाई जी ने अपने लेखन के आरम्भिक दौर में उपन्यास लिखे पर उस विधा को उन्होने लगभग अपर्याप्त पाया और लगभग क्या पूरी तरह छोड़ दिया। सन् 1955 के बाद उन्होने कोई उपन्यास नही लिखा परसाई जी ने विशिष्ट कहानिया इस अर्थ में नयी थी कि उन्होने स्वतंत्रता के बाद उत्पन्न होने वाले मोहभंग को सबसे पहले पहचाना था पोषित और विघटित मूल्यों को आजादी के बाद की पीठी के कहानीकारों में सबसे पहले रेखांकित किया था। पर परसाई जी ने अपने किसी आब्जेक्शन को प्रमाणिकता ओर उद्घटित करने के लिये कहानी लिखते है लेकिन धीरे–धीरे परसाई जी कहानी कला भी अपने लिये अधूरी और अपर्याप्त जान पड़ने लगी क्योकि परसाई प्रेमचन्द्र की तरह से अपनी कहानियों में कैरेक्टर्स खड़े नही करते उनका आब्जेक्शन उनकी कहानियों के विस्तार मे खो जाता है और कथ्य की धार भी थौड़ मंद सी पड़ जाती है।

परसाई जी भारतीय जनता की पीड़ा और त्रास और शोषण और उसके विरुद्ध रचे जा रहे षडयंत्र के खिलाफ खड़े है और इसके लिये उन्हे निबंध की विधा ज्यादा उपयोगी और कारगर लगी परसाई जी उपन्यास को छोड़कर कहानी की ओर आये और कहानी छोड़कर उन्होने निबंध को अंगीकार किया और अंततः निबंध को भी छोड़कर स्तंभ लेखन शुरु किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, बरसाने लाल चतुर्वेदी पृ0 201

2. आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, बरसाने लाल चतुर्वेदी प0 01

3. साप्ताहिक हिन्दुस्तान (लेख) हरिशंकर परसाई, 2 अप्रैल 1967

4. हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं का अनुशीलन पृ0 87

5. हरिशंकर परसाई के व्यंग्य की वैचारिक पृष्ठभूमि प्रो. राधेमोहन पृ0 66

6. हरिशंकर परसाई के व्यंग्य की वैचारिक पृष्ठभूमि पृ067

7. ऑखन देखी, आत्मकथा, हरिशंकर परसाई पृ0 323

8. ऑखन देखी, संपादक–कमला प्रसाद पृ0 111

9. सुनो भाई साधो, हरिशंकर परसाई पृ0 5–6

10. पगडण्डियों का जमाना हरिशंकर परसाई पृ0 89

11. हरिशंकर परसाई की दुनिया, डॉ मनोहर देवलिया पृ0 83

12. आंखन देखी डॉ0 नंदकिशोर नवल का लेख पृ0 118

13. परसाई रचनावली, खण्ड – 3 पृ0 205

Critical Evaluation of HDB Financial Services as an NBFC

Prof. Dr. Madhu Satam
HOD, PG Research Centre Department of Economics Modern College, Pune 05

ABSTRACT : HDB Financial Services is an NBFC that provides Personal Loans, Loan against Property, Gold Loans and Used Vehicle Loan. This report highlights a study on the Operations Department that plays a vital role in the company. The functions of the operations department are very critical in nature and have to be managed with utmost efficiency. The department is responsible for the monetary transactions of the branch, managing all the equipment used by the branch, maintaining branch audit and mainly to examine each loan case and dispatch each loan after all the requirement according to the company's policies are fulfilled. The company follows a strict procedure to determine a customer's financial credibility so as to grant a loan to them. The operations department manages the last stage of this procedure and approves the dispatch of the loan. However, this process is very time consuming and the dispatch of the loan gets delayed for various reasons. In this report, I have analysed the reasons for the delay in between the in-time of a case at the operations department and the out-time (dispatch) of the loan. There is a need to shorten the time period between these two elements to as to attract more customers and deliver greater customer service. It may also help the organisation to work more efficiently and hassle free. In the current market scenario, the competition between NBFCs is very high and there is a need for developing strategies so as to deliver faster lending services and attract more customers.

INTRODUCTION : When a client is interested in borrowing money and approaches an NBFC for the same, ideally, the loan should be sanctioned in 7 days and the loan should be disbursed in 15 days. However, the processing of a muster may cause a delay in the above mentioned timelines and dispatch the loan. The faster the loan is dispatched, better will be the service provided by the company. The company has to even consider the competition in the market for the same. If there is a delay in the borrower receiving the loan and another firm is providing a faster service, the company may lose its client.

Research Problem : When a muster is created by the sales department that includes all the documents and checklists of the borrower, it goes to the credit department where all the financial reports of the borrower are created. All financial rates are approved by them and the client's login is punched. The credit department also conducts personal discussions and telephonic verification of the borrower. The KYC documents are verified and OSV stamps are given by this department. The muster then goes to the operations department where the muster is critically checked and queries are drawn. The muster along with its queries are then sent back to the sales department where the same are resolved. Once the resolved queries are rechecked by the operations department, a disbursal memo and report is created. The case is ready for its dispatch and the money is credited in the borrower's account within: on regular days in (2+1) days and on month ends in (2+3) days.

Research Objectives

1. To analyse the queries causing delay in a loan dispatch
2. To provide faster service to the client borrower

Hypothesis : The gap between application of loan and loan disbursement is responsible for the delay in the process for loan dispatch in HDB Financial Services.

Scope and Significance of the Study : This study includes an analytical understanding of the data related to loans and advances provided by an NBFC. It is a case study of HDB Financial Services which is a subsidiary of HDFC Bank. It consists of the study of the gap between the application of loans and their disbursement. The time taken lags in the administration and execution of the provisions. This study will be important to NBFC bankers and lenders. It will help them in providing better customer service. This study will help in dispatching loans in lesser days than the given timeline and attract more borrowers.

Sources of Data : Primary data is collected from HDB Financial Service, Branch Operations Manager. A list of client's loan accounts was obtained for the purpose of the study. A Random Selection of the clients was done for this study. The selected sample population provided information regarding the data required. A systematic and structured format was formed while drawing queries of the muster files. On the basis of the information available, the analysis was carried out.

Sampling Design : Out of the total loan accounts at HDB Financial Services in Pune, 10 newly login loan accounts during the first quarterly of the FY 2017 were considered as the sample for this study.

Population Definition : The universal population is the total loan accounts at HDB Financial Services which is around 100 in that period.

Tools of Data Collection : Primary data was collected for this study from department reports and information was collected about the customer queries on various departmental processes.

Interpretation of the Data : Queries drawn by the operations manager at HDB Financial Services, Pune Branch were used as cases for study. Each case represents one loan account. The names of the account holders have been withheld. There are two products that have been covered in the cases: Personal Loan (PL) and Loan against Property (LAP).

When a muster is brought to the operations department, it is checked for all missing, pending, additional formats required, etc. The details of the queries are distributed according to the respective departments that have to resolve them. Each case is managed by a Sales Representative of the branch. These changes are to be made by the case's sales representative.

Usually, the time taken to resolve these queries directly affect the time taken for the loan to be dispatched. The faster these queries are resolved, the faster the loan procedure can be completed.

It is, therefore, necessary to study these queries and inculcate their avoidance so as to provide loans at a smoother and faster pace. The 10 cases taken primarily from the new loan cases that came in during the month of June to July 2017 were studied and following conclusion was made:

From the data analysis we can see that in majority of the cases, the queries are from the credit and operations department. The sales representative has to resolve these queries at an efficient speed so as to close the loan procedure.

The data analysis shows many repetitive queries that need to be resolved by the credit and operations department. These queries are to be highlighted in the further cases so as to avoid their occurrence and shorten the time taken to dispatch the loans.

When the operations manager draws these queries, the muster is to be sent back to the respective sales representative who then resolves these queries with the assistance of the credit department. The customers are to be involved in the resolving process. These tasks increase the lagging time and delay in creating a disbursement memo and report followed by the dispatch of the

loan amount. Hence, there is a gap between the application of loan and loan disbursement which is responsible for the delay in the process of loan dispatch at HDB Financial Services.

Suggestions : The data analysis of this study has highlighted common queries that can be used by the respective departments for future reference. It may help them to save time and provide faster service to the customers. The following are some suggestions:

- Training for sales representatives to avoid the repetitive errors
- Creating awareness among borrowers regarding the loan procedure and requirements should be clearly specified
- Counselling should be provided by the bankers
- More information should be available using digital media
- The company may publish an information prospectus to help the borrowers understand the loan dispatch process.

REFERENCES :

1. www.hdbfs.com/about
2. https://www.hdbfs.com/sites/default/files/reports/HDBFS%20Annual%202017.pdf
3. www.bloomberg.com/research/stocks/private/snapshot.asp?privcapld=37532421
4. https://m.rbi.org//Scripts/FAQView.aspx?Id=92
5. www.wikipedia.org/wiki/NBFC_%26_MFI_in_India

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

परिवार एवं विवाह के प्रति छात्र–छात्राओं का दृष्टिकोण (एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)

डॉ. पुष्पलता स्वामी
सहा. प्राध्यापक समाज शास्त्र, डी.एन. जैन महाविद्यालय, जबलपुर म.प्र.

परिवार समाज को प्राथमिक और मौलिक इकाई है। सामाजिक जीवन म प्राचीन समय से परिवार रहा है। जब से मनुष्य है तभी से परिवार भी है। इस अर्थ में परिवार के अपने दो स्वरूप है एक जन्म का परिवार तथा दूसरा प्रजनोत्पत्ति का परिवार अर्थात् एक परिवार तो वह है जिसका सदस्य मनुष्य माता–पिता से उत्पन्न होने के कारण होता है, दूसरे में वह विवाह करके परिवार को बसाता है। व्यक्ति आजीवन अविवाहित रहकर अपना जीवन निर्वाह तो कर सकता है लेकिन जन्म से परिवार के रूप में वह परिवार का सदस्य तो होता ही है। समाज में परिवार के प्राथमिक होने का प्रमुख कारण उसका संतुलित स्वरूप होना है। अतः जैसे परिवार होंगे समाज भी वैसा ही बनेगा।

परिवार की समाज में स्थिति त्रिरूपी है। एक ही समय में यह एक प्राथमिक समूह है और संस्था भी एवं आमने–सामने के संबंधों और हम की भावना की विशेषताओं के कारण परिवार एक प्राथमिक समूह है। निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भिन्न लिंगीय व्यक्तियों क द्वारा बनाई गई यह एक समिति है। नियमों और कार्यों की सुनिश्चित व्यवस्था होने के कारण परिवार कभी न समाप्त होने वाली एक संस्था है। समाज में परिवार के अतिरिक्त समाज की ऐसी कोई अन्य इकाई नहीं है जो समाज में प्रभाव और महत्व की हार्वट से इसके समतुल्य हो।

मैकाइवर और पेज के अनुसार ''परिवार एक ऐसा समूह है जो संबंधों के आधार पर परिभाषित किया जा सकता है, तथा जो इतना छोटा और स्थायी है कि जिसमें संतानोत्पत्ति एवं उनका पालन पोषण किया जा सकें।''

मैकाइवर एवं पेज ने परिवार में यौन संबंधों, संतानोत्पत्ति तथा बच्चों के पालन पोषण की सामाजिक मान्यता पर बल देते हुए इसे एक छाटे समूह के रूप में स्पष्ट किया है। ऐसे परिवार वर्तमान में बहुतायत में पाए जाते है जिनमें दो भिन्न लिंगीय व्यक्ति स्थायी रूप से एक दूसरे के साथ रहकर यौन संबंधों की पूर्ति करते है। उन्हें बच्चों की उत्पत्ति, वैधता तथा पालन पोषण के दायित्व की सामाजिक मान्यता भी प्राप्त होती है। ऐसे परिवारों को एकांकी परिवार और आधुनिक परिवार भी कहा जाता है।

प्रो. के.एम. कापड़िया के अनुसार

हिन्दू परिवार एक धार्मिक संस्कार है इस विवाह पद्धति के अंतर्गत कुछ ऐसे धार्मिक नियम, तरीके या धार्मिक कृत्य होते है जिनको सम्पादित किया जाना विवाह की पूर्णतया के लिये आवश्यक है। हिन्दू विवाह एक दूसरे अर्थ में भी धार्मिक संस्कार है अपने जीवन में हिन्दू पुरूष अनेक संस्कारों को सम्पादित करता हुआ आगे बढ़ता है। विभिन्न संस्कारों में गर्भाधान संस्कार प्रारंभ में आता है और शरीर क दाह संस्कार में समाप्त होता है। डॉ. कापाड़िया के अनुसार स्त्रियों के लिए विविध प्रकार के संस्कारों की व्याख्या या निर्देश नही है उनके लिये केवल एक ही संस्कार करने का निर्देश है और वह विवाह संस्कार जिसके द्वारा वे गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करती है जो कि धार्मिक सामाजिक दृष्टिकोण से स्त्री को पूर्णतया प्रदान करता है।

विवाह एवं परिवार यह दो सामाजिक संस्थाएँ किसी न किसी रूप में विश्व के सभी समाजों में पायी जाती है सत्य तो यह है कि मानव समाज का अस्तित्व इन्ही दो सामाजिक संस्थाओं पर मुख्यतः आधारित है हरिमाऊ उपाध्याय के अनुसार ''विवाह दो पक्षों को एक सूत्र में संयोजित करने का पवित्र संस्कार है।

विवाह क्या है ?

विवाह संस्था संसार के समस्त समाजों की संस्थाओं में अपना एक अलग स्थान रखती है भारत में जितनी भी सामाजिक संस्थाएँ है उनमें विवाह विशेष उल्लेखनीय है। इसका कारण है कि अंतर वैदिक युग से एक हिन्दू के जीवन में गृहस्थ आश्रम को बहुत महत्व दिया गया है।

विवाह का प्रथम उद्देश्य धर्म पालन है। मोक्ष प्राप्ति के लिए विवाह आवश्यक है। धार्मिक ग्रंथों में लिखा है कि मनुष्य तभी मोक्ष प्राप्त करता है जब वह वैवाहिक कर्त्तव्यों को पूरा करता है विवाह सामाजिक संबंधों का ताना–बाना है। समाज की आधारभूत संस्था विवाह है जिसका विश्व के प्रत्येक समाज में उल्लेख मिलता है। समाज की निरंतरता को बनाये रखने के लिये विवाह करना परम आवश्यक है साथ ही सामाजिक कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए भी विवाह आवश्यक है। भारत के प्राचीन मनुष्यों ने नारी के शक्तिमय रूप को पहचाना था और इसलिए नारी को समाज तथा परिवार में उच्च स्थान दिया था। स्त्री और पुरूष गाडी के दो पहिये माने गये है, स्त्री को पुरूष की अर्धागनी कहा है।

महाभारत में (आदि पर्व 74/40) स्त्री की महिमा का वर्णन करते हुए लिखा गया है ''मार्या मनुष्य का आधा भाग है, वह श्रेष्ठम् मित्र है। वह स्वर्ग की जड़ है वही तारनहारी है।

विवाह एक संस्कार है भारतीय संस्कृति में संस्कार शब्द को बहुत महत्व दिया है। संस्कार का अर्थ उन पवित्र अनुष्ठानों से हे जो शारीरिक, बौद्धिक और सामाजिक तथा आध्यात्मिक परिष्कार के लिये किये जाते है जीवन को परिशुद्ध करने के लिये शास्त्र कारों ने जीवन के विभिन्न स्तरों पर जन्म से मृत्यु तक अलग–अलग प्रकार के संसकारों का विधान है। विवाह संस्कार भी उनमें से एक महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता है इस प्रकार विवाह संस्कार गृहस्थ आश्रम का प्रवेश द्वार है जिसमें प्रत्येक पग पर ईश्वर को साक्षी माना जाता है।

अध्ययन विधि :

प्रस्तुत अध्ययन कार्य जबलपुर शहर के रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय एवं विभिन्न महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्र–छात्राओं को चयनित कर लिया गया है। जबलपुर शहर के चयनित महाविद्यालयों से सर्वप्रथम छात्र–छात्राओं की कुल संस्था प्राप्त की गई तत्पश्चात् चयनित छात्र–छात्राओं की सूची तैयार करने के बाद उद्देश्य पूर्ण निर्देशन के आधार पर सुविधानुसार सूचना दाताओं से व्यक्तिगत रूप से साक्षत्कारदर्शिता के मध्यम से संपर्क कर उद्देश्यानुसार आवश्यक जानकारी एकत्रित की गई है। प्रस्तुत शोध कार्य में अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना को प्रयोग में लाया गया है। इस प्ररचना का लक्ष्य अज्ञात तथ्यों की खोज एवं मानवीय ज्ञान में वृद्धि करना है। इसकी सफलता के लिए आवश्यक है संबद्ध साहित्य का अध्ययन करके छात्र–छात्राओं से संपर्क स्थापित कर ऐसी अनेक जानकारियाँ प्राप्त की जाये जो शोध में हमारे लिये पथ प्रदर्शन का कार्य कर सकें एवं विषय की अधिक सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाए जिससे अध्ययन विषय के संबंध में व्यावहारिक अंर्तहावेट पनप सके तथा विषय का कार्य कारण संबंध हमारे लिये स्पष्ट हो सके। शोध कार्य में उचित दिशा की ओर आये शोधार्थी को सर्वप्रथम शोध व्यवस्थित अभिकल्प या रूपरेखा का निर्माण करना आवश्यक होता है। शोध समस्या की प्रकृति एवं उसके स्वरूप के अनुसार उसकी प्ररचना बनायी जाती है। श्री आर.एल. ऐकाफ के अनुसार ''निर्णय क्रियान्वित करने की स्थिति आने के पूर्व ही निर्णय निर्धारित करने की प्रक्रिया प्ररचना कहलाती है।

अध्ययन हेतु :

प्रस्तुत अध्ययन कार्य जबलपुर शहर के विभिन्न महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्र – छात्राओं पर किया गया है। ''जबलपुर मध्यप्रदेश का एक बड़ा एवं मुख्य शहर है। देश के लगभग मध्य में 22.5 डिग्री एवं 20.8 डिग्री उत्तरी अक्षांश और 72.71 डिग्री एवं 80.58 डिग्री पूर्वी देवांश म स्थित यह काफी पुराना शहर है। इस क्षेत्र में निवास कर रहे नागरिक अधिकांश उच्च शिक्षित है व इनका रहवास रहन–सहन भी मध्य उच्च स्तर के अंतर्गत प्रतीत होता है। पचपेड़ी क्षेत्र में रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय स्थित है।

उद्देश्य :

1. विवाह विच्छेद की जानकारी प्राप्त करना एवं उन परिस्थितियों का अध्ययन करना जिसके कारण विवाह विच्छेद की स्थिति पैदा होती है।
2. बदलते परिवेश में नये प्रतिमानों के मध्य विवाह का स्वरूप, युवा पीढ़ी के माध्यम से ज्ञात करना।
3. अविवाहित सम्बंधता के प्रति युवाओं की सोच ज्ञात करना।

4. समाज में फैली दहेज जैसी बुराईयों के प्रति युवा पीढ़ी के विचारों की विवेचना करना।

निदर्शन : प्रस्तुत शोध कार्य सत्र 2010–11 के रानी दुर्गाती विश्वविद्यालय जबलपुर जिले के विभिन्न दस चयनित महाविद्यालयों में 18026 छात्र–छात्राओं के पास अध्ययन हेतु समय अभाव एवं विद्यार्थियों के अध्ययन में व्यवधान न हो सके अतः प्रत्येक महाविद्याल से देव निदर्शन पद्धति की लाटरी प्रणाली से 50–50 छात्र–छात्राओं को चयनित किया गया कुल सूचनादाताओं को देव निदशन प्रणाली की पद्धति से चुना गया है।

देव निदर्शन द्वारा चयनित सूचनादाताओं को ''परिवार एवं विवाह के प्रति छात्र–छात्राओं का दृष्टिकोण'' ज्ञात करने हेतु साक्षात्कार अनुसूची वितरित की गई। अधिकांश विद्यार्थियों ने विषय से सम्बधित उत्तर देने में हिचकिचाहट व्यक्त की परन्तु विद्यार्थियों को यह आश्वासन देने पर कि यह सिर्फ शोध कार्य है और आप से प्राप्त सूचनाओं का प्रयोग सिफ शोध कार्य में ही किया जाएगा। इस तरह विद्यार्थियों को अपने विश्वास में लेकर तथ्यों का संग्रहण किया गया है।

सत्र 2010–2011 में प्रवेशित छात्र संख्या

क्र.	महाविद्यालयों के नाम	उत्तरदाताओं की संख्या
1.	ए.पी.एन. महाविद्यालय	634
2.	एच.पी. महाविद्यालय	439
3.	विक्रमादित्य महाविद्यालय	352
4.	श्री गुरू गोविन्द खालसा महाविद्यालय	787
5.	श्री गुरू तेग बहादुर महाविद्यालय	379
6.	डी.एन. जैन महाविद्यालय	840
7.	केशरवानी महाविद्यालय	760
8.	शा.ओ.एफ.के. महाविद्यालय	446
9.	जानकीरमण महाविद्यालय	340
10.	गुरू नानक महिला महाविद्यालय	1223

सारणी क्रमांक – 01

उत्तरदाताओं का मत आवृत्ति प्रतिशत विवाह विच्छेद की स्थिति

क्र.	उत्तरदाताओं का मत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	सहमत	374	74.8
2.	असहमत	91	18.2
3.	कुछ पता नहीं	35	0.7
	योग	500	100

प्रस्तुत सारणी से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्या विवाह विच्छेद की स्थिति एवं दूसरे पर अविश्वास के कारण बढ़ती है तो सर्वाधिक 74.8 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत है उनका मानना है कि यदि पति–पत्नि के बीच यदि अविश्वास हो तो विवाह विच्छेद की स्थिति बनती है और 18.2 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात से असहमत है वे नहीं मानते कि यदि रिश्ते में अविश्वास हो तो विवाह विच्छेद की स्थिति बनती है और मात्र 7 प्रतिशत उत्तरदाता इस कथन के बारे में कुछ नहीं जानते उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया है।

अतः स्पष्ट कहा जा सकता है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं का मानना है कि अविश्वास के कारण ही विवाह विच्छेद की स्थिति निर्मित होती है।

सारणी क्रमांक – 02

विवाह का स्वरूप/युवाओं का दृष्टिकोण

क्र.	उत्तरदाताओं का मत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	प्रेम विवाह	175	35
2.	कुलीन विवाह	13	2.6
3.	ब्रह्म विवाह	37	7.4
4.	अंतजातीय विवाह	118	23.6
5.	कुछ नहीं कह सकते	167	33.4
	योग	500	100

सारणी से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं से यह पूछ कर जानकारी प्राप्त की गई कि आप किस प्रकार का विवाह करना चाहते है तो सर्वाधिक 35 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी

पसंद से विवाह करना चाहते है। इसके बाद 23.6 प्रतिशत उत्तरदाता अंर्तजातीय विवाह करना चाहते है। इसके अलावा 7.4 प्रतिशत उत्तरदाता वर्तमान में बह्य विवाह करना पंसद करेंगे। हमें ऐसे उत्तरदाता भी प्राप्त हुये है जो कुलीन विवाह विवाह करना चाहते है इनका प्राप्त प्रतिशत 2.6 प्रतिशत है।

अतः स्पष्ट कहा जा सकता है कि जो उत्तरदाता हमें सर्वाधिक प्राप्त हुये है वह प्रेम विवाह करना चाहते है। अतः वह अपना विवाह अपनी पसद एवं मनमर्जी से करना चाहते है।

सारणी क्रमांक – 03

समलैंगिक संबंध Live in Relarlicnship

क्र.	उत्तरदाताओं का मत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	उचित	66	13.2
2.	अनुचित	172	22.4
3.	परिस्थितिनुसार	106	21.2
4.	कह नहीं सकते	216	43.2
	योग	500	100

सारणी से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं से पूछा गया है कि समलैंगिक संबंध आपके दृष्टिकोण में क्या है ? इस के जबाव में सर्वाधिक 43.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि हम इस बारे मं कुछ भी नहीं कह सकते है। 22.4 प्रतिशत उत्तरदाता समलैंगिक संबंध को अनुचित मानते है। 21.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने जबाव में कहा समलैंगिक सबंध परिस्थितिनुसार हो सकता है। 13.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि समलैंगिक संबंध उचित है।

अतः कहा जा सकता है कि सर्वाधिक उत्तरदाता समलैंगिक संबंध के बारे में कुछ नहीं जानते उन्हाने इस बारे मं कुछ भी नहीं कहा।

सारणी क्रमांक – 04

दहेज के प्रति युवाओं के विचार

क्र.	उत्तरदाताओं का मत	आवत्ति	प्रतिशत
1.	वैवाहिक नियम	215	43
2.	परम्परा कुरीति	157	31.4
3.	वैवाहिक भेंट	67	13.4
4.	अपराध	61	12.4
	योग	500	100

सारणी से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं से हमने प्रश्न पूछा कि दहेज आपके लिये क्या है ? इस पर 215 उत्तरदाताओं ऐसे प्राप्त हुए जो दहेज को वैवाहिक नियम मानते है। इन उत्तरदाताओं का प्राप्त प्रतिशत 43 रहा है जबकि जो उत्तरदाताओं का मानना है कि दहेज एक परम्परा है उनका 31.4 प्रतिशत प्राप्त हुआ है और जो उत्तरदाता दहेज को जुर्म मानत है उनका प्राप्त प्रतिशत 13.4 है। अंत में जिन उत्तरदाताओं ने दहेज के बारे में कुछ नहीं कहा उनका केवल 12.2 प्रतिशत ही प्राप्त हुआ है। ये उत्तरदाता दहेज क्या है इसमें कुछ नहीं कहना चाहते है।

अतः स्पष्ट कहा जा सकता है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं का मानना है कि दहेज एक वैवाहिक नियम है।

निष्कर्ष : –शोध कार्य में चयनित उद्देश्यों के आधार पर स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि युवाओं का विवाह विच्छेद के प्रति दृष्टिकोण है कि विवाह विच्छेद की स्थिति पति–पत्नि में अविश्वास, वैवाहिक आयु में अंतर, शैक्षणिक स्तर दहेज प्रथा एवं प्रेम विवाह आदि को माना है। बदलते परिवेश में नये प्रतिमानों के मध्य युवा विवाह अपने परिजनां की सहमति से ही करना चाहते है। और वर्तमान समय के युवाओं के दृष्टिकोण से सफल वैवाहिक जीवन की कुंजी आपसो सामजस्य व समझदारी को मानते है। समलैंगिक संबंध के प्रति य़ुवा अपनी सोच नकारात्मक रखते है। सभी इस तरह के संबंध का पूर्णतथ्या गलत मानते है। दहेज के प्रति युवाओं की सोच नकारात्मक है। वह वर्तमान मे दहेज प्रथा का विरोध करते है। तथा दहेज को कुरीति मानते हुए इस प्रथा को अपराध मानते है।

सुझाव :–

1. दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों के प्रति युवाआं की सोच में बदलाव आवश्यक है।
2. समाज में वर्तमान प्रचलित समलैगिंक संबंधों की महत्ता को कम करना होगा।
3. सकारात्मक दृष्टिकोण हेतु परिवार में अपनी सामजस्य का होना आवश्यक है।

मध्यप्रदेश की राजनीति में महिलाओं की भूमिका

डॉ. रंजना मिश्रा, पी.जी. कॉलेज, नरसिंहपुर
डॉ. अर्चना पाठक, हवाबाग कॉलेज, जबलपुर

प्रस्तावना :– 1956 में मध्यप्रदेश का जो स्वरूप आया, उसे देखकर लोग विस्मित थें उनकी यह धारणा थी कि क्या इतना बड़ा प्रदेश व वित्तीय रूप से सक्षम व स्वावलम्बी बन सकेगा। इन शंकाओं के बावजूद मध्यप्रदेश ने विकास की एक लंबी यात्रा तय की है। भारत के हृदय स्थल मध्यप्रदेश का अपना चिरप्राचीन गौरवशाली महत्व रहा है, देश की समस्त प्रमुख राजनैतिक व सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से प्रभावित रहा है। यह भू–भाग वीरता, विद्या, कला–कौशल व सांस्कृतिक विकास में कभी पीछे नहीं रहा, इसका मस्तक सदैव उन्नत रहा है। मध्यप्रदेश में अनेक प्रभुत्वशाली व वीरों के जन्म व विकास के साथ अनेक महापुरूषों व लोकनायकों का समय–समय पर महत्व रहा है। आदिकवि बाल्मिकी, महाकवि कालिदास, वाणभट्ट भवभूति इत्यादि संस्कृत साहित्यकारों ने इस भूमि पर निवास किया है।

बौद्ध व जैन काल में उत्तरी जिलों में बौद्ध धर्म और दक्षिण कौशल में जैन धर्म के प्रसार का अनुमान किया जाता है। इस प्रदेश पर चन्द्रगुप्त मौर्य, बिन्दुसार व अशोक का शासन रहा। सातवाहनकालीन सिक्के जबलपुर, होशंगाबाद, रायगढ़ आदि जगहों में प्राप्त मध्यप्रदेश में शहरीकरण की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ रही है, लगभग 26 प्रतिशत लोग शहरों में और 74 प्रतिशत गांवों में रहते है। स्त्री पुरूष अनुपात की दृष्टि से मध्यप्रदेश में स्त्रियों का अनुपात 920 है जो राष्ट्रीय औसत 933 से कम है।

क्षेत्रवाद और प्रान्तवाद मानवीय भावनाएं है जो व्यक्ति को संपूर्ण राष्ट्र की तुलना में अपने क्षेत्र और प्रान्त विशेष के प्रति निष्ठा और भक्ति के रूप में प्रेरित करती है। क्षेत्रवादी और प्रान्तवादी विशिष्टताओं को बनाये रखने की दृष्टि से भाषा, आर्थिक उत्पादन, रीति–रिवाज, संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था के संरक्षण में उल्लेखनीय स्थान रखते है। क्षेत्रीयता से अभिप्राय है राष्ट्र की तुलना में किसी क्षेत्र विशेष या प्रान्त की अपेक्षा एक क्षेत्र से लगाव दिखाना। एक दृष्टि से क्षेत्रीयता, राष्ट्रीयता की बृहद भावना के विपरीत है और इसका ध्येय संकुचित क्षेत्रीय स्वार्थो की पूति करना है। राजनीतिक संदर्भ में यह ऐसी धारणा है जो भाषा, धर्म, क्षेत्र आदि पर आधारित है और विघटनकारी तत्वों को प्रोत्साहन देती है। जिन क्षेत्रों में किसी एक जाति की प्रधानता रही वहां क्षेत्रीयता ने उग्र रूप धारण किया है।

जब 1956 में नये मध्यप्रदेश का निर्माण हुआ तो महाकौशल, मध्यभारत, विंध्यप्रदेश व भोपाल की राजनीतिक चेतना अलग–अलग थी। इस क्षेत्र के राजनीतिक संघर्ष व स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई की पृष्ठभूमि भी भिन्न–भिन्न थी।

मध्यप्रदेश राज्य में अपनी स्थापना के बाद अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों एवं सामाजिक क्षेत्रों में विशेष प्रगति की है। मध्यप्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है व राज्य की 77 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। गतवर्षो में खाद्यान्न उत्पादन लगभग ढाई गुना बढ़ गया था। प्रमुख खाद्यान्न फसलों में चावल का उत्पादन लगभग दोगुना हो गया किन्तु गत दशक से खाद्यान्न उत्पादन में निरंतर कमी आई है।

महिलाओं के कल्याण, विकास और उन्हें स्वावलंबी बनाकर समाज में बराबरी का स्थान दिलाने के लिए कई कदम उठाये गये है इससे प्रदेश की महिलाओं की तस्वीर और तकदीर दोनो बदल गई है। प्रदेश के विकास में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु पंचायतों व स्थानीय संस्थाओं में महिलाओं के लिये 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई थी जो 2009 में 50 प्रतिशत हो गई है मध्यप्रदेश ऐसा पहला राज्य है जिसने 1998 में राज्य में महिला आयोग का गठन किया है। निर्धन ग्रामीण महिलाओं के समूहों को संगठित कर आय उपार्जन के काम में लगाने की ''द्वाकरा'' योजना का विस्तार किया गया है।

यह स्वयं सहायता समूह योजना प्रदेश के सभी जिलों में लागू है। बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास को ध्यान में रखते हुये 30 जनवरी 1994 से बाल कल्याण की महत्वकांक्षी राज्य कार्य योजना शुरू की गई। देश में तमिलनाडु के बाद मध्यप्रदेश दूसरा राज्य है। जहां इस कार्य योजना के माध्यम से बच्चों का पोषण उनकी बुनियादी शिक्षा, स्वच्छ पेयजल व स्वच्छ पर्यावरण की उपलब्धता, बाल मजदूरों का सुव्यवस्थित पुनर्वास, लिंग आधारित भेदभाव में कमी जैसे व्यापक मुद्दों पर कार्य किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश विधानसभा में महिला प्रतिनिधि का स्वरूप :– मध्यप्रदेश के हृदय स्थल पर स्थित एक पिछड़ा राज्य है यहां की सामाजिक विचारधारा में नारियों को पुरूषों के समक्ष अधिकार प्रदान करने की बात स्वीकार नहीं है यद्यपि इस प्रदेश ने देश की राजनीति को रानी दुर्गावती, महारानी लक्ष्मीबाई से लेकर, विमला वर्मा, उमा भारती, सुमित्रा महाजन तथा विजयाराजे सिंधियां जैसी कुशल प्रशासन वीरांगनायें तथा राजनेता प्रदान की है परंतु शिक्षा की निम्नतर तथा स्त्री साक्षरता के निम्न प्रतिशत होने के कारण यहां पर आम स्त्रियों की सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। विशेषकर ग्रामीण स्त्रियां आज भी स्वतंत्रता, समानता और अधिकार जैसे शब्दों से अपिचित है। यही कारण है कि देश की स्वतंत्रता के 63 वर्ष तथा मध्यप्रदेश की स्थापना के 54 वर्ष बीत जाने के बाद भी विधानसभा में महिला प्रतिनिधियों की संख्या में कोई उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई है।

मध्यप्रदेश स्थापना के 54 वर्षो में दिये विधान सभा चुनाव का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि विधानसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बहुत कम रहा है। संविधान द्वारा समानता का दर्जा दिये जाने के बाद भी विधानसभाओं में पुरूषों का बाहुल्य है अत्यंत कम संख्या है जो महिलाएं घर की चारदीवारी को लांघकर विधानसभाओं के गलियारे तक पहुंचती है वे सभी या तो किसी राजवंश से संबंधित रही है या उच्च सम्पन्न वर्ग से। आम स्त्री के लिय विधानसभा की सदस्यता दिव्य स्वप्न की भांति है। इस बात को मध्यप्रदेश के प्रथम विधानसभा चुनाव से लेकर अब तक के चुनाव में महिला प्रतिनिधियों की संख्या का विश्लेषण करके स्पष्ट किया जा सकता है।

मध्यप्रदेश विधानसभा में महिला प्रतिनिधित्व

क.	वर्ष	कुल स्थान	महिला प्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
1	1957	288	11	3.81
2	1962	288	34	11.80
3	1967		08	2.70
4	1972	296	11	3.71
5	1977	296	08	2.50
6	1980	320	10	3.12
7	1985	320	03	0.93
8	1990	320	32	10.00
9	1993	320	22	5.00
10	1998	320	22	6.87
11	2003	230	18	7.82
12	2008	230	25	10.86

मध्यप्रदेश में महिलाएं और राजनीति :– राजनीति में महिलाओं की सहभागिता सुनिश्चित करने का प्रश्न आज अंतर्राष्ट्रीय महत्व का है। अन्य समस्याओं को छोड़कर महिलाओं के राजनीतिकरण एवं राजनीतिक सत्ता का निर्णय प्रकिया के केन्द्र में पहुंचने जैसे अहम प्रश्नों पर संपूर्ण विश्व में बहस छिड़ी हुई है। विश्व की आधी जनसंख्या महिलाओं की होने के बावजूद निर्वाचित पदों पर उनकी संख्या लगभग नगण्य है। वर्ष 1980 के आंकड़ें देखे तो इससे स्पष्ट

होता है कि विश्वभर में दस प्रतिशत संसद में और मात्र चार प्रतिशत राष्ट्रीय केबिनेट में महिलाओं का प्रतिनिधित्व था। 1983 में केवल छह देशों में महिला राष्ट्राध्यक्ष थी। राजनीति में महिलाओं की निम्न सहभागिता उनके दोयम दर्जे और शक्तिहीनता की परिचायक है। अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, सामाजिक रीति–रिवाज, परम्पराएं एवं पितृ सत्तात्मक दृष्टिकोण, महिलाओं की राजनीतिक निष्क्रियता के मूलाधार है। महिलाएं विश्व के दो तिहाई कार्यो का निष्पादन करती है, परंतु वे मात्र दस प्रतिशत आय और एक प्रतिशत उत्पादन के साधनों की अधिकारी बनती है इस प्रकार महिलाएं विश्व की सर्वाधिक उपेक्षित श्रेणी है।

महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों का संघर्ष अठारहवीं शताब्दी में प्रारंभ हुआ। 1893 में न्यूजीलैंड ने पहली बार महिलाओं को मताधिकार दिया। इसके पश्चात् 1908 में आस्ट्रलेया एवं कनाडा में महिलाओं को मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात 1928 में इंग्लैण्ड व फ्रांसीसी महिलाओं को मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अनेक देशों की महिलाओं को मताधिकार प्राप्त हुआ।

राजनीति में महिलाओं की सहभागिता के प्रश्न ने बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में सबका ध्यान आकृष्ट किया। संयुक्त राष्ट्र द्वारा 1975 से 1985 के दशक को महिला दशक घोषित करने पर महिला सहभागिता के प्रश्न को वैश्विक पहचान मिली। इस परिप्रेक्ष्य में महिलाओं संबंधी एक कन्वेशन 18 दिसम्बर 1979 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अंगीकार किया गया।

राजनीति में महिलाओं की समान भागीदारो के सवाल पर सन् 1997 में एक अंतर संसदीय सम्मेलन, दिल्ली में आयोजित किया गया था जिसमें 77 देशों की महिलाओं ने भाग लिया था। सम्मेलन में इस तथ्य को विशेष रूप से रेखांकित किया गया था कि विश्वभर में महिलाओं का राजनीति में प्रतिनिधित्व बहुत कम है। इस तत्काल बढ़ाये जाने की आवश्यकता है। एक अनुमान के मुताबिक समूचे विश्व में महिलाओं की संख्या लगभग, पचास प्रतिशत है लेकिन व्यवस्थापिका में इस आधी दुनिया का प्रतिनिधित्व औसत लगभग 11.7 प्रतिशत ही है जो एक खराब संकेत है।

संसद में महिलाओं की संख्या के आधार पर भारत का स्थान विश्वभर में 65वां है। एशिया में भी भारत का स्थान इस मामले में 11वां है। व्यवस्थापिका में महिलाओं की संख्या के मामले में एशिया में सर्वोच्च स्थान पर चीन है लेकिन वहां भी केवल 21 प्रतिशत महिलाएं ही महत्वपूर्ण राजनीतिक पदों पर है अर्थात् एक चौथाई से भी कम।

21वीं सदी में पुरूषों की तुलना में हर क्षेत्र में महिलाओं को 50 प्रतिशत भागीदारी नहीं मिल सकी है। सत्ता प्रतिष्ठानों को चलाने वाले राजनीतिक दलों और संसद विधान मंडलों में महिलाओं की संख्या जिस गति से बढ़ रही है वह काफी धीमी है और यदि यह गति ऐसी ही धीमी बनी रही तब हर क्षेत्र में महिलाओं की 50 प्रतिशत भागीदारी सुनिश्चित होने में अभी सौ साल से ज्यादा समय लग सकता है। यूरोप के नारडिक, स्वीडन, नार्वे, फिनलैण्ड देशों में महिलाओं की संसदीय चुनाव में भागीदारी 41.4 प्रतिशत है और यूरोप के अन्य देशों में 19 प्रतिशत बांग्लादेश में 14.8 प्रतिशत और थाईलैण्ड में 16 प्रतिशत महिलाओं को संसदीय क्षेत्र में हिस्सेदारी हासिल हो चुकी है। भारत में स्थानीय स्तर पर 33 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है जिसे मध्यप्रदेश सहित कुछ राज्यों ने 50 प्रतिशत कर दिया है लेकिन संसदीय राजनीति में उनको मात्र 9.1 प्रतिशत हिस्सा मिला है।

फिर भी राजनीति में महिलाओं की भागीदारी धीमी गति से ही सही परंतु बढ़ी अवश्य है विश्व संदर्भ में देखे तब महिला का सबसे अधिक 49 प्रतिशत भागीदारी के साथ पूर्वी अफ्रीका का छोटा सा देश खांडा शीर्ष पर हैं 47 प्रतिशत भागीदारी के साथ स्वीडन दूसरे और 41. 5 फीसदी के साथ फ्रिन्लैण्ड तीसरे स्थान पर है। संयुक्त राष्ट्र के द्वारा किए गए एक ताजा अध्ययन के अनुसार पिछले तीन साल के दौरान राजनीति में महिलाओं का दखल बढ़ा है। इस दौरान संसदों में महिलाओं की संख्या में दो फीसदी का इजाफा हुआ है। मौजूदा सांसदों में 18 फीसदी महिलाएं है, जबकि मंत्रीमंडलों में भी 16 प्रतिशत स्थानों पर महिलाओं का कब्जा है। संयुक्त

राष्ट्रके अध्ययन वर्ल्ड मैप ऑफ वीमेन इन पालिटिक्स 2008 में यह बात भी सामने आई है कि संसदीय सीटों और मंत्री पद में पुरूषों की बराबरी पर आने में महिलाओं को 2050 तक का वक्त लग सकता है।

इस तरह मजबूत अर्थव्यवस्था वाले देशों में से एक जर्मनी पर महिला चांसलर एंजेलजा मार्के का शासन रहा है। फिनलैण्ड में तारजा हेलोनेन सत्ता शीर्ष पर चीन में वू यी उप प्रधानमंत्री रही है। इस सूची में ब्रिटेन की प्रधानमंत्री मार्गरेट थ्रेचर, न्यूजीलैण्ड की प्रधानमंत्री हेलेन क्लार्क और चिली की राष्ट्रपति मिशेल बेकलेट भी है। नवम्बर 2006 में ही कैलिफोनियां से डेमोक्रेटिक पार्टी की प्रतिनिधि नैन्सी पेलोकी वाशिंगटन मे प्रतिनिधित्व सभा की स्पीकर चुनी गई थी। भारत में कांग्रेस पार्टी की अध्यक्षा सोनिया गांधी फोर्ब्स शक्तिशाली राजनीतिक नेतृत्व की सूची में तीसरे स्थान के लिये चुनी जा चुकी है। प्रतिभा पाटिल को भारत की पहली महिला राष्ट्रपति होने का गौरव प्राप्त हुआ है।

संदर्भ सूची :–

1. मिश्रा, जयप्रकाश ''रचना'' जुलाई–अगस्त, 2010
2. सईद, एस.एम. भारतीय राजनीति व्यवस्था, भारत बुक सेन्टर लखनउ, 2009
3. कोठारी, रजनी राजनीति की किताब, सम्पादक अभय कुमार दुबे, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2003
4. थोरी नरेन्द्र, नेतृत्व सरकार एवं राजनीति व्यवस्था भारत बुक सेन्टर लखनउ, 2009
5. गोस्वामी, भालचंद्र 'प्रखर' संसदीय लोकतंत्र में विपक्ष की भूमिका, पोइंटर पब्लिशर्स, जयपुर।
6. कश्यप, सुभाष संसदीय लोकतंत्र का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1998

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Fish diversity in relation to physico-chemical characteristics of Gour river at Jabalpur, Madhya-Pradesh

Rashmi Mahobia, Dr. Jayshree Sharma *and Dr. P. B. Meshram**
Research scholar, Govt. M.H. college of Home science and science for women autonomous, Jabalpur, Madhya Pradesh.
*Govt. model science college, Jabalpur, Madhya Pradesh
**Tropical Forest Research Institute, Jabalpur, Madhya Pradesh

ABSTRACT :- The present study deals with the diversity of fish fauna in relation to physico-chemical characteristics of Gour river at Jabalpur from Feb 2016 to Jan 2017. Jabalpur is one of the famous district in Madhya Pradesh and Gour river is one of the important river at Jabalpur which flows from Niwas village of Mandla district and joins Narmada river at Jabalpur. This river receives dairy effluents, agricultural runoff, sewage disposal as well as washings of cloths and animals and other daily activities.38 Species of fish were revealed from selected zones of the Gour river belonging to 6 Orders and 12 families. The fish diversity is correlated with biological and various physico-chemical parameters that regulate the productivity and distribution of different species of the fishes.

KEYWORDS :- Fish, Diversity, River, Gour, Physico-chemical.

INTRODUCTION :- India is a mega biodiversity country that holds ninth position in terms of fresh water biodiversity. (Dey Somenath *et al.,* 2012). Biodiversity is essential for stabilization of ecosystems, protection of overall environmental quality for understanding intrinsic worth of all species on the earth. Fishes constitute half of the total number of vertebrates in the world with over 22,000 species.(Yodha Ravindra kumar *et al.*, 2014). Madhya Pradesh is one of the important aquatic biodiversity hotspots of the country, having bestowed with a large number of water bodies both lotic and lentic, the state boasts of a rich fish biodiversity**.** (Vishwakarma K. S. *et al.,* 2014). The rivers are highly productive and contribute to the fishery resources of the state and enhance the socio economic, commercial and ecological values. Fishes are one of the most important aquatic fauna which is directly related with human health and wealth. Hence, it is necessary to maintain their live-stock properly. (Shukla S.N., 2012). Physico-chemical characteristics in many ways have significant influence and impact on aquatic life. Any alteration in these parameters may disturb the quality of water. Fish populations are highly dependent upon the variations of physico-chemical characteristics of their aquatic habitat which supports their biological functions. Dissolved oxygen is of great importance to all the living organisms and is considered to be the sole parameter which to a large extent can reveal the nature of whole water body. Eutrophic water bodies have a wide range of dissolved oxygen and such oligotrophic water bodies have narrow range of dissolved oxygen.(Pankaj Malviya *et.,al*, 2015). The present study is based on the fish diversity in relation to physico-chemical characteristics of Gour river at Jabalpur district in Madhya Pradesh.

MATERIAL AND METHOD :- Gaur river lies on Mandla road (79^{o} 59′ 23.50^{o} E and 21^{o} 08′ 54.30^{o}N) about 10 km southeast of Jabalpur . Fish samples were collected from Gauraiya ghat, Katia ghat and Saliwara ghat at Gour river with the help of local fishers in the morning time at 8:00 am to 10:00 am. This ghats are mostly polluted by the wastage of dairy farms, and also by many sources such as ashes, cattle bathing, washing of clothes and discharge of domestic sewage. Other valuable informations were collected from local fishermen

and resident adjacent to the Gour area. Fish were collected in three seasons (pre monsoon from February to May, Monsoon from June to September and Post monsoon from October to January). After obtaining the fish from the site photographs were taken. The specimens were taken to the laboratory for identification. Morphomtric measurements were taken and meristic characters were observed and the fin formula was completed. The fish samples were preserved in 5-10% formalin according to the size of the fishes. Plastic jar were used for the collection and preservation. Fishes were labeled based on the serial number, common name, scientific name, locality and date of collection. Fish were identified with the help of taxonomic keys, Day's fauna (1994) and Talwar and Jhingran (1991). Fish Base website was also referred for various aspects of fish fauna (www.fishbase.org). Specific identifying characters on the body was observed and noted. To analyse the physicochemical parameters monthly water samples were collected at the morning time between 8:00 am to 10:00 am from selected sites of Gour river. Water sample were collected in 1 litres bottles without any air bubbles. The temperature and the pH value of the samples were noted at the sampling sites. Samples were put to the laboratory to determine the physical, chemical parameters. Analysis was carried out for various water quality parameters like chloride, alkalinity, total hardness, free CO2 and DO. The physicochemical analysis of samples was done according to the procedure prescribed by APHA (1998) and Adoni (1985).

RESULTS AND DISCUSSION :- During the period of study total 38 species (table 1) of fishes belonging to 6 orders and 12 families were recorded from Gour river at Jabalpur during a period of 12 months. Family Cyprinidae dominated with 20 species followed by Bagridae with 4 species, Channidae with 3 species Siluridae with 2 species, Claridae with 2 species, Mastacembelidae, Schibidae, Ambassidae, Cichlidae, Notopteridae, Gobiidae and Beloniidae were also found with 1 species each. Paunikar et,al. **(2012)** studied the ichthyofaunal diversity of Gour river at Jabalpur and 33 species of fish were recorded belonging to 5 orders and 10 families. Due to climatic changes and physicochemical conditions of water additional species were found in the river during the study period. Thus it can be concluded from the obtained results that Gour river is a good source of data for fish diversity, particularly Cyprinid species, but little work has been done on this site. Therefore, there is a need of conservation of fish diversity for the development of fish culture in this area, increase food resources and income of local people. The species diversity was its peak in post monsoon coinciding with the favorable post monsoon conditions such as sufficient water and ample food resources. The diversity was low in pre monsoon probably due to the shrinkage of water. The study revealed that many species in the study area are being under threat due to various human activities.The reduced fish diversity eventually decreases the fish production of native species and creates extinction of several species. It reveals that, a rapid decline in fish diversity at polluted zone of the Gour river. Moreover disposal of sewage runoff into the river causes severe damage to fish diversity. Over fishing and dairy pollution are the major threat for the rich fish diversity of Gour River. Special attention is to be given for conservation of fish diversity.

Physico-chemical characteristics in many ways have significant influence and impact on aquatic life. Any alteration in these parameters may disturb the quality of water. Water temperature is considered as one of the most important ecological factor which controls the physiological behavior of the aquatic system and thereby distribution of diverse aquatic life forms. The present investigation revealed the suitable water temperature for fish species colonization from the current study location, but in pre monsoon or summer season because of high temperature diversity of fishes were very low. The pH of water which is considered as a measure of environmental stability is directly related to the

presence of carbonate and bicarbonates ions and a range of 7.0 to 8.6 is considered to support rich fish diversity. During the present investigation mostly alkaline ranges of pH were observed which can be correlated with a presence of carbonate and bi-carbonate alkalinity in Gour river water. Dissolved oxygen in water is of great importance to all aquatic organisms and is considered to be the lone factor which to a great extent can reveal the nature of whole aquatic system. It is important in the production and support of life. It is also necessary for the decomposition and decaying of organic matter. (Tawseef et., al 2012). Chlorides occur naturally in all types of water. In natural fresh water, however, their concentration remain quite low and generally less than that of sulphates and bicarbonate. High concentration of chloride in water is considered to be the indicator of pollution due to higher organic waste of animal origin or industrial effluents.(Tawseef *et.,al* 2012). Total hardness indicates of concentration of calcium and magnesium ions only. Hardness is an important parameter in decreasing the toxic effect of poisonous elements (S. Bhargava *et.,al* 2013). Total alkalinity of water is important factor has effect on productivity of water a decline in alkalinity was observed due to decomposition of origin matter. Alkaline water may decrease the solubility of metal.(S. Bhargava *et.,al* 2013). Physicochemical analysis is the prime consideration to assess the quality of water for its best utilization like drinking, irrigation and fisheries and is helpful in understanding the complex processes, interaction between the climatic and biological, processes in water.

Table 1 : List of fish species from Gour river.(table 1)

S.no.	Order	Family	Species
1	Cypriniformes	Cyprinidae	Systomus sarana
2			Barbus tor
3			Catla catla
4			Cirrhinus mrigala
5			Cirrhinus reba
6			Ctennopharyngodon idellus
7			Cyprinus carpio
8			Garra gotyla
9			Labeo bata
10			Labeo calbasu
11			Labeo gonius
12			Labeo boggut
13			Labeo kawrus
14			Labeo dyocheilus
15			Labeo rohita
16			Ostiobrama cotio
17			Puntius ticto
18			Puntius chola
19			Chela bacaila
20			Rasbora daniconius

21		Schilbidae	Clupisoma garua
22	Siluriformes	Bagridae	Mystus bleekeri
23			Mystus cavasius
24			Mystus seenghala
25			Mystus tengara
26		Siluridae	Callichrus bimaculatus
27			Ompok pabda
28		Clariidae	Clarius magur
29			Heteropneustus fossilis
30	Beloniformes	Belonidae	Xenentodon cancila
31	Perciformes	Channidae	Channa marulius
32			Channa punctalus
33			Channa striatus
34		Cichlidae	Oreochromis mossambicus
35		Gobioidae	Glossogobius giuris
36		Ambassidae	Chanda nama
37	Clupieformes	Notopteridae	Notopterus notopterus
38	Mastacembeliformes	Masatacembelidae	Mastacembelus armatus

Pictures of some fishes from Gour river

1.Catla catla (Hamilton,1822)

2.Barbus tor (Hamilton,1822)

3. Tor putitora (Hamilton,1822)

4. Barbus sarana (Hamilton,1822)

5. Ctennopharyngodon idellus (Valenciennes, 1844)

6. Cyprinus carpio(Linnaeus, 1758)

7. Cirrhinus mrigala (Hamilton,1822)

8.Cirrhinus reba (Hamilton,1822)

Physicochemical parameters of Gouraiya ghat (site 1) at Gour river during the study period from April 2016-March 2017.

Table -2

		Pre monsoon				Monsoon				Post monsoon					
Parameters	**unit**	**Feb 2016**	**March 2016**	**Apr 2016**	**May 2016**	**Jun 2016**	**Jul 2016**	Aug 2016	**Sep 2016**	**Oct 2016**	**Nov 2016**	**Dec 2017**	**Jan 2017**	**Range between**	**Avr.**
PH	**Mg/l**	**8.1**	**8.4**	**8.5**	**8.2**	**8.6**	**7.6**	7.8	**7.1**	**7.5**	**7.8**	**7.8**	**8.5**	**7.1-8.6**	**8.01**
Temp.	**°c**	**24°c**	**24°c**	**28°c**	**27°c**	**26°c**	**25°c**	25°c	**24°c**	**24°c**	**23°c**	**22°c**	**23°c**	**22-28**	**24.66**
D.O.	**Mg/l**	**7.8**	**7.4**	**5.2**	**6.2**	**7.8**	**7.4**	7.5	**7.3**	**7.9**	**9.2**	**8.5**	**9.8**	**5.2-9.2**	**8.27**
Free CO2	**Mg/l**	**10.5**	**9.24**	**6.60**	**11**	**9.3**	**8.64**	9.8	**13.2**	**11.5**	**8.6**	**13.5**	**18.4**	**6.6-18.4**	**10.85**
Alkalinity	**Mg/l**	**170**	**270**	**250**	**212**	**156**	**140**	164	**315**	**280**	**270**	**320**	**268**	**140-320**	**234.5**
Total Hardness	**Mg/l**	**98.5**	**97**	**80.5**	**78.5**	**105**	**85.6**	80.8	**76.8**	**112**	**150**	**132**	**106**	**76.8-132**	**100.2**
Chloride	**Mg/l**	**14.9**	**13.9**	**25.9**	**38.6**	**32.4**	**29.2**	35.6	**26.3**	**24.9**	**24.5**	**28.6**	**29.8**	**13.9-38.6**	**27.5**

Physico-chemical parameters of Katiyaghat (site 2) at Gour river during April 2015-March 2016.

Table 3

		Pre monsoon				Monsoon				Post monsoon					
Parameters	unit	Feb 2016	March 2016	Apr 2016	May 2016	Jun 2016	Jul 2016	Aug 2016	Sep 2016	Oct 2016	Nov 2016	Dec 2017	Jan 2017	Range between	Avr.
PH	Mg/l	8.1	8.6	8.2	8.2	8.6	8.4	7.8	7.2	7.5	7.6	7.4	7.5	7.2-8.6	7.9
Temp.	°c	24°c	25°c	28°c	26°c	28°c	26°c	23°c	24°c	22°c	23°c	22°c	23°c	22-28	24.5
D.O.	Mg/l	7.5	5.6	6.2	7.1	7.5	7.8	7.6	8.2	8.5	8.6	9.2	8.4	5.6-9.2	7.68
Free CO2	Mg/l	7.8	9.8	11.5	13.5	22.3	18.6	14.8	9.8	9.2	10.5	11	9.5	7.8-18.6	12.35
Alkalinity	Mg/l	167	150	228	220	315	380	324	270	140	170	156	140	140-380	221.6
Total Hardness	Mg/l	96	98	86.5	110	115	210	180	132	106	86.5	92.8	87.6	86.5-210	102.5
Chloride	Mg/l	23.5	17.6	15.9	37.8	28.5	38.6	32.5	24.5	29.8	27.5	15.9	17.5	15.9-38.6	25.8

Physico-chemical parameters of Saliwara ghat (site 3) at Gour river during April 2015- March 2016

Table 4

		Pre monsoon				Monsoon				Post monsoon					
Parameters	unit	Feb 2016	March 2016	Apr 2016	May 2016	Jun 2016	Jul 2016	Aug 2016	Sep 2016	Oct 2016	Nov 2016	Dec 2017	Jan 2017	Range between	Avr.
PH	Mg/l	7.2	8.5	8.2	8.2	8.3	7.8	7.5	8.5	7.5	7.2	7.8	7.3	7.2-8.5	7.8
Temp.	°c	27°c	28°c	29°c	25°c	27°c	26°c	25°c	25°c	24°c	24°c	22°c	24°c	22-29	25.6
D.O.	Mg/l	10.2	6.8	5.6	7.8	8.3	8.5	7.2	9.2	7.8	8.6	11	9.8	5.6-11	8.4
Free CO2	Mg/l	12.9	14.6	13.8	18.6	11	11.8	20.5	9.5	17.6	19.8	22.5	10.5	9.5-22.5	15.25
Alkalinity	Mg/l	220	130	138	187	220	215	310	270	167	150	156	135	130-310	191.5
Total Hardness	Mg/l	147	172	185	98.5	215	232	89.7	94.5	108	127	130	156	89.7-232	146.2
Chloride	Mg/l	28.3	38	29	23.6	17.9	28.5	15.8	19.5	39.5	25	16.8	22.5	16.8-39.5	25.36

Conclusion :- Documentation of biodiversity has become very much important aspect to understand different ecosystem and influences on them. The present study mainly focuses on fish diversity and physico-chemical characteristics of Gour river at Jabalpur. Total number of species recorded during this study period has show a good indication of rich biodiversity. During the study period it was observed that all the water parameters are within the permissible limit and shows supportive correlation to the ichthyofaunal diversity were Cyprinidae family is dominant and still in a position to set a good example of conservation and sustainable management of fish and fishery. However, there is constant threat to fish population due to eutrophication and illegal fishing activities. The illegal fishing activities should be banned to prevent depletion of fresh water fish resources and further studies should be conducted to generate more details regarding seasonal production and ecology of fishes.

References :-

1. Dey Somenath, Roy Utpal Singha and Pal Arijit (2013), **Studies on fish fauna of Durgapur barrage and its adjacent wetland areas with an eye to the physico-chemical**

conditions of Damodar river from Durgapur, West Bengal , India. Journal Of Applied Sciences in Environmental Sanitation, **8(1):**17-22.

2. Yodha Ravindra Kumar and Chaurasia Rajendra Kumar**, (2014).Studies on the fish species diversity of river Narmada in Khedighat, Barwaha, mp, India**. International Journal of Developmental Research and Engineering.**1(1)**.
3. Vishwakarma Kripal Singh, Mir Altaf Ali, Bhawsar Abhilasha and Vyas Vipin (2014)**. Assessment of Fish assemblage and distribution in Barna Stream Network in Narmada basin (Central India).** International Journal of Advanced Research, **2(1)**: 888-897.
4. Shukla S.N.,(2012) **Final technical report on biodiversity of fish species in aquatic ecosystem of Rewa district.** Madhya Pradesh biodiversity board. pg. 4.
5. Malviya Pankaj and Dwivedi Anjani Kumar (2015), **Physico-chemical parameters of Narmada river water: A review,** International Journal Of Chemical Studies, **3(2).**
6. Day Francis, F.L.S. and F.Z. S. **The fishes of India (1994),** Jagmander book agency, New Delhi, vol **1**.
7. Day Francis, F.L.S. and F.Z. S. **The fishes of India (1994) ,** Jagmander book agency, New Delhi, vol **2**.
8. Talwar P.K. and A.G. Jhingran (1991). **Inland fishes of india and adjacent countries**. Vol 1 and 2. Oxford and IBH publishing co. pvt. Ltd. New Delhi India
9. www.fishbase.org.
10. APHA (1998) **Standard methods for the examination of water and waste water** . 20th edition . Americal Public Health Association, Washington DC. 1193 pages.
11. Adoni A. D. , **Work Book On Limnology**, Bandana printing service**,** New Dehli 1985.
12. Paunikar Sanjay, Tiple Ashish, Jadhav S.S. and Talmale S.S,(2012). **Studies on Ichthyofaunal Diversity of Gour River, Jabalpur, Madhya Pradesh, Central India**. World Journal of Fish and Marine Sciences **4 (4)**: 356-359.
13. Yousuf Tawseef, Ibrahim Mujahib, Ahmad Javed and Vipin Vyas(2012**), Ichthyofaunal diversity of Halali reservoir, Vidisha, Madhya Pradesh.** International Journal Of Scientific and Research Publications, vol **2 (12).**
14. Bhargava S., R. Chouhan, H. Vinayak, and P. S.D. Shrivastava (2013), **Diversity of fishes in lower lake in relation to its ambient abiotic parameters.** Journal of Environmental science, computer science and engineering and Technology.**2(3),** 661-669.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Impact of Neem leaf extract on Beetle (Coccinella transversalis) on wheat crop in a particular area of Jabalpur

Soniya Vishwakarma and Dr. Krishna Pateria
Research Scholar, Department of Zoology, Govt. M.H. College Of Home Science & Science For Women, Jabalpur (M.P.) - 482001
Professor, Dept. of Zoology, Govt. P. G. College, Gadarwara (M.P.)
***Corresponding Author:**
Soniya Vishwakarma
Govt. M.H. College of Home Science & Science For Women Jabalpur (M.P.) India

Abstract :- Investigations were carried out during (2014-2015), at particular area (Kungwa) of Jabalpur. The extract of neem (Azadirachta indica) leaf extract was tested against Beetle (Coccinella transversalis) on wheat crop which is sown in 1.220 hectare area. The data was recorded at interval of 1,2,6,12,24,48,72,96 hours. It was observed that neem has potential of toxicity against Coccinella transversalis.

Keywords :– Neem leaf extract, Wheat, Kungwa.

Introduction :- Wheat is one of the most important cereal crop and staple food for the majority of human population. In country like India, wheat is the second important food crop and contributes about 35% of the total food grain production, thus a major contributor to the agrarian economy of the country. Wheat production in India ranks second internationally with 11.4% of the world's wheat production (Joshi and Sharma 2009). In field, wheat crop is attacked by more than a dozen of insect pests since sowing till harvesting. The ladybird beetles have been associated with good fortune in many myths and legends. They have been honored through the centuries as they vernacular indicate that the term 'Lady' is in reference to biblical Mother Mary (Roache, 1960). The ladybird beetles have been known worldwide as a predator of a number of insects. They are distributed in many countries of Asia, including India (Singh and Brar, 2004). They are the most commonly known of all beneficial insects. They are the great economic important as predaceous both in their larval and adult stages on various important crop pests such as aphids, coccids and other soft bodies insects including aphids (Hippa et al., 1978) while the species C. transversalis feed on many species of aphids (Mani,1995). This predaceous coccinellids is also found in association with those insects infesting beans, cotton, mustard, brinjal, groundnut and cabbage (Gautam et al., 1995). The aphid is one of the most destructive pests and its distribution is worldwide. Both adult and nymphs cause damage by sucking the sap from the flowers, buds, pods, tender shoots and reduce the market value of the product (Srivastava and Singh, 1986). At the time of infestation plants fail to give flowering and pods setting resulting in considerable yield loss (Islam, 2007).In India farmers use various insecticides to control the aphid. Insecticidal control is not only expensive but also its residues left over the sprayed surface of the crops or in the soil and have become a matter of concern of environmental pollution Lady bird beetles are round, oval or semi-circular in shape. They have variously coloured elytra with different typical bright markings which are also used as an aid for identification to the beetles up to some extent. Size of beetles goes up to 10 mm. It is predaceous usually on aphids, thrips, whiteflies, mites and lepidopteron eggs (Gordon, 1985; Hagen, 1987).. Coccinellidae is a family of order Coleoptera, which includes both predatory and polyphagous beetles. Predatory Beetles feed on aphids, scale insects, ticks and mites and acts a biological control agent to these pests of agriculture and forests significance.

Polyphagous bird beetles are herbivorous and acts as pests of crops. Bird Beetles (Coleoptera :Coccinellidae) are beneficial insects. About 6000 species of coccinilladae are known worldwide (Vandenberg 2002). 400 species have been listed from India (Daya, 2015). The coccinellid beetles are considered to be a great economic importance in agro-ecosystem through their successful employed in the biological control of many injurious insect (Agrawala and Dixon 1992). Pesticides have played an important role in enhancing crop yields through insect pest control. However, their improper and excessive use has been the major cause of serious health hazards. For dealing this problem, new chemistry insecticides have been introduced and some of them are plant based called "botanicals". These are commonly referred as plant botanicals which basically are the secondary plant metabolites synthesized by the plant for protective purposes. Control of aphids with synthetic insecticides is not desirable on wheat due to many bad effects like pesticide residues, destruction of predators and parasites, environmental pollution, destabilization of ecosystem and enhanced resistance to insecticides in pests. So, there is a need to explore eco-friendly and cost-effective control methods, the best one; botanicals (Bushra., A.) Plant products derived from neem (Azadirachta indica) contain biologically active components that may act as toxicant, repellent, antifeedent and growth disrupting substance on insect pests and are considered free from residual problems (Koul et al., 1990; Gujar ;1992) . Present investigation was carried out to study the impact of neem leaf extract on beetle (Coccinella transversalis) on wheat crop in a particular area of Jabalpur.

Material and method :- Plant material that was used in the experiment was leaves of Neem Plant. Material was dried for 2 weeks before extraction. The dried material was put into a grinder to make powder of 500 gram. Sample powder was taken and mixed with 1 liter of water for 24 hours. After 24 hours, the solution was filtered with the help of muslin cloth. After that divide it into four con.100ml pure extract, 100ml extract + 100 water, 1000ml extract + 100ml water, and 50 ml by boiling the extract we get it. Apply these con. on beetle by simple hands spray on the experimental field. Before spray and after spray beetle population was counted.

Table-

Showing Mortality of Coccinella transversalis

Treatments	Concentration	No. of beetles before spray	No. of beetles after spray	Time	Percent mortality
Neem leaf extract	100ml E(A)	10	9	7min	90 %
	100ml E+100 ml W(B)	10	7	7min	70%
	100mlE+200ml W(C)	10	6	7min	60%
	50ml E (100/2) (D)	10	8	7min	80%

E- Extract

W- Water

Treatments	Concentration	No. of beetles before spray	No. of beetles before spray	Time	Percent Mortality
Neem leaf extract	100ml E(A)	10	8	7min	80%
	100ml E+100mlW(B)	10	6	7min	60%
	100ml E+200mlW(C)	10	5	7min	50%
	50ml E (100/2) (D)	10	7	7min	70%

Treatments	Concentration	No. of beetles before spray	No. of beetles before spray	Time	Percent Mortality
Neem leaf extract	100ml E(A)	10	9	7min	90%
	100ml E+100mlW(B)	10	7	7min	70%
	100ml E+200mlW(C)	10	6	7min	60%
	100ml E+200mlW(C)	10	8	7min	80%

Result and Discussion :- Present study showed that among four neem leaf extracts con.100ml E(A) showed significant results. This con. Indicate high mortality of beetles and reduced the population of aphids. Remaining aphids were eaten by beetles so by this aphids population was managed. So we can conclude from this that predatory bird beetles are very good bio control agents used to control aphid. Rich coccinellids would help farmers to go for bio control to control aphids and scale insects etc. and would minimize the use of dangerous pesticides in the state. Soni et al., (2007) reported that Seven spotted lady bird beetle, C. transversalis is a potential feeder of wheat aphids and regulates aphid population significantly in the field .(Shah, 1985) discussed that about 90% of coocinellid species are considered beneficial because of their predatory activity, mainly against homopteran insect and polyphagus mites injurious to various agricultural and forests plants. The predator Coccinella transversalis Fab. bas been reported to feed on 15 different aphid species in India and considered as an important natural bio-control agent of aphids (Rao, 1969; Tao and Chiu, 1971; Singh and Singh, 1985; Ghosh and Chakrabarti, 1986). Agarwala and Saba (1986) investigated the larval voracity and development of this predator feeding on Aphis gossypii infesting cotton.

Conclusion :- The Predatory Bird Beetles are very good bio control agents used to control aphids and scale insects specially Coccinellids of the state. Rich coccinellids would help farmers to go for bio control to control aphids and scale insects etc. and would minimize the use of dangerous pesticides in the state.

References :-

1. Agrawala, R.K. and Dixon A.F.G. (1992).Laboratory study of cannibalism and inter-specific predation in ladybirds.Ecological Entomological Entomology, 17 (3): 303-330.

2. Bushra, A.Toxicity of selected plant extracts against wheat aphid and its predators.

3. Daya, H.N. (2015).Exploration of Coccinellidae (Coleoptera : Coccinellidae) Fauna of different

ecosystem in Champai District of Mizoram state ,North East India.vol.3(5),21-24.

4. Gorden, R.D., 1985: The Coccinellidae (Coleoptera) of America north of Mexico .J.N.Y. Entomol.Soc.93, 1-912.

5. Gujar, G.T., Biological effects of azadirachtin and plumbagin on Helicoverpa armigera, Indian J Entomol, 1992, 59(4), 415-422.

6. Hagen, K.S., (1987).,Nutritional ecology of terrestrial insect predaters.In: Nutritional Ecology of Insects, Mites,Spiders, and Related Invertebrates .Ed. by Slansky, F.;Rodreiguez, J. G. New York : John Wiley & Sons, 533-577.

7. Joshi, N.K. and Verma, V.K. (2009) .,Efficacy Imidacloprid (Confidor 200 SL) against aphids infesting wheat crop.

8. Kou,l O. Isman, M.B. and Ketkar C.M. ,Properties and use of neem, Azadirachta indica,Can J Bot, 1990, 68, 1-11.

10. Vandenber, N.J. (2002)., Coccinellidae Lattreille 1807.In America Beetles .Volume 2.Polyphaga: Scarabaeoidea through Curulionoidea.pp.371-389.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Jurisdiction of Civil Court under Section 9 of Civil Procedure Code, 1908

Sharad Sahu
Law Dept. R.D.V.V Jabalpur

The term Jurisdiction owes its etymological origin to the Latin words juris meaning "law" and dicere meaning "to speak". Jurisdiction is the practical authority granted to a formally constituted legal body or to a political leader to deal with and make pronouncements on legal matters and, by implication, to administer justice within a defined area of responsibility. The term is also used to denote the geographical area or subject-matter to which such authority applies.

The CPC does not define the term jurisdiction. In fact, none of the substantive or procedural laws seeks to define the term "jurisdiction". Black's Law Dictionary defines "jurisdiction" as "A court's power to decide a case or issue a decree." The Calcutta High Court in a full bench judgment in ***Hirday Nath v. Ram Chandra***[1] sought to explain the term jurisdiction. It stated "... jurisdiction may be defined to be the power of Court to hear and determine a cause, to adjudicate and exercise any judicial power in relation to it; in other words, by jurisdiction is meant the authority which a court has to decide matters presented in a formal way for its decision."

The District Court exercises jurisdiction both on original and appellate side in civil and criminal matters arising in the District. The territorial and pecuniary jurisdiction in civil matters is usually set in concerned state enactments on the subject of civil courts. On the criminal side jurisdiction is almost exclusively derived from code of criminal procedure. This code sets the maximum sentence which a district court may award which currently is capital punishment.[2]

The court exercises appellate jurisdiction over all subordinate courts in the district on both civil and criminal matters. These subordinate courts usually consist of a Junior Civil Judge court, Principal Junior civil Judge court, Senior civil judge court (often called sub court) in the order of ascendancy on the civil side and the Judicial Magistrate Court of II Class, Judicial Magistrate Court of I class, Chief Judicial Magistrate Court in the order of ascendancy on the criminal side.[3]

Certain matters on criminal or civil side cannot be tried by a court inferior in jurisdiction to a district court if the particular enactment makes a provision to the effect. This gives the District Court original jurisdiction in such matters.

Appeals from the district courts lie to the High court of the concerned state.

Jurisdiction of Civil Courts in India:

There are three categories of jurisdiction-

- ***pecuniary jurisdiction***, i.e. whether the court can hear a suit of the value of the suit in question.
- ***territorial jurisdiction***, i.e. whether the court can decide upon matters within the territory or area where the cause of action arose; and
- ***subject matter jurisdiction***, i.e. whether the particular court in question has the jurisdiction to deal with the subject matter in question[4];

---

[1] AIR 1921 Cal. 34.
[2] Shradha Ojha, Jurisdiction of Civil Courts under CPC, Legal Services India, http://www.legalservicesindia.com/article/article/jurisdiction-of-civil-court-under-civil-procedure-code-508-1.html
[3] Supra note 2
[4] LawTeacher.net <https://www.lawteacher.net/free-law-essays/jurisprudence/jurisdiction-of-civil-courts-in-india.php>

Pecuniary/Monetary Jurisdiction:

Pecuniary jurisdiction of the court divides the court on a vertical basis.

At present the pecuniary jurisdiction of the District courts in Madhya Pradesh is as follows:

- Suits amounting to Rs.1 - Rs. 20, 00,000 lie before district courts.
- Suits over and above Rs. 20,00,000/- lie before High Courts.

It is very important to note that the amount of pecuniary jurisdiction is different for all High Courts. This limit is decided by respective High Court Rules.

In many states High court has no pecuniary jurisdiction. All civil suits go before District Courts, and only appeal lies before High Court.

Territorial Jurisdiction :

Territorial Jurisdiction divides the courts on a horizontal basis.

District Courts :

For example in Delhi, there are three District level courts, viz. Patiala House, Tis Hazari and Karakardooma. All these courts have nearly same powers. However, being on a same horizontal line, these courts are divided territory wise, i.e. area wise. Again for example, cases pertaining to South Delhi, New Delhi and West Delhi will lie before Patiala House, and North Delhi cases will lie before Tis Hazari, and cases pertaining to East Delhi will lie before Karakardooma.

High Court :

Similarly High Court of two different states, say Delhi, and Punjab may have similar powers in their respective states, but are divided on the basis of area. Cases pertaining to Delhi will lie before Delhi High court and cases pertaining to Punjab will lie before Punjab High Court.

How Is Territory Decided?

Territory of a court is decided after taking into account several factors. They are:

<u>In Case of Immovable Property:</u>

If the suit is with regard to recovery, rent, partition, sale, redemption, determination of right of immovable property, it shall be instituted in the court within the local limits of whose jurisdiction the property is situated.

<u>Immovable Property Situated Within The Jurisdiction of Different Courts:</u> In such a case the suit may be instituted in any court within the local limits of whose jurisdiction any portion of the property is situated.

<u>In Case Of Dispute Between Two Or More Persons With Respect To Movable Property, Business Or Any Other Wrong Done:</u>

Where a wrong has been caused to a person, or any damage has been caused to a movable property, then the suit may be instituted either,

- In the place, where wrong or damage has been caused, or
- In the place, where defendant (the person who caused the loss) resides.

Where there is a dispute in business, agreement or any other kind of civil dispute, except matrimonial matter, then the suit may be instituted either,

- In a place, where the defendant resides, or carries on business, or
- In a place, where the cause of action has arisen, i.e. where the dispute or wrong took place

<u>In Case of Matrimonial Dispute:</u>

Where a dispute arises between Husband and wife in regard to their marital life then the case may be filed either:

- In the place where marriage was solemnized, or ;

- In the place, where opposite party is residing, or;
- In the place, where Husband and Wife last resided together, or;
- In the place, where person filing the case is residing, provided that -Opposite party has not been heard of as alive for the last Seven years, or Opposite party resides outside the jurisdiction of Hindu Marriage Act 1955.

Courts may also have jurisdiction that is exclusive, or concurrent (shared). Where a court has exclusive jurisdiction over a territory or a subject matter, it is the only court that is authorized to address that matter. Where a court has concurrent or shared jurisdiction, more than one court can adjudicate the matter.

Subject Matter Jurisdiction:

Subject-matter jurisdiction is the authority of a court to hear cases of a particular type or cases relating to a specific subject matter. Certain courts are precluded from entertaining suits of particular classes by status. Thus, a small cause court can try only such suits as a suit for money due on account of an oral loan or under a bond or promissory note, a suit for price of work done, etc., but it has no jurisdiction to try suits for specific performance of contracts for a dissolution of partnership, for an injunction or suits relating to immovable property.

Jurisdiction of Civil Court under section 9 of Civil Procedure Code:

Section 9 of CPC deals with the jurisdiction of civil courts in India. It provides that the courts shall have jurisdiction to try all suits of a civil nature excepting suits of which their cognizance is either expressly or impliedly barred.

Section 9 of the CPC reads

"Courts to try all civil suits unless barred- The Court shall (subject to the provisions herein contained) have jurisdiction to try all suits of a civil nature excepting suits of which their cognizance is either expressly or impliedly barred.

Explanation I-

A suit in which the right to property or to an office is contested is a suit of a civil nature, notwithstanding that such right may depend entirely on the decision of questions as to religious rites or ceremonies.

Explanation II-

For the purposes of this section, it is immaterial whether or not any fees are attached to the office referred to in Explanation I or whether or not such office is attached to a particular place."

The section clearly allows for the legislature by statute to expressly bar the jurisdiction of the Civil Courts. The general rule however is that the presumption would be made in favour of the existence of a right to sue in a civil court, the exclusion of the same being an exception.[5]

Essential Conditions:

A civil court has jurisdiction to try a suit if two conditions are fulfilled:

a) The suit must be of a civil nature; and
b) The cognizance of such a suit should not have been expressly or impliedly barred.

A. ***Suit of civil nature***

i. Meaning: In order that a civil court may have jurisdiction to try a suit, the first condition which must be satisfied is that the suit must be of a civil nature. The word 'civil' has not been defined in the code. But according to the dictionary meaning, it pertains to private rights and remedies of a citizen as distinguished from criminal, political, etc. the word 'nature' has been defined as 'the fundamental qualities of a person or thing; identity or essential character; sort, kind, character''. It is thus wider in content. The expression 'civil nature' is wider than the expression 'civil proceedings'. Thus, a suit is of a civil is of a nature if the principal question therein relates to the determination of a civil right and enforcement thereof. It is not the

[5] Supra note 4.

status of the parties to the suit, but the subject matter of it which determines whether or not the suit is of a civil nature.[6]

ii. Nature and scope- the expression "suit of a civil nature" will cover private rights and obligations of a citizen. Political and religious questions are not covered by that expression. A suit in which the principal question relates to caste or religion is not a suit of a civil nature. But if the principal question in a suit is of a civil nature (the right to property or to an office) and the adjudication incidentally involves the determination relating to a caste question or to religious rights and ceremonies, it does not cease to be a suit of a civil nature and the jurisdiction of a civil court is not barred. The court has jurisdiction to adjudicate upon those questions also in order to decide the principal question which is of a civil nature. Explanation II has been added by the amendment act of 1976. Before this explanation, there was a divergence of judicial opinion as to whether a suit relating to a religious office to which no fees or emoluments were attached can be said to be a suit of a civil nature. But the legal position has now been clarified by explanation II which specifically provides that a suit relating to a religious office is maintainable whether or not it carries any fees or whether or not it is attached to a particular place.[7]

iii. Doctrine explained- explaining the concept of jurisdiction of civil courts under section 9, in ***PMA Metropolitan v. M.M. Marthoma***[8], the Supreme Court stated:

"the expensive nature of the section is demonstrated by use of phraseology both positive and negative. The earlier part opens the door widely and latter debars entry to only those which are expressly or impliedly barred. The two explanations, one existing from inception and later added in 1976, bring out clearly the legislative intention of extending operation of the section to religious matters where right to property or office is involved irrespective of whether any fee is attached to the office or not. The language used is simple but explicit and clear. It is structured on the basic of a civilized jurisprudence that absence of machinery for enforcement of right renders it nugatory. The heading which is normally a key to the section brings out unequivocally that all civil suits are cognizable unless bared. What is meant by it is explained further by widening the ambit of the section by use of the word 'shall' and the expression 'all suits of a civil nature unless expressly or impliedly barred'.

Each word and expression casts an obligation on the court to exercise jurisdiction for enforcement of rights. No court can refuse to entertain a suit if it is of the description mentioned in the section. That is amplified by the use of the expression. 'all suits of civil nature'. The word civil according to the dictionary means, relating to the citizen as an individual; civil rights.' In Black's legal dictionary it is defined as, 'relating to provide rights and remedies sought by civil actions as contrasted with criminal proceedings'. In law it is understood as an antonym of criminal. Historically the two broad classifications were civil and criminal. Revenue, tax and company etc. were added to it later. But they too pertain to the larger family of civil. There is thus no doubt about the width of the word civil. Its width has been stretched further by using the word nature along with it. That is even those suits are cognizable which are not only civil but are even of civil nature….The word 'nature' has defined as 'the fundamental qualities of a person or thing; identity or essential character, sort;kind;charachter'. It is thus wider in content. The word 'civil nature' is wider that the word 'civil proceeding'. The section would, therefore, be available in every case where the dispute was of the characteristics of affecting one's rights which are not only civil but of civil nature."

iv. Test: a suit in which the right to property or to an office is contested is a suit of a civil nature, notwithstanding that such right may depend entirely on the decision of a question as to religious rites or ceremonies.

[6] Supra note 2.
[7] ibid
[8] AIR 1995 SC 2001 (2022-23)

v. Suits of civil nature: illustrations- the following are suits of a civil nature.

1. suits relating to rights to property;

2. suits relating to rights of worship;

3. suits relating to taking out of religious procession;

4. suits relating to right to share in offerings;

5. suits for damages for civil wrongs;

6. suits for specific performance of contracts or for damages for breach of contracts;

7. suits for specific reliefs etc.

vi. suits not of civil nature- illustrations- the following are not suits of a civil nature:

1. suits involving principally caste questions;

2. suits involving purely religious rites or ceremonies;

3. suits for upholding mere dignity or honor;

4. suits for recovery of voluntary payments or offerings;

5. suits against expulsions from caste, etc.

i. Suits expressly barred- a suit is said to be 'expressly barred' when it is barred by any enactment for the time being in force. It is open to a competent legislature to bar jurisdiction of civil courts with respect to a particular class of suits of a civil nature, provided that, in doing so, it keeps itself within the field of legislation conferred on it and does not contravene any provision of the constitution.

If there is any doubt about the ousting of jurisdiction of a civil court, the court will lean to an interpretation which would maintain the jurisdiction. Thus, matters falling within the exclusive jurisdiction of revenue courts or under the code of criminal procedure or matters dealt with by special tribunals under the relevant statutes, e.g. by industrial tribunal, income tax tribunal, revenue tribunal, electronic tribunal, rent tribunal, cooperative tribunal, motor accident claims tribunal, etc. or by domestic tribunals, e.g. Bar Council, Medical Council, university, club etc. are expressly barred from the cognizance of a civil court. But if the remedy provided by a statute is not adequate and all questions cannot be decided by a special tribunal, the jurisdiction of a civil court is not barred. Similarly, when a court of limited jurisdiction prima facie and incidentally states something, the jurisdiction of a civil court to finally decide the time is not ousted.

ii. Suits impliedly barred- a suit is said to be impliedly barred when it is barred by general principles of law.

Where a specific remedy is given by a statute, it thereby deprives the person who insists upon a remedy of any other form than that given by the statute. Where an act creates an obligation and enforces its performance in a specified manner, that performance cannot be enforced in any other manner.

Presumption as to jurisdiction

In dealing with the question whether a civil court's jurisdiction to entertain a suit is barred or not, it is necessary to bear in mind that every presumption should be made in favor of the jurisdiction of a civil court. The exclusion of jurisdiction of a civil court to entertain civil causes should not be readily inferred unless the relevant statute contains an express provision to that effect, or leads to a necessary and inevitable implication of the nature.

Burden of proof

It is well- settled that it is for the party who seeks to oust the jurisdiction of a civil court to establish it. It is equally well settled that a statute ousting the jurisdiction of a civil court must be strictly construed. Where such a contention is raised, it has to be determined in the light of the words used in the statute, the scheme of the relevant provisions and the object and purpose of the

enactment. In the case of a doubt as to jurisdiction, the court should lean towards the assumption of jurisdiction. A civil court has inherent power to decide the question of its own jurisdiction; although as a result of such inquiry it may turn out that it has no jurisdiction to entertain the suit.

Exclusion of jurisdiction: limitations

A litigant having a grievance of a civil nature has, independent of any statute, a right to institute a suit in a civil court unless its cognizance is either expressly or impliedly barred. The exclusion of the jurisdiction of a civil court is not to be readily inferred and such exclusion must be clear.

Again, even when the jurisdiction of a civil court is barred, either expressly or by necessary implication, it cannot be said that the jurisdiction is altogether excluded. A court has jurisdiction to examine whether the provisions of the act and the rules made there under have or have not been complied with, or the order is contrary to law, malafide, ultra vires, perverse, arbitrary, 'purported', violative of the principles of natural justice, or is based on 'no evidence' and so on. In all these cases, the order cannot be said to be under the act but is de hors the act and the jurisdiction of a civil court is not ousted. In the leading decision of ***Secretary of State v. Mask & Co.***[9]***,*** the Privy Council rightly observed:

"it is settled law that the exclusion of the jurisdiction of the civil court is not to be readily inferred, but that such exclusion must either be explicitly expressed or clearly implied. It is also well established that even if jurisdiction is so excluded the civil courts have jurisdiction to examine into cases where the provisions of the act have not been complied with, or the statutory tribunal has not acted in conformity with the fundamental principles of judicial procedure."

Principles relating to exclusion of jurisdiction:

From the above discussion it is clear that the jurisdiction of civil courts is all- embracing except to the extent it is excluded by law or by clear intendment arising from such law.

In the classic decision of ***Dhulabhai v. State of M.P***.[10], after considering a number of cases, Hidyatullah, C.J. summarized the following principles relating to the exclusion of jurisdiction of civil courts:

- Where a statute gives finality to orders of special tribunals, the civil courts jurisdiction must be held to be excluded if there is adequate remedy to do what the civil courts would normally do in a suit. Such a provision, however, does not exclude those cases where the provisions of a particular act have not been complied with or the statutory tribunal has not acted in conformity with fundamental principles of judicial procedure.
- Where there is an express bar of jurisdiction of a court, an examination of the scheme of a particular act to find the adequate or sufficiency of the remedies provided may be relevant but this is not decisive for sustaining the jurisdiction of a civil court.
- Where there is no express exclusion, the examination of the remedies and the scheme of a particular act to find out the intendment becomes necessary and the result of the inquiry may be decisive. In the latter case, it is necessary to see if a statute creates a special right or a liability and provides for the determination of the right or liability and further lays down that all questions about the said right and liability shall be determined by tribunals so constituted, and whether remedies normally associated with actions in civil courts are prescribed by the said statute or not.
- challenge to the provisions of a particular act as ultra vires cannot be brought before tribunals constituted under that act. Even the

[9] AIR 1940 PC 105.

[10]

high court cannot go into that question on a revision or reference from decisions of tribunals.

- When a provision is already declared unconstitutional or the constitutionality of any provisions is to be challenged, a suit is open. A writ of certiorari may include a direction for refund if the claim is clearly within the time prescribed by the limitation act but it is not a compulsory remedy to replace a suit.
- Where the particular act contains no machinery for refund of tax collected in excess of constitutional limits or is illegally collected, a suit lies.
- Questions of the correctness of an assessment, apart from its constitutionality, are for the decision of the authorized and a civil suit does not lie if the orders of the authorities are declared to be final or there is an express prohibition in a particular act. In either case, the scheme of a particular act must be examined because it is a relevant enquiry.
- An exclusion of jurisdiction of a civil court is not readily to be inferred unless the conditions above set down apply.

The above principles enunciated are relevant in deciding the correctness or otherwise of assessment orders made under taxing statutes.

In ***Chandrakant Tukaram v. Municipla Corporation of Ahmedabad***[11]***,*** the Supreme Court reiterated the principles laid down in earlier decisions and stated:

"it cannot be disputed that the procedure followed by civil courts are too lengthy and, consequently, are not an efficacious forum for resolving the industrial disputes speedily. The power of the industrial courts also is wide and such forums are empowered to grant adequate relief as they just and appropriate. It is in the interest of the workmen that their disputes, including the dispute of illegal termination, are adjudicated upon by an industrial forum."

General principles :

From various decisions of the Supreme Court, the following general principles relating to jurisdiction of a civil court emerge:

a. a civil court has jurisdiction to try all suits of a civil nature unless their cognizance is barred either expressly or impliedly.

b. Consent can neither confer nor take away jurisdiction of a court.

c. A decree passed by a court without jurisdiction is a nullity and the validity thereof can be challenged at any stage of the proceedings, in execution proceedings or even in collateral proceedings.

d. There is a distinction between want of jurisdiction and irregular exercise thereof.

e. Every court has inherent power to decide the question of its own jurisdiction.

f. Jurisdiction of a court depends upon the averments made in a plaint and not upon the defence in a written statement.

g. For deciding jurisdiction of a court, substance of a matter and not its form is important.

h. Every presumption should be made in favour of jurisdiction of a civil court.

i. A statute ousting jurisdiction of a court must be strictly construed.

j. Burden of proof of exclusion of jurisdiction of a court is on the party who asserts it.

k. Even where jurisdiction of a civil court is barred, it can still decide whether the provisions of an act have been complied with or whether an order was passed de hors the provisions of law.

Conclusion :

From the above discussion it can be concluded that section 9 at 'the threshold of the Civil Procedure Code (C.P.C.) primarily deals with the

[11] (2002) 2 SCC 542.

question of civil court's jurisdiction to entertain a cause. It lays down that subject to what are contained in section 10,11, 12, 13, 47, 66, 83, 84, 91, 92, 115, etc., civil court has jurisdiction to entertain a suit of civil nature except when its cognizance is expressly barred or barred by necessary implication. Civil court has jurisdiction to decide the question of its jurisdiction although as a result of the enquiry it may eventually turn out that it has no jurisdiction over the matter. Hence it is clear that the jurisdiction of the Civil Court does not extend to all matters but might be limited in certain cases. However it has "inherent" jurisdiction to try all suits of a civil nature in the absence of any exclusion of the same. However the author hopes that the Apex Court comes out clarifying the situation with the case regarding the jurisdiction of a Civil Court in which its jurisdiction is partly barred, expressly or impliedly and where a part of it is not.

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

'बालाघाट जिले में स्वतंत्रता संग्राम पर भू–राजस्व व्यवस्था का प्रभाव'

(सन् 1900 ई. से 1947 ई. तक)

आशीष कुमार भीमटे
शोध छात्र, इतिहास विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना : बालाघाट जिले के स्वतंत्रता संग्राम पर भू–राजस्व व्यवस्था का व्यापक प्रभाव हुआ ब्रिटिश शासन काल से भू–राजस्व व्यवस्था में किए गए परिवर्तनों का ग्रामीण अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। इन परिवर्तनों ने भूमि को निजी सपत्ति में बदल दिया निजी संपत्ति के रूप में अब जमीन का क्रय विक्रय होना, गिरवी रखा जाना तथा बेदखली बड़े पैमाने पर आरंभ हो चुका था। इस तरह भूमि के पण्य (ब्वउउवकपजल) में बदलकर गाँवों में पूंजीवाद के प्रवेश के लिए आधार तैयार कर दिया गया।[1]

भू–राजस्व व्यवस्था के परिवर्तनों ने ग्रामीण क्षेत्र के सामाजिक ढाँचें को भी प्रभावित किया।[2] इसके फलस्वरूप कुछ नये सामाजिक वर्ग उत्पन्न हुए पूर्व के जमींदार वर्ग के साथ ही स्थायी बंदोबस्त द्वारा पैदा किये गये नये जमींदार वर्ग जिसका एक भाग गैर काश्तकार जमींदार के रूप में था सामने आया।[3] बालाघाट जिले के उत्तरपूर्वी क्षेत्रों में जहाँ रैयतवारी व्यवस्था थी, इन क्षेत्रों में काश्तकार भू–स्वामी का विकास हुआ।

गाँवों में पट्टेदारों, छोटे किसानों तथा खेत मजदूरों की संख्या भी बढ़ने लगी। भू–राजस्व के नगद भुगतान तथा कृषकों की बढती गरीबी ने सूदखोरों महाजनों को विशेष महत्त्व का बना दिया था।[4] बालाघाट जिले में भू–राजस्व व्यवस्था का ब्रिटिश कालीन स्वरूप क्रम विकास के अनुरूप ही क्यों न रहा हो सरकार ने उपज में अपनी मांगों को बहुत ऊँचा रखा था। इससे कृषकों का आर्थिक शोषण ही नहीं किया अपितु कृषि उपज के अधिशेष को लगभग पूरा ही हड़पकर कृषि के क्षेत्र में उन्नति की संभावनाओं का अंत कर दिया और इस प्रकार की स्थिति ने जिले के कृषकों को राष्ट्रीय स्वतंत्रता की ओर अग्रसर कर दिया।[5]

अध्ययन क्षेत्र : अध्ययन क्षेत्र हेतु मध्यप्रदेश के जबलपुर संभाग के दक्षिणी भाग में स्थित बालाघाट जिले का चयन किया गया है।

शोध प्रविधि : प्रस्तुत शोध पत्र हेतु प्राथमिक स्रोत एवं द्वितीयक स्रोत का प्रयोग किया गया।

बालाघाट जिले में स्वतंत्रता संग्राम पर भू–राजस्व व्यवस्था का प्रभाव :

बालाघाट जिले में भू–राजस्व की ऊँची दरे, वसूली की कठोर प्रक्रिया, ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन, सूदखोरी की लगातार बढ़ती स्थिति एवं राष्ट्रीय विचारधारा ने मिलकर जिले को राष्ट्रीय स्वतंत्रता की ओर प्रेरित किया।

बालाघाट जिला सन् 1915 से ही स्वतंत्रता की गतिविधियों से जुड़ चुका था। इसके बाद जिले में गांधीजी के आगमन ने स्वतंत्रता की धारा को और तेज कर दिया। गाँधीजी 28 नवम्बर 1933 ई. को बालाघाट आए थे। गांधीजी की बालाघाट यात्रा ने बालाघाट जिले में स्वतंत्रता के लिए नया उत्साह भर दिया था। जिला पुनः सक्रियता से स्वतंत्रता की हर गतिविधियों में सम्मिलित होने लगा।[6]

बालाघाट जिला पूर्णतः कृषि प्रधान होने से यहाँ राष्ट्रीय मूल की विचारधारा कृषकों पर आधारित थी। जिले के नेतृत्वकर्ता और कार्यकर्त्ता कृषकों के संगठन का आह्वान राष्ट्रीय विचारधारा के अनुरूप कर रहे थे। इस समय जिले में जमींदारो प्रथा, अकाल, बेगार प्रथा, ऋणग्रस्तता, खेती तथा मजदूरों की लगातार बिगड़ती स्थिति ने कृषकों को आक्रोधित कर रखा था। जिले में जमींदारों के बढ़ते प्रभाव एवं सरकार की भू–राजस्व वसूली प्रक्रिया ने कृषकों की स्थिति को और भी निम्न कर दिया था।

बालाघाट जिले की प्रमुख जमींदारी क्षेत्र जैसे हट्टा, लांजी, धनसुआ आदि की जमींदारी व्यवस्था महाराष्ट्र के भण्डारा जमींदारी क्षेत्र से संचालित थे जिले के इन जमींदारी क्षेत्रों में जमींदारों के बढ़ते शोषण एवं अत्यधिक कृषकों की ऋणग्रस्तता की स्थिति ने जिले को बुरी तरह पभावित किया।

सन् 1917–18 में बालाघाट जिला मूल्यवृद्धि तथा कृषि उत्पादन में कमी की दोहरी मार का शिकार हुआ था।[7] इस समय मूल्यवृद्धि की समस्या देश के सभी क्षेत्रों में व्याप्त थी। कृषकों की लगातार बिगड़ती स्थिति एवं कृषक वर्ग के लगातार विरोध के फलस्वरूप 22 मार्च 1918 से गाँधीजी ने कृषक समस्या को अपने आंदोलनों में जगह दी राष्ट्रव्यापी आंदोलन में कृषक समस्याएँ जुड़ने से आंदोलन की रफ्तार और तेज हुई। सन् 1918 के बाद से बालाघाट जिले के कृषक भी इस राष्ट्रव्यापी आंदोलनों से जुड़ गये और स्वतंत्रता प्राप्ति (1947 ई.) तक राष्ट्रीय आंदोलन की धारा प्रवाह में लगातार बने रहे।

सन् 1929 ई. की आर्थिक मंदी ने बालाघाट जिले को दो तरह से प्रभावित किया था सामान्यतः कृषि उत्पादों की कीमतें काफी गिर गई थी और जिले के निर्यात में कमी आई थी। यद्यपि कृषि उत्पादों की कीमतें 1926 ई. से ही गिरनी शुरू हो गई थी लेकिन तीव्र गति से गिरावट 1929 ई. से शुरू हुई तथा यह स्थिति सन् 1934 ई. तक बरकरार रही।[8] आर्थिक मंदी का राजस्व और ब्याज के भुगतान पर भी बुरा असर पड़ा। किसान इससे बुरी तरह प्रभावित थे उन्हें कुछ छूट के कारण राहत मिल गई लेकिन जो मध्यमवर्गीय कृषक था उसे कुछ न कुछ बेचकर भू–राजस्व और कर्ज का भुगतान करना पड़ा था।

सन् 1937–39 के वर्षों में किसान आंदोलनों का तेजी से विकास हुआ। मध्यप्रान्त की तत्कालीन सरकार ने भी कृषि कानून में सुधार के लिए कुछ ठोस कदम उठाने को प्ररित हुए।[9] कृषकों के जन आंदोलन में बढ़ते प्रभावों का यह एक स्पष्ट प्रमाण था।

प्रसिद्ध इतिहासकार विपिनचन्द्र का मानना है कि – किसान आंदोलनों का उदय और विकास राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा रहा।[10] वह इंगित करते है कि किसान आंदोलन उन्हीं क्षेत्रों में उमड़े जहाँ पर राष्ट्रीय आंदोलन पहले से स्थापित हो गया था। स्पष्ट है कि कृषक आंदोलन की मूलविचारधारा भी राष्ट्रीयता पर आधारित थी। बालाघाट जिले में सन् 1915 से इसकी शुरूआत हो चुकी थी, इनके नेता और कार्यकर्ता किसानों के संगठन का संदश ही नहीं फैला रहे थे बल्कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने की जरूरत पर भी बल दे रहे थे।

बालाघाट जिले में काश्तकारों के साधनों का स्तर मात्र भरण–पोषण तक ही सीमित रह गया था और उनका शोषण भी निरंतर जारी था। जमींदारों के राजस्व वसूली की व्यवस्था से संलग्न हो जाने के पश्चात् तो कृषि क्षेत्र में विस्तार तथा उन्नति का कार्य भी वस्तुतः उन्हीं पर आधारित हो गया क्योंकि वे बहुधा काश्तकारों के लिए जमानती थे। काश्तकारों का भूमि छोड़कर भागने और विद्रोह करने की प्रकृति के संदर्भ में काश्तकारों का समन्वित अस्तित्व प्रतीत होता है।[11]

जिले के ग्राम्य समाज में स्तरीकरण काफी बड़े पैमाने पर था और विभिन्न वर्गों की स्थिति एवं विशेष अधिकारों में व्यापक अंतर था। भूमि और काश्तकार का अनुपात अनुकूल स्तर का था जो ग्राम स्तर पर जाति एवं वर्ग की भूमिका को और भी महत्वपूर्ण बनाता था।[12] इसके अतिरिक्त गांवों में भूमिहीन मजदूरों की उपस्थिति भारी मात्रा में थी।

ब्रिटिश सरकार ने जमींदारों की शक्ति को सीमित करने का प्रयास किया और इस वर्ग से लाभ भी उठाया, इन दोनों के हितों ने एवं असमानता ने विवाद को और अधिक बढ़ा दिया था। लगातार बढ़ते कृषक असंतोष ने इनके अंदर विद्रोह का स्वरूप ले लिया जिसका लाभ जमींदारों द्वारा उठाया गया। इन कृषक विद्रोहों का नेतृत्व जमींदारों द्वारा किया जाने लगा जिनके उद्देश्य जमींदारी क्षेत्र में विस्तार, स्वायत्य राज्य की स्थापना एवं भू–राजस्व पर रोक रखना आदि थे।[13] इन विद्रोहों को वहाँ अधिक बल मिला जहाँ कृषक अधिक सम्पन्न थे। इस प्रकार के क्षेत्र बालाघाट जिले में वारासिवनी तहसील तथा बालाघाट तहसील के क्षेत्र थे।

बालाघाट जिला पूर्णतः कृषि प्रधान होने से यहाँ राष्ट्रीय मूल की विचारधारा कृषको पर आधारित थी। जिले के नेतृत्वकर्ता एवं कार्यकर्ता कृषकों के संगठनों का आह्वान राष्ट्रीय विचारधारा के अनुरूप कर रहे थे।

बालाघाट जिले में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक राजस्व की नगद दरों में वृद्धि मूल्य वृद्धि के अनुपात में बनी रही। जमींदारों की स्थिति को सीमित कर दिया गया जिससे जमींदारों और

सरकार के बीच प्रतिरोध बढ़ा।[14] राजस्व जमा की राशि में वृद्धि कर के अदायगी के दावों में वृद्धि की गई किन्तु हासिल की मांग पूर्ववत ही रही जिससे भू–राजस्व की मांग और जमा का संतुलन सामान्य नहीं रहा इसके परिणाम स्वरूप ही काश्तकारी में भी कमी दिखाई दी।

जिले में यह स्थिति स्वतंत्रता प्राप्ति तक बनी रही। इस अनुरूप बालाघाट जिले में स्वतंत्रता संग्राम पर भू–राजस्व का प्रभाव परिलक्षित होता है।

सारांश : बालाघाट जिले की आय का प्रमुख साधन भू–राजस्व था। जिले में मालगुजारी प्रथा जारी थी भूमि का मापन, भूमि का निर्धारण, राजस्व का निर्धारण, उपज के रूप में निर्धारित भू–राजस्व का नगदी में परिवर्तन एवं भू–राजस्व के संग्रहण का तरीका प्रचलित था। निर्धारित भू–राजस्व हमेशा वसूले गए भू–राजस्व से अधिक होता था। इसका मुख्य कारण भू–राजस्व का अधिक निर्धारण था।

जिले में उपज की तुलना में भू–राजस्व की मांग सभी क्षेत्रों में एक समान नही होती थीं। जागीर तथा खालसा क्षेत्रों में भू–राजस्व प्रशासन का स्वरूप एक जैसा ही था तथा मालगुजारी क्षेत्रों में मालगुजारी निर्धारण एवं वसूली के मामलों में विनिमय पूरी तरह से लागू किये जाते थे। रैती ग्रामों के रैयत जमींदारी को मालगुजारी के हस्तांतरणीय अधिकार थे, जो रियाया को नही थे एवं ताल्लुकदारों को मालगुजारी के मामलों में रैती ग्रामों को शामिल करने की अनुमति नहीं थी।[15]

भू–राजस्व व्यवस्था का स्वरूप कुछ भो क्यों न रहा हो सरकार ने उपज में अपनी मांगों को बहुत ऊँचा रखा था, इससे कृषकों का आर्थिक शोषण ही नहीं किया अपितु कृषि उपज के अधिशेष को लगभग पूरा ही हड़पकर कृषि के क्षेत्र में उन्नति की संभावनाओं का अंत कर दिया था। ब्रिटिश कालीन भू–राजस्व व्यवस्था का स्वरूप जिले में क्रम विकास के अनुरूप रहा, लेकिन सरकार ने उपज में अपनी मांगों को बहुत ऊँचा रखकर कृषकों के आर्थिक हितों को काफी प्रभावित किया।

ब्रिटिश कालीन बालाघाट जिले में भू–राजस्व की ऊँची दर, वसूली की कठोर प्रक्रिया, जमींदारी प्रथा, अकाल, बेगार प्रथा, खेतिहर मजदूरों की लगातार बढ़ती एवं बिगड़ती स्थिति, ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन, सूदखोरी की लगातार बढ़ती स्थिति तथा जिले में अलग–अलग बंदोबस्त व्यवस्थाओं ने कृषकों को लंबे समय से आक्रोशित कर रखा था। इसके परिणाम स्वरूप जिले में भू–राजस्व की मांग और जमा का संतुलन असामान्य हो गया और सबसे अधिक प्रभाव काश्तकारी पर पड़ा कृषक अब राष्ट्रीय स्वतंत्रता की धाराओं में सम्मिलित होने लगे थे। सन् 1900 से 1947 तक जिले की भू–राजस्व व्यवस्था के स्वरूप ने जिले में स्वतंत्रता संग्राम की धारा को और अधिक तीव्र कर दिया था।

इस प्रकार बालाघाट जिले में स्वतंत्रता संगाम पर भू–राज्स्व व्यवस्था का प्रभाव दिखाई देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. के.एच. दत्ता – रिपोर्ट, पृ. 55–56
2. आर.के. मुखर्जी – इकॉनामिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया (1600–1800) पृ. 45–50
3. चार्ल्स रोस – कोरस्पोण्डेण्ट ऑफ कार्नवालिस पार्ट ⁁, पृ. 458–460
4. बालाघाट डिस्ट्रिक गजेटियर, 1907, पृ. 247–261
5. आर रिकार्डस इण्डिया आर फैक्टस – पृ. 360
6. अभिनंदन शुक्ल – मध्यप्रदेश और गांधीजी इन्दौर, 1969, पृ. 32–33
7. बालाघाट सेटलमेण्ट रिपोर्ट 1914–1918, पृ. 7–13
8. गजेटियर आफ इंडिया मध्यप्रदेश, बालाघाट, पृ. 196
9. रिपोर्ट ऑन द जनरल एजुकेशन इन द सेंट्रल प्रोव्हिंस एण्ड बरार, 1937, पृ. 3–4
10. विपिन चन्द्र के अनुसार
11. बोल्टस – कन्सीडेरेशन ऑन इण्डियन अफेयर्स, पृ. 195
12. रमेश दत्त – दि इकनामिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया भाग ए कलकत्ता (1654) पृ. 103–106
13. कायजॉन – विलियम एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ ईस्ट इण्डिया कम्पनी, पृ. 198
14. अभिनंदन शुक्ल – मध्यप्रदेश और गांधीजी इन्दौर, 1969, पृ. 33
15. बालाघाट डिस्ट्रिक गजेटियर, 1907, पृ. 247

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

स्व सहायता समूह से ग्रामीण महिलाओ का सामाजिक आर्थिक विकास

ममता मंडाले
पी.एच.डी. (अर्थशास्त्र), देवी अहिल्या विश्वविघालय इन्दौर, म.प्र.

ग्रामीण परिवेश वाली अर्थव्यवस्था, जैसे कि भारत, के समग्र विकास के लक्ष्य को उस समय तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक कि ग्रामीण गरीबी उन्मूलन पूर्णरूपेण नहीं हो जाता। ग्रामीण गरीबो के पास संसाधनों का आधार नहीं होता, उन्हें अपनी दैनिक प्राथमिक आवष्यकताओं की पूर्ति हेतु भी संघर्ष करना पड़ता है, इनमें भी ग्रामीण महिलाओं को अधिक संघर्ष करना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी महिलाओं को अपने परिवार के पालन–पोषण के लिए दिन–रात मेहनत–मजदूरी करनी पड़ती है, किन्तु फिर भी वह साहूकारों के चँगुल में फँसी रहती हैं। साहूकारों द्वारा न सिर्फ इनका आर्थिक शोषण बल्कि शारीरिक एवं मानसिक शोषण भी किया जाता है।[1]

विश्व के सभी विकासशील देशों को अनेक उत्तरदायित्वों का वहन करना पड़ता है, जैसे कि सामाजिक–आर्थिक विकास एवं गतिशील लोकतंत्र द्वारा गरीबी और सामाजिक पिछड़ेपन का उन्मूलन करना। यह देखा गया है कि विश्व के गरीबों में सबसे अधिक गरीब भारत में है और उनमें भी महिलाओं की संख्या अधिक है तथा विश्व की अधिकाधिक महिलाएं गरीब हैं। विशेष तौर पर एशिया महाद्वीप की महिलाओं की संसाधनों तक पहुँच अत्यन्त सीमित है तथा वे अत्यन्त गरीबी में जीवन व्यतीत करती हैं। 'लैंगिक वंचन' (जेण्डर डिप्राइवेशन) की वैश्विक सांख्यिकी से उजागर होता है कि महिलाएं वैश्विक आय में मात्र दस प्रतिशत तक की हकदार है तथा मात्र एक प्रतिशत की वैश्विक सम्पत्ति पर उनका स्वामित्व पाया जाता है। आज जब वैश्विकरण दौर चल रहा है ऐसे में विकासशील देशों में गरीबी में जीवन यापन करने वाली ग्रामीण महिलाओं की संख्या में पिछले एक दशक में और वृद्धि हुई है।[2]

यदि हम गरीबी की अवधारणा को समझने का प्रयास करें तो यह देखा जा सकता है कि यह एक बहुआयामी तथ्य है, जो कम आय, निम्न स्तरीय कौशल, स्वामित्व के अभाव, प्रशिक्षण की सुगमता के अभाव, अपर्याप्त तकनीकी ज्ञान, खराब स्वास्थ्य एवं अल्प पोषण तथा आश्रय एवं भोजन की सुरक्षा के अभाव से चिन्हित होता है। ग्रामीण महिलाओं को गरीबी के इन सभी क्रूर तथ्यों का सामना करना पड़ता है। आर्थिक सुरक्षा का अभाव भारी मात्रा में प्रवसन या विस्थापन को बढ़ावा देता है। घरेलू हिंसा गरीब महिलाओं की दुर्दशा का एक और कारक है। इस प्रकार न केवल आर्थिक पहलू वरन् मनोवैज्ञानिक पहलू भी महिलाओं के कष्ट एवं निर्धनता को बढ़ावा देने में योगदान प्रदान करते हैं।

समाज के कतिपय व्यक्तियों ने इस समस्या पर गंभीरता से विचार करते हुए महिलाओं को विशेषकर ग्रामीण महिलाओं को ऋण सुविधाएँ उपलब्ध कराने हेतु वैधानिक आधार पर कुछ प्रयोग किये। इनके अनुभवों के आधार पर स्व–सहायता समूह की अवधारणा सामने आई। इस अवधारणा के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं की संसाधनों तक सीधी पहुँच तथा नियंत्रण को सुनिश्चित करते हुए विशेषकर सामाजिक–आर्थिक रूप से महिलाओं को सभी क्षेत्रों में शक्ति सम्पन्न बनाने के लिये ग्रामीण महिलाओं के आत्मनिर्भर स्व–सहायता समूहों की स्थापना कर ग्रामीण महिलाओं में बचत की आदत डालने तथा आर्थिक संसाधनों पर उनके नियंत्रण को सुदृढ़ किया जा सकता है। ग्रामीण महिलाओ की स्थिति, स्वास्थ्य, पोषाहार,शिक्षा, स्वच्छता तथा आरोग्य, कानूनी अधिकारों, आर्थिक विकास तथा अन्य सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक मुद्दों में भागीदारी को सुनिष्चित किया जा सकता है। स्व–सहायता समूह में जो सम्भावनाएं बनती हैं उनमें प्रमुख रूप से संगठन से एकता की भावना, साहूकारों के शोषण से छुटकारा, ग्रामीण महिलाओं में दृढ़ निश्चय की क्षमता व आत्मनिर्भरता से विकास करना व गरीबी उन्मूलन आदि है।[3]

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में स्व–सहायता समूह का निर्माण 1 अप्रैल

1999 से किया गया। इस योजना के तहत महिलाओ व पुरूषो के समूह बनाये जाते थे। 1 अप्रैल 1999 योजना के प्रारम्भ से सितम्बर 2011 तक 42.05 लाख स्व–सहायता समूह बनाए गए जिसमें लगभग 60 प्रतिशत महिला स्व–सहायता समूह थे। यह पाया गया कि पुरूश समूह की अपेक्षा महिला समूह (जिन समूह में महिलाओ की अधिकता थी) अधिक नियमित व सुचारू रूप से चल रहे थे। इसी को देखते हुए 1 अप्रैल 2012 से स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का नाम बदलकर महिला स्व–सहायता समूह बनाये जाने लगे। स्व–सहायता समूह ग्रामिण महिलाओं के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए एवं ग्रामीण गरीबी उन्मूलन के लिए एक सार्थक प्रयास है। इससे महिलाओं को विशेषकर ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति सुधरेगी, उन्हें समूह के माध्यम से रोजगार के नए अवसर सृजित होगें और ग्रामीण क्षेत्रो में व्याप्त गरीबी के प्रभाव को भी कम किया जा सकेगा। देश के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में स्व–सहायता समूह बनाने के उद्देश्य से शासन द्वारा इसे क्रियान्वित किया जा रहा है।[4]

स्वतंत्रता के कई वर्षों पश्चात् भी ऐसे अनेक गाँव है जो गरीबी से जुझ रहे है। ऐसे में स्व–सहायता समूह योजना के माध्यम से इन गाँव में समूह बनाकर गरीबा को उनकी दहलीज पर 'बचत और ऋण' की सुविधा उपलब्ध कर, ग्रामीण क्षेत्रों की अब तक अछूती रही व्यवसाय क्षमता का दोहन करने में सफल हो रही है।

स्व–सहायता समूह का यह लक्ष्य है, कि देश की ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया जाए क्योंकि ग्रामीण महिलाओं की संसाधनों तक पहुँच बहुत सीमित रहती है। इस योजना के अतंर्गत महिला समूहों को अधिकता से निर्मित कर बैंक से ऋण दिया जाता है। ग्रामीण महिलाएं समूह के माध्यम से एकत्रित होकर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही हैं, आर्थिक मामलों के निर्णय लेने में क्षमता विकसित कर रही हैं, बैंक से ऋण प्राप्त कर परिवार की आर्थिक आवश्यकताओं को पूर्ण कर उन्हें साहूकारों के शोषण से मुक्त करवा रही हैं, सामाजिक, आर्थिक संबंधी समस्याओं का निराकरण कर रही हैं, इससे ग्रामीण महिलाओं के नेतृत्व का विकास हो रहा है, समूह में भागीदारी बढ़ने से सामाजिक मुद्दे के प्रति उनकी जागरूकता बढ़ी है। समूह महिला सशक्तिकरण का सशक्त माध्यम बनकर उभर रहे हैं। ग्रामीण महिलाएं समूह से जुड़कर गरीबी एवं बेरोजगारी दूर करने के प्रति अधिक सजग होकर ग्रामीण गरीबी उन्मूलन में सहायता कर रही हैं और समाज में अनुशसित एवं संगठित होकर एक नई दिशा दे रही है।[5]

स्व–सहायता समूह महिलाओं का ऐसा अनौपचारिक समूह है, जो अपनी बचत तथा बैंक के सूक्ष्म वित्तियन से अपने समूह की पारिवारिक व व्यक्तिगत जरुरत को पूरा करता है और विकास संबंधी कार्यक्रम के माध्यम से गरीबी जैसे अभिशाप को दूर करने तथा महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रायः स्व–सहायता समूह एकजुटता के प्रतीक होते हैं। यहां एक जैसे ही आर्थिक और सामाजिक स्थिति के लोग साथ आते हैं। समूह के सभी सदस्य थोड़ी–थोड़ी बचत करके आपसी सहयोग से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्व–सहायता समूह का विचार पड़ोसी देश बांग्लादेश में खूब चर्चित हुआ। ''ग्रामीण बैंक'' के नाम से प्रचलित इस समूह को प्रचारित और स्थापित करने का श्रेय प्रसिद्ध अर्थशास्त्री मोहम्मद युनूस को जाता है। इसी को देखते हुए भारत में भी यह व्यवस्था विकसित हुई।[6]

भारत में स्व–सहायता समूह की शुरुआत 1992 में नाबार्ड ने एक योजना के तहत की, लेकिन इसे प्रचलित होने में काफी समय लग गया। भारत में गठित 42.05 लाख से अधिक स्व–सहायता समूहों में से लगभग 60 प्रतिशत तो महिलाओं से ही संबंधित है। भारत में स्व–सहायता समूह की संख्या में महिलाओं की ज्यादा सहभागिता का कारण देश की लगभग 60 प्रतिशत गरीब महिला जनसंख्या का होना है। भारत के ग्रामीण परिवारों को न केवल कृषि के लिए बल्कि पारिवारिक जिम्मेदारियाँ पूरी करने के लिए भी गैर संस्थागत ऋण स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। देश में बैंक ने अनेक योजनाएं तो चलायी, लेकिन इसका फायदा वास्तव में बड़ा वर्ग ही ले गया। स्व–सहायता समूह के माध्यम से जो पहल महिलाओं ने की है, वो सराहनीय है। स्व–सहायता समूह की अवधारणा "संगठन में शक्ति" पर आधारित है। तिनकों से बनी रस्सी जिस प्रकार शक्तिशाली गजराज को बांध सकती

है, उसी प्रकार आर्थिक रुप से कमजोर लोग भी मिलकर "गरीबी के दुष्चक्र" को तोड़ सकते हैं। स्व–सहायता समूह मुख्य रुप से गरीबी में जीवनयापन कर रहे लोगों के जीवन स्तर के उन्नयन के लिए निर्मित किया जाता ह। स्व–सहायता समूह के पीछे मान्यता यह है कि बिखरे हुए लोगों को तो उत्पीड़ीत व शोषित किया जा सकता है, लेकिन यदि उन्हें संगठित किया जाए तो वे बड़ी ताकत बन जाते हैं। समूह के सदस्य मिलकर एक ऐसी ताकत का निर्माण करते हैं, जिससे वे स्थानीय शोषणकर्ताओं, सेठ–साहूकारो, बाहुबलियो आदि के अत्याचारों का जमकर विरोध कर सकते हैं और उन पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। स्व–सहायता समूह इस बात में विश्वास करता है कि लोग आपस में मिलजुलकर अपनी दैनिक जीवन से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक कदम उठा सकते हैं। वे अपने कामों का स्वयं उचित प्राथमिकता निर्धारण करने व उससे जुड़े निर्णय लेने में समर्थ हैं। उनके पास जीवन से जुड़े अनेक तरह के ज्ञान व अपार अनुभव हैं जिनको वे व्यवस्थित तरीके से उपयोग करें तो उनके जीवन से बदहाली खत्म हो सकती है। समूह के सदस्यों को थोड़े परामर्श व प्रेरणादायक नेतृत्व की जरूरत होती है।[7]

ग्रामीण भारत में महिला स्व–सहायता समूहों ने हजारो लाखो अशिक्षित गरीब वर्ग की महिलाओं को न केवल घर की चौखट के बंधन से मुक्त कर बाहर निकाला है बल्कि उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने मे समर्थ बनाया है। इसके साथ–साथ उन्हें एक सामूहिक आवाज भी दी है। भारत में स्व–सहायता समूहों की शुरूआत व विकास कुछ स्वयंसेवी संगठनों ने गरीब महिलाओं को संगठित कर आय संवर्द्धन गतिविधियों के संचालन के लिए 1980 के दशक के अन्त में की। 1990 के दशक की शुरूआत में राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की पहल व विशेष रूचि लेने से स्व–सहायता समूह देश भर में फैल गए। अब तो सभी सरकारी बैंक व आर्थिक व सामाजिक संगठन इसकी महत्ता को स्वीकार कर इसके विकास को प्रोत्साहित कर रहे हैं। पीढ़ी–दर–पीढ़ी गरीबी का दन्श झेल रहे परिवारों को गरीबी से मुक्ति दिलाने के लिए स्व–सहायता समूह एक नयी आशा की किरण लेकर आया है। "गरीबी उन्मूलन" के नारे तो कई दशकों से लगते रहे हैं लेकिन गरीबी खत्म होने की जगह अब तक गरीब ही तबाह होते रहे हैं। अब स्व–सहायता समूह गरीबी को खत्म करने के सपने को हकीकत में बदलने में सक्षम साबित हो रहे हैं। स्व–सहायता समूह समाज कार्य के इस मूल सिद्धांत पर आधारित है कि किसी भी व्यक्ति की सहायता इस प्रकार से करें कि वह अपनी सहायता स्वयं करने में सक्षम हो जाए। स्व–सहायता समूह के माध्यम से महिला सदस्यों को आत्मनिर्भर बनाने की कोशिश की जाती है। इसके द्वारा सदस्य महिलाएं आपस में मिलजुलकर एक–दूसरे की मदद करती हैं और अपनी समस्याओं के समाधान के लिए पहल करती हैं तथा उसके समाधान तक पहुंचती है।[8]

इस प्रकार महिला स्व–सहायता समूह तंगहाली व गरीबी से जूझती महिलाओं के लिए नवजीवन का संदेश लेकर आए हैं। स्व–सहायता समूह से जुड़कर महिलाएं एक दूसरे की मदद करके जीवन की चुनौतियों का समाधान ढूंढने में समर्थ हुई हैं। स्व–सहायता समूह महिला सशक्तिकरण के लिए आवश्यक आधार तैयार करते हैं। सूमह में जुड़कर महिलाएं शिक्षा, स्वरोजगार, कानूनी अधिकार, सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं, स्वास्थ्य व पोषण से सम्बंधित जानकारी प्राप्त करती हैं। इन समूहों में आकर वे अपने जीवन से जुड़ी परेशानियों को एक दूसरे से कहती सुनती हैं और सही निर्णय लेने में एक–दूसरे की मदद करती है। स्व–सहायता समूह के माध्यम से उनका अपने जीवन पर आत्मनियंत्रण बढ़ता है और वे महत्वपूर्ण निर्णय लेने में समर्थ होती है। समूहों के द्वारा उनका बाह्य परिवेश से जुड़ाव बढ़ रहा है और उनमें दुनियादारी की व्यावहारिक समझ विकसित हो रही है। अब उनके अनेक प्रकार के शोषण व उत्पीड़न में कमी आ रही है, क्योंकि समूह की महिलाएं मदद व परामर्श के लिए हर कदम पर एक दूसरे के साथ होती हैं। इससे वे अपने आप को असहाय नहीं महसूस करती और उनमें आश्चर्यजनक आत्मविश्वास का विकास होता है। अब उनके साथ कोई अन्याय करता है तो महिलाएं सहन नहीं करती उसका विरोध करने के लिए तैयार रहती है। इन सबसे पूरे महिला वर्ग की सशक्तता बढ़ी है और उनके जीवन मं आन्नद व खुशहाली आ रही है।[9]

स्व–सहायता समूह ग्रामीण गरीबों की आर्थिक उन्नति का सशक्त मंच बनकर उभर रहे हैं। ग्रामीण विकास मंत्रालय की इस योजना से गरीब भारत की तस्वीर बदलने लगी है। इसमें कोई शक नहीं है कि स्व–सहायता समूह का निर्माण भारत सरकार का एक क्रांतिकारी कदम है, जिसके माध्यम से न सिर्फ लोगों को रोजगार उपलब्ध करा सके, बल्कि एकजुट होकर सामाजिक कुरीतियां, नारी उत्पीड़न और लोगों के मन से बड़े–छोटे के भेदभाव को भी मिटा सके। वहां ये समूह ग्रामीण गरीबों की आर्थिक उन्नति का सशक्त मंच बनकर उभर रहे हैं।[10]

भारत में स्व–सहायता समूहों का विकास तो तेजी से हो रहा है, परंतु इन समूहों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा रहा है। प्रशिक्षण का अभाव, और भी कई कठिनाईयाँ और चुनौतियाँ है जिन पर ध्यान देकर स्व–सहायता समूह व्यवस्था को अधिक कारगर व लाभप्रद बनाया जा सकता है। इनमें एक पहलु लघु ऋण देने वाले बैंक की भूमिका से जुड़ा है। वाणिज्यिक बैंक की ऋण नीतियाँ स्व–सहायता समूहों की संरचना व उद्देश्यों से मेल नहीं खाती। बैंक को स्व–सहायता समूह की अवधारणा समझने में ही लंबा समय लग जाता है और जब समझ जाते हैं तब भी पर्याप्त ऋण उपलब्ध नहीं करा पाते। स्व–सहायता समूहों का विकास व अन्य समुचित एजेंसियों से जुड़ाव नहीं हो पाया है। समूह एक अलग इकाई के रुप में काम करते हैं, जिससे कोई बड़ी या महत्वपूर्ण गतिविधि को हाथ में नहीं ले पाते, इसका परिणाम यह होता है कि उनमें उत्साह नहीं रहता और वे निष्क्रिय होने लगते हैं। यदि इन समूह को सरकारी परियोजनाओं या पंचायत के कार्यों से जोड़ दिया जाता है तो इनकी उपयोगिता निश्चित रूप से बढ़ जायेगी। पंचायतें ग्रामीण क्षेत्र की स्थानीय संस्थाएं हैं, जिनमें महिलाओं की भागीदारी अवश्यक होनी चाहिए। पंचायतों से जुड़कर स्व–सहायता समूह स्थानीय स्वशासन में हिस्सेदारी कर सकते हैं और साथ ही राज्य सरकार को विभिन्न परियोजनाओं के बारे में सुझाव भी दे सकते हैं। आवश्यकता इस बात कि है की स्व–सहायता समूहों को सरकार पर्याप्त मात्रा में समय–समय पर धन उपलब्ध कराती रहे।[11]

महिला स्व–सहायता समूह व्यवस्था ग्रामीण गरीबी को दूर करते हुए ग्रामीण विकास और महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, जो समय के साथ–साथ अपनी कमजोरियों पर काबू पाते हुए आगे बढ़ती जाएगी। सरकार, स्वयंसेवी संगठन, बैंक, पंचायतें तथा ग्रामीण इस नई अवधारणा को सफल बनाने में अपनी–अपनी भूमिका ईमानदारी से निभाऐंगे तो निःसंदेह ग्रामीण महिलाओं का छोटा–सा प्रयास एक बड़े अभियान का रूप धारण कर लेगा और संपूर्ण भारत का विस्तार होगा।[12]

सदंर्भ ग्रंथ सूची

1. एस.के.मिश्र एवं व्ही.के. पुरी, (2003) "भारतीय अर्थव्यवस्था" हिमालय पब्लिकेशन हाऊस, नई दिल्ली।
2. आशारानी व्होरा, (1983) "भारतीय नारी दशा–दिशा" नेषनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।
3. अमर्त्य सेन, (2000) "गरीबी और अकाल" प्रकाशक राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली।
4. स्व–सहायता समूह गठन प्रशिक्षण मार्गदर्षिका, प्रकाशन अनुपमा एजुकेशन सोसाइटी, भरहुत नगर, सतना (म.प्र.) 2004।
5. "ग्रामीण बेरोजगारी तथा गरीबी निवारक कार्यक्रम" भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक 2011, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ 178–179।
6. स्वयं सहायता समूहों के साथ बैंकिंग क्यों और कैसे ? मार्गदर्शिका, प्रकाशन राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक, मुंबई।
7. प्रज्ञा शर्मा, (2001) "भारतीय समाज में नारी" पॉइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर।
8. के.ममता कृष्णा, "मायराडा अनुभव" स्व–सहायता समूहों के क्षमता निर्माण के लिए एक निर्देशिका, प्रकाशन केन्द्रीय परियोजना सहायता इकाई, मानव–संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार एवं मायरडा न. सर्विस रोड, डोमलूर लेआउट, बैंगलोर अक्टूबर 2001।
9. सामाजिक बदलाव में महिलाएँ मार्गदर्शिका, राजकीय प्रकाशन, लोक

स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, नई दिल्ली 2004।

10. मयंक श्रीवास्तव, "स्वयंसहायता समूहों में बदलती गावों की तस्वीर" कुरूक्षेत्र जून 2009, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी. जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोदी रोड़, नई दिल्ली, पृष्ठ 33–35।
11. अंशुप्रिया अग्रवाल, "लघु ऋण–गरीबों की जीवन रेखा" बैंकिंग चिंतन–अनुचिंतन अप्रैल–सितंबर 2008, प्रकाशित, भारतीय रिजर्व बैंक, राजभाषा विभाग, गारमेन्ट हाउस, वरली, मुम्बई पृष्ठ 19–23।
12. वाई.एस.पी. थोराट, "सहकारी ऋण संस्थाओं को पुनर्जीवन" योजना अगस्त 2006, प्रकाशन विभाग सूचना भवन, सी. जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली, पृष्ठ 4।
13. प्रतापमल देवपुरा (2006) "ग्रामीण विकास का आधार आत्मनिर्भर पंचायते" राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
14. डॉ.धर्मवीर महाजन एवं डॉ. कमलेष महाजन, (2003) "भारतीय समाज : मुद्दे एवं समस्याएं" विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
15. डॉ.आर.पी. तिवारी एवं डॉ.डी.पी.शुक्ला, (2002) "भारतीय नारी वर्तमान समस्याएं और भाव समाधान" ए.पी.एच. पब्लिशिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली।
16. इंदिरा मिश्र, (1996) "गरीब महिलाएं, उधार एवं रोजगार" किताब घर, नई दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

जायसी और लोक की अवधारणा

धरम सिंह मालवीय
हिन्दी विभाग बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रस्तावना : 'लोक' की अवधारणा विशेष जटिल नहीं, एकाधिक अर्थ वाली अवश्य है। पतजलि के 'महात्मास्य' में लोक शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है। ये शब्द–प्रयोग का आधार और प्रमाण लोक को मानते है। 'लोक' से उनका आशय 'सामान्य जन' से है। लोक का अर्थ संसार से भी किया जाता है। प्रत्यक्ष, जगत अथवा ऐहिक जीवन 'लोक' है। लोक का शाब्दिक अर्थ है – देखना, नजर डालना, प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना। इसी अर्थ के कारण उसका संबंध संसार अथवा ऐहिक जगत से जुड़ गया है, लेकिन संस्कृत वाड्मय में 'लोक' को और भी व्यापक अर्थ प्रदान किया गया है। लोक तीन है– स्वर्ग, पृथ्वी ओर पाताल लोक। अधिक विस्तृत वर्गीकरण के अनुसार लोक चौदक है– सात तो पृथ्वी से आरंभ करके उपर कमशः एक दूसरे के उपर – अर्थात् भू–लोक, जनलोक, तपलोक और सत्य या ब्रहम्मलोक तथा अन्य सात पृथ्वी से नीचे की ओर, एक दूसरे के नीचे – अर्थात् अतल, वितल, सतल, रसातल, महातल और पाताल। इनमें से जनलोक सबसे प्रभावी अर्थ से प्रयुक्त हुआ। 'लोक' को वेद के विपरीत अर्थ में देखा गया। 'वेद' का प्रयोग ज्ञान के अर्थ में किया गया और 'लोक' का जगत व्यवहार के अर्थ में। पी.व्ही. काणे के 'धर्मशास्त्र के इतिहास' के प्रथम भाग में विविध विधियों को लोक से जोड़कर दखा गया है, जिनमें संस्कार, आश्रम, मधुपर्क, देवयज्ञ, दान आदि महत्वपूर्ण है। दूसरे भाग में भुक्ति (भोग), सिद्धी (निर्णय), स्तेय (चोरी), व्यभिचार, सदाचार आदि की चर्चा है। तीसरे भाग में पातक, प्रायश्चित्त, कर्मविपाक, अन्त्यकर्म, अशौच, शुद्धि, श्राद्ध और तीर्थ से संबंधित बातें है। चौथे भाग में व्रत उत्सव आदि का उल्लेख है। काणे ने आचार–विचार और उत्थान–पतन संबंधी समस्त बातों को 'लोक' के अंतर्गत रखकर देखा है। इस तरह 'लोक' की अवधारणा जन–व्यवहार से दृढ़ रूप से जुड़ती है।

वस्तुतः 'लोक' शब्द का संबंध 'जन' और 'संसार' दोनों से है। ऋग्वेद के पुरुष सुक्त में कहा गया है –

नाभ्या आसीदंतरिक्षं शीर्ष्णो द्यौ समवर्तन।

पदभ्यां भूमिर्दिशः श्रोता तथा लोकों अकल्पथन।।

'जन' और 'संसार' दोनों अर्थो में 'लोक' का प्रयोग आज भी होता है, लेकिन 'जन' से इसका अवधारणागत संबंध अधिक गहरा दिखाई पड़ता है। संस्कृत साहित्य में ही 'जन' के अर्थ में 'लोक' का विवेचन अधिक है। अभिनवगुप्त का प्रसिद्ध पद है – 'लोकोनाम जनपदवासी' – यानी जनपदों अथवा गांवों के लोग ही लोक है।

'लोक' का एक अर्थ वेदेत्तर अथवा शास्त्रेतर भी है। गीता में 'अतोश्स्ति लोके वेदें च प्रथितः पुरूषोत्तमः कहकर लोक की महिमा को स्थापित किया गया है। वेदेत्तर अर्थ में लोक का उल्लेख सबसे प्रभावी ढंग से कबीर के काव्य में है। कबीर लोक–सम्पृक्ति के कवि है और ज्ञान (सत्) के अन्वेषक। एक जगह वे कहते है –

पीछे लागा जाइ था, लाक वेद के साथि।

इसका अभिप्राय है कि अज्ञान की दशा में लौकिक परम्परा और वेद यानी शास्त्र ज्ञान का अनुसरण करने के लिए बाध्य है।

लोक और वेद की समानान्तरता को एक जमाने से स्वीकार किया जाता रहा है, जिसे अपने–अपने संदर्भ में भक्त कवियों ने परखा था। एक प्रमाण वेद को माना गया है, दूसरा लोक को। दोनों किसी एक बिन्दु पर आकर मिल भी जाते है। गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है –

लोकहूँ बेद सुसाहिब रीति।

बिनय सुनत पहिचानत प्रीती।।

सूफी दर्शन के अंतर्गत एक पद आता है। – 'इश्के मजाजी' जिसका अर्थ है लौकिक प्रेम। 'मजाज' का शाब्दिक अर्थ होता है – अवास्तविक अथवा कल्पित। विरोधाभासी रूप में सूफीवाद के अंतर्गत 'मजाज' का अर्थ लोक हो गया है। यह

वास्तविक संसार में ईश्वरीय सत्य के दर्शन के कारण है। सूफी काव्य में संसार के जिस रूप की अभिव्यक्ति हुई, है उसका संबंध लोकजीवन से है। यह लोक ग्राम्य संस्कृति से है। यह अंग्रेजी के 'फोक' के करीब जान पड़ता है।

'फोक' के अर्थ में 'लोक' का प्रयोग बहत आम है। यह 'शिष्ट' से भिन्न अर्थ का वाचक है। जैसे जब 'लोक साहित्य', लोक कलां या 'लोक अभिव्यक्ति' कहा जाता है, तो उसका संबंध उस संस्कृति से बनता है, जो 'नागर' से भिन्न है अथवा ग्रामीण है। यह लोक की अवधारणा से जुड़ा एक व्यापक संदर्भ है, जिसमें ग्रामीण अथवा जनजातीय बोली, साहित्य और अन्य सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को स्थान प्राप्त है।

'फोक' के अर्थ में लोक को आद्य–संदर्भ प्राप्त है जैसा कि एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में बताया गया है – ''आदिम समाज के सभी सदस्य 'फोक' होते है।'' ब्रिटानिका के आधुनिक संदर्भ में 'फोक' की व्याख्या ग्रामीणता के अर्थ में की गयी है – 'सामान्य प्रयोग में पाश्चात्य प्रणाली की सभ्यता के लिए ऐसे सश्लिष्ट शब्दों में जैसे लोक साहित्य (फोक लिटरेचर), लोक संगीत (फोक म्यूजिक) आदि में उसका अर्थ संकुचित होकर केवल उन्हीं का ज्ञान कराता है, जो नागरिक संस्कृति और भीयादी शिक्षा के प्रभावों से मुख्यतः रहित है, जिसे अक्षर–ज्ञान नहीं है, ग्रामीण और गॅवार।''

वस्तुतः जैसे कि रेमंड विलियम्स ने की वर्ड्स में लिखा है – 'फोक' भी सामान्यतः 'जनता' (पीपुल) का वाचक है, जिसका संबंध 'राष्ट्रजन' से भी है। यह बाद का विकास है, जिसमें 'फोक' को प्रजातीय, किसान और लोकप्रिय (पापुलर) से जोड़ दिया गया है।

आधुनिक हिन्दी काव्य के प्रमुख हस्ताक्षर पं. रामनरेश त्रिपाठी 'लोक' और 'ग्राम' को अलग–अलग मानते है। उनके द्वारा सम्पादिक पुस्तक 'कविता कौमुदी' का तीसरा भाग 'ग्रामगीता' नाम से है। उसकी भूमिका में उन्होंने लिखा है – 'ग्रामगीता' के स्थान पर लोकगीत शब्द का भी प्रयोग किया जा रहा है, पर यह उचित प्रतीत नहीं होता, क्योंकि ग्रामगीता ग्रामीणों की पैतृक सम्पत्ति है, सका गौरव उन्हीं के पास सुरक्षित रहने देने में ही सभ्य–समाज का गौरव है। लोकगीत कहने से नगर निवासियों के सामाजिक जीवन के गीत भी सम्मिलित हो जाते है, पर नगर निवासियों के गीत है कि क्या केवल कुल गजल, ठुमरियॉ, ख्याल और कव्वाली। इसमें सन्देह नहीं कि पं. रामनरेश त्रिपाठी ने ग्राम–साहित्य का उल्लेखनीय कार्य किया है। लेकिन उनकी यह समझ इकहरी है। इस संबंध में हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत उल्लेखनीय है – 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है बल्कि नगरी और गांवों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियॉ नहीं हैं। ये लोग नगर के परिष्कृत, रूचि–सम्पन्न, सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते है और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची दिलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती है, उनको उत्पन्न करते है।

पश्चिमी जगत और समाज विज्ञान में भी 'लोक'को विरोधाभासी रूप से परिभाषित किया गया है। लोक संस्कृति की व्याख्याओं के पुरोधा ग्रीम्स ने माना है कि ग्रामीण, अशिक्षित, शिक्षितों के समाज में शिक्षित लोग है। इसके विपरीत एलेन एण्डेस का मानना है कि लोक एक ऐसा समुदाय है, जो समान सम्बद्धकारी तत्वों से जुड़ा होता है। यह समान सम्बद्धकारी तत्व है – समान भाषा, समान पेशा तथा समान धर्म इत्यादि। वस्तुतः लोक एक लचीली अवधारणा है। यह जैसा कि डॉ. दुलाल चौधरी ने कहा है – एक राष्ट्र की तरह बड़ा हो सकता है तथा एक परिवार की तरह छोटा भी।

हिन्दी में लोक प्रयोग राष्ट्र से भी व्यापक अर्थ में होता रहा है। संसार के लिए भी लोक कहा जाता है। हिन्दी आलोचना के शीर्ष पुरूष आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के यहां लोक का प्रयोग कहीं संसार के अर्थ में हुआ है, तो कही सामान्य जन के अर्थ में। शुक्ल जी 'समाज' का प्रयोग बहुत सीमित अर्थ में करते है। 'चिन्तामणि' में उन्होंने जगह–जगह लोकसामान्य, लोकसत्ता, लोकव्यवहार, लोकधर्म, लोकमंगल आदि शब्दों का प्रयोग किया है। लोकहद्वय में लीन होने को वे रस–दशा कहते है। उसी तरह कविता के संबंध में भी उनकी धारणा है – 'मनुष्य एक लोकबद्ध प्राणी है। लोक के भीतर ही कविता क्या, किसी

भी कला का प्रयोजन और विकास होता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जन 'लोकहृदय' कहते है, तो उसका आशय जन–सामान्य की भावनाओं से होता है और जब मनुष्य को 'लोकबद्ध' प्राणी कहते है तो उसका आशय सांसारिक मनुष्य से होता है। दोनों में भेद इतना ही है कि प्रथम पद का संबंध भाव से और दूसरे का मनुष्य के भौतिक–सामाजिक अस्तित्व से। दोनों बातों मे एक सामान्य तथ्य उभरकर आता है कि मनुष्य का जीवन ही कला और साहित्य का स्त्रोत है। उनका स्पष्ट मत है – 'काव्य को हम जीवन से अलग नहीं कर सकते। उसे हम जीवन पर मार्मिक प्रभाव डालने वाली वस्तु मानते है।

काव्य जीवन पर मार्मिक प्रभाव डालता, इसी धारणा के प्रकाश में शुक्लजी ने जायसी, सूर और तुलसी की कविता के महत्व को रेखांकित किया है। काव्य जीवन पर मार्मिक प्रभाव कैसे डालता है। शुक्लजी का उत्तर होगा – लोकजीवन की परख से। लोकजीवन भाव केन्द्रित है, मार्मिक अनुभव–अनुभूतियों से युक्त है। रामचन्द्र शुक्ल की दृष्टि में गोस्वामी तुलसीदास बड़े कवि इसलिए है कि उन्हें जीवन के मर्मस्पर्शी स्थलों की सच्ची पहचान है। लिखते है – 'प्रबन्धकार कवि की भावुकता का सबसे अधिक पता यह देखने से चल सकता है कि वह किसी आख्यान के अधिक मर्मस्पर्शी स्थानों की पहचान सही है या नहीं।

जायसी उनके लिए महत्वपूर्ण इसलिए है कि उनमें प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दर्शन है। लिखा है– 'प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता थी, वह जायसी द्वारा पूरी हुई। सूरदास की कविता में 'लोक–संघर्ष' का उन्होंने अभाव माना, लेकिन साथ ही यह भी स्वीकार किया है कि सूर में पर्याप्त सदाश्यता और भावुकता है, जो उन्हें लोकधर्मी कवि सिद्ध करती है।

व्यापक रूप से देखें तो आचार्य रामचंद्र शुक्ल का 'लोक जनसामान्य की जीवन–परिस्थिति और भाव–जगत से संबद्ध है।

संदर्भ :

1. रवीन्द्र भ्रमर, पद्मावत में लोकतत्व, इलाहाबाद, 1971
2. शिसहाय पाठक, जायसी–कृत चित्ररेखा, 1959
3. श्याम परमार, भारतीय लोक साहित्य, बम्बई, 1954
4. श्याम परमार, लोक साहित्य विमर्श, अजमेर, 1972
5. शिवसहाय पाठक, हिन्दी सूफी काव्य का समग्र अनुशीलन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Indo-Iranian Relations under US Hammer

Shamim Ahmad Wagay
Former Research Scholar, Department of Political Science, Vikram University, Ujjain, MP, 451060, INDIA.

Abstract : India and Iran relationships date back to the beginning of the Indo-Aryan civilization in the 7th century B.C. the two countries shared territorial borders until India's independence in 1947 and shared numerous common characteristics in their language, ethnicity, customs, gastronomy, Literature, Monuments, Architecture, trade, commerce, political, social, historical and people to people contact. The two countries shared cordial relations from times immemorial. Although there have been many ups and downs in the trajectory of India-Iranian relations both the countries managed to overhaul their policies. However it is believed that India has come under harsh pressure of US form several quarters. Several scholars have alleged that the US is influencing India's Iran policy. This article attempts to examine major issues which reflect the US pressure on India's Iran policy.

Key Words: Nuclear Power, Sanctions, Bilateral, Oil, Programme, Pressure.

Introduction : India and Iran relationships dates back to the beginning of the Indo-Aryan civilizations in the 7th century B.C. the two age old civilisations shared various common features in their ethnicity, architecture, literature and people to people contact. Independent India and Iran established diplomatic links on 15th March 1950. But with the establishment of the Islamic Republic in Iran in 1979 witnessed a novel chapter of engagement amid India-Iranian relationships. The epoch of Islamic revolution was marked by swap of high level visits of luminaries to each other's capital which thrashed out the pros and cons of bilateral issues including economic cooperation, energy security, development of mutual trade, surface transport, and regional issues and common apprehensions concerning terrorism. Post cold war also witnessed the paradigm shift of Indo-Iranian relations. The late eighties and early nineties witnessed increased dialogues between India and Iran. Even such as changes of the regime in Iran, the Gulf war, the disintegration of the Soviet Union and economic reforms in India paved way for the increased dialogues and cooperation. There were many visits form both the sides such as the visit of Indian Prime Minister P.V. Narasimha Rao to Iran on 1993 which was reciprocated by the Iran's President Akbar Hashemi Rafsanjani to India in 1995. The early nineties also witnessed Iran's change in the position on Kashmir issue, in 1991 for the first time Iran acknowledged Kashmir to be an integral part of India.

Though the amplified dialogue in the nineties arranged the foundation for strong footing it was after the trip of Indian Prime Minister A.B. Vajapayee to Iran in 2001 and the consequent signing of the 'Tehran Declaration' that Indo-Iran relations were taken to the higher levels, many consider this visit as a 'turning point' among the two countries which encouraged for the 'dialogue among civilizations' as advocated by Iranian President Mohammed Khatami. In 2003 India hosted President Khatami President Mohammed Khatami. In 2003 India hosted President Khatami as the chief guest of India's Republic Day celebrations. During this period the two sides shared deep concerns regarding the US preparations to invade Iraq.

Iranian Nuclear programme and India's stance

Iranian nuclear issue came into the international limelight in August 2002, when Iranian opposition group exposed the existence of the Natanz and Arak uranium enrichment plants in Iran which was countenanced to be inspected by International Atomic Energy Agency (IAEA). Despite concerns expressed by the US on Iran's nuclear programme it lumbered on till 2002 when a sensational disclosure by an exiled dissident Iranian group, the national council of resistance of Iran (NCRI) on 14

August 2002 revealed the existence of undeclared nuclear facilities in Iran, including pilot uranium enrichment plant at Natanz and a heavy water production plant under construction at Arak.

The stand of India consistent with Iran's nuclear programme ceased to surface in straitjacket formula and rather maintained paradoxical stage on the issue and seconded not the latter to frequent the nuclear practice for "it certainly does not want another nuclear power in its neighbourhood. This partly explains its opposition to Iran's nuclear programme. Secondly, for many years Iran and India have had opposing views on the global nuclear order. While Iran is party to the NPT India is not. Iran has often called for global acceptance of the NPT, much to India's discomfiture.

For the reason of reciprocal repercussion India adopted denigratory abhorrence against India conforming to its proliferating nuclear tests and turned man-Friday to UN security council resolution 1172 and bested foot foremost to ward-off nuclear recalibration of India and Pakistan in order to emplace them within the ambit of Comprehensive Test Ban Treaty. India has remained in rapport with IAEA resolutions parallel to Iran and zeroed in to rebut the nuclear achievements of Iran which transpires its susceptibility to oscillate under the vicissitude of US attitude and the excerpt of Indo-US relations transcription papered on September 08, 2005 in the House Committee on International Relations which transcends the brazen pressure of US on India is in to the bargain. To ensample, Tom Lantas-Democrat-California (D-CA) wanted 'reciprocity' from India on referring Iran's violations of the NPT to the UN Security Council in return for the expansion of nuclear and security ties with the US. He warned anything less than full support for the US position on Iran would imperial the expansion of US nuclear and security cooperation with New Delhi he added that if the US was to accommodate India, he wanted to be sure that India was mindful of United States policies in critical areas, like the policy towards Iran, and that India could not pursue a policy towards Iran which did not take account of US foreign policy objectives.

The perpendicular waterfront left for India to pilot in the face of Iran against nuclear proliferation was the indicator of US directive consummately, the truisms and aphorisms of which have been led by the nose by India, which eventually resulted in the vilification of India as regards Iranian nuclear profusion. India savvied scrupulously that the disparagement of US dictate would implant ferocious sequel and acknowledged downrightly the ordinance of the Uncle Sam.

The Bush Administration also warned that the nuclear deal would not be approved by the US Congress if India voted against the EU and US-sponsored resolution. India's vote was appreciated by the US, which termed it a 'significant' move and expressed 'gratitude' for India's support.[i] India ultimately voted Iran to be 'non-compliance' of NPT safeguards obligations, even while Russia and China abstained. However, the IAEA resolution was significantly diluted at the India's insistence and the final resolution omitted any mention of immediately referring Iran to the UN Security Council. Thus, despite domestic opposition and holding steadfastly to its claim that its vote had nothing to do with the US, India voted with the US in the IAEA as it faced the risk of jeopardizing its strategic ties with Washington if it acted otherwise.[ii] Another reason for India's vote was that it wanted to expose A.Q. Khan's links with Iran and China and Pakistan's role in nuclear proliferation.

Iran Pakistan India (IPI) Pipeline Conundrum

The defilement of Iran Pakistan India Pipeline policy and the desecration of its advancement was the aftermath of US pressure on the part of India as she did not stead with the pipeline, the erstwhile nuance of which was otherwise kick-started by India for the progression of importation of LNG to hone up the cheaper delivery mechanism and rebate of gas price. In order to ameliorate the gas pipeline nexus between India and Iran through the bosom of Pakistan a memo

for building the pipeline was signed in 1993 which emerged abortive thanks to the slapdash repudiation of India. It is an outspoken veracity that it was in response to these energy security challenges and as a partial diversification strategy that the IPI pipeline came into focus. Initially proposed in 1989 to transport gas from Iran to India via Pakistan, the pipeline has run into trouble since then. A memorandum for building the pipeline was signed between India and Iran in 1993. The pipeline would have been four times cheaper than any other pipeline option, even after taking into account transit fees to Pakistan. However, discussion between India and Iran fell through when Pakistan refused to allow a feasibility study in its exclusive economic zone.

The Indo-US nuclear deal has played a major role in dampening India's enthusiasm for the IPI pipeline. Pant suggests that it is because of American pressure that India is not proceeding with the pipeline. US concerns, he argues stem from fears that the Indo-Iranian energy relationship would revitalize the Iranian energy sector through oil revenues and open up new possibilities for export of energy from the wider Caspian region through Iran, ultimately undermining its policy of isolating Iran as well as the sanctions. The US also warned major oil companies as well as countries that energy deals with Iran could result in sanctions being imposed on them. The reliable political excerptions source that the US discouraged India from importing gas from Iran and proved accommodating with regard to the Turkmenistan Afghanistan Pakistan India (TAPI) pipeline as it would make central Asia safer. As such it is as clear a mud that the IPI pipeline has not matured for the rhyme or reason of the Western pressure.

India's oil payments and US Pressure

The poser of the Reserve Bank of India sides with influencing ratiocination which showcases the US hand with regard to steering Indian inclination towards Iran. It is an amaranthine veracity that Iran had been supplying crude oil to India on credit and India was in turn making payments by way of Asian Clearing Union (ACU) in order to safeguard itself being triggered by American Sanctions. Not withstanding this radhamantine mechanism the Reserve Bank of India directives ordained that the like oil payments could no longer be settled by means of the longstanding clearing house system known as the ACU. Which is run by the central banks of nine countries including India and Iran. It was established to facilitate payments among its members for eligible transactions on a multilateral bases, thus economising on the use of foreign exchange reserves and transfer costs, as well as promoting trade among the participating countries.

The RBI's justification for the circular was that importers and exporters were facing difficulties in making payments to and receiving money from Iran. The RBI directive concluded that all payments from imports of crude oil from would have to be settled in any permitted currency bypassing the ACU mechanism. This created a stond in oil payments of Iran as well as in the supply of oil and turned a king pin in the creation of crisis of Indo-Iran relations.

According to media reports the RBI has issued the decree under pressure form the US to act against Iran's nuclear ambitions. The RBI's decision brought the government under pressure form local oil companies as well as Iran. Members of the opposition also criticised the RBI's decision. Consequently, in early 2011 India decided to pay for Iranian oil using Euros through the German based Europisch-Iranische Handels Bank AG (EIH Bank). However, the EIH two buckled under US pressure. Subsequently, India used Turkish and UAE banks to settle its oil debuts with Iran, but these banks were not able to handle such large transactions of money. Therefore, on 28 October 2011, according to the Tehran times, India cleared all its debts through the Gazprombant of Russia. India's decision to stop using the ACU for making oil payments to Iran was hailed in the US. The white house assistant press secretary, Tommy Vietor, said that '[the] Reserve Bank of India has made the right decision to carefully scrutinising and reduce its financial dealings with the Central

Bank of Iran', and this latest action adds to the growing list of companies, financial intuitions and governments that are increasingly concerned about Iran's misuse of trade and financial relationships to support illicit activity, including its nuclear programme'. Thus one again sees a US hand in these decisions.

Conclusion : US pressure got made to wring the perverse attitude of India towards Iran for the sake of maintaining the prestige of the former the justifiability of which has affected India to be at daggers drawn with Iran. The antagonistic approach of India towards Iran as regards its nuclear profusion has been established to be consummated at the back and call of US which furthered the rivalry between the nations inter se. India, inter alia, laughed in the wrong side of her mouth concerning not acknowledging the nuclear advancements of Iran and, furthermore, lost its marbles for bulldozing the IPI pipeline strategy with the dire sequel of horrendous pressure of US seeming not fleeting. The perturbing command of US for desecrating the recalibration of pipeline gasification pervaded to succumb the India-Iran nexus. The intrusion of US to backfire India's oil payment transaction with Iran in the semblance of ACU proved Heels of Achilles to be deodorized at ease. The inculcation of US commands by India over Iran is mayhap complished for the sake of her national interest the whence of which stems from India's alfred civil nuclear deal with US. Besides Iran was a spot-on signatory to NPT, and in its animadversion India laughed in the face of Iran by voting drawing a parallel with Iran. Ergo, India machinated against Iran for cementing its ties with U.S. and doomed Iran in enhancing nuclear power. However, after signing civil deal with U.S. India reiterated to help Iran to run riot in nuclear rocketing. The propitious stage for preferment of India-Iranian relations rests with their requited affinity.

References :

i Ashok Alex, Engaging with Iran: Contemporary Challenges to India's Policy, in R.Sidda Goud's, Manisha Mukherjees's (eds.), India and Iran in Contemporary Relations, P76, 2014.

ii Fair, C. Christine, Indo-Iranian Relations: What Prospects for Transformation, in Sumit Ganguly's (eds.), India's Foreign Policy: Retrospect and Prospect, P115,2010.

iii Rajeev Agarwal, Iran's Nuclear Weapons Programme--- How Real is the Threat, in R.Sidda Goud's, Manisha Mukherjees's (eds.), India and Iran in Contemporary Relations, P76, 2014.

iv Harash V.Pant, the US India Nuclear Pact: Policy, process, and Great Power Politics, P84, 2011.

v Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, Strategic Analysis, Vol.36, No. 6, Novemebr December, P904, 2012.

vi Paul K.Kerr, U.S. Nuclear Cooperation with India: Issues for Congress, CRS Report, 30 July 2008, p. 8, athttp://fpc.state.gov/committees/intlrel/hfa23323_of.htm.

vii Harash V. Pant, The US India Nuclear Pact, no iv. P84,2011.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

हिन्दू विधवा महिलाओं की आर्थिक स्थिति : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (धार जिले के विशेष संदर्भ में)

सकली डावर
पी–एच.डी. शोधार्थी, माता जीजाबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर

''भारतीय समाज में विधवा महिलाओं की स्थिति बेहतर करने की आवश्यकता है। जिसको देखते हुये इनके आर्थिक एवं सामाजिक अध्ययन की आवश्यकता है। प्रस्तुत अध्ययन में कार्य स्थल की दूरी एवं समस्याओं पर चर्चा की गयी है साथ ही आर्थिक पहलूओं पर भी प्रकाश डाला गया है। जिससे कहा जा सकता है कि हिन्दू विधवा महिलाओं की स्थिति दयनीय है।''

शब्द कुंजी – हिन्दू विधवा महिलाएँ, आर्थिक, व्यवसाय, धार जिला

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में स्त्री को हर रूप में पूजनीय माना जाता है बावजूद इसके वह किसी न किसी रूप में घर की चारदीवारी के भीतर निरंतर अन्याय, अत्याचार, शोषण का शिकार होती रही है। भारतीय समाज में विवाह संस्था का प्रमुख उद्देश्य ही यह है कि पत्नी को पति से प्रेम तथा ससुराल से सुरक्षा तथा संरक्षण मिलना चाहिए। भारत में पत्नी को गृह लक्ष्मी की संज्ञा दी गई है, किन्तु महिला का शारीरिक तथा मानसिक उत्पीड़न उन व्यक्तियों के द्वारा ही किया जाता है जिन्हें धर्म तथा समाज उसकी अस्मिता की रक्षा करने के दायित्व सौपते है। महिलाएँ आज भी अपने परिवार के सदस्यों की मार तथा गाली सहती है। विधवा महिला की मजबूरी यह है कि शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न को भी वह बच्चों के प्रति अपने दायित्वों एवं सामाजिक निन्दा आदि कारणों से सहन करती जाती हैं, वही अपने भाग्य और पूर्व जन्मों के कर्म का फल मानने लगती है।

बचपन से ही लड़कियों को सिखाया जाता है कि विवाह के बाद उसका वास्तविक घर ससुराल ही है जहाँ वे डोली में बैठकर जाती है और अर्थी में वहीं से उठती हैं, इन संस्कारों के कारण शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न सहते हुए भी जिन्दा लाश की तरह वह अपना जीवन व्यतीत करती हं। भारतीय नारी सृष्टि के आरंभ से अनंत गुणों की खान रही है। नारी समाज की पूरक है। महिला के बिना समाज ही नही बल्कि सृष्टि अधूरी है। नारी को जननी रूप को ध्यान में रखकर विचार किया जाये तो नारी ही समाज का आलम्बन होती है। हम सभी जानते हैं कि नारी से ही घर का निर्माण होता है। इसलिए उसे गृहणी कहा जाता है। वस्तुतः नारी ही घर की शोभा है और सत्य तो यह है कि नारी के बिना घर की कल्पना ही नही की जा सकती है। वैदिक ग्रंथो में नारी की महत्ता के संबंध में महर्षि रमण ने कहा है कि 'पति के लिए चरित्र, संतान के लिए ममता, समाज के लिए शील और जीव मात्र के लिए करूणा संजोने वाली महाकृति का नाम नारी है। 'चन्द्रमा की कलाओं की भाँति नारी का हृदय भी परिवर्तनशील है किन्तु उसमें सदैव एक ही पुरूष का वास रहता हैं। यह कथन भारतीय महिलाओं की प्रशंसा में कहा गया है।

हिन्दू समाज की इसी प्रकृति ने विधवा महिलाओं की स्थिति को निम्न बनाया है। वास्तव में परिवार नारी का मूल केन्द्र है। जहाँ उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। उसे एहसास कराया जाता है कि भविष्य में उसे किस प्रकार के उत्तरदायित्वों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए उसे परिवार के उस परंपरागत ढाँचे में पाला जाता है जहाँ स्त्री की नैतिकता, आदर्श मूल्य और समस्त भविष्य के सपने पति के परिवार में देखे जायेंगे। उत्तरदायित्व का वह बोध निहायत संकीर्ण दायरे में सीमित होकर रह जाता है। इसलिए सपनों में बनी उसकी महत्वाकांक्षाएँ फलीभूत नहीं हो पाती है। ग्रामीण समाज में आज भी विधवा महिलायें समाज की हलचल और प्रगति से कटी दिखती है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. हिन्दू विधवा महिलाओं के व्यवसाय संबधी कारकों का अध्ययन करना।
2. हिन्दू विधवा महिलाओं की मासिक आय का अध्ययन करना।

3. हिन्दू विधवा महिलाओं के कार्यस्थल की दूरी का अध्ययन करना।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन धार जिले की बदनावर, मनावर, कुक्षी, धरमपुरी तहसील से तथ्य संकलित किये गये है।

निदर्शन विधि –

धार जिले के 1484 गांव में से 50 ग्रामों का चयन दैव निदर्शन की लाटॅरी पद्धति से किया गया है। जिसके तहत प्रत्येक गांव से 06–06 हिन्दू विधवा महिलाओं का लिया गया है।

निष्कर्ष –

- उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित शत प्रतिशत उत्तरदाता महिलाओं द्वारा अपने जीवन निर्वाह हेतु किसी न किसी प्रकार का कार्य किया जाता है। सर्वाधिक 160 (53.33%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा कृषि या कृषि मजदूरी का कार्य किया जाता है। 79 (26.33:) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा मजदूरी की जाती है। 03 (01.00%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा आंगनवाड़ी सहायिका का कार्य किया जाता है। 02 (00.67%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा स्कूल में साफ–सफाई का कार्य किया जाता है। 04 (01.33%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा स्कूल में खाना बनाने का कार्य किया जाता है। 04 (01.33%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा साग–सब्जी बेचने का कार्य किया जाता है। 01 (00.33%) उत्तरदाता महिला द्वारा आटा चक्की चलाने का कार्य किया जाता है। 09 (03.00:) उत्तरदाता महिलाा द्वारा ईट बनाने का कार्य किया जाता है। 09 (03.00%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा चमड़े का कार्य किया जाता है। 24 (08.00%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा झाडू बनाने का कार्य किया जाता है, जबकि 05 (01.67%) उत्तरदाता महिलाओं द्वारा अन्य कार्य किये जाते है। स्पष्ट है कि महिलाओं को अपने जीवन निर्वाह हेतु आर्थिक कार्यो को करना पड़ता है। स्पष्ट है कि विधवा अवस्था में उत्तरदाता महिलाओं को अपने जीविकोपॉर्जन हेतु कई प्रकार के कार्य करने पड़ते है। शोध में सम्मिलित सभी महिलाएँ किसी न किसी कार्य में संलग्न है। विधवा अवस्था में आथिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोई साधन नहीं रहता है, परिवार में आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भी किसी प्रकार की आर्थिक सहायता विधवा महिलाओं को प्राप्त नहीं होती है।
- अध्ययन में सम्मिलित 22 (07.33%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 0–500 रू. के मध्य है। 41 (13.67%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 501–1000 रू. के मध्य है। 48 (16.00%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 1001–1500 रू. के मध्य है। 53 (17.67%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 1501–2000 रू. के मध्य है। 28 (09.33%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 2001–2500 रू. के मध्य है। 74 (24.67%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 2501–3000 रू. के मध्य है, जबकि 34 (11. 33%) उत्तरदाता महिलाओं की प्रतिमाह आय 3001 रू. से अधिक है। स्पष्ट है कि विधवा महिलाओं की प्रतिमाह आय न्यूनतम है। वर्तमान महंगाई के समय इतनी कम आय से पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में कठिनाई आती है। विधवा होने की स्थिति में परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा किसी प्रकार का आर्थिक सहयोग नहीं दिया जाता है।
- उत्तरदाता विधवा महिलाओं को अपने कार्य हेतु गाँव से कुछ दूरी पर ही जाना पड़ता है। 21 (07.00%) उत्तरदाता महिलाओं को गाँव में कार्य पर जाना पड़ता है। 91(30.33%) उत्तरदाता महिलाओं को गाँव से 5 कि.मी. दूर कार्य पर जाना पड़ता है। 06 (02.00%) उत्तरदाता महिलाएँ घर पर ही कार्य करती है। 16 (05.33%) उत्तरदाता महिलाओं को गाँव से 02 कि.मी. की दूरी पर कार्य करने हेतु जाना पड़ता है, जबकि सर्वाधिक 139 (46.34%) उत्तरदाता महिलाओं को गाँव से 6 किलोमीटर दूर कार्य करने हेतु जाना पड़ता है। स्पष्ट है सर्वाधिक महिलाओं द्वारा मजदूरी कार्य किया जाता है। इस हेतु उन्हें अधिकतम 6 कि.मी. तक कार्य करने हेतु जाना पड़ता

है। स्पष्ट है कि विधवा महिलाओं की अपनी आर्थिक विवशता रहती है। बच्चों के पालन–पोषण, शिक्षा–दीक्षा, चिकित्सा आदि पर खर्च के लिए उन्हें रूपयों की आवश्यकता होती है, यही करण है कि विधवा महिलाएँ कार्यस्थल दूर होने के उपरान्त भी कार्य करने जाती है।

सुझाव –

- विधवा महिलाओं को रोजगार एवं आर्थिक क्षेत्रों में वित्तीय सुविधाएँ देकर सशक्त किया जाये।
- रोजगार से जोड़ने के लिए सिलाई, कढाई, बुनाई के लिए प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- विधवा हिन्दू महिलाओं का परिवार के सदस्यों द्वारा सम्पति में बराबर हिस्सेदारी देना चाहिए।
- विधवा पेंशन के अन्तर्गत मिलने वाली राशि 350 रूपये से बढ़ाकर 750 रूपये प्रतिमाह दिया जाना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात के साधनों का समुचित प्रबन्ध किया जाए, ताकि ग्रामीण हिन्दू विधवा महिलाएँ अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तहसील या जिला स्तर पर सुगमता से आ सकें।

संदर्भ –

- अल्तेकर ए. एस., द पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1998
- भारतीय नारी वर्तमान समस्या एवं भावी समाधान, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2014
- देसाई नीरा, भारतीय समाज में नारी, मेकमिलन कम्पनी, नई दिल्ली, 2008
- गिरिजा खन्ना, इण्डियन वूमन टूडे, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 2006
- पं. जवाहरलाल नेहरू, फारवर्ड वूमन आफॅ इण्डियास, 1958

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ग्रामीण क्षेत्र में हिन्दू संयुक्त परिवारों की वर्तमान स्थिति एवं समस्याएँ

गोल्डी चुटेल, पीएच.डी. (शोधार्थी)
समाजशास्त्र माता जीजाबाई शा. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

शोध सारांश :– व्यक्तित्व के विकास में बाधक संयुक्त परिवार में व्यक्ति का कोई महत्व नही होता है। यदि कोई सदस्य आगे बढ़ना चाहता हैं और इसके लिए उसे कुछ विशेष सुविधाएँ चाहिए तो संयुक्त परिवार में ऐसा करना संभव नहीं है। कोई सदस्य बुद्धिमान है, मेहनती है, उसके सदस्यों की कार्य कुशलता की उपेक्षा भी ऐसे ही हैं तो उनको विशेष सुविधा नही है। परिवार में अलग से प्रोत्साहन भी किसी को नही दिया जाता है। अनेक ऐसे सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा व्यक्तिगत कारण जो व्यक्ति की कार्य कुशलता में बाधक होते हैं और संयुक्त परिवार उन्हें प्रभावित करता है।

संयुक्त परिवार में सदस्यों की आय मुखिया के पास एकत्र हो जाती है एवं सारे सदस्यों का बराबर ध्यान रखा जाता है। उससे दो हानियाँ होती है। इसमें सदस्य अकर्मण्य ही बने रहते है। बगैर श्रम किए ही उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है। जो सदस्य मेहनती है, कुशल है, उनका विशेष ध्यान नहीं रखा जाता है। संयुक्त परिवार में बुद्धिमान एवं मूर्ख, मेहनती और आलसी व्यवसायी और बेरोजगार सभी को समान रूप से सुख–सुविधाएँ दी जाती है। इससे बुद्धिमान, मेहनती व्यवसायी पर विपरित असर पड़ता है। क्योंकि उसे अपनी मेहनत का फल नहीं मिलता है। इससे वह भी अपनी कार्य कुशलता तथा आय बढ़ाने के लिए प्रयास करना कम अथवा बंद कर देता है।

प्रस्तावना :– संयुक्त परिवार क प्रतिमान मूल्य आदि परम्परागत तथा रूढ़िवादी होते है परिवार के सदस्य अंधविश्वासी, परम्परावादी तथा धार्मिक प्रवृत्ति के होते है। वे अनेक सामाजिक कुरीतियों को छोड़ने का विरोध करते है। बाल–विवाह, पर्दा–प्रथा, जाति–प्रथा आदि का कट्टरता से पालन करते है। हिन्दू समाज में संयुक्त परिवार के माध्यम से अनेक सामाजिक समस्याएँ पीढ़ी–दर–पीढ़ी चली आ रही है, जैसे – स्त्री, अशिक्षा, वैधव्य स्त्रियाँ बड़ा तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करती है और अन्त में सम्पत्ति मकान आदि का बंटवारा हो जाता है।

संयुक्त परिवार में व्यक्ति परिवार के लिए अपना जीवन जीता है। परिवार में जुड़ा रहता है। परिवार छोड़कर बाहर जाने की बात तो व्यक्ति सोच भी नहीं सकता है। संयुक्त परिवार में व्यक्ति का अलग से कोई अस्तित्व नही होता है। वह परिवार के द्वारा तथा परिवार के लिए होता है। इस प्रकार संयुक्त परिवार के आदर्श, मूल्य, मान्यताएँ आदि व्यक्ति की गतिशीलता में बाधक का कार्य करते है।

संयुक्त परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक होती है। हर समय चहल–पहल रहती है। शांति का अभाव रहता है। पति–पत्नी दिन में बातचीत नहीं कर सकते है। बड़े–बूढ़ो का लिहाज करना पड़ता है कई संयुक्त परिवार में पुरूष तथा स्त्रियाँ भवन के अलग–अलग हिस्सों में रहते है। पति–पत्नी परस्पर स्नेह प्रदर्शित नहीं कर सकते। अपनी आयु से अधिक आयु के संबंधियों के सामने माता–पिता अपनी संतानों से बातचीत भी नहीं कर सकते है। बच्चों को डॉट नहीं सकते। प्यार नही कर सकते। इससे उनकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो पाती। इस प्रकार से उन्हें बड़ा संयमी जीवन व्यतीत करना पड़ता है।

संयुक्त परिवार के संबंध में देसाई का कहना है कि यह बड़ा कुटुम्ब होता है। अनेक सदस्य होते है। आपस में संबंधियों को एक–दूसरे को नहीं चाहते हुए भी साथ–साथ रहना पड़ता है। आर्थिक अभाव में तो यह मात्र दिखावा होता है। संबंधियों की आवश्यकता से ज्यादा संख्या होने के कारण उनके परस्पर संबंध औपचारिक हो जाते है। परिवार वातावरण बहुत शुष्क और नीरस होने से सदस्य खुश नही रहते है।

संयुक्त परिवार में स्त्रियों का जीवन नरकमय होता है। पूरा जीवन वह पर्दा–प्रथा के कारण घर की चार दीवारी में व्यतीत करती है। अपना स्वयं का कोई व्यक्तित्व नही होता है।

घर–गृहस्थी का काम करना, रसोई में खाना बनाना, बच्चों की देखभाल करना, सास और ननंद की सेवा करना। उनके लिए मनोरंजन का कोई साधन नहीं होता है। वह अपने विचार व्यक्त नही कर सकती। उन पर पिता, पति और पुत्र नियंत्रण रखते है। संयुक्त परिवार में स्त्रियों की प्रस्थिति दासी जैसी होती है।

संयुक्त परिवार पितृसत्तात्मक होते है। जिसका मतलब है कि परिवार का सबसे बड़ा पुरूष मुखिया होता है। परिवार के सभी सदस्य मुखिया से वाद–विवाद नही कर सकते। मुखिया का निर्णय अंतिम होता है। उसे कोई बदल नहीं सकता है मुखिया के सामने अन्य संबंधियों को अपनी इच्छाओं को दबाकर रखना पड़ता है। अन्य सदस्य अपना असंतोष व्यक्त नहीं कर सकते है।

अध्ययन के उद्देश्य : –

1. ग्रामीण संयुक्त परिवार में नारी की स्थिति व उनकी समस्याओं का अध्ययन करना।

2. ग्रामीण संयुक्त परिवार नातेदारी एवं समाज में सामाजिक अन्तःक्रिया के दौरान उत्पन्न होने वाली समस्याओं का अध्ययन करना।

3. ग्रामीण संयुक्त परिवार के संबंध में अच्छाई व बुराई के बारे में सदस्यों के विचारों को जानना।

उपकल्पना : –

1. वर्तमान समय में ग्रामीण समुदायों में संयुक्त परिवारों में बहुत तेजी से परिवर्तन हो रहे है।

2. संयुक्त परिवार बच्चों के सामाजिकरण में अपनो महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं।

3. ग्रामीण संयुक्त परिवारों मं महिलाओं की स्थिति अपेक्षाकृत निम्न होती हैं।

निदर्शन पद्धति : –

प्रस्तुत शोध अध्ययन को पूर्ण करने हेतु वर्तमान में इंदौर जिले की पाँच तहसील है हातौद, इंदौर, सांवेर, देपालपुर, महू है। इंदौर जिले में 5 तहसील 10 नगर 1 महानगर (इंदौर) एवं 654 गांव स्थित है। इन 654 गांव मं से 30 गांवों को निदर्शन विधि की दैव निर्दशन पद्धति के लॉटरी प्रणाली से प्रत्येक गाँव से 10–10 संयुक्त परिवारों का चुनाव किया गया हैं तथा सम्पूर्ण इंदौर जिले से 300 परिवारों का अध्ययन किया गया है।

निष्कर्ष :–

प्रस्तुत अध्याय में संयुक्त परिवार की समस्याओं से संबंधी जानकारी का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत अध्याय के प्रमुख निष्कर्ष निम्न प्रकार से है –

शोध अध्ययन में सम्मिलित वर्तमान समय में ग्रामीण संयुक्त परिवार में पारिवारिक कलाह के संबंध में जानने पर 229 (76.34%) परिवार में संयुक्त रहने के कारण थोड़ा–बहुत पारिवारिक कलाह होता रहता है। 46(15.33%) परिवार में परिवार के सभी सदस्य मिलजुल कर रहते है और उनमें आपसी पारिवारिक कलाह नही होता है। 25 (8.33%) परिवार में परिवार के सदस्यों के मध्य पारिवारिक कलाह होता है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित 30 वर्ष पूर्व में पारिवारिक कलाह के दौरान उस पर नियंत्रण के संबंध में जानने पर सर्वाधिक 219 (73%) परिवार में पारिवारिक कलाह के दौरान उस पर नियंत्रण परिवार के मुखिया द्वारा रखा जाता था। 81 (27%) परिवार में पारिवारिक कलाह पर नियंत्रण परिवार के मुखिया के साथ–साथ अन्य परिवार के बुजूर्ग पुरूष व महिला सदस्यों द्वारा रखा जाता था।

वर्तमान समय में सर्वाधिक 136 (45.33%) परिवार में पारिवारिक कलाह पर नियंत्रण परिवार के ज्येष्ठ पुत्र द्वारा रखा जाना पाया गया। 102 (34%) परिवार में पारिवारिक कलाह पर नियंत्रण परिवार के मुखिया द्वारा रखा जाना पाया गया। 62 (20.67%) परिवार में पारिवारिक कलाह के दौरान उस पर नियंत्रण परिवार के मुखिया के साथ–साथ अन्य परिवार के बुजूर्ग पुरूष व महिला सदस्यों द्वारा रखा जाता है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित 30 वर्ष पूर्व परम्परागत ग्रामीण संयुक्त परिवार में कन्या के जन्म के बारे परिवार की मनोवृत्ति जानने पर सर्वाधिक 140 (46.67%) परिवारो में पूर्व समय में पुत्र प्राप्ति को अनिवार्य माना जाता था। 81 (27%) परिवार में कन्या का जन्म अच्छा माना जाता था। 63 (21%) परिवार में कन्या का जन्म दुख का कारण माना जाता था। 16 (5.33%) परिवार मं लड़का–लड़की में अंतर नही करते थे।

वर्तमान समय में सर्वाधिक 127 (42.33%) परिवार में कन्या का जन्म अच्छा माना जाता है। 91 (30.33%) परिवार में लड़के–लड़की में कोई अंतर नही किया जाता है। 82 (27.34%) परिवार में आज भी पुत्र प्राप्ति अनिवार्य माना जाता है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित परम्परागत ग्रामीण संयुक्त परिवार में महिलाओं द्वारा पर्दे के संबंध में जानने पर 151 (50.33%) परिवारो में महिलाओं द्वारा पर्दा किया जाता है। 149 (49. 67%) परिवारो में महिलाओं द्वारा सिर्फ सिर पर पल्ला रखा जाता है। लेकिन इन परिवारो में पूरी तरह पर्दा नही किया जाता है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित कि ग्रामीण संयुक्त परिवारो में जिन परिवारो में महिलाएँ पर्दा नही करती है सिर्फ सिर पर पल्ला रखती है वे महिलाएँ किन विशेष अवसरो पर पर्दा करती है कि बारे में जानने पर 151 (50.33%) परिवारो में तो महिलाआं द्वारा उपरोक्त सभी परिस्थितियों में पर्दा किया जाता है। परंतु 149 (49.67%) परिवारो में महिलाओं द्वारा पर्दा केवल जाति समारोह और अतिथि आगमन पर ही किया जाता है अर्थात् उपरोक्त दोनों स्थिति में ही पर्दा किया जाता परिवार के बड़े–बुजूर्ग व मुखिया के सामने पर्दा नही किया जाता है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित परम्परागत संयुक्त परिवार में महिलाओं द्वारा किये जाने वाले पर्दे के बारे में स्वयं परिवार की महिलाओं के विचार जानने पर 196 (65.33%) परिवार की महिलाओं के अनुसार पर्दा प्रथा का समर्थन नहीं किया गया है। 104 (34.67%) परिवारो में महिलाओं द्वारा पर्दा प्रथा का समर्थन किया गया है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित परम्परागत परिवार में महिलाओं के पर्दे के संबंध में मुखिया एवं अन्य पुरूष सदस्यों के विचार जानने पर 253 (84.33%) परिवारो के मुखिया एवं पुरूष सदस्य पर्दा प्रथा का समर्थन करते है। 47 (15.67%) परिवार के मुखिया एवं पुरूष सदस्य महिलाओं के पर्दे का समर्थन नहीं करते है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित परम्परागत ग्रामीण संयुक्त परिवार में तलाक के संबंध में जानने पर 293 (97.67%) हिन्दू परिवारो में विवाह को एक धार्मिक संस्कार माना जाता है जो अविच्छेद्य संबंध है, अर्थात् इसे तोड़ा नही जा सकता है। 7 (2.33%) परिवार में तलाक हुआ है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित परम्परागत संयुक्त परिवार में तलाक लेने वाले सदस्य के बारे में जानने पर 293 (97.67%) परिवार के सदस्यों का तलाक नहीं हुआ है। 3 (1%) परिवारो में परिवार की महिला सदस्यों का तलाक हुआ है। 4 (1.33%) परिवार में परिवार के पुरूष सदस्य का तलाक होना पाया गया है। अतः अध्ययन से स्पष्ट में है कि वर्तमान समय में बहुत कम प्रतिशत लोगों में तलाक के प्रति जागरूकता देखने को मिली है।

शोध अध्ययन में सम्मिलित परम्परागत ग्रामीण संयुक्त परिवार में 293 (97.67:) परिवार में किसी का भी तलाक नही हुआ है। 3 (1%) परिवार में महिलाओं पर काम का अधिक बोझ होने के कारण तलाक हुआ है। 4 (1.33%) परिवार में तलाक का मुख्य कारण पति–पत्नी के मध्य आपसी झगड़ा होना पाया गया है।

वर्तमान समय में सर्वाधिक 100 (33.33%) परिवार में किसी भी प्रकार की पारिवारिक समस्या के समाधान हेतु परिवार के सभी सदस्य समस्या के बारे में मिलकर चर्चा करते है। 82 (27.33%) परिवार के सदस्य समस्या के समाधान हेतु सभी सदस्य मिलकर आर्थिक सहयोग प्रदान करते ह। 88 (29.34%) परिवार में समस्या का समाधान परिवार के मुखिया द्वारा किया जाता है। 30 (10%) परिवार में समस्या का समाधान परिवार के अन्य किसी नातेदार से मिलकर सलाह ली जाती है।

सुझाव :–

1. वर्तमान समय में सदस्यों की संख्या के आधार पर संयुक्त परिवार का आकार पूर्व की अपेक्षा छोटा होता जा रहा है। शहरी आकर्षण व आधुनिक जीवन शैली के फलस्वरूप परिवार के सदस्य गाँव को छोड़ शहरो में आकर बसने लगे है। जिसके कारण संयुक्त परिवार विघटित होने की स्थिति में है। वर्तमान समय में ग्रामीण संयुक्त परिवार को विघटित होने से बचाये जाना आवश्यक है।
2. वर्तमान समय में भारतीय संविधान स्त्रियों को समानता, स्वतंत्रता, सम्पत्ति, शिक्षा, संवैधानिक उपायों तथा शोषण के विरूद्ध अधिकार प्रदान करता है। परंतु आज भी ग्रामीण समुदायों की महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता की कमी है। महिलाओं को अनेक परिवारिक प्रतिबंधों का सामना करना पड़ता है। अतः आवश्यकता है कि महिलाओं को घर की चार दिवारी से बाहर लाया जाये उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक किया जाये। महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन बहुत धीमी गति से हो रहा है उस परिवर्तन का तीव्र करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जैन शोभित, भारत में परिवार विवाह और नातेदारी, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2010
2. देसाई, ए.आर., भारतीय ग्रामीण – समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2009
3. शर्मा दीप्ति, भारतीय समाज एवं संस्कार, रितु पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2013
4. शर्मा कैलाशनाथ, पारिवारिक समाजशास्त्र, किताब महल, इलाहाबाद, 1965
5. बघेल डॉ.डी.एस, भारत में सामाजिक परिवर्तन व सामाजिक समस्याएं, पुष्पराज प्रकाशन, रीवा, 1987

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

महाकौशल की जनजातियों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में

डॉ. कृष्णा बागडे
एम. ए. , एम. फिल, पीएच. डी. इतिहास विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

जनजातीय कला एवं संस्कृतिक का इतिहास में गौरव परिलक्षित होता है। डॉ. बेरियर एल्विन के शब्दों में, जनजातीय ने अपने आप को कला एवं संस्कृति में मनोरंजन के रूप में बहुत ही उँचे दर्जे की सफलता अर्जित की है। जनजातियें ने मानव जीवन को सजाने सवारने का काफी बरसक प्रर्यास किया हैं और उन्हे इसका पर्याप्त फल भी मिलता गया है। मानव ने अपने जीवन के विभिन्न स्तरो पर कला रूपी समाज विकसित करने का भरपूर प्रयास किया है। जो आज हम सब देखते है कि महाकौशल कि जनजातीयो कि कला कितनी निखर पायी है। आये दिन उनकी कला समाज और देश विदेश में कई रूपो में सामने प्रकट हो जाती है किसी ना किसी रूपो में हमें देखने को मिलती है।1.

जनजातिय कला का विकास महाकौशल के नाम सें प्रसिध्द हैं किसी भी जाती, धर्म, नस्ल या फिर सम्प्रदाय से क्यों ना हो सभ्यता और संस्कृति का परिचय दें देती है हमें उसकें काव्य गीत कला और चित्रकला में वे सारी खुबीया नजर आती है कला के अंतर्गत लोकगीत, लोकनृत्य, कहानिया क्षेत्रीय भाषा खान– पान, रहन– सहन वेश– वूशा आदी प्रकार कि संस्कृतिकयो को परखा जा सकता है और इन सभी गुण धर्मो से इनकी जाती, धर्म, नस्ल, और सम्प्रदाय परिलक्षीत होती है लोक जीवन की चेतना पुर्वजो के द्वारा लिपीबध्य ग्रंथों के माध्यमों से पता चलता हैं जो साहित्य के रूप में आज भी ग्रंथालयों में सुरक्षित देखने को मिलता है। जो किताबों एवं ग्रंथों में लिपीवध्य हों सकें कि हमारे पुर्वाजों नें क्या परेशानी झेली ,देखने को मिलती हैं।2.

महाकौशल की जनजातीय समाज हमारे जीवन का महासमुद्र है उसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी कुछ उल्लेखित रहता है। जो कि ग्रंथालयो में सुरक्षित है। जनजातीय समाज ही राष्ट्र का अमर स्वरूप है। अर्वाचीन मानव के लिए जनजातिय मानव प्रमुख है। इसका वास्तविक अध्ययन करने के लियें उसें जनजातीय रूपी समाज से मिलना और उसकी रीति रिवाज के ढाँचे से जुडना होगा भी हमारं समाज को और अधिक निखार ला सकते हैं। जनजातीय समाज के कई प्रकार के कलाकृत्रीयाँ इस महाकौशल में विध्दमान है। जिसकों विकसित करना और समाज का भी विकास करना उनकी कलाओ को परखना, जनजातीय समाज का पूर्णतह अध्ययन में सफल हो पायेंगें।3.

महाकौशल का जनजातोय समाज यह भी स्वंय सिध्द करता है। कि किसी भी जाती विशैष के जनजातीय लोक नृत्यों में उस जाती कि सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतीक रीती–रिवाजों का पूर्णतह प्रक्टिकली दर्शन हो जाता हैं जानजातीयों के लोकगीत लोकनृत्य में भी उन सभी दैनिक जीवन से जुडं सभी पहलुओं से अवगत हो सकतें है। इनको जानने कें लिए निम्नलिखित बिन्दु दर्शाये गयें है– 4.

1. अत्यंत ओजपूर्ण शक्तिशाली अंग भंगगिमाओं और लय ताल कि पुष्टि से अत्यंत सरल और जटिल कलाओं की प्रस्तुती।
2. कतार बध्द गोलाकार कतार तथा चौकोर और कई गोलाकार कतारों में संगठन और अंग भंगिमाओं के गठन में अत्यंत चुस्त और सरल कला।
3. अधिकतर मिश्रित नृत्य स्त्री पुरूषों की भावात्मक प्रतिक्रिया नृत्य में संग नाचतें हुए भी अत्यंत स्वरूप और स्वाभाविक और सटिक द्रश्यों का चित्र।
4. नृत्यों के साथ–चलने वाले गीतों और ध्वनियो में सरलता एकरूपता, एकरसता कभी–कभी साजों का प्रयोग नही भी करतें है। ओर यदि करते है तो साजो के दिखावे अत्याधिक आकर्षक परन्तु वादन अत्यंत सरल और प्राथमिक होते है।
5. नृत्यो के साथ चलने वाले गीतों में शब्दों से अधिक ध्वनि का प्राधान्य तथा गूँज पैदा करने वाले स्वर आदि वादन पत्रो

का प्रयोग जनजातीय समाज में देखा गया हैं।

6. अधिकतर सामाजिक नृत्य कथा नृत्यों का मिलाना अभाव होता था।
7. आकर्षक अलंकरण प्रकृति के निकट होने से पोषाक बहुत अधिक आकर्षक परिलक्षित होता था जिसके कारण कला बहुत हो सुन्दर नजर आतो थी।

महाकौशल का समाज कहीं रूपों में बिखरा था लेकिन सार्वोजनिक उत्सवो में वे सभी जनजातीय समाज एकजुट हों जाता था जनजातीयों के द्वारा धार्मिक उत्सवों प्रयोग में लायें जाने वाले वाद्य यंत्र विभिन्न प्रकार के होते है जिसमें ढोल, बांसुरी, पाइप, धातु के पहिये, करताल, झांझ, सींग आदि ऐसे वाद्य है जो भारतीय जनजातीयो के लोग अपने ओर अन्य समाज का मनोरंजन करने में इनका प्रयोग करते हैं इस वाद्य यंत्रो का आज भी संग्रहालयों म्यूजियम में सुरक्षित रखा गया है इन वाद्य यंत्रो को देखकर आज भी वे पुरानो यादें तरों ताजा हो जाती है यह इस बात का वास्तविक प्रमान है महाकौशल का जनजातीय समाज का वास्तविक स्वरूप था।5.

जनजातीयो के समस्त नृत्य रागरागिनियों से सम्पन्न होते है। संगीत उनका प्राण है उसके बिना नृत्यो का अस्तिव मिट जाता है इसी कारण उनसे सारे नृत्या को समोये रखा है। ये जनजातीय समाज पूर्णता मेहनती होते है ये अपनी थकान को मिटाने के लिये नृत्य का सहारा लेते है और सुरापान भी किया जाता है जो कि उनका प्रिय पेय पदार्थ है। जनजातीयो के नृत्य निम्न रूपो से दर्शाये गये है–6.

- करमा नृत्य, सेला नृत्य, सींग मडिया नृत्य, गौर नृत्य, होरिया नृत्य, बैगा नृत्य, बिसोन नृत्य, डुल्की नृत्य, आदि नृत्य का प्रयोग धार्मिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक उत्सवों के अवसरो पर प्रस्तुत किया जाता है। और जनजातीय समाज इन उत्सवो के अवसरो पर मंदिरा पान का नसा का महत्व रखते है इसी वक्त पुरा समाज आनन्द में लीन रहते है गले भी मिलते है इस प्रकार महाकौशल का जनजातीय समाज एक जुट होकर आनन्द उठाते है।

वनवासियो का समस्त नृत्य जनजातियो के प्रिय नृत्य होते थे जो कि सजावट तथा चित्रकला अत्यंत आकर्षक होते है – जैसे– 7.

करमा नृत्य– यह नृत्य गोलाकार वृत में होता है ढोल के थाप पर युगल एक दूसरे के गले और कमर में हाथ डालकर धीरें धीरें नाचते है इसमें कुमारी युवतीया और कुवाँरे युवक भाग लेते है। और आनन्द उठाते है।

सेला नृत्य– सेला नृत्य में छोटे छोटे डंडो का प्रयोग किया जाता है शनै शनै डंडो को बजाते है जब ये नौजवान अपने पैरो को धरती पर एक साथ पटखते है तब एक प्रकार कि मनोहरनी स्वरलहरी से वातावरण ध्वनित हो जाता है।

सिंग मडिया नृत्य– सिंग मडिया नृत्य में पुरूष नर्तक अपने सिर पर भैसे के सिंग लगाकर नृत्यगान करते है।

गौर नृत्य– इस नृत्य में जहा भैस के सिंग बांधे हुये नर्तक अलग–अलग होकर नाचते है वही नर्तकियां नर्तको का हाथ पकडकर गोलाकार नृत्य करते है।

होरिया नृत्य– होरिया नृत्य होली के पर्व के अवसर पर कोरकु जनजाती द्वारा किया जाने वाला नृत्य है यह होली जलाने के स्थल पर निरन्तर वृत में घुमकर किया जाता है। इसमें केवल पुरूष वर्ग ही सम्मिलित होता है स्त्रियां नही ।

बैगा नृत्य– बैगा नृत्य की शैली भिन्न होने से उसका नाम बैगा रखा गया है इसि जाती का दुसरी शैली बैमर नृत्य कहलाता है।

बिसोन नृत्य– बस्तर के मढियो का बिसोन नृत्य है स्त्री और पुरूष के पहनाव देखते ही बनता है।

डुलकी नृत्य– इस नृत्य में सभी लडके और लडकियां अपनी अलग अलग पंक्तियां बनाकर खडे हो जाते है।

निष्कर्ष : जनजातीयो कि समाजिक सास्कृतिक एवं वैज्ञानिक भावनाओं से अवगत होने कि नितांत

आवश्यकता है जनजातीयो पर सामाजिक धार्मिक सांस्कृतिक आदि का व्यापक प्रभाव दिखाई पडता है जनजातियो कि कला भारतिय सांस्कृतिक का गौरव का विषय है और इसे संजोना एवं सवारना प्रत्येक भारतिय का अहम उत्तरदायित्व है हमें जनजातीयो से प्रेम स्नेह मित्रता आत्मीयतापूर्ण भावना के साथ में उनसे मिलना चाहिये जिससे उनको अपनापन महसूस हो जिससे वे उनके जिवन से जुडे हर पहलु को हमारे सामने प्रस्तुत करने मे जरा भी संकोच महसूस न करें उनको ऐसा महसूस करने के लिये मजबूर करना होगा वास्तव में जनजातियो के लोकनृत्य,गीत, आदी हमारी सामाजिक सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक धरोहर है यह पुरातन सांस्कृतिक क जीते जागते नमुने है और इनका संरक्षण करना हमारा परम दायित्व है। इस सम्पूर्ण शोध पत्र से यह निष्कर्ष मिलता है कि जनजातीय समाज किसी न किसी रूप में सांस्कृतिक, सामाजिक एवं धार्मिक तथा वैज्ञानिक रूप से परस्पर जुडा है इसे संजोये रखने के लिए प्यार और कोमल स्नेह कि आवश्यकता है।8.

सन्दर्भ – सूची

1 शुक्ल प्रयागदत्त : अरण्य की सांस्कृति, विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन नागपुर, 1964, पृ. 97।
2 डॉ शुक्ल हिरालाल, प्रचीन वस्तर का सांस्कृतिक इतिहास विश्व भारतिय प्रकासन, नागपुर 1978 पृ. 135।
3 अग्रवाल महावीर (संपा.) लोक सांस्कृति आयाम एवं परिप्रेक्ष्य श्री प्रकाशन, दुर्ग 1993 पृ. 10।
4 जैन श्री चंद्र : आदिवासियो के बीच किताबघर, दिल्ली 1980 पृ. 35।
5 हसनैन नदीम : जनजातीस भारत जवाहर पब्लिषर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स– 1992 पृ. 248।
6 शुक्ल प्रयागदत्त : पूर्वोक्त पृ. 97।
7 माहेश्वरी रामगोपाल (संपा.) : श्री शुक्ल अभिनन्दन ग्रंथ विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागपुर 1955 पृ. 46–47।
8 जैन श्रीचंद : पूर्वोक्त, पृ. 137–138।
9 पयोधि लक्ष्मीनारायण (संपा.) : संग्रहालय दर्शन, आदिम जाती अनुसंधान एवं विकास संस्थान, भेपाल, पृ. 15।
10 डॉ. चौरे नारायण : आदिवासीयो के घोटुल, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर– 1994 पृ. 18।
11 पाटिल आशेक : कोरकू जनजीवन, विष्वभारतीय प्रकाशन नागपुर– 1993 पृ. 50–51।
12 शुक्ल प्रयागदत्त : पूर्वोक्त, पृ. 107
13 डॉ. चौरे नारायण : आदिवासीयो के घोटुल, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर– 1994 पृ. 18।
14 विजय गुर्वे (अतिथि विद्वान) एम. ए. , यू. जी.सी. नट इतिहास विभाग शोधपत्र से।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार और जिज्ञासा पर माता के कार्य की प्रकृति के व्यवहार के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. (श्रीमती) संध्या कोष्टा
सहायक प्राध्यापक, श्री गुरू तेगबहादुर खालसा महाविद्यालय, जबलपुर म.प्र.

प्रस्तावना : बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अभिभावकों को साधन जुटाने के लिए कड़ा संघर्ष करना होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु वर्तमान समय में माता–पिता दोनों को ही धनोपार्जन करने की आवश्यकता प्रतीत होने लगी है। शिक्षा क साथ ही रहन–सहन के मानदण्डों में भी परिवर्तन आया है, प्रत्येक क्षेत्र में महंगाई के बोझ को कंधे पर लेकर आगे बढ़ना सामान्य सी बात हो गई है। ऐसे समय में बालकों की आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ ही शिक्षा के व्यय–भार का वहन करने हेतु माता–पिता दोनों को ही नौकरी अथवा व्यवसाय में लगना होता है। माता यदि नौकरी या व्यवसाय करती है तो उसके बालकों को दिए जाने वाले समय में कटौती अवश्य हो जाती है। कभी–कभी वह बालकों पर, उनकी परवरिश और शिक्षा पर पूरा–पूरा ध्यान नहीं दे पाती है और उसके व्यवहार मे भी उसके घर और बाहर के काम की थकान अथवा नौकरी का तनाव हावी हो जाता है। किंतु सदैव ऐसा ही होता है, ऐसा कहना गलत होगा क्योंकि स्थिति परिस्थिति इसके विपरीत भी हो सकती है। यह निर्भर करता है माता की सक्रियता अथवा निष्क्रियता पर, कि वह कैसे व्यवहार को अपनाती है। फिर भी कभी न कभी कामकाजी माता के व्यवहार पर संकट के बादल मंडराने ही लगते हैं।

दूसरी ओर गृहणी या अकामकाजी माताओं के पास बालकों की परवरिश करने व उनकी देखभाल करने का पर्याप्त समय होता है। उनका सारा समय बालकों के लिए होता है। अकामकाजी माताएं बालकों की किसी भी आवश्यकता को पूरा करने के लिए उपलब्ध होती हैं। घर के काम–काज की थकान के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के थकान और तनाव से वे ग्रस्त नहीं होतीं, न ही घर के अतिरिक्त और कोई तनाव का सामना करती हैं। किंतु सदैव इन माताओं का मार्गदर्शन इनके बालकों को मिल पाता है अथवा इनका व्यवहार सदैव मुखरित रहता है उसमें कदापि निष्क्रियता नहीं आती, ऐसी अकामकाजी मातां सदैव अपने बालकों की प्रत्येक जिज्ञासाओं का त्वरित समाधान करती रहती हैं और उन्हें सीखने के लिए उत्प्रेरित करती हैं। उनके अधिगम व्यवहार को परिमार्जित करती रहती हैं, आदि बातों को सत्य सिद्धांत रूप में स्वीकार कर लेना उचित नहीं माना जा सकता है।

अपवाद दोनों ही प्रकार की माताओं में मिलते हैं। कामकाजी या अकामकाजी माताओं के वर्ग में किसी भी एक वर्ग की माताओं के व्यवहार को हम संपूर्ण और सटीक कहने की स्थिति में स्वयं को नहीं पा सकते।

कभी–कभी परिवार में माता के कामकाजी होने पर उन्हें अधिक समय नहीं मिलता एवं पर्याप्त समय देने में असमर्थता व्यक्त करते हैं, ऐसे में बालक स्वयं ही जिज्ञासा को शांत करने की कोशिश करता है। जबकि संयुक्त परिवारों में माता–पिता के व्यस्त होने के बावजूद बालक स्वयं की रुचि, इच्छा को परिवार में अन्य लोगों के सामने व्यक्त कर पाता है व उनका समाधान ढूँढता है। इस प्रकार बालक की जिज्ञासा पर माता की व्यस्तता महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है।

उद्देश्य

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) के अधिगम व्यवहार और जिज्ञासा पर प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना

1. अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर सार्थक प्रभाव है।
2. अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की

प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर सार्थक प्रभाव है।

शोध विधि – यह शोध वर्णनात्मक अनुसंधान के अंतर्गत आता है।

क्षेत्र – प्रस्तुत शोध कार्य में अभिभावकों के पर्याप्त व अपर्याप्त व्यवहार के साथ माता के कामकाजी व अकामकाजी प्रकृति का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार व जिज्ञासा पर प्रभाव देखा गया।

उपकरण

1. अभिभावकों का व्यवहार मापनी
2. विद्यार्थी अधिगम व्यवहार मापनी
3. बालकों की जिज्ञासा मापनी

न्यादर्श

अध्ययन हेतु जबलपुर नगर के शासकीय व अशासकीय हिन्दी माध्यम के माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों का चयन किया गया है। कक्षा छठवीं के छात्र–छात्राओं को न्यादर्श के लिये चयन किया गया है।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या

सारणी क्रमांक 01

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर प्रभाव संबंधी परिणाम

अभिभावकों का व्यवहार समूह	माता के कार्य की प्रकृति	विद्यार्थियो की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
पर्याप्त N = 200	कामकाजी	79	26.68	8.71
	अकामकाजी	121	26.25	8.15
अपर्याप्त N = 200	कामकाजी	76	25.76	8.23
	अकामकाजी	124	25.15	8.87

विचरण के स्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	औसत वर्ग	F – अनुपात	सार्थकता स्तर
समूहों के बीच	3	135.23	45.08	0.62	N.S.
समूहों के मध्य	396	72.31	72.31		

स्वतंत्रता के अंश = 3396 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान = 2.62

आरेख क्रमांक 01

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर प्रभाव संबंधी परिणामों का आरेखी निरूपण

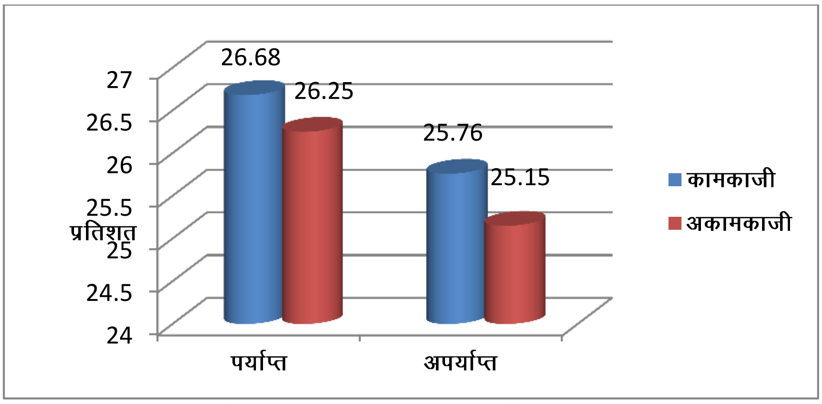

अभिभावकों का व्यवहार एवं माता के कार्य की प्रकृति

उपरोक्त सारणी एवं आरेख से स्पष्ट होता है कि अभिभावकों के व्यवहार

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

(पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि एफ अनुपात का मान 0.62 आया है जो 0.05 विश्वास स्तर के न्यूनतम निर्धारित मान 2.62 की अपेक्षा कम है।

अतः उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि अभिभावकों क व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

अस्तु पूर्व कथित परिकल्पना कि ''अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर सार्थक प्रभाव है'' सत्यापित नहीं हुई।

सारणी क्रमांक 02

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर प्रभाव संबंधी परिणाम

अभिभावकों का व्यवहार समह	माता के कार्य की प्रकृति	विद्यार्थियों की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
पर्याप्त	कामकाजी	79	72.95	19.63
N = 200	अकामकाजी	121	75.69	17.62
अपर्याप्त	कामकाजी	76	66.72	17.50
N = 200	अकामकाजी	124	68.92	18.59

विचरण के स्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	औसत वर्ग	F – अनुपात	सार्थकता स्तर
समूहों के बीच	3	4836.14	1612.05	4.81	<0.01
समूहों के मध्य	396	132770.25	335.28		

स्वतंत्रता के अंश = 3396 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान = 3.83

आरेख क्रमांक 02

अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की पकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर प्रभाव संबंधी परिणामों का आरेखी निरूपण

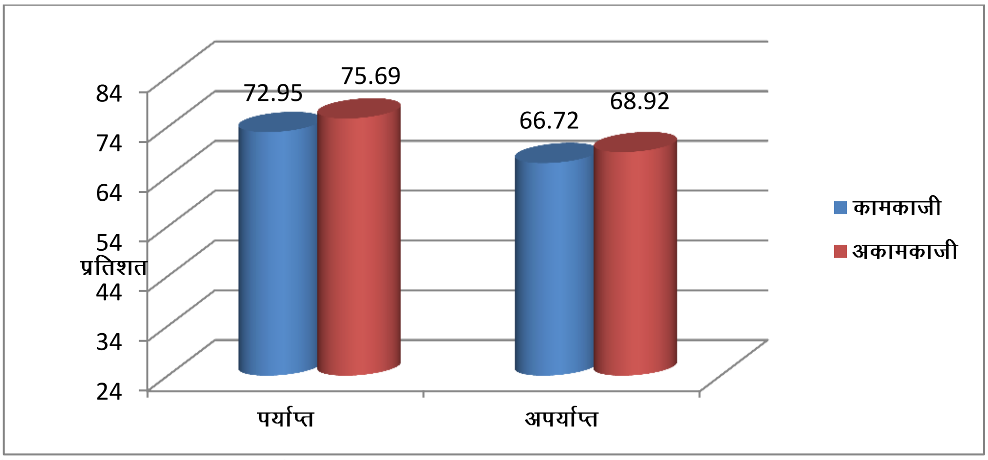

अभिभावको का व्यवहार एवं माता के कार्य की प्रकृति

उपरोक्त परिणाम से स्पष्ट होता है कि अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर प्रभाव पड़ता है, क्योंकि एफ अनुपात का मान 4.81 आया है जो 0.01 विश्वास स्तर के न्यूनतम निर्धारित मान 3.83 की अपेक्षा अधिक है।

अतः उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि अभिभावकों

के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर सार्थक (P<0.01) प्रभाव पड़ा है।

अस्तु पूर्व कथित परिकल्पना कि ''अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर साथक प्रभाव है'' सत्यापित हुई।

विवेचना

सारणी क्रमांक 01 के अंतर्गत अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कामकाजी या अकामकाजी) होने का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया। लुईस ने ''बच्चों और परिवार पर कामकाजी माताआ के प्रभाव का अध्ययन'' कर निष्कर्ष दिया कि कामकाजी माताओं की अपने बच्चों के साथ उच्च सकारात्मक अंतःक्रिया पायी गयी। कामकाजी माताओं की बच्चियों में उच्च शैक्षणिक उपलब्धि, गैर पारम्परिक जीवन वृत्ति के प्रति रूझान पाया गया। बूवर्यिका (2011) ने अपने अध्ययन के निष्कर्ष स्वरूप बताया कि कामकाजी महिलाओं की लड़कियाँ संवेगात्मक रूप से अपेक्षाकृत स्वस्थ जीवन का अनुभव कर रही थीं। अकामकाजी महिलाओं के लड़कों की अपेक्षा कामकाजी महिलाओं के लड़के संवेगात्मक रूप से स्वस्थ पाये गये। प्रस्तुत शोध के परिणाम दर्शाते हैं कि अभिभावको का व्यवहार पर्याप्त हो अथवा अपर्याप्त, विद्यार्थियों पर माता के कामकाजी अथवा अकामकाजी होने का उनके अधिगम व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव परिलक्षित नहीं हुआ। कारक वातावरणीय घटक भी हो सकते हैं अथवा इस आयु वर्ग के बालकों के अधिगम व्यवहार पर उनके स्वयं के अंतर्निहित गुणों का प्रभाव पड़ रहा हो। स्पष्ट है कि शिक्षा बालक के अंतर्निहित गुणों को उभारती है और इस आयु वर्ग के बालक पाँच वर्षों तक शालेय शिक्षा ग्रहण कर चुके हैं। सम्भव है कि उनमें प्रतियोगिता की भावना भी पनप चुकी हो और अधिगम व्यवहार पर उनको कल्पना प्रधान क्रियाएँ या फिर स्वेच्छा से कार्य करने की प्रवृत्ति अथवा बेहतर समायोजन योग्यता या सफलता का अनुभव और व्यक्तिगत रुचि आदि अन्य कई कारक प्रभाव डाल रहे हों।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के प्राप्त परिणाम के अनुसार अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर सार्थक प्रभाव (P<0.01) पाया गया है। (सारणी क्रमांक 02) अभिभावकों के पर्याप्त व्यवहार समूह के विद्यार्थियों के मध्यमान अपेक्षाकृत उच्च परिलक्षित हुए। कहा जा सकता है कि अभिभावकों का पर्याप्त व्यवहार बालक की जिज्ञासाओं का सही प्रकार से समाधान प्रस्तुत करने हेतु अपेक्षाकृत अधिक जागरूक व सतर्क रहकर बालक के व्यक्तित्व को उचित दिशा देने का प्रयास करता है। अभिभावकों के अपर्याप्त व्यवहार समूह के विद्यार्थियों के लिए इसकी उपलब्धिता सम्भवतः कम हो सकती है। अभिभावकों के व्यवहार का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर सार्थक प्रभाव पाया गया।

सुझाव

- वे विद्यार्थी जिनकी माताएँ कामकाजी हैं उन्हें माता के छोटे–छोटे गृहकार्यों में उनकी सहायता करते हुए, उनसे बातचीत करते हुए अपनी जिज्ञासाओं की संतुष्टि के लिए प्रयास करना चाहिए। दैनिक समाचार पत्रों में छपे हुए ज्ञानवर्धक, रोचक समाचारों के विषय या अन्य सामान्य जानकारी के विषय में चर्चा करनी चाहिए। इससे उनके ज्ञान का विस्तार होगा, अधिगम व्यवहार को बल मिलेगा, स्वाध्यायी और स्वावलम्बी बनने की दिशा में सहायता मिलेगी। विद्यार्थियों की माताएँ कामकाजी हों अथवा अकामकाजी, वे अपने बच्चों की सच्ची मित्र और पथदर्शक होती हैं। विद्यार्थियों को, माताओं को, मित्र और मार्गदर्शक मानते हुए उनसे निःसंकोच विचारों, जिज्ञासाओं, समस्याओं को बांटना चाहिए और विभिन्न विषयों की जानकारी लेने का प्रयास करना चाहिए। क्या, क्यों, कैसे, कब, कहाँ, कौन– इस तरह के प्रश्नों के प्रत्युत्तर माता से बात ही बात में पूछे जा सकते हैं।
- कामकाजी माताओं का यह प्रयास होना चाहिए कि वे काम के तनाव को घर पर हावी न होने दें और बच्चों की पढ़ाई–लिखाई और अन्य जरूरतों को पहले स्थान पर रखते हुए आगे बढ़ें, उन्हें स्वाध्याय हेतु पोत्साहित करें और उनका मार्गदर्शन अवश्य करें। बच्चों की जिज्ञासा का उचित समाधान करने का प्रयास करें

और उनके अधिगम व्यवहार को बढ़ाने की दिशा में स्वयं भी अध्ययन में रुचि लेते हुए उनका आदर्श बनें।

- कामकाजी माताएँ बच्चों से आवश्यकता से अधिक दुलार न करते हुए उन्हें स्वावलंबी बनाने का प्रयास करें। उनको अधिक से अधिक ज्ञानार्जन की प्रेरणा दें, उनकी जिज्ञासाओं का उचित समाधान करें और उनको स्वाध्याय हेतु उत्साहित करें तथा अध्ययन के प्रति उनमें रुचि जागृत करें। इस दिशा में घर का वातावरण अनुकूल बनाए रखें।

निष्कर्ष

- अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों के अधिगम व्यवहार पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया।
- अभिभावकों के व्यवहार (पर्याप्त/अपर्याप्त) एवं माता के कार्य की प्रकृति (कामकाजी/अकामकाजी) का विद्यार्थियों की जिज्ञासा पर सार्थक प्रभाव ($P<0.01$) पाया गया।

संदर्भ

1. अग्रवाल, नीता (2012) बाल विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
2. भटनागर, ए.बी. (1993) शिक्षण अधिगम का मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
3. मिश्रा, महेन्द्र कुमार (2009) शैक्षणिक अधिगम के सोपान, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।
4. पारिक, आशा, बाल विकास एवं पारिवारिक सम्बंध, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
5. राय, पारसनाथ (2006) अनुसंधान परिचय, द्वादशम् संस्करण, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
6. शर्मा, आर.ए. (2003) छात्र का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, नवीन संस्करण, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
7. श्रीवास्तव, महेन्द्रनाथ (2012) बाल विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
8. शर्मा, विमला (1980) पारिवारिक सम्बंध एवं बाल विकास, प्रथम संस्करण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।

आवासीय विद्यालय के दिवा विद्यार्थी एवं अंतेवासी विद्यार्थियों क संवेगात्मक स्थैर्य का तुलनात्मक अनुशीलन

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

डॉ. अम्बिका तिवारी
सहायक प्राध्यापक, श्री गुरूतेग बहादुर खालसा महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र आवासीय विद्यालय में पढ़ने वाले दिवा व अंतेवासी छात्र–छात्राओं की संवेगात्मक स्थैर्य के तुलनात्मक अध्ययन से संबंधित है। शोध अध्ययन हेतु प्रतिदर्श के रूप में जिला जबलपुर, डिंडौरी, मंडला, नरसिंहपुर व सतना जिला के हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम के सेन्ट्रल बोर्ड व मध्यप्रदेश बोर्ड, भोपाल से मान्यता प्राप्त शासकीय व अशासकीय आवासीय विद्यालयों का चयन किया गया। उपरोक्त विद्यालयों में से कक्षा दसवीं के 440 छात्र एवं 241 छात्राओं पर अध्ययन किया गया। इस प्रकार कुल 681 विद्यार्थियों का न्यादर्श के रूप में चयन किया गया। संवेगात्मक स्थैर्य का मापन करने के लिये जूनियर सीनियर हाईस्कूल पर्सनालिटी पश्नावली फार्म 'A' व फार्म 'B' मापनी का प्रयोग किया गया। प्राप्त परिणामों से वैधता की कसौटी के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

शब्द कोश –

आवासीय विद्यालय – वे विद्यालय जहाँ अध्ययन एवं अध्यापन के अतिरिक्त विद्यार्थियों हेतु छात्रावास की भी व्यवस्था होती है। जहाँ भोजन, आवास व पाठ्यक्रम संबंधित अतिरिक्त क्रियायें भी संपन्न होती है।

दिवा विद्यार्थी – वे विद्यार्थी जो आवासीय विद्यालय में दैनिक निर्धारित शिक्षणकाल पूर्ण होने के पश्चात् अपने माता–पिता के साथ घर में रहते हैं।

अंतेवासी विधार्थी – वे विद्यार्थी जो आवासीय विद्यालय में अध्ययन करने के दौरान शाला के शिक्षण काल के पश्चात् विद्यालय के ही छात्रावास में रहते हैं।

संवेगात्मक स्थैर्य – व्यक्ति में अपने संवेगों को प्रदर्शित करने का नियंत्रित रूप।

प्रस्तावना :– इस जड़ चेतन जगत में मानव का अविर्भाव गणनातीत वर्षों पूर्व हुआ है। मानव निरंतर परिवर्तनों की घटनाओं के क्रम से गुजरता रहा है। नई–नई मंजिलों को स्पर्श करता रहा है क्योंकि वह जगत का सर्वाधिक चेतन व विकसित प्राणी है। मनुष्य के विकास को नये आयाम देने में शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण है। ''विद्या विहीनः नर पशुभिः समाना'' अर्थात विद्या से रहित व्यक्ति पशु के समान है। मानव जीवन में उसके आविर्भाव से लेकर वर्तमान युग तक शिक्षा के प्रभाव व महत्ता को स्वीकार किया गया है। ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित करने के लिये एक संस्था का निर्माण किया गया। जिसे शाला, विद्यालय या गुरूकुल का नाम दिया गया। गुरूकुल अर्थात शिक्षा का वह केन्द्र जहाँ गुरु अपने आश्रम में ही षिश्यों को रखकर उन्हें जीवन के लिये आवष्यक विभिन्न कलाओं में निपुण करता है। धीरे–धीरे समय परिवर्तित हुआ व ज्ञान के अर्जन हेतु आधुनिक शालाओं या विद्यालय का निर्माण किया गया। किंतु आज औद्योगिकीकरण व नगरीकरण के दौर में 21 वीं सदी के विकासशील भारत में पुनः अभिभावकों का आकर्षण व रूझान आवासीय विद्यालयों की ओर बढ़ता जा रहा है। ये आवासीय विद्यालय प्राचीन गुरूकुल व्यवस्था का ही परिष्कृत रूप है।

विषय चयन का महत्व –

आज आधुनिकता के इस दौर में जगह–जगह आवासीय विद्यालय तेजी से खोले जा रहे है व माता–पिता के आकर्षण का केन्द्र बने हुये है। आवासीय विद्यालय में बच्चों के प्रवेश के अनेकों कारण है। जैसे– नौकरी–शुदा व्यवसायी व कामकाजी अभिभावकों के पास बच्चों के लिये समय का अभाव, घर में अधिक लाड़–प्यार के कारण बिगड़ रहे बच्चों को सुधारने हेतु, माता–पिता की किन्ही अनुचित, अशोभनीय व गलत आदतों से बच्चों को बचाने हेतु, ग्रामीण क्षेत्रों में अच्छी पाठषाला का अभाव बच्चों को स्वयं के संवेग, क्रोध व आवेश पर नियंत्रण रखने के योग्य बनाने हेतु, बच्चों को खेलकूद व अन्य सहपाठ्येत्तर क्रियाकलापों में निपुण बनाने हेतु आदि। परंतु क्या ये विद्यालय वास्तविकता में बच्चों का सर्वांगीण विकास करते हैं? क्या ये विद्यालय बच्चों के संवेगात्मक स्थैर्य को प्रभावित करते हैं। संवेगात्मक स्थैर्य को प्रभावित करने वाले कारक आसपास का वातावरण, परिवार के सदस्य, शिक्षक–शिक्षिकायें, समान आयु समूह के साथी, शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक सक्रियता,

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

अभिलाषा, सामाजिक स्थिति, निर्धनता, वैयक्तिक रूचियाँ, सहनशीलता व बुद्धि आदि हैं। दिवा विद्यार्थियों को शाला में मात्र 6 घंटे व्यतीत करने होते है। इसके विपरीत अतेवासी विद्यार्थी का पूरा दिन छात्रावास व शालेय वातावरण में व्यतीत होता है। अतः क्या दिवा व अंतेवासी विद्यार्थियों के संवेगों की अभिव्यक्ति में अंतर पाया जाता है? दिवा व अंतेवासी विद्यार्थियों में से कौन अपने संवेगों को समय व स्थिति के अनुरूप ठीक प्रकार से व्यक्त करने में पूरी तरह समर्थ होता है?

उपरोक्त बातों के महत्व को ध्यान में रखते हुये अनुसंधानकर्ता ने इस विषय को अनुसंधान हेतु चुना ताकि अभिभावक, शिक्षाविद् व मनोवैज्ञानिक प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से इसका लाभ उठाकर बच्चों के भविष्य को निखार सकें व देश के विकास में योगदान दे सकें।

उद्देश्य –

1. आवासीय विद्यालय में अंतेवासी एवं दिवा विद्यार्थियों में संवेगात्मक स्थैर्य किसमें अधिक पाया जाता है?
2. क्या आवासीय विद्यालय के दिवा छात्रों का संवेगात्मक स्थैर्य अंतेवासी छात्रों से अधिक है?
3. आवासीय विद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर रही दिवा छात्राओं व अंतेवासी छात्राओं के संवेगात्मक स्थैर्य का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ –

1. आवासीय विद्यालय के दिवा व अंतेवासी विद्यार्थियों के संवेगात्मक स्थैर्य में कोई अंतर नहीं होता।
2. आवासीय विद्यालय के दिवा एवं अंतेवासी छात्रों का संवेगात्मक स्थैर्य समान होगा।
3. आवासीय विद्यालय की दिवा व अंतेवासी छात्राओं के संवेगात्मक स्थैर्य में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

उपकरण –

संवेगात्मक स्थैर्य परीक्षण, जूनियर सीनियर हाईस्कूल पर्सनालिटी फार्म 'A' व फार्म 'B' ।

क्षेत्र–

शोध कार्य हेतु जिला जबलपुर, डिंडौरी, मंडला, नरसिंहपुर व सतना जिले के अंग्रेजी व हिन्दी माध्यम के, सेन्ट्रल बोर्ड व मध्यप्रदेष बोर्ड, भोपाल से मान्यता प्राप्त षासकीय व अशासकीय विद्यालयों का चयन किया गया।

न्यादर्श–

शोध कार्य हेतु चुने गये क्षेत्र के आवासीय विद्यालयों से कक्षा दसवीं के कुल 440 छात्र एवं 241 छात्राओं पर अध्ययन किया गया। इस प्रकार कुल 681 विद्यार्थियों का न्यादर्श के रूप में चयन किया गया।

तालिका क्रमांक–1

आवासीय विद्यालय के दिवा एवं अंतेवासी विद्यार्थियों की संवेगात्मक संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
दिवा विद्यार्थी	338	27.08	5.94	14.64	<0.01
अंतेवासी विद्यार्थी	343	20.55	5.70		

स्वतंत्रता के अंश –679

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–1.96
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–2.59

तालिका क्रमांक 1 को देखने से ज्ञात होता है कि दिवा विद्यार्थियों एवं अंतेवासी विद्यार्थियों के संवेगात्मक स्थैर्य के परिणामों का मध्यमान क्रमशः 27.08 व 20.55 है। इनके मध्यमान का अंतर 6.53 है। मध्यमानों के अंतर की सार्थकता के लिये निकाला गया क्रांतिक अनुपात का मान 14.64 है। जो 0.01 सार्थकता स्तर के लिये निर्धारित मान 2.59 की अपेक्षा अधिक है। जो यह दर्षाता है कि आवासीय विद्यालय के दिवा विद्यार्थी व अंतेवासी विद्यार्थियों के संवेगात्मक स्थैर्य में सार्थक अंतर है। दिवा विद्यार्थियों के संवेगात्मक स्थैर्य का मध्यमान अंतेवासी विद्यार्थियों से अधिक है जो दिवा विद्यार्थियों के अधिक संवेगात्मक स्थैर्य को सूचित करता है।

तालिका क्रमांक–2

आवासीय विद्यालय के दिवा एवं अंतेवासी छात्रों के संवेगात्मक स्थैर्य संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
दिवा छात्र	209	27.44	6.14	11.15	<0.01
अंतेवासी छात्र	231	21.23	5.48		

स्वतंत्रता के अंश –438

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–1.97

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–2.59

तालिका क्रमांक 2 को देखने से ज्ञात होता है कि दिवा छात्र व अंतेवासी छात्रों के संवेगात्मक स्थैर्य के परिणामों का मध्यमान क्रमशः 27.44 व 21.23 हैं। जिनमें 6.21 का अंतर है। मध्यमानों के अंतर की सार्थकता के लिये निकाला गया क्रांतिक अनुपात का मान 11.15 है जो 0.01 सार्थकता स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान 2.59 की अपेक्षा अधिक है। जो यह दर्शाता है कि दिवा छात्र व अंतेवासी छात्रों के संवेगात्मक स्थैर्य में सार्थक अंतर है। दिवा छात्रों के संवेगात्मक स्थैर्य का मध्यमान अंतेवासी छात्रों से अधिक है जो उनके अधिक संवेगात्मक स्थैर्य को प्रदर्शित करता है।

तालिका क्रमांक–3

आवासीय विद्यालय के दिवा एवं अंतेवासी छात्राओं की संवेगात्मक स्थैर्य संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
दिवा छात्रायें	129	26.50	5.59	9.88	<0.01
अंतेवासी छात्रायें	112	19.13	5.92		

स्वतंत्रता के अंश –239

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–1.97

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–2.59

तालिका क्रमांक 3 को देखने से ज्ञात होता है, कि दिवा छात्राओं व अंतेवासी छात्राओं क संवेगात्मक स्थैर्य का मध्यमान क्रमशः 26.50 व 19.13 है। मध्यमान का अंतर 7.37 है। मध्यमानों के अंतर की सार्थकता के लिये निकाला गया क्रांतिक अनुपात का मान 9.88 है। जो 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम सारणी मान 2.60 की अपेक्षा अधिक है। जो यह दर्शाता है कि दिवा छात्राओं व अंतेवासी छात्राओं के संवेगात्मक स्थैर्य में सार्थक अंतर है। दिवा छात्राओं का मध्यमान अंतेवासी छात्राओं के मध्यमान से अधिक है जो उनके अधिक संवेगात्मक स्थैर्य को प्रदर्शित करता है।

निष्कर्ष –

1. आवासीय विद्यालय के दिवा एवं अंतेवासी विद्यार्थियों के संवेगात्मक स्थैर्य में सार्थक अंतर होता है व दिवा विद्यार्थियों का संवेगात्मक स्थैर्य अंतेवासी विद्यार्थियों की तुलना में अधिक होता है।
2. आवासीय विद्यालय के दिवा व अंतेवासी छात्रों के संवेगात्मक स्थैर्य में अंतर होता है व दिवा छात्रों का संवेगात्मक स्थैर्य अंतेवासी छात्रों से अधिक होता है, क्योंकि दिवा छात्र घर–परिवार के साथ मित्रवत् व प्रेमपूर्ण वातावरण में रहते हैं। उन्हें अपने माता–पिता व परिवार का भरपूर प्यार, स्नेह, सहयोग सहानुभूति व मार्गदर्शन मिलता है, अतः वे जल्दी आक्रामक व उत्तेजित नहीं होते व संवेगों पर नियंत्रण रखते है।
3. आवासीय विद्यालय की दिवा छात्राओं का संवेगात्मक स्थैर्य अंतेवासी छात्राओं की अपेक्षा अधिक होता है अर्थात् आवास की

प्रकृति संवेगात्मक स्थैर्य को प्रभावित करती है। क्योंकि दिवा छात्रायें विद्यालय का षिक्षण काल समाप्त होने के पश्चात् घर में अपने माता–पिता के साथ रहती है व उनके वात्सल्य व सहयोगपूर्ण व्यवहार के कारण उनमें असुरक्षा की भावना नहीं रहती। संभवतः इन्हीं कारणों से दिवा छात्राओं का संवेगात्मक स्थैर्य अंतेवासी छात्राओं से अधिक होता है।

सुझाव –

1. विद्यालय में विद्यार्थियों की समस्याओं को धैर्यपूर्वक सुनकर उसका निराकरण करना चाहिये।
2. घर का वातावरण शांत व सौहार्द्रपूर्ण रखना चाहिये जिससे बच्चों का उचित संवेगात्मक विकास हो।
3. बच्चों के साथ अभिभावक एवं छात्रावास के वार्डन को मित्रवत् व्यवहार करना चाहिये। अत्यधिक कठोर व्यवहार से किशोर विद्रोही व उदंड हो जाते है।
4. अभिभावकों को छात्रावास में अपने बच्चों से विभिन्न त्यौहार व अवसरों पर, जन्मदिन या अवकाष पर मिलकर आत्मीयता का बोध कराना चाहिये। जिससे बच्चों में संवेगों व संवेगात्मक स्थैर्य का विकास होगा।
5. घर, विद्यालय या समाज में विभिन्न अवसरों पर बच्चों को उनकी योग्यतानुसार कार्यों का दायित्व देना चाहिये। जिससे आत्मविश्वास में वृद्धि के साथ उन्हें संवेगों के स्वतंत्र प्रदर्शन करने का अवसर मिलेगा।
6. छात्रावास में शिक्षक व वार्डन द्वारा विद्यार्थियों को विभिन्न साहित्यिक, सांस्कृतिक व खेलकूद प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। जिससे उनमें सामूहिकता, मित्रता, भाईचारे, नेतृत्व व स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना का विकास हो।

संदर्भ :–

आस्थाना, विपिन, मनोविज्ञान व षिक्षा में मापन व मूल्यांकन।

भटनागर, प्रो. सुरेश, शिक्षा मनोविज्ञान तथा शिक्षण शास्त्र।

भटनागर, डॉ. ए.बी., भटनागर, डॉ. मीनाक्षी, भटनागर, अनुराग, (2008) शिक्षा मनोविज्ञान, आर लाल बुक डिपो, मेरठ, संस्करण–2008।

चौबे, डॉ. सरयू प्रसारद, (2005) तुलनात्मक शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2, अष्टम संस्करण।

कपिल, डॉ. एच.के., (1992–93) अनुसंधान विधियाँ, हर प्रसाद भार्गव, आगरा, सप्तम संस्करण।

पाठक, पी.डी., (1996) शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2, तीसवां संशोधित संस्करण।

सिंह, अरूण कुमार, (2002) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र व शिक्षा में शोध विधियाँ, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली, पंचम सस्करण।

Survey and Journals-

Buch, M.B. (Edition) (1982), Fifth survey of Research in education, Volume First, National council of education Research and Training.

Garret, H.E., (1973) Statistics in Psychology and Education feffer and simons Bonbey.

Socio - Cultural Norms: Impact On Empowerment Of Tribal Women (With Special Reference To Jhabua District Of Madhya Pradesh)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Daniel Aradhna
Research Scholar, Dr. Baba Saheb Ambedkar national institute of social Science, Mhow

Key Words : Socio- cultural, Empowerment, Tribal Women , Jhabua.

ABSTRACT : Empowerment is a multifaced process which encompass many aspects enhancing awareness, increasing access to resource-economic, social and political. Empowerment as an active dimensional process which unable women to realize their full identity and powers in all spheres of life. Women empowerment includes both a personal strengthening and enhancement of life chances & collective participation in efforts to achieve equality of opportunity between genders, ethnic groups, social classes and age groups.

Status of women in our society was not very good. Unfortunately very little attention has been given to the understanding of million of women dwelling in tribal areas. Jhabua District is selected for the study as more than 80% tribal population exist.

The objective of this study is to find the awareness of tribal women towards their health, education and wrong believe in black magic and to found out whether socio- cultural norms have positive or negative impact on their development and overall uplift.

Result of the study shows that socio- cultural norms bring negative impact on education but not fully on health as the main attraction is government scheme. Contribution of Tribal women in economic sphere is more than that of man.

Inspite of all the women welfare programme the benefits have not reached the tribal women. It seems to be essential to save them from exploitation to enrich their social status and to achieve their glory as respected citizens of India

INTRODUCTION : Culture is that complex whole which includes knowledge, beliefs, arts, morals, laws, custom and other capabilities and habits acquired by man as a member of society.

Socio- cultural are the rules that a group or society uses to determine what is Appropriate & inappropriate in behavior expression and value if one does not follow the rules one can suffer consequences such as exclusion from the group.

The norms can change over time & according to the particular members of the Group.

The tribal women, constitute like any other social group. Development of tribal women remain traditional in their dress, language, tools and resources. India as a whole is characterized by sharp gender disparities, although women's status varies considerably by region. On virtually all frontiers of human societal pursuits economic, educational, scientific, legal, political, official, religious sphere Indian women suffer profoundly . For all time there are socio- cultural factors, which validate for the status of women in particular society. It is always culture (a set of collective experiences of ideas, norms , values and beliefs associated with a people) with its gender role inequalities and socialization(the intricate process through which culture is transmitted from one generation to another) determines the position of women in a society.

But somewhere down the stream of history we forget the nature's design of conceiving complementarily of sexes and started attributing a lower status of women. In an uncivilized society 'might' could try to prove right by subjugating the feelings, emotions & interests of those who could not match his physical strength.

Women's confinement during pregnancy & during post natal care of children could made her vulnerable and thus dependent on her partner for the daily needs of family. Women's lesser physical strength & dependence on man for survival could have reduced her importance in the eyes of man &

relegated her to the background. Her contribution as a partner, mother, housewife, social organizer preserver of tradition& cultural pattern & above all as a stabilizer of an otherwise violent & competitive society was perhaps never realized.

The cultural interpretation of gender is central to the identity& status of women that entails web of relationship. The conceptual framework to analyze women's status comprise the seven roles women play in life and work: parental, conjugal, domestic, kin, occupational, community and as an individual tribal women work very hard.

The status of any social group is determined by its levels of health- nutrition, literacy, education and standard of living. The tribal women, as women in all social groups, are more illiterate than men. The low educational status is reflected in their lower literacy rate, lower enrolment rate and their presence in the school. The status of women in a society is a significant reflection of the level of social justice in that society. Women's status is often described in terms of their level of income employment, education, health, fertility as well as the roles they play within the family, the community & society.

The concept of empowerment envisages empowering people either in the form of an individual on group who have been facing the challenge of social economic deprivation. It provides a sort of encouragement among the poor & deprived to improve their lives but social hierarchy prevents them to do so due to their poor

social-economic background the process of empowerment work towards making

people self sufficient in all spheres of life - social, religious, cultural, political

economic - for betterment of their lives among deprived sections of the society, women occupies a big space & their full identify & power in all spheres of life.

Empowerment of women is a burning issue & has get world wide attention. No society & democracy can be called developed unless & until women which constitute about 50% population is given equal chance to develop their personality by granting them equal power equal right and freedom.

In study have shown certain tribal cultural norms related to the tribal women and problem faced by them. But unfortunately very little attention has been given to the understanding of millions of women dwelling in the tribal areas, silently carrying traditional task and unquestioningly adhering to norms that have been espoused for them for many generations.

Tribal women law recognize the fact that they have been discriminated against in education, income, consumption, status and access to power , they have a worse health record than men; they suffer from social, cultural and legal discrimination and often from violence. They are discriminated on grounds of equity (which refers to equality of opportunities and choices) and efficiency. There is need for Quantitative, for a complete set of cultural and rights indicators to assess women's rights.

Past of tribal women has been dark but today the times have changed her future seems to be bright if woman continues to struggle for their rights. Empowering women contribute to social development economic progress in any country whether developed or underdeveloped could be achieved through social development women are very important segment in development at local to global level. Economic independence & education of women will go long way in attaining education & competence, willingness confidence, self motivation, encouragement from family & society to empowerment of tribal women.

Objectives :

1. To find out socio- cultural norms related to delivery system (health), education and superstitious.

2. To study the socio-economic status of tribal women.
3. To study about legal awareness among tribal women.

Method :

Jhabua District have been selected for the study of Tribal women as in this district more than 80% tribal population exist. The study conduct by multi stage sampling method.

- Rama block consists of 118 villages from total villages 5% villages have been taken . It means 6 villages selected by **random sampling method** (Lottery Method).
- All 6 villages have more than 3000 population & from each village for equal distribution,12or 13 respondent i.e., 75 respondent only.
- By the limitation of the study selection of Tribal women done on the basis of age –group specially reproductive age i.e., from 18 -45 years.

Results :

This study was conducted in the year **2009-2010**. Data collected by Interview scheduled on the behalf of the objective of the study. The below result is based on primary data.

1. **Socio-economic status**

- 89% women's family engage in agriculture work.
- 90.6% women's indulge in agriculture work
- 77.3% women's family earning was 3000/- month in this contribution of women is also there.

There is no denying the fact that tribal women contribute to the economic development in a more substantial way than tribal men. Tribal women as active workers constitute a large section of tribal labour force in particular and women's labour force in general. Bhil tribal women provides the main lever to bear the major load of work in agriculture. 3000/- month is the result of poverty. She equally work with man but still she get less wages than man. She bears triple burden that is productivity, reproductivity and domestic labour.**[1]Ghosh (1987)**The status of women in a society is a significant reflection of the level of social justice in that society. Women's status is often described in terms of their level of income employment, education, health, fertility as well as the roles they play within the family, the community & society.

[2]Mann (1983) Investigated the role of Bhil women in economic field and field and suggested that a Bhil women provides the main lever to bear the major load of work in agriculture. Right from the strenuous work of preparing the land for sowing, cleaning to irrigation, weeding, harvesting and storing for use but not equal share in income.

2. **Health status**

- 64% delivery conducted at hospital.
- 53.3% women's take post delivery rest for less than 10 days.
- 70.75% women's are superstitious and they take help of black magic to cure from disease and to progress in their work.

Women could not take the decision on their own about going to health centers . It was not only peer pressure but lack of education was the deciding factor. But with the passage of time and government scheme most of the delivery conducted at hospital.

[3]Basu,A. (1990) The common beliefs, customs and practices connected with health and disease. It is necessary to make a holistic view of all the cultural dimensions of the health of a community. In most of tribal communities there is a wealth of folk flare related to health. Documentation of this folk flare available in different social cultural systems may be very rewarding and could provide a model for appropriate health and sanitary practices in a given eco. System. Maternal and child care is an important aspect of health seeking behavior which is largely neglected among the tribal group.

[4]Taneja, Priti .V & Saxena Manisha (1998) "Nutritional Anthropometry of Bhil women in Jhabua District of M.P" studied that women's

health is neglected matter in all communities, but more so among bhil tribal women of jhabua district. Women had the highest percentage of malnourishment. Bhil tribal women of low socio-economic status in jhabua district suffer from varying degress of malnutrition, compromising their own as well as their child's health.

3. Educational status

- 68% women'sare illiterate
- 86.7% women's are not willing to take more education after marriage.
- 73.3% women's do not want to give education to their daughter.
- 81.3% women's agree that there is difference between son and daughter in field of education .

The social condition amongst the tribal communities vary considerably which influence the literacy level amongst the women. The reason associated with not educating girl child are financial constraints. In the absence of hired labour the girls work at home and field is of at most importance and all considered the fact that eventually the girls have to get married and start their families. They studied up to primary level and withdrawn from school when they have learned to write their names to work in field, with preference for education given to boys. There is major gender disparity, in terms of more limited educational opportunities available.

[5] Sharma Madhu (1995) A striking reservation is that Madhya Pradesh is one of the states in which there is no problem of landless among scheduled tribe but the extent of literacy is very. The absence of the problem of land hunger has paved the way to the problem of education. It has been observed that the problem of communication & literacy are as acute as that of poverty amongScheduledtribe.

1.Ghosh G.K. (1987) women's Role in Health & Development, Health for the millions. Vol.xiii pp.1 2

2.Mann (1983) status of Bhil Tribal Women, Continuity & Change , Mittal Publication, New Delhi

[3] Basu, A. (1990) Anthropological approach to tribal health {In} Ttibal demography and development in North East India, 131-142 B R Publishing Corporation, Delhi

[4] Taneja, Priti.V& Manisha Saxena(1998) "NutritionalAnthropometry of Bhil women in Jhabua District of M.P" The Indian Journal of Nutrition & Dietics 35 (4) pp98-102

[6] Thakur Devendra & Thakur D. N (1997) shows that education has not entered in the inner apartment of the village home. The tribal women folk are generally responsible for their home affairs. Their superstitious, ignorance, an illiteracy have covered them from ages to ages. The mass illiteracy has impeded the progress of men folk. The tribal women should be taught about the development of social status, house keeping, children nourishment.

4. Legal Rights

- 92% women's have no rights on property.
- 80% women's use to go Panchayat for Divorce instead of court.
- 100% women's use their voting right.
- 18.7% women's use to go police station on matter of property not in case of family dispute.

Land tenure is always in the name of male head of the household. Women have no legal right to family property instead only those women who are the head of the family. For divorce they prefer to go Panchayat instead of court because they are illiterate and not want to involve in long procedure.

[7]Thakur Devendra & D. N Thakur (1997) In tribal societies low of inheritance and succession favors males. In all patriarchal societies property is equally divided among all the male children of the

family. If the married women has son he inherits the land from his father and she has no legal claim in it. In case the marriage breaks up, or a man remarries or deserts his first wife the women is absolutely without land rights since she has by marriage, lost unsufructuary rights in her fathers house and she is also deprived of rights in her matrimonial house.

[8]Thakur Devendra & Thakur D. N (1995) women's right to go in for Divorce, if her husband is cruel, impotent, drunkard, lazy or if he indulges in extra marital relations is being eroded. With the introduction of expensive courts of law, the tribal councils are losing their power .Women find it very difficult to move a court since it involves heavy expenditure and a number of formalities.

[5] Sharma Madhu (1995) Indian Tribes [Health , Ecology & Social Structure] Printwell, Jaipur
[6],[7] Thukar Devendra, Thukar D. N (1997) Tribal life in India, Tribal women "Deep & Publication", New Delhi.
[8] Thukar Devendra, Thukar D. N (1995) Tribal life in India, Tribal women "Deep & Publication", New Delhi.

Conclusion : Socio-cultural norms have great impact on tribal women. Some of them have prove to be stare case for progress such as health, voting rights , legal rights etc. Tribal women were least bother about health as in 1991 study conducted 98% delivery conducted at home, maternal mortality, infant mortality rate is high they are not conscious about their health as government schemes are running for their benefit. In 2010 64% delivery conducted at hospital because they get some amount from government. After this we cannot say that empowerment has come but as they are economical deprived they use this facility. As there infant and maternal mortality rate is still high as it was in 1991

Tribal women contribute a lot in economic sphere she equally worked with man in field. From the childhood she work in field and after marriage also she give back some amount to her parents as a dowry which they call" jhagda"

In the field of education discrimination done on the bases of gender. Female child forced to work in field, take care of their siblings because parents believe that giving education to girl is wastage of time and money.

Many of the decision of family is taken by male who is considered as the head of family in certain where aged women of the family can take decision. They have no right on property and if they purchased property and it is in the name of male. They have voting right. They believe in black magic and they are superstitious. Certain dark corners such as jaundice, chickenpox, snakebite are still governed by spirituous and ojha. They call' Dakan' (to be an omen) as few women because of their wrong believe. Every coin has two sides even today norms are prove to be darker side of coin as discrimination done on the bases of male and female.

Reference :

- Ambasht N.K.(2001) Tribal Education problems & Issues "Venkatesh Prakashan" Delhi
- Basu, A. (1990) Anthropological approach to tribal health {In} Ttibal demography and development in North East India, 131-142 B R Publishing Corporation, Delhi
- Ghosh G.K. (1992) Tribals and their culture "Ashish Publishing House," New Delhi volume1, volume 2.
- Ghosh G.K. (1987) women's Role in Health & Development, Health for the millions. Vol.xiii no.1-2
- Mishra N. Dr. (2004) Tribal cultural in India "Kalpaz Publication." New Delhi
- Sharma Madhu (1995) Indian Tribes [Health , Ecology & Social Structure] Printwell, Jaipur
- Mann (1983) status of Bhil Tribal Women, Continuity & Change , Mittal Publication, New Delhi
- Padmoshi S.S Shashi (1995) Tribal Cultural Customs and affinities "Anmol Publication Pvt. Ltd. New Delhi.

- Sahu Chaturbhuj (1998) Tribal culture and Identity "Sarup and Sons", New Delhi.
- Thukar Devendra, Thukar D. N (1995) Tribal life in India, Tribal women "Deep & Deep Publication", New Delhi.
- Thukar Devendra, Thukar D. N (1997) Tribal life in India, Tribal women "Deep & Deep Publication", New Delhi.

Financial Inclusion and Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Anubha Chaturvedi
Research scholar, Department of Economics, University of Allahabad, India

Abstract : Financial inclusion is the access of basic banking services to the huge array of population which is deprived of banking services at an affordable cost. For the sake of financial inclusion in India government as well as reserve bank of India has taken many initiatives to bring more and more people under the financial inclusion net. In the sequence of various initiatives taken by government of India the launch of PMJDY is probably the biggest leap. Various earlier studies had proved that financial sector growth leads to the economic growth of an economy. Thus it is necessary to provide the access to financial services to more and more people of the country. The objective of the study is to compute an index of financial inclusion for India and then assess role of the PMJDY in increasing financial inclusion in India. The study finds that there is significant improvement in availability dimension and accessibility dimension. But the increase in usability dimension was not much impressive.

Keywords: Financial inclusion, PMJDY.

I. Introduction :

Financial inclusion or inclusive financing is the delivery of financial services at affordable costs to sections of disadvantaged and low-income segments of society, in contrast to **financial exclusion** where those services are not available or affordable. An estimated 2 billion working-age adults globally have no access to the types of formal financial services delivered by regulated financial institutions. It is argued that as banking services are in the nature of public good; the availability of banking and payment services to the entire population without discrimination is the prime objective of financial inclusion public policy. The term "financial inclusion" has gained importance since the early 2000s, a result of findings about financial exclusion and its direct correlation to poverty. The United Nations defines the goals of financial inclusion as follows:

- access at a reasonable cost for all households to a full range of financial services, including savings or deposit services, payment and transfer services, credit and insurance;
- sound and safe institutions governed by clear regulation and industry performance standards;
- financial and institutional sustainability, to ensure continuity and certainty of investment; and
- Competition to ensure choice and affordability for clients.

Financial inclusion enables improved and better sustainable economic and social development of the country. It helps in the empowerment of the underprivileged, poor and women of the society with the mission of making them self-sufficient and well informed to take better financial decisions. Financial inclusion takes into account the participation of vulnerable groups such as weaker sections of the society and low income groups, based on the extent of their access to financial services such as savings and payment account, credit insurance, pensions etc. Also the objective of financial inclusion exercise is easy availability of financial services which allows maximum investment in business opportunities, education, save for retirement, insurance against risks, etc. by the rural individuals and firms.

The penetration of financial services in the rural areas of India is still very low. The factors responsible for this condition can be looked at from both supply side and demand side and the major reason for low penetration of financial services is, probably, lack of supply. The reasons for low demand for financial services could be low income level, lack of financial literacy, other bank accounts in the family, etc. On the other hand, the supply side factors include no bank branch in the vicinity, lack of suitable products meeting the needs of the poor people, complex processes and language barriers.

Since 2005, the Reserve Bank of India (RBI) and the Government of India (GOI) have been making efforts to increase financial inclusion. Measures such as SHG-bank linkage program, use of business facilitators and correspondents, easing

of Know Your Customer (KYC) norms, electronic benefit transfer, separate plan for urban financial inclusion, use of mobile technology, bank branches and ATMs, opening and encouraging 'no-frill-accounts' and emphasis on financial literacy have played a significant role for Increasing the use of formal sources for availing loan/ credit. Measures initiated by the government include, opening customer service centers, credit counselling centers, Kisan Credit Card, Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme and Aadhar Scheme. These renewed efforts are more focused than the earlier measures which were more general in nature having a much wider scope. Though the measures were initiated earlier, their impact on the rural population needs to be analysed and reframed in order to understand the present scenario in the rural areas.

Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY)
Financial inclusion is an innovative concept which enables the alternative techniques to promote the banking habits and acts as enabler in reducing the poverty and the launch of Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY) by Government of India is in that direction. The scheme is not only limited to opening of a bank account but has other benefits with it viz. zero balance bank account with RuPay debit card, in addition to accidental insurance cover of Rs 1 lakh, those who open accounts by January 26, 2015 over and above the Rs 1 lakh accident, they will be given life insurance cover of Rs 30,000, etc. According to GOI, MGNREGA payments are to be done in to the accounts of the MGNREGA workers in rural areas held either in Banks/ Post Office (unless exempted) and the objective of the PMJDY scheme is to ensure that no household is left without a bank account. There are total 9.98 Crore accounts of the MGNREGA worker in Bank/ Post Offices. Out of this there are 3.66 Crore accounts in Post Offices and 0.75 Crore accounts in Co-operatives. Thus all banks were directed to work in this direction for a greater inclusion. Account can be opened in any bank branch or Business Correspondent outlet. PMJDY accounts are being opened with Zero balance. However, if the account-holder wishes to get cheque book, he/she will have to fulfil minimum balance criteria.

1. Interest on deposit.

2 **Benefits of PMJDY Scheme**

. Accidental insurance cover of Rs.1.00 lac

3. No minimum balance required.
4. Life insurance cover of Rs.30,000/-
5. Easy Transfer of money across India
6. Beneficiaries of Government Schemes will get Direct Benefit Transfer in these accounts.
7. After satisfactory operation of the account for 6 months, an overdraft facility will be permitted
8. Access to Pension, insurance products.
9. Accidental Insurance Cover, RuPay Debit Card must be used at least once in 45 days.
10. Overdraft facility upto Rs.5000/- is available in only one account per household, preferably lady of the household.

PMJDY is based on Six Key elements –

1. **Universal access to banking facility**: The First aim is to reduce and remove the exclusions in financial sector. District will be divided into sub service area catering to 1000 to 1500 household for access to basic banking facility by 14 august 2015.
2. **Providing** The **Basic Banking Accounts with overdraft facility and RuPay Debit card to all households**: The effort would be to first cover all uncovered households with banking facilities by August, 2015, by opening basic bank accounts. Account holder would be provided a RuPay Debit Card. Facility of an overdraft to every basic banking account holder would be considered
3. **Financial Literacy Program**: Financial literacy would be an integral part of the Mission in order to let the beneficiaries make best use of the financial services being made available to them.
4. **Creation of Credit Guarantee Fund**: Creation of a Credit Guarantee Fund would be to cover the defaults in overdraft accounts.

Benefits of PMJDY Scheme

1. interest on deposit.
2. Accidental insurance cover of Rs.1.00 lac
3. No minimum balance required.
4. Life insurance cover of Rs.30,000/-
5. Easy Transfer of money across India
6. Beneficiaries of Government Schemes will get Direct Benefit Transfer in these accounts.
7. After satisfactory operation of the account for 6 months, an overdraft facility will be permitted
8. Access to Pension, insurance products.
9. Accidental Insurance Cover, RuPay Debit Card must be used at least once in 45 days.

10. Overdraft facility upto Rs.5000/- is available in only one account per household, preferably lady of the household.

PMJDY is based on Six Key elements –

1. **Universal access to banking facility**: The First aim is to reduce and remove the exclusions in financial sector. District will be divided into sub service area catering to 1000 to 1500 household for access to basic banking facility by 14 august 2015.
2. **Providing** The **Basic Banking Accounts with overdraft facility and RuPay Debit card to all households**: The effort would be to first cover all uncovered households with banking facilities by August, 2015, by opening basic bank accounts. Account holder would be provided a RuPay Debit Card. Facility of an overdraft to every basic banking account holder would be considered
3. **Financial Literacy Program**: Financial literacy would be an integral part of the Mission in order to let the beneficiaries make best use of the financial services being made available to them.
4. **Creation of Credit Guarantee Fund**: Creation of a Credit Guarantee Fund would be to cover the defaults in overdraft accounts.

RuPay Debit Card. Facility of an overdraft to every basic banking account holder would be considered

3. **Financial Literacy Program**: Financial literacy would be an integral part of the Mission in order to let the beneficiaries make best use of the financial services being made available to them.
4. **Creation of Credit Guarantee Fund**: Creation of a Credit Guarantee Fund would be to cover the defaults in overdraft accounts.

5. **Micro Insurance**: To provide micro- insurance to all willing and eligible persons by 14 August, 2018, and then on an ongoing basis.
6. **Unorganized sector Pension schemes like Swavalamban**: By 14 August, 2018 and then on an ongoing basis.

Objectives of the study :

1. To study the present scenario of financial inclusion in India.
2. To analyze the improvement of financial inclusion in prior and post to the launch of PMJDY.

Research Methodology :

The methodology adopted in this paper is twofold. In the first step indices for every dimension, which have been taken in this study, is calculated. There are three indices which have been computed in this study. And in the second step of calculating FII `a composite index has been from these three indices.

Construction of index of financial inclusion

Since banks are the gateway to the most basic form of financial services, it is only the extent of availabi9lity, usability and accessibility that has been treated as equivalent to financial inclusion for this study. For the purpose of the fulfillment of the objective of this study three components are considered the basic element of an inclusive financial system i.e. availability of banking services (d1), usability of banking services(d2) and accessibility of banking services(d3). Concerning the availability of banking services, banking services should be easily available to users. Thus the appropriate indicator for the availability of banking services considered for this study are geographic branch penetration, demographic branch penetration, geographical ATM penetration and demographic branch penetration. And the indicator for the usability of banking services in India have been taken are outstanding deposits as percentage of gdp and outstanding l0oans as percentage of GDP. The indicator for the accessibility of banking services has been chosen to be the number of bank accounts per 100,000 adults.

In the present study equal weights has been given to all the indicators i.e. 1.in all the three dimensions 0 will indicate complete financial exclusion and 1 will indicate the situation of complete financial inclusion.

As in the case of HDI, the first step in this study is to create sub-indices for each dimension .Since it is difficulty to set an ideal goalpost for the variables defined for each of the dimensions

of financial inclusion, the maximum and minimum values are set to the observed maximum and minimum values of the indicators among the 189 economies of the world.

Let there are n variables in every dimension

Di = Y1, Y2, Y3,……..Yn
(1)

For each variable the dimension's sub-indices have been computed through the following formula:-

$$di = \frac{actual\ value\ of\ yi - minimum\ value\ of\ yi}{maximum\ value\ of\ yi - minimum\ value\ of\ yi}$$

Thus above formula ensures that the value of di will be between 0 and 1 and as the value of Di will be more proximate to 1, the higher the financial inclusion and vice versa.

Each dimension is a simple mean of all di

$$Dj = \frac{\sum di}{n}$$

And,

$$FII = \sqrt{D1.D2.D3}$$

Sources of data :

In this study to assess the improvement of financial inclusion over prior to the post launch (2016) of PMJDY, FII has been calculated for the years 2010, 2015 and 2016.all the data used in this study is to compute FII are secondary data. And the data on geographical branch penetration, geographical ATM penetration and demographic branch penetration and demographic ATM penetration has been taken from IMF website. In FAS DATA IMF provides data on the availability of finance of approximately 189 countries from 2004 to 2016.

Result and discussion

After finding the index, the result shows that financial inclusion has been increasing consistently from 2010 to 2015 and 2016. However, the FII in 2010 was 0.0697 which later was increased to 0.0923 and in 2016 it was 0.1116.whereas in 2010 was usability dimension index was highest among the three dimension i.e. availability dimension index, usability dimension index and accessibility of banking services.

The accessibility increased to 0.2105 in 2015 which was 0.1195 in 2010, the accessibility dimension index was 0.2417 in 2016 which is more than double the amount of what was in 2010.however the increase in usability dimension index is not so significant from 2010 to 2015 and 2016.but both the dimension index i.e., availability dimension index and accessibility dimension index have had significant increase from 2010 to 2015 and 2016.table 1 reveals that improvement in availability dimension index accessibility dimension was more than double and the increase in these two dimensions is significant.

Conclusion : The PMJDY was launched on 28th august, 2014; to achieve the objective of financial inclusion by extending the financial services to the large hitherto unserved population of the country. However the PMJDY has entered the Guinness world records for opening most bank accounts during the week starting 23 august 2014 as part of the financial inclusion campaign. Since during the last four decades huge infrastructure has been created ion the banking sector. However this large infrastructure that has penetrated even remote rural areas is able to serve only a small part of the potential customers. Thus the PMJDY programme will hopefully be a robust

medium to enlarge the ambit of the sections of population which may be able to avail the most basic banking services.

APPENDICES

Financial Inclusion Index for the years 2010, 2015 and 2016

Dimensions	2010	2015	2016
Availability index	0.0165	0.035	0.0370
1.demographic branch penetration	0.0341	0.0505	0.0532
2.demographic ATM penetration	0.0261	0.0676	0.0709
3.geographical branch penetration	0.0050	0.0064	0.0067
4.geographical ATM penetration	0.0009	0.0155	0.0175
Usage dimension index	0.1724	0.1545	0.1557
1.Outstanding deposits as % of GDP	0.1565	0.1446	0.1447
2.Outstanding loans as % of GDP	0.1883	0.1625	0.1667
Penetration of banking services	0.1195	0.2105	0.2417
1. No of bank accounts per 100,000 adults	0.1195	0.2105	0.2417
Financial inclusion index	0.0697	0.1043	0.1116

Source: calculated by the author

PROGRESS UNDER FINANCIAL INCLUSION PROGRAMME IN INDIA

	Year ended march 2010	Year ended march 2011	Year ended march 2012	Year ended march 2013	Year ended march 2014	Year ended march 2015	Year ended march 2016
Banking outlets in villages-branches	33378	34811	37471	40837	46126	49571	51830
Banking outlets in villages-branchless mode	34316	81397	141136	227617	337678	504142	534477
Banking outlets in villages-total	67694	116208	1817532	268454	383804	553713	586307
Urban location covered through BCs	447	3771	5891	27143	60730	96847	102552
Basic saving bank deposit a/c through branches (No. in Million)	60.2	73.13	81.20	100.80	126.0	210.3	238.2

Basic saving bank deposit a/c through branches (Amt. in Billion)	44.33	57.89	109.87	164.69	273.3	365.0	474.1
Basic Savings Bank Deposit A/c through BCs (No. in million)	13.27	31.63	57.30	81.27	116.9	187.8	230.8
Basic Savings Bank Deposit A/c through BCs (Amt. in Billion)	10.69	18.23	10.54	18.22	39.0	74.6	164.0
Basic Savings Bank Deposit Accounts Total (No. in Million)	73.5	104.76	138.5	182.07	242.9	398.1	469.0
Basic Savings Bank Deposit Accounts Total (Amt. in billion)	55.0	76.12	120.41	182.91	312.3	439.6	638.1
Overdraft facility availed in Basic Savings Bank Deposit Accounts (No. in million)	0.18	.61	2.71	3.95	5.9	7.6	8.0
Overdraft facility availed in Basic Savings Bank Deposit Accounts (Amt. in billion)	0.1	0.26	1.08	1.55	16.0	19.9	14.8
KCCs – (No. in million)	24.31	27.11	30.24	33.79	39.9	42.5	47.3
KCCs – (Amt. in billion)	1240.1	1600.05	2068.39	2622.98	3684.5	4382.3	5130.7
GCC - (No. in million)	1.39	1.70	2.11	3.63	7.4	9.2	11.3
GCC - (amt. in billion)	35.11	35.07	41.84	76.34	1096.9	1301.6	1493.3
Information and Communication Technology A/Cs-BC-Transaction - (No. in million) (During the year)	26.52	84.16	155.87	250.46	328.6	477	826.8
Information and Communication Technology A/Cs-BC- Transactions - (Amt. in billion) (During the year)	6.92	58.00	97.09	233.88	524.4	859.8	1686.9

Source: Various issues of "reports on trend and progress of banking in India" by RBI.

References :

- Rangarajan Committee (2008), *Report of the Committee on Financial Inclusion*, Government of India.
- http://indianexpress.com/article/business/economy/jan-dhan-yojana-opens-account-with-1-5-cr- users-insurance/
- www.imf.org
- report on trend and progress of banking in India for the various years
- www.rbi.org.in › Speeches
- Radhika Dixit and M. Ghosh (2013) "Financial Inclusion for Inclusive Growth of India – A Study", International Journal of Business Management & Research,Vol.3,Issue 1.
- Ms. Paramjeet Kaur (2014), "A Study on Financial Inclusion - role of Indian banks in implementing a scalable and sustainable financial inclusion strategy", international journal of management (ijm).

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

कृषि के आर्थिक विकास में प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन
(बालाघाट जिले के विशष संदर्भ में)

दिपेश कुमार वाघाड़े

भारत में लोग जीवनयापन के लिए कृषि पर निर्भर हैं। राष्ट्रीय आय का एक बड़ा भाग कृषि से प्राप्त होता हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् कृषि क्षेत्र के विकास के उद्देश्य को सम्मुख रखते हुए अनेक योजनाएँ बनी है। वास्तव में किसी भी योजना की सफलता के लिए जनसहयोग की आवश्यकता होती हैं, इस संदर्भ में प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों की महत्वपूर्ण भूमिका हैं। आज सहकारिता आन्दोलन ने देश में एक षतक की अपनी विकास यात्रा में गामीण ऋणग्रस्तता, गरीबी और भुखमरी के विरूद्ध जंग की शुरूआत से लेकर आत्मनिर्भर बनने और निर्यातक देश होने तक की एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों का उद्देश्य कृषि के क्षेत्रों में कृषि के विकास में योगदान देना हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के आज कृषि, सिंचाइ एवं विक्रय के लिए अलग–अलग कृषि सहकारी समितियां कार्य कर रही हैं। सहकारी कृषि समितियां गांव की भूमि पर कृषि करनें के लिए उन्नत बीजों, खादों तथा नवीन कृषि उपकरणों की सुविधाऐं प्रदान करती हैं। कृषि के क्षेत्र में सहकारी विक्रय समितियां आज अत्याधिक लोकप्रिय है। यह सहकारी समितियां व्यापारियों एवं दलालों के शोषण स किसानों की रक्षा करती है तथा किसानों की उपज की वास्तविक किमत दिलाना, अच्छें बाजार के लिए ज्ञान प्रदान करती है। प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के कारण ग्रामीणों की आर्थिक स्थितियों में पर्याप्त सुधार हुआ हैं और हो सकता है।

अध्ययन के उद्देश्य एवं महत्व

प्रस्तावित शोध के मुख्य उद्देश्य निम्नानुसार हैं –

1. बालाघाट जिलें में कृषि क्षेत्र के महत्व को प्रतिपादित करना।
2. प्राथमिक सेवा सहकारी संस्थाओं की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना। इन संस्थाओं की प्रबंध एवं वित्तीय संरचना का अध्ययन करना।
3. प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों की कृषि विकास हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं का अध्ययन करना।
4. विगत 10 वर्षो से प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के सहयोग से कृषि मे आये परिवर्तनों का अध्ययन करना।
5. कृषि विकास की समस्याओं का अध्ययन कर नीतिगत सुझाव करना।

प्रस्तुत अध्ययन की उपकल्पनाएँ–

प्रस्तावित शोध की उपकल्पनाऐं निम्न हैं–

1. बालाघाट जिला कृषि प्रधान हैं।
2. मिश्रित अर्थव्यवस्था में प्राथमिक सेवा सहकारी क्षेत्र का विशष महत्व हैं।
3. प्राथमिक सेवा सहकारी क्षेत्र के विस्तार से धन एवं सम्पत्ति के विकेन्द्रीकरण के साथ आर्थिक विकास में बल मिलेगा।
4. प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों कृषि के विकास हेतु अल्पकालिन, मध्यकालोन, और दीर्घकालोन ऋण प्रदान करती है।
5. विगत 10 वर्षो में इन प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों ने कृषि के विकास हेतु उल्लेखनीय कार्य किया जा रहा हैं।

अध्ययन की मान्यताएँ–

प्रस्तावित शोध निम्न मान्यताओ पर आधारित है–

1. प्राथमिक सेवा सहकारी क्षेत्र का भारतीय अर्थव्यवस्था में विशष महत्व रखता हैं।
2. प्राथमिक सेवा सहकारी संस्थाएँ अर्थव्यवस्था की वित्तोय प्रणाली में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।
3. इन प्राथमिक सेवा सहकारी संस्थाओं का प्रमुख उद्देश्य, कृषि उत्पादन मे वृद्धि एवं

अपने सदस्यों के आर्थिक हितो की रक्षा करना और उनमें वृद्धि करना हैं।

4. यह प्राथमिक सेवा सहकारी संस्थाऍ बहुउद्देशीय सहकारी संस्थाऍ हैं।
5. प्राथमिक सेवा सहकारी संस्थाऍ बैंकिंग कार्यो के साथ–साथ अपने सदस्यों को वित्तिय ऋण भी प्रदान करतीं हैं।
6. य प्राथमिक सेवा सहकारी संस्थाऍ कृषि क्षेत्र के विकास में सक्षम भूमिका का निर्वहन करती हैं।

प्रस्तुत शोध जबलपुर संभाग के बालाघाट जिले से संबंधित है।

शोध प्रविधि–

शोध का क्षेत्र – प्रस्तुत शोध अध्ययन में म.प्र. के अन्तर्गत बालाघाट जिले की पाँच तहसीलों नामतः बालाघाट, लालबर्रा, खैरलाजीं, किरनापुर, बैहर, लाँजी ,वारासिवनी, कटंगी, तिरोड़ी परसवाड़ा, को शामिल किया गया है।

(2) शोध अवधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोध अवधि के अन्तर्गत द्वितीयक समंको हेतु वर्ष 2006 से 2016 तक के समंकों को लिया गया है।

(3) प्रयुक्त चर – प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित चरों को सम्मिलित किया गया है

1. कृषि में उत्पादन
2. कृषि से प्राप्त आगम
3. किसानों की संख्या
4. समितियों की कार्यशील पूंजी
5. समितियों की अंश पूंजी
6. समितियों द्वारा ऋण वितरण
7. समितियों द्वारा ऋण वसूली
8. समितियों का ऋण शेष

(4) कृषि साख सहकारी समितियों का चयन – बालाघाट जिले में कार्यरत 100 सेवा सहकारी समितियों में सें 25 समितियों का चयन न्यादर्श के आधार पर किया गया है तथा इन समितियों के सदस्यों द्वारा कृषि उत्पादन की मात्रा व उनसे प्राप्त आय का विश्लेषण किया गया है।

(5) समंक स्त्रोत– प्रस्तुत शोध अध्ययन में कृषि उत्पादन की मात्रा व प्राप्त आय का विश्लेषण करने के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक संमको का प्रयोग किया गया है।

प्राथमिक समंक संकलन –प्राथमिक समंको को एकत्रित करने के लिए एक अनुसूची का निर्माण किया गया है। इस अनुसूची में प्रस्तुत शोध अध्ययन से सबंधित प्रश्नों को पूछा गया है। इस हेतु बालाघाट जिले की 10 तहसीलों के अन्तर्गत 100 समितियों के 125 ग्रामों का चयन किया गया है। ग्रामों का चयन कृषि उत्पादकता के आधार पर किया गया है। इन ग्रामों से 200 परिवारों को न्यादर्श के आधार पर अध्ययन हेतु सम्मिलित किया गया है।

प्राथमिक समंको का संकलन अनुसूची एवं साक्षात्कार के माध्यम से किया गया है–

- कृषि पर निर्भरता एवं रोपण भूमि व समय के बारे में जानकारी प्राप्त करना।
- कृषि की पद्धतियों की सामान्य जानकारी प्राप्त करना।
- कृषि उपज से प्राप्त होने वाली आय।
- परिवार का व्यय एवं प्राप्त बचतें।
- विपणन, में आने वाली समस्याओं के बारे में जानकारी।
- कृषि नीतियों की जानकारी प्राप्त करना।
- शासन द्वारा कृषि उत्पादन में चलाई जा रही योजनाओं व लाभ की जानकारी।
- कृषि उपजों के मूल्य संवर्धन एवं विकय कीमत से संतुष्टि संबंधी जानकारी प्राप्त करना।
- कृषि उपज से उत्पन्न समस्याओं व सुविधाओं के बारे में जानकारी।

द्वितीयक समंक संकलन

द्वितीयक संमक जिला केन्द्रीय सहकारी बंक, जिला सांख्यिकीय कार्यालय, कृषि विभाग बालाघाट, नाबार्ड बैंक व योजना आयोग के प्रकाशित और अप्रकाशित लेखों, पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं, वेबसाइट से सूचनाएँ एकत्रित की गई है इसके अतिरिक्त स्थानीय कृषि सहकारी समितियों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों से जानकारी प्राप्त की गई है। द्वितीयक समंक विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त किए गये है, सर्वेक्षण से प्राप्त प्राथमिक संमकों को वर्गीकरण एवं

सारणीबद्ध किया गया तत्पश्चात् औसत, प्रतिशत विधि का प्रयोग कर विश्लेषण किया गया है।

प्राथमिक सेवा सहकारी समिति में कुल सदस्य संख्या

समिति का नाम	कुल सदस्य संख्या		
	2006 से पूर्व	2014–16	वृद्धि (प्रतिशत में)
सेवा सहकारी समितिया	25905	51190	97.60

स्त्रोत–जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक बालाघाट

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियां, में वर्ष 2006 के पूर्व कुल सदस्य संख्या 25905 थी जो वर्ष 2014–16 में बढ़कर 51190 हो गई। अतः स्पष्ट है कि प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के सदस्यों की संख्या में 97.60 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं।

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों की अंश पूंजी

समिति का नाम	2006 से पूर्व				2014–16				वृद्धि (प्रतिशत में)			
	शासन	सदस्य	समिति	योग	शासन	सदस्य	समिति	योग	षासन	सदस्य	समिति	योग
सेवा सहकारी समितियां	11.00	72.63	62.76	213.82	21.395	338.84	40.89	432.54	94.5	366.52	–34.84	102.29

स्त्रोत–जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक बालाघाट

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियां, में वर्ष 2006 के पूर्व शासन की अंश पूंजी 11.00 लाख रूपयें, सदस्यों की अंश पूंजी 72.63 लाख रूपयें तथा समितियों की अंश पूंजी 62.76 लाख रूपयें थी जो कुल अंश पूंजी 213.82 लाख रूपयें थी जो बढ़कर वर्ष 2014–16 में शासन की अंश पूंजी 21.395 लाख रूपयें, सदस्यों की अंश पूंजी 338.84 लाख रूपयें तथा समितियों की अंश पूंजी 40.89 लाख रूपयें जो कुल अंश पुंजी 432.54 लाख रूपयें हो गई। अतः स्पष्ट होता हैं कि सेवा सहकारी समितियों की अंश पूंजी में 102.29 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अतः इससे स्पष्ट है कि प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों की अंश पूंजी में निरन्तर वृद्धि हुई है।

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों की कार्यशील पूंजी

समिति का नाम	2006 से पूर्व				2014–16				वृद्धि (प्रतिशत में)			
	सदस्य अमानते	रक्षित निधी	अन्य निधिया	कार्यशील पूंजी	सदस्य अमानते	रक्षित निधी	अन्य निधिया	कार्यशील पूंजी	सदस्य अमानते	रक्षित निधी	अन्य निधिया	कार्यशील पूंजी
सेवा सहकारी समितियां	5.19	5.19	88.42	567.99	2252.2	120.53	132.19	2509.9	43294.99	924.04	49.50	341.89

स्त्रोत–जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक बालाघाट

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियां, में वर्ष 2006 के पूर्व सदस्य अमानतें 5.19 लाख रूपये, रक्षित निधी 5.19 लाख रूपयें तथा अन्य निधियां 88.42 लाख रूपयें थी जो कुल कार्यशील पूंजी 567.99 लाख रूपयें थी जो बढ़कर वर्ष 2014–16 में सदस्य अमानतें 2252.2 लाख रूपयें, रक्षित निधी 120.53 लाख रूपयें, तथा अन्य निधियां 132.19 लाख रूपयें थी जो कार्यशील पूंजी 2509.9 लाख हो

गई। अतः स्पष्ट होता हैं कि सेवा सहकारी समितियों की कार्यशील पूंजी में 341.89 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अतः इससे स्पष्ट है कि प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों की कार्यशील पूंजी में निरन्तर वृद्धि हुई है।

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों का कुल ऋण वितरण

समिति का नाम	ऋण वितरण					
	2006 से पूर्व		2014–16		वृद्धि (प्रतिशत में)	
	अल्पकीलन ऋण	मध्यकीलन ऋण	अल्पकालोन ऋण	मध्यकालोन ऋण	अल्पकालोन ऋण	मध्यकालोन ऋण
सेवा सहकारी समितियां	722.52	72.19	4054.69	262.15	461.1	263.13

स्त्रोत–जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक बालाघाट

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के द्वारा वष 2006 से पूर्व कुल वितरण अल्पकालोन ऋण 722.52 लाख रूपयें एवं मध्यकालोन ऋण 72.19 लाख रूपये वितरित किया गया था। जो वर्ष 2014–16 में बढ़कर अल्पकालोन ऋण 4054.69 लाख रूपयें एवं मध्यकालोन ऋण 262.15 लाख रूपयें हो गया। अतः स्पष्ट हैं कि सहकारी समितियो के कुल ऋण वितरण में अल्पकालोन ऋण 461.1 प्रतिशत एवं मध्यकालोन ऋण 263.13 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

भौतिक उत्पादन (क्विंटल में)

समिति का नाम	फसल का नाम धान		वृद्धि (प्रतिशत में)	गेहूं		वृद्धि (प्रतिशत में)	दलहन		वृद्धि (प्रतिशत में)	अलसी/अन्य तेलबीज		वृद्धि (प्रतिशत में)
	2006 से पूर्व	2016		2006 से पूर्व	2016		2006 से पूर्व	206		2006 से पूर्व	2016	
सेवा सहकारी समितियां	1609	2044	27.03	108	164	51.85	88	130	47.72	28	40	42.85

स्त्रोत– प्राथमिक संमकों से

प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के माध्यम से जिले में वर्ष 2006 से पूर्व धान, गेहू, दलहन, अलसी/अन्य तेलबीज मे कमशः 1609, 108, 88, 28 क्विटल का भौतिक उत्पादन हुआ था जो बढ़कर वर्ष 2014–16 में धान, गेह, दलहन, अलसी/अन्य तेलबीज मे कमशः 2044, 164, 130, 40 क्विंटल भौतिक उत्पादन हुआ था। अतः स्पष्ट हैं कि जिले में कृषि के क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – बालाघाट जिला कृषि प्रधान है। इस जिले मे 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्य में संलग्न है। जिले के 2.75 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में कृषि होता है। जिले की मुख्य फसले (खरीफ) धान, अरहर आदि रबी फसलों में गेहू, चना, मटर, आदि

का उत्पादन होता है। यहां के अधिकांश कृषक भूमिहीन है। जो ठेका या अधिया बटाई करके कृषि कार्य करते है। इस जिले में कृषि जोत का आकार 2 हेक्टेअर से भी कम है। जिले में सिंचाई के पर्याप्त साधन न होने के कारण यहा के किसानों को मानसून पर ही निर्भर ही रहना पडता है। जिले में सहकारी क्षेत्र किसानों के लिए एक आशा की किरण के रूप में उभर रहा है। 10 तहसीलों के सभी गांव के कृषक प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियों से जुडे हुए है। प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। जिनमें सेवा सहकारी समितियां, कृषि साख की आवश्कताओं की पूर्ति की दिशा में उल्लेखनीय कार्य कर रही है। कृषि उत्थान के लिए प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियां 0 (शून्य) प्रतिशत की ब्याज दर पर अल्पकालोन ऋण प्रदान करती है। जो कृषकों को एक सीजन के लिए ऋण प्रदान करती हैं। ब्याज दर 0 (शून्य) होने के कारण कृषक को कोई ब्याज नहीं देना होता हैं किन्तु उन्हें 15 मार्च तक ऋण चुकाना होता ह।

शोध अध्ययन में यह पाया गया है कि जिले की में विगत 10 वर्षो में प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियों की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है। इन प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियों की कार्यशील पूंजी में सदस्यों की अमानतों और बचत खातों में वृद्धि हुई हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि कृषकों की स्थिति में सुधार हुआ है। प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियों के माध्यम से किसानों को मोबाइल फोन कय करने के लिए भी ऋण प्रदान किये जा रहे है। जिससे कृषि की आधुनिक तकनीक की जानकारीयां आदि प्राप्त कर कृषि मे उनका प्रयोग कर रहे हैं। शासन द्वारा किसाना के लिए "किसान काल सेंटर" निशुल्क दुरभाष नं. 18002334433 प्रांरम्भ किया हैं। जो 24 घंटे कृषकों की सेवा के लिए उपलब्ध है। किसान जब चाहे इस नम्बर पर फोन करके अपनी समस्याओं का समाधान पा लेते है। इस हेतु भी प्राथमिक सेवा सहकारी समितियां किसानों की मदद के लिए निरन्तर प्रयासरत् हैं।

शाध के दौरान यह पाया गया है कृषक प्राथमिक सेवा सहकारी साख समितियों से ऋण प्राप्त करके कृषि उत्पादन में निरन्तर वृद्धि कर रहे है। यह देखने में भी मिला है। कि जो कृषक प्राथमिक सेवा सहकारी समितियों के सदस्यता के पश्चात् कृषि उत्पादन में निरन्तर वृद्धि होकर किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार आया है। वह कृषि उपकरण जैसे–डीजल इंजन, मोटर, टैक्टर, हार्वेस्टर आदि के लिए भी दीर्घकालीन ऋण लेकर कृषि की उत्पादकता में वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयासरत है। हालांकि कृषि के आर्थिक उन्नयन में सहकारी साख समितियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। फिर भी अनेक समस्याएं दृष्टिगोचर हो रही हैं। इनकी संख्या में परिमाणात्मक वृद्धि के बावजूद गुणात्मकता के पक्ष में अभी भी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

डॉ. श्रद्धा कनौजिया
एम.कॉम, पी.एच.डी.

प्रस्तावना : मध्यप्रदेश, भारत का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है, जो प्राकृतिक संसाधनों, स्वास्थ्यकर वातावरण और उपजाऊ कृषि वातावरण स्थितियों से संपन्न है।

पिछले कुछ वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में काफी बदलाव आया है। बाजार की ताकतों ने औद्योगिक क्षेत्रों में निवेश प्रवाह को निर्देशित करना शुरू कर दिया है। आर्थिक विकास के लिए औद्योगिक विकास में निवेश बढाना, मध्यप्रदेश के लिए प्रमुख केंद्रित क्षेत्रों में से एक है। आज, 2016–17 के दौरान 11.98ः की वार्षिक वृद्धि दर के साथ मध्यप्रदेश, भारत में सबसे तेजी से विकसित हो रहे प्रभावशाली राज्यों में से एक है। तेजी से विकसित हो रहा यह राज्य विभिन्न क्षेत्रों में भारी व्यापार के अवसर प्रदान करता है। मध्यप्रदेश में निवेशकों को परियोजना के स्थान, बुनियादी ढांचे, प्रोत्साहन और अन्य सुविधाओं के मामले में बेहतर विकल्प उपलब्ध है। वर्तमान समय में विभिन्न चरणों में 104 अरब से अधिक अमरिकी डॉलर वाले भावी निवेश प्रस्ताव राज्य के समक्ष है।

शब्द कुंजी : प्रसंस्करण, औद्योगिक, निवेशक, अयस्क, रणनीतिक, संगोष्ठी

मध्यप्रदेश में उद्योग काफी हद तक प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर है। यहां चूना पत्थर, कोयला, तिलहन, दालें, बॉक्साइट, लौह अयस्क, हीरा, तांबा अयस्क, मैंगनीज अयस्क, रॉक फॉस्फेट, सिलिका, सोया, कपास और अन्य प्राकृतिक संपदा प्रचुर मात्रा में है। राज्य में कपड़ा, सीमेंट, इस्पात, खाद्य प्रसंस्करण, ऑटोमोबाइल और ऑटो कम्पोनेंट, फार्मा और ऑप्टिकल फाइबर जैसे क्षेत्रों के लिए एक मजबूत औद्योगिक नींव बनी हुई है। राज्य में निवेश को आकर्षित करने के लिए मध्यप्रदेश संसाधनों से समृद्ध राज्य है। प्रगतिशील नीतियों और सक्रिय उपायों के माध्यम से सरकार लगातार कारोबारी माहौल में सुधार कर रही है। मध्यप्रदेश के संसाधनों और निवेश के अवसरों के बारे में निवेशकों में जागरूकता पैदा करने के लिए राज्य सरकार राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय निवेशकों की संगोष्ठी का आयोजन करती है। अपने संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और निवेशकों के लिए एक सुविधाजनक वातावरण बनाने पर ध्यान देते हुए, मध्यप्रदेश बहुत जल्द ही औद्योगिक समुदाय के लिए सबसे पसंदीदा गंतव्य बनने की उम्मीद रखता है।

एडवांटेज मध्यप्रदेश :

निवेश को प्रोत्साहित करने की रणनीति के साथ आर्थिक विकास के उच्च स्तर को प्राप्त करने के लिए राज्य में तेजी से आर्थिक विकास की जरूरत को मध्यप्रदेश सरकार पहचानती है। मजबूत अर्थव्यवस्था रू अवधि के दौरान 9.5% के प्रभावशाली सीएजीआर के साथ भारत में सबसे तेजी से बढ़ रहा राज्य मजबूत औद्योगिक बुनियादी ढांचा औद्योगिक निवेश की सुविधा के लिए 231 अधिसूचित औद्योगिक क्षेत्र, 19 विकास केंद्र, चार अधिसूचित विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड) और 12 उत्पाद विशिष्ट औद्योगिक पार्क रणनीतिक स्थान भारत के केंद्र में स्थित, देश भर के सभी प्रमुख बाजारों और प्रथम स्तरीय शहरों के करीब स्थिर सरकार और काम के लिए शातिपूर्ण माहौल राज्य में निवेश प्रक्रिया की निर्बाध सुविधा के लिए मध्यप्रदेश सरकार ने कई निवेशक अनुकूल नीतियां बनाई है और एकल खिड़की सचिवालय, म. प्र. ट्रायफेक का निर्माण किया है।

बेहतरीन कनेक्टिविटी :

99403 km- की मजबूत सड़क का नेटवर्क, जो राज्य को एक आदर्श स्थल, केंद्रीकृत विनिर्माण और वितरण का केंद्र बनाता है। औद्योगिक उपयोग के लिए बड़े पैमाने पर भूमि रू राज्य भर में विभिन्न रणनीतिक स्थानों पर औद्योगिक उपयोग के लिए 16,000 हेक्टेयर से अधिक भूमि। मजबूत उपभोक्ता आधार रू 70 लाख से अधिक की आबादी के साथ, बड़े शहरों की 40% विकास दर की तुलना में राज्य की दशक की शहरीकरण विकास दर 26ः की है.समृद्ध प्राकृतिक संसाधन मध्यप्रदेश में विभिन्न कृषि आबोहवा वाले 11 क्षेत्र है।

- लौह अयस्क, हीरे, तांबा अयस्क, मैंगनीज अयस्क, लौह अयस्क, बॉक्साइट, चूना पत्थर, कोयला और संगमरमर, ग्रेनाइट जैसी समृद्ध खनिज संपदा।
- भारत के वनों में से 12% मध्यप्रदेश में हैं।
- कोयला और कोयला बेड मीथेन जैसे दुर्लभ ईंधन संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।
- भारत के कोयला भंडार का 14% मध्यप्रदेश में हैं।
- एशिया की सबसे घनी कोयला–संस्तर सीधी जिले मे स्थित है।
- भारत में मध्यप्रदेश में ही हीरे की खदाने हैं ।
- 144 बीसीएम कोल बेड मीथेन भंडार पाया गया है।
- बिजली, सीमेंट, लोहा और इस्पात इकाइयों के कैप्टिव माइनिंग के लिए उपलब्ध ब्लॉकों का पूर्वेक्षण।
- चूना पत्थर के बड़े भंडार है, जो निर्माण का बुनियादी कच्चा माल है।
- लोहा और इस्पात के महत्वपूर्ण तत्व, मैंगनीज और डोलोमाइट पाए जाते हैं।
- संगमरमर, ग्रेनाइट और शिला पट्ट जैसी आकर्षक आयामी पत्थर किस्में की उपलब्ध हैं।
- कृषि–उपलब्धि देश के कुल उत्पादन में से 23.92% के साथ तिलहनों का सबसे बड़ा निर्माता।
- देश के कुल उत्पादन में से दालों के 25% और चने के 40% उत्पादन के साथ राज्य देश में पहले स्थान पर है।
- गेहूं और आलू की व्यावसायिक तौर पर पसंदीदा किस्मों की वृद्धि हुई है।
- लहसुन और धनिया का सबसे बड़ा उत्पादक।
- बड़े पैमाने पर बंजर भूमि और सरकारी खेतों की 50 से 3000 एकड़ जमीन निवेश की पेशकश के लिए तैयार।
- निवेशकों के लिए गैर वन बंजर भूमि के आवंटन के लिए मध्यप्रदेश सरकार ने एक नीति तैयार की है।
- अनुबंध खेती की अनुमति दी है।
- समृद्ध जैव विविधता राज्य के 30% क्षेत्र पर वन आवरण है।
- 25 वैश्विक कृषि आबोहवा क्षेत्र मं से राज्य में 11 क्षेत्र है।
- बड़े पैमाने पर अज्ञात, दुर्लभ एवं मूल्यवान औषधीय हर्बल पौधों की प्रजातियां, कुशल श्रमिक और शिक्षा केन्द्र।

समृद्ध जैव विविधता :

हर साल तकरीबन 90,390 तकनीकी स्नातक और कुल 2,70,000 स्नातक कार्यबल में शामील ग्वालियर एवं जबलपुर के भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान (आई आई आई टी), नेशनल लॉ इंस्टीट्यूट यूनिवर्सिटी और राष्ट्रीय न्यायिक अकादमी, भोपाल का भारतीय वन प्रबंधन संस्थान (आई आई एफ एम), इंदौर के इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट (आईआईएम) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) और इस तरह के राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्र, बड़ी संख्या में मध्यप्रदेश में स्थित हैं।

6 प्रमुख स्थानों पर समूह आधारित विकास

- इंदौर – फार्मा, वस्त्र, खाद्य प्रसंस्करण, आईटी, ऑटो कम्पोनेंट।
- भोपाल – इंजीनियरिंग, वस्त्र, बायोटेक, हर्बल, आईटी, खाद्य प्रसंस्करण।
- जबलपुर – वस्त्र, खनिज, पत्थर, वन, हर्बल, खाद्य प्रसंस्करण।
- ग्वालियर – इलेक्ट्रॉनिक्स, आईटी, एफएमसीजी, अभियांत्रिकी, स्टोन, खाद्य प्रसंस्करण।
- रीवा – खनिज, सीमेंट, कृषि और वन के उत्पादन।
- सागर – खनिज प्रसंस्करण, पत्थर।

उद्योग सुविधा

- मध्यप्रदेश निम्न सुविधाओं के साथ तेजी से उद्योगों के लिए नए गंतव्य स्थान के रूप में उभर रहा है –
- उद्योग अनुकूल प्रशासन का निर्माण और एक पैनी औद्योगिक संवर्धन नीति।
- छोटे, मध्यम और कुटीर उद्यमों के विकास के लिए राज्य, सुविधाजनक वातावरण प्रदान करता है। यहां विशेष आर्थिक क्षेत्र है। उद्योगों के लिए विश्वसनीय बिजली आपूर्ति सुनिश्चित करता है। प्रमुख औद्योगिक शहरों के साथ एयर कनेक्टिविटी उपलब्ध है। 25 करोड़ रुपए से अधिक निवेश वाली बड़ी निवेश परियोजनाओं के लिए प्रोत्साहन के साथ विशेष पैकेज।
- औद्योगिक पार्क की स्थापना के लिए सहायता।
- पर्यटन परियोजनाओं के लिए रियायतें।
- परियोजना क्लीयरेंस कार्यान्वयन बोर्ड (पीसीबी) के माध्यम से मेगा परियोजनाओं को एकल तालिका मंजूरी। लगभग 2,64,129 करोड़ रुपए लागत वाली परियोजनाएं की है।
- औद्योगिक संवर्धन नीति 2015 के मुख्य प्रोत्साहन (2016 में संशोधित)
- 10 साल तक के लिए मूल्य योजित कर (वैट) की वापसी – पूंजी निवेश के 100% तक सीमित।
- 9 साल तक प्रवेश कर छूट।
- सूक्ष्म और लघु उद्योग के लिए स्थाई पूंजी निवेश पर 15% की सब्सिडी।
- विशाल परियोजनाओं के लिए भूमि सब्सिडी – 75% (प्रीमियम पर)।
- सूक्ष्म और लघु उद्योग के लिए रू. 2 दशलक्ष (40,000 अमरीकी डालर) की सीमा के साथ 7 साल की अवधि के लिए 5% की ब्याज सब्सिडी।
- औद्योगिक पार्क की स्थापना की बुनियादी सुविधाओं की विकास लागत पर रू. 50 दशलक्ष (1 मिलियन अमरीकी डालर) की सीमा के साथ 15% की वित्तीय सहायता।
- रू. 200,000 दशलक्ष (4 अरब अमरीकी डालर) अथवा इससे अधिक निवेश वाली परियोजनाओं के लिए वित्तीय प्रोत्साहनों की एक विशेष पैकेज।
- रू. 250 दशलक्ष (5 मिलियन अमरीकी डालर) अथवा इससे अधिक निवेश वाली परियोजनाओं के लिए वित्तीय प्रोत्साहनों के अनुकूलित पैकेज का प्रावधान
- वस्त्र उद्योग के लिए अतिरिक्त राजकोषीय प्रोत्साहन
- नई कपड़ा इकाइयों को रू.10 दशलक्ष (200,000 डालर) तक पात्र पूंजी निवेश के 10% की निवेश सब्सिडी दी जाएगी।
- रू. सौ करोड़ (20 मिलियन अमरीकी डालर) से अधिक की अचल पूंजी निवेश वाली नई इकाइयों को 7 वर्ष की अवधि के लिए प्रवेश कर छूट दी जाएगी।
- रू. 50 दशलक्ष (1 मिलियन अमरीकी डालर) तक के निवेश के लिए 5 वर्ष की अवधि के लिए 2% की ब्याज सब्सिडी प्रदान की जाएगी।
- परिधान प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना के लिए रू. 2.5 दशलक्ष (50,000 अमरीकी डालर) तक के निवेश के लिए 25% सब्सिडी प्रदान की जाएगी।

सस्थागत प्रणाली की स्थापना

- म. प्र. ट्रायफेक निवेश की सुविधा के लिए एकल खिड़की सचिवालय है।
- जिला स्तरीय निवेश संवर्धन अधिकार प्राप्त समिति – जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में
- राज्य स्तरीय निवेश संवर्धन अधिकार प्राप्त समिति – उद्योग मंत्री की अध्यक्षता में
- सर्वोच्च स्तरीय निवेश संवर्धन अधिकार प्राप्त समिति – माननीय मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में।

निवेश प्रोत्साहन

- कृषि, उद्योग, इंफ्रास्ट्रक्चर और सेवाओं के क्षेत्र में निवेश के माध्यम से अपने

कुल आर्थिक विकास के लिए सरकार ने मध्यप्रदेश को बढ़ावा देने की पहल की।

- म. प्र. ट्रायफेक के माध्यम से एकल खिडकी निवेश सुविधाकरण।
- एमपी निवेश सुविधाकरण अधिनियम, 2008 अधिनियमित।
- मध्यप्रदेश औद्योगिक केंद्र विकास निगम लिमिटेड (MPAKVN) के माध्यम से औद्योगिक नीति द्वारा समूह आधारित विकास की सुविधा।
- उद्यमियों को सभी संबंधित विभागों की शीर्ष स्तर/ राज्य स्तर/ जिला स्तरीय समिति द्वारा आवश्यक मंजूरी प्राप्त करने के लिए संयुक्त आवेदन पत्र।
- उद्यमियों की सुविधा के लिए, राज्य में उपलब्ध (16000 हेक्टेयर) भूमि का एक व्यापक डाटाबेस तैयार किया गया है, जो उद्योगों की स्थापना के लिए उपयुक्त है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. लघु उद्योग निर्देशिका (गूगल पुस्तक लेखक – अवधेश चतुर्वेदी)
2. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग आयुक्त (भारत सरकार)
3. राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (भारत)
4. औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग (भारत)
5. दैनिक भास्कर समाचार पत्र
6. पत्रिका समाचार पत्र

आज के आधुनिक युग में रेलवे का योगदान

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

डॉ. रंजना शर्मा
एम.कॉम, पी.एच.डी.

सारांश :

भारतीय रेल के बारे में

अपने क्षितिजों का भौगोलिक, सांस्कृतिक, भावात्मक और बौद्धिक रूप से विस्तार करते हुए हमारे पास तुलना करने के लिए आखिर यात्रा के अलावा और भला कौन से अनुभव है। यह उक्ति मैक स्मिथ और रोजालीन डफी ने अपने विश्लेषण फ़र्सत, पर्यटन एवं मोबिलिटी का समसामयिक भूगोल में कही है। यात्रा की क्षमता प्रभोत्पादकता को कभी बढ़ा–चढ़ाकर नहीं कहा जा सकता। साथ ही वर्तमान समय मे यात्रा करना सहज होता जा रहा है। इसके लिए रेलवे के उन्नत एवं व्यापक नेटवर्क तथा उसकी प्रतिबद्धता परिलक्षित होती है। भारतीय रेलवे के मुकुट में हीरे की तरह जड़े उत्तर रेलवे ने सभी दूरियों को समाप्त करने का मिशन शुरू किया है तथा अपने अस्तित्व का रूपक निर्मित किया है। औपचारिक रूप से 1952 में गठित यह रेलवे हाल ही में भारतीय रेलवे के 16 जोनों में पुर्नगठित होने के बावजूद भी सबसे अधिक रूट किलोमीटर वाला रेलवे है। पहले के 1104.43 रूट किलोमीटर से अब 6807.90 रूट किलोमीटर रह जाने वाले इस रेलवे में अब पाँच मण्डल अम्बाला, दिल्ली, फिरोजपुर, लखनऊ और मुरादाबाद हैं।

शब्द कुंजी : पर्यटन, सांस्कृतिक, विशेषता, विविधपूर्ण, रमणीक, आस्था

प्रस्तावना :

उत्तर रेलवे का क्षेत्र

जम्मू एवं कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल, उत्तर प्रदेश, दिल्ली और केन्द्र शासित प्रदेश चण्डीगढ़ में फैला उत्तर रेलवे प्रायद्वीप के ऊपर स्थित उत्कर्ष बिन्दु के रूप में प्रतीत होते हुए अपनी कार्यशैली का विस्तार शष भारत पर करता रहता है।

उत्तर रेलवे पर विशेष पर्यटन स्थल

भारत के प्रत्येक भू–भाग की एक अनोखी कहानी है। यहां कुछ विशेष स्थानों का उल्लेख किया जा रहा है, जो भारत की सांस्कृतिक विशेषताओं का उल्लेख करते हैं उत्तर रेलवे के अंतर्गत आने वाला क्षेत्र भी विविधतापूर्ण भौगोलिक परिवेश वाला है। जहाँ एक ओर शिवालिक पर्वत श्रंखलाएं हैं, वहां दूसरी ओर थार का मरूस्थल है। एक और तराई प्रांत का हरीतिमा वाला प्रदेश है दूसरी ओर गंगा के विशाल समतल मैदान हैं। देश के उत्तर में सीमा रेखा की तरह विशाल हिमालय है जिसकी चोटियाँ विश्व में सबसे ऊंची है। हिमालय किसी एक पर्वत का नाम नहीं बल्कि यह अनेक चोटियों का समूह है जिसमें बहुत सी खूबसूरत घाटियाँ भी हैं। हिमालय के दक्षिणी छोर की चोटियाँ जो शिवालिक पर्वत श्रंखलाओं के नाम से प्रसिद्ध है, भारत में उत्तर के समतल मैदानों पर आकर समाप्त होती है । आसमान से बातें करतीं इन चोटियों के एकदम विपरीत उत्तर के मैदान काफी समतल हं और इनका ढलान बहुत धीमा है। दिल्ली से बंगाल की खाड़ी तक इनकी ढाल मात्र 200 मीटर है।

जम्मू

जम्मू एवं कश्मीर राज्य का शहर जम्मू यहाँ का दूसरा सबसे बड़ा शहर और शीतकालीन राजधानी है। यहाँ स्थित वैष्णो देवी तीर्थ के प्रति आस्था के चलते लाखों श्रद्धालु जम्म् आते हैं। प्रसिद्ध पर्वतीय रमणीक स्थलों जैसे कटरा, कुड, पटनीटॉप और बटोटे आदि तक जम्मू से पहुंचा जा सकता है। कुड और पटनीटॉप के पूर्व में शिव का शुद्ध महादेव नामक प्रसिद्ध मन्दिर है । इसके आगे सनासर की खूबसूरत घाटी है जहाँ गुज्जर सरदार हर साल गर्मियों में एकत्र हाते हैं । विश्व का सबसे ऊंचाई पर स्थित रेल आरक्षण केन्द्र लेह–लद्दाख में स्थित है, जो जम्मू एवं कश्मीर का ही भाग है। विश्व के दूसरे स्विट्जरलैण्ड कहे जाने वाले श्रीनगर का भी यह प्रवेश द्वार है।

पर्यटन स्थल हिमालय की तलहटी में स्थित जम्मू प्रदेश श्रीनगर, पहलगांम, गुलमर्ग, करगिल, लद्दाख और अपने मनोरम प्राकृतिक सौंदर्य एवं दस्तकारी के लिए प्रसिद्ध जंस्कर का

प्रवेश द्वार है। यहां रघुनाथ मंदिर और रामवीरेश्वर मंदिर जैसे धार्मिक स्थल हैं। अन्य महत्वपूर्ण स्थलों में बाहूकिला, संस्कृत ग्रंथागार, अमर महल और डोगरा कला दीर्घा प्रसिद्ध हैं।

अमृतसर

सिखों के चौथे गुरू राम दास द्वारा इसकी स्थापना 1577 में की गयी। अमृतसर का अर्थ है अमृत का सरोवर। यह स्वर्ण मंदिर में स्थित पवित्र सरोवर से सम्बन्धित है। यह एक सुन्दर और शांत स्थान है। सोलहवीं शताब्दी पहले बना दुर्गियाना मंदिर भी विशेष महत्व वाला है। स्वर्ण मंदिर के निकट स्थित जलियां वाला बाग हमें अपने स्वाधीनता संघर्ष की याद दिलाता है।

लुधियाना

ऊनी वस्त्रों, शॉलों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध तथा घरेलू और विदेशी बाजार के लिए सामग्री का निर्माण करने के लिए यह प्रसिद्ध है। अत्याधुनिक सुविधाओं वाला क्रिश्चयन मेडिकल कॉलेज यहां स्थित है जिसमें काफी बड़ी संख्या में लोग आते हैं।

चण्डीगढ़

चण्डीगढ़ शहर का मास्टर प्लान यूरोपियन आधुनिक वास्तुकार ली कार्बूजिए द्वारा 1950 में बनाया गया। शिवालिक पर्वत श्रंखला तेह के किनारे पर बसा यह शहर हिमालय के बाहरी छोर पर स्थित है। इस शहर की प्रमुख विशेषताओं में नेक चंद रॉक गार्डन एक है। रेल मार्ग द्वारा मात्र 24 किलोमीटर की दूरी पर स्थित इस नगर से चार दैनिक रेलगाड़ियां नैरोगेज वाले पर्वतोय रेलवे शिमला तक जाती हैं। चण्डीगढ़ के सैक्टर 16 में स्थित रोज गार्डन एशिया का सबसे बड़ा रोज गार्डन है। यहाँ हजार से अधिक किस्म के गुलाब हैं। चण्डीगढ़ से 20 किलोमीटर की दूरी पर स्थित पिंजौर का यादवेन्द्र गार्डन भी दर्शनीय स्थल है।

शिमला

अंग्रेजों द्वारा सन् 1819 में खोजा गया यह शहर बाद में भारत की ग्रीष्मकालीन राजधानी बन गया। कालका–शिमला रेलवे लाइन का निर्माण 1903 में हुआ। शिमला आने का सर्वोतम समय सितम्बर मध्य से नवम्बर अंत तक है। शिमला से अनेक पगडंडियां जाती है। शिमला रिज पर सबसे ऊँची चोटी के निकट 2456 मीटर पर स्थित जाखु मन्दिर भक्त हनुमान के प्रति समर्पित है। शिमला से 10 किलोमीटर की दूरी पर तारा देवी का मन्दिर है, जो सितारों की देवी तारा देवी को समर्पित है।

मुरादाबाद

पीतल की दस्तकारी के लिए प्रसिद्ध यह शहर देशी और विदेशी वस्तुओं का प्रसिद्ध बाजार है।

दिल्ली

दिल्ली भारत की राजधानी है। यहाँ स्थित पुरानी दिल्ली सोलहवीं और सत्रहवीं सदी के बीच मुस्लिम शासकों की राजधानी थी। उस समय को याद दिलाने वाली अनेक महत्वपूर्ण इमारतें और स्मारक पुरानी दिल्ली में स्थित हैं। अंग्रेजों ने नई दिल्ली को भारत की राजधानी बनाया। दिल्ली एक सबसे बड़ा प्रवेश द्वार है जो भारतकी चारों दिशाओं को सुपरफास्ट रेलगाड़ियों से जोड़ता है दिल्ली में चार प्रमुख रेलवे स्टेशन हैं। इन चार पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन नई दिल्ली रेलवे स्टेशन, हजरत निजामुद्दीन और दिल्ली सराय रोहिल्ला रेलवे स्टेशनों से अनेक रेलगाड़ियां अपनी यात्रा प्रारम्भ और समाप्त करती हैं। दिल्ली और जयपुर–जोधपुर–उदयपुर के बीच चलने वाली कई रेलगाड़ियां पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन की बजाय यहां से अपनी रेल यात्रा प्रारम्भ–समाप्त करती हैं।

लखनऊ

उत्तर प्रदेश राज्य की राजधानी लखनऊ उस नबाबी संस्कृति के लिए विशेष प्रसिद्ध है जो कला विशेषकर नृत्य और संगीत को बहुत प्रश्रय देती थी। शहर की सांस्कृतिक प्रतिष्ठा आज भी अतीत को याद दिलाने वाली कथक नृत्य शैली और गजल गायकी की परिचायक है। कहते हैं कि लखनऊ में अतीत आर वर्तमान मिलकर एक हो

जाते हैं। यहाँ अतीत को वर्तमान से अलग करना सचमुच ही दुष्कर काम है । यह शहर शिया मुहरम समाराहों के लिए भी प्रसिद्ध है। लखनऊ प्रसिद्ध मुगलई कबाबों और इत्र के लिए भी विशेष रूप से ख्यात है। लखनऊ की कशीदाकारी और चिकनकारी के वस्त्र आज भी कपड़ों के शौकीन लोगों के संग्रह का हिस्सा हैं। लखनऊ में दो बड़े रेलवे स्टेशन चारबाग और लखनऊ रेलवे जंक्शन हैं।

देहरादून

देहरादून पर्वत श्रृंखलाओं की तलहटी में बसा देहरादून उत्तरांचल राज्य की राजधानी है और यह यहां स्थित इंडियन मिलिट्री एकेडमी, वन संरक्षण संस्थान, दून स्कूल के लिए भी जाना जाता है।

पठानकोट

पंजाब के धुर उत्तर में स्थित पठानकोट नगर यात्रियों के लिए एक जंक्शन का काम करता है। हिमाचल प्रदेश के हिल स्टेशनों डलहौजी और धर्मशाला का यह प्रवेश द्वार है और इसी मार्ग पर जम्मू एवं श्रीनगर भी हैं।

धार्मिक महत्व के स्थान

यहां पर स्थित वैद्यनाथ मंदिर मे 12 वास्तविक ज्योतिर्लिगों में से एक संरक्षित है। यहां का ज्वालामुखी मंदिर 51 शक्ति पीठों में से एक है। पालमपुर से 10 किलोमीटर पश्चिम में चौमुण्डा देवी का प्रसिद्ध मंदिर भी है।

हरिद्वार

भारत में हिदुओं के 7 पवित्र शहरों में से एक हरिद्वार शहर 1400 वर्ष पुरानी संस्कृति की याद दिलाता है। हरिद्वार का अर्थ है–हरि अर्थात् विष्णु का द्वार, जो शिवालिक पर्वत श्रृंखलाओं की तलहटी में स्थित है। गंगा नदी हुगली में सागर से मिलने के लिए अपनी 2000 किलोमीटर की यात्रा प्रारम्भ करने से पहले हरिद्वार से गुजरती है।

राष्ट्र की आर्थिक जीवन रेखा की रूप में उत्तर रेलवे प्रतिदिन 471 मालभाड़ा रेलगाड़ियों का संचलन करती है। उत्तर रेलवे लोहा और इस्पात के लिए कच्चा माल, सीमेण्ट, खाद्यान्न, उर्वरक, पीओएल और अन्य वस्तुओं का लदान करती है। उत्तर रेलवे बड़े उद्योगों जैसे खाद्यान्न, उर्वरक आदि का सतत् लदान करती है तथा रेल और सड़क मार्ग द्वारा भिजवाये जाने वाले सामान के आवागमन पर भी कड़ी निगरानी रखते हुए इन उद्योगों के साथ रेलवे के सम्बन्ध बेहतर बनाने तथा उसकी साझेदारी बढ़ाने पर भी जोर देती है।

वर्तमान में रेलवे द्वारा सेवित औद्योगिक क्षेत्र निम्नानुसार हैं :

'सीमेण्ट प्लाण्ट गुजरात–अम्बूजा सीमेण्ट लिमिटेड, रोपड़, अम्बाला (अम्बाला मण्डल के कीरतपुर स्टेशन के माध्यम से) 'पीओएल प्लाण्टस इंडियन ऑयल कम्पनी, पनकी, इंडियन ऑयल कारपोरेशन, सुचिपिंड (फिरोजपुर) आईओसी शोधक प्लाण्ट, पानीपत थर्मल पावर प्लाण्ट रूप नगर, बठिण्डा, लहरा मोहब्बत अन्य सेवित उद्योगों में बीएचईएल, उर्वरक उद्योग, वेस्टर्न इंडियन मैच कम्पनी, डिस्टिलरिज, तारपीन और रेसिन कम्पनी, चीनी मिल, स्कूटर फैक्टरी, एचएएल, एस्बेस्टेस मिटटी के बर्तन और साइकिल उद्योग।

कारखाने

लोकोमोटिव चारबाग	वर्कशॉप,
कैरिज एवं आलमबाग	वैगन वर्कशॉप,
कैरिज एवं वर्कशॉप,कालका	वैगन
पुल कारखाना,	जलंधर
संकेत एवं दूर कारखाना, गाजियाबाद	संचार

नवीनता का अग्रदूत

प्रगति की दिशा में भारत के तेजी से बढ़ते हुए कदम देशवासियों के श्रम ओर उद्यम के कारण ही नहीं बल्कि इसका एक कारण देश की विविधतापूर्ण संस्कृतियों में व्याप्त समस्त सकारात्मक परिवर्तनों से उपजी गुणवत्ता भी है।

इस सांस्कृतिक विविधता का योगदान अप्रतिम है। देश के उत्तरी भाग में विविधता के इस लघु रूप को साकार करने में उत्तर रेलवे ने बड़ी ही दृढ़ता और धैर्य के साथ कार्य किया ह। इसके लिए देश के विभिन्न भागों से यहाँ तक विशाल रेल नेटवर्क का निर्माण किया गया है। रेल सेवाओं को बड़ी ही दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता के साथ इस प्रकार के मार्गों से चलाया जाता है कि भारत की सांस्कृतिक झाँकी को देखने की इच्छा रखने वाले रेलयात्री के लिए भारत–भ्रमण सुगम हो सके।

भारतीय रेलवे ने अतीत में तकनीकी ज्ञान और दक्षता के लिए प्रयास किया है तथा आज भी अपनी व्यापारिक प्रक्रिया में सभी तकनीकी परिवर्तनों को अपनाते हुए कार्य करने का प्रयास कर रही है। हम आज भी तकनीक में आने वाले बदलावों साथ तालमेल बैठान तथा देश की अर्थव्यवस्था में आए अवरोध को दूर करने के प्रति प्रयासरत है। बेहतर विकास के लिए अपने आधारभूत ढाँचे को मजबूत करना आज प्रत्येक संगठन की आवश्यकता बन गई है। इस क्षेत्र के विकास के लिए उत्तर रेलवे ने सुनियोजित एवं चरणबद्ध तरीके से कार्य किया है और इसके चलते स्वतरू ही पर्यटन का भी विस्तार हुआ है।

रेलवे पर सिगनल के विकास कार्य में यांत्रिक सिगनल प्रणाली के स्थान पर इलैक्ट्रो मैकेनिकल रिले और माइक्रोप्रोसेसर आधारित इण्टरलॉकिंग को अवस्थापित किया गया है। इसी प्रकार रेलवे पर टेलीकम्यूनिकेशन के क्षेत्र में इलैक्ट्रामैकेनिकल एक्सचेंजों और ओवर हैड लाइनों के स्थान पर धीरे–धीरे अत्याधुनिक ऑप्टिकल फाइबर और डिजिटल इलैक्ट्रॉनिक तकनीक पर आधारित प्रणाली को लगाया जा रहा है।

उत्तर रेलवे पर कुल 40 रूट रिले इण्टर लॉकिंग प्रणालियां कार्य कर रही हैं, जिनमें दिल्ली मेन पर लगाई गयी रूट रिले इंटरलॉकिंग को गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में विश्व की सबस बड़ी रूट रिले प्रणाली के रूप में मान्यता दी गयी है। उत्तर रेलवे पर स्थित कारखानों ने विभिन्न सिगनल गियरों के निर्माण में उल्लेखनीय उपलब्धि हासिल की है।

कुछ परियोजनाओं को समय पर पूरा कर लेने के लिए उत्तर रेलवे ने अनेक जगहों पर एक साथ कार्य करने की एक नयो प्रणाली का उपयोग किया है। यह प्रणाली पैदल उपरिगामी पुलों के साथ–साथ व्यस्त सेक्शन पर ट्रैफिक ब्लॉक की समस्या से निपटने में भी सक्षम है। रेलवे के विभिन्न कारखानों में कुछ अत्याधुनिक कार्य जैसे एआरटी परिवर्तन, वैक्यूम प्रेशर इम्प्रेग्नेशन प्लाण्टस किए जा रहे हैं। तुगलकाबाद कारखाने ने लोको फेलियर एवं कभी–कभी एचपी कम्प्रेसर पाइप में अत्याधिक ऊष्मा के कारण लोको में आग लगने की घटनाओं में कमी लाने के लिए एक आधुनिक पद्धति का विकास किया है। कारखाने द्वारा एक्सप्रेसर कम्पार्टमेण्ट में एअर सर्कुलेशन सुधारने के लिए कुछ परिवर्तन किए गए हैं। इस समस्या से निपटने के लिए साइड पैनल से कार बॉडी फिल्टर लगाया गया है। बेहतर शीतलता प्रदान करने के साथ–साथ यह एक्सप्रेसर कम्पार्टमेण्ट को अनुरक्षण सहायक बनाता है।

अर्थव्यवस्था में आये गतिरोध को दूर करने के साथ–साथ भारतीय रेलवे ने महसूस किया है कि तकनीकी उन्नति अपने आप में एक बेहद दिलचस्प चुनौती है। विकास के इस कार्य में पूरी प्रतिबद्धता के साथ जुटी रेलवे सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तनों के अनुरूप स्वयं को तैयार कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

भारतीय रेल का आधिकारिक जाल स्थल

उत्तर–पश्चिम रेलवे के बारें में

वार्षिक सांख्यिकी विवरण 2016–17

देश के सामाजिक–आर्थिक विकास में भारतीय रेल की भूमिका

भारतीय रेल का सफरनामा

गूगल इंडिया

टाईम्स इंडिया न्यूज पेपर

''नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में देशी–विदेशी संस्कृति का समन्वय''

डॉ. दीपमाला रजक
हिन्दी विभाग, जबलपुर

मानव जीवन में संस्कृति का स्थान अक्षुण्ण है व्यक्ति अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो साधन जुटाता है, जिस मार्ग पर चलकर धनोपार्जन करता है, कैसे वस्त्र पहनता है कैसे विचार रखता है, उसका जीवन दर्शन कैसा है, उसका संपूर्ण व्यक्तित्व कैसा है, उसके अवकाश का समय कैसे बीतता है, आदि–आदि सभी संस्कृति के विभिन्न अंग है।

''प्रत्येक युग अपने समय में आधुनिक रहा है लेकिन शायद कोई भी यग अपने आधुनिक होने के प्रति इतना सचेत नहीं रहा जितना वर्तमान युग। जहां प्रेमचंद ने समाज के साथ व्यक्ति के एकीकृत होने के प्रश्न को अधिक महत्व किया वहॉ जैनेन्द्र ने व्यक्ति की गुम होती पहचान को उभारकर सामने रखा।''

नासिरा जी ने भी अपने युग का जीवंत चित्रण किया है अर्थात् सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और आर्थिक परिवेश का घटनागत आकलन। सामाजिक ढांचो में परिवर्तन नये परिवेश की सृष्टि करता है और साहित्य, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक प्रतिमानो की प्रस्तुति करता है।

वर्तमान में सामाजिक सांस्कृतिक जीवन में भारी परिवर्तन देखा जा रहा है संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, पति–पत्नि संबंधी में दरार आ रही है। विवाह की परिभाषा और मान्यता परिवर्तित हो रही है। शिक्षा का क्षेत्र भी अछूता नहीं है। यंत्रीकरण से सामाजिक जीवन पर दबाव पढ़ रहा है भ्रष्टाचार साम्प्रदायिकता, भाषावाद, तोडफोड़ और आंतकवाद ने मानवता को रौंद डाला है। आज का वैश्विक परिदृश्य अर्थ द्वारा संचालित है । अर्थ सत्ता मानव को अनर्थ के शिकंजे में कसती जा रही है।

आज धर्म अपने सर्वोच्च्व आदर्श से दूर स्वार्थ सिद्धि का माध्यम बन गया है। धर्म का राजनीतिकरण युद्ध है और आंतक का कारण बन गया है। नासिरा जी ने नकारात्मक प्रशत्तियों पर भी प्रहार किये है। उन्होंने सभ्यताओं के टकराव युग में सांमजस्य के सूत्र तलाशे हैं। नासिरा जी ने पारम्पारिक सांस्कृतिक विविधता पहचान को सामाजिक परिवर्तन के साथ अपने सृजन में रूपादित किया है। भारतीय सामाजिक जीवन की सांझी विरासत, आचार–विचार, रीति–रिवाज, परम्परा–विश्वास, खान–पान, वेशभूषा और संस्कृति की रश्मियों उनकी रचनाओं में झिलमिला रही है।

'अक्षयवट' में हलचलों, कुंभमेला, साधुसंत गंगास्नान, पीर–फकीर, पंदो की कारगुजारी आदि के प्रसंग संयोजित ह। नवरात्र में दुर्गापूजा के पंडालो के साथ अखण्ड रामायण के प्रति आस्था है तो ईद, बकरीद, मोहर्रम, जुमे–जुमेरात, मजार, उर्स और ताजियो की रौनक और क्रिसमस की शाम है।

ऋतुओं के मुताबिक भारतीय व्यंजनों और हिंदू मुस्लिम भोजन शैली का वर्णन आनंदमयी है। तिल के लड्डू, बाजरे की रोटी, गजरौला, नाहरी शेरबा, सेवंई, खमीरी रोटी का स्वाद उभर के लगता है। लेखिका मंतव्य ध्यातव्य है – ''जीवन का एकाकीपन इन्हीं उत्सवों से टूटता है टोर थकना उतारने का बहाना देता है। अमीर–गरीब, हिन्दू–मुसलान शहर के इस हंसमुख चेहरे को देखकर मग्न हो उठे है।''

नासिरा जी के लेखन के विशाल केनवास पर होली, जन्माष्टमी, बंसत पंचमी, मकर संक्राति आदि पर्वो की छट बिखरी है।

डॉ. आदित्य प्रचार्झया के 'अक्षयवट को, नासिरा जी के लेखन को 'भारतीय संस्कृति का जीवंत अभिलेख मानते हैं।

नदियों के प्रति, जल के प्रति भारतीय आस्था का यह रूप 'कुइयाँजान' उपन्यास में मूर्त हुआ है। संस्कृति जन्म और विकास में नदियों का महत्वपूर्ण योग रहा है और आज नदियों का संवर्धन नहीं क्षरण हो रहा है। भारतीय मनीषा ने नदियों को माता का मान दिया है। नदियाँ केवल

भ्–खण्डो को नहीं जोड़ती हमारी धार्मिक भावना को भी तोष देती है।

पशुपक्षी पर्यावरण संतुलन में सहायक होते हैं इसलिये तो भारतीय संस्कृति के पालक पशुओं के रहने–खाने की व्यवस्था करते रहे हैं भौगोलिक सौंदर्य और आंचलिक विविधता भी संस्कृति के अंग है।

'पानी की पीड़ा आख्यान' लेख में वीणा शर्मा जी लिखती है कि ''पानी के निश्छल अनंत बहाव की तरह लेखिका ने हर गली, नुक्कड़ देश, प्रदेश, विदेश, झोपड़े, महल को समेटने की कोशिश की है।

'कुइयांजान' एक ओर तो युगीन समस्या की ओर संकेत करता है और दूसरी ओर गंगाजमुनी तहजीव को दर्शाता है।

'जीरो रोड' उपन्यास की कथाभूमि वैश्विक व्यापी लिये हुये हैं, कथानक के एक छोर में इलाहाबाद और दूसरे छोर पर दुबई है। इलाहाबाद का सांस्कृतितक महत्व है और दुबई का औद्योगिक । भारत का शहर रूढ़ियो परम्पराओं में जकड़ा है और दुबई आधुनिकता की चकाचौंध में तीव्र गति से दौड़ रह है।

नायक सिद्धार्थ दुबई में रहकर भी इलाहाबाद के गली, मुहल्ले, गंगाधार, गंगा स्नान, दादा का श्लोक वाचन दीपावली के दियो की जगमंग, तुलसीचौरा, गोबर की लिपाई, पूजन माँ के हाथ के बने व्यंजन भुला नहीं पाता। विदेशी भूमि में दुबई फेस्टीवल में सूफी नृत्य की प्रस्तुति भारतीय सांस्कृतिक के रंग का स्मरण दिलाती है। आज के दौर में लिविंग टू गेदर के साथ समलैंगिक संबंधो को भी 'जीरो रोड' में दिखाया गया है। नासिरा शर्मा का 'जीरो रोड' पुरूष विमर्श का नया पाठ प्रस्तुत करता है जो हिन्दी कथालोचन की एक चुनौती है।

शाल्मली उपन्यास में शाल्मली स्वयं अपने अस्तित्व का आकलन करती दिखती है'' औरतों के पास दो ही अभिव्यक्तियाँ है, या सर झुका देना या समस्या को अधूरा छोड़ सर कटा लेना । मेरा विश्वास न घर छोड़ने पर, न तोड़ने पर, न आत्महत्या पर है, न अपने को किसी एक के लिए स्वाहा करने में है। मैं तो घर के साथ औरत के अधिकार की कल्पना करती हूँ और विश्वास भी।'' 'ठीकरे की मंगनी' में महरूख के माध्यम से लेखिका ने बाल–विवाह और धर्म रूढ़ियों की विस्तृत व्याख्या की है।

नासिरा जी का कथा संसार अपने घर की तहजीब व समाज के अंधेरे को दूर करती हुई शमाएँ है जिनकी रौशनी इतिहास के पन्नो तक फैली हुई है। प्रो. अली अहमद के अनुसार ''नासिरा जी की कहानियो में भरपूर आवामी कल्चर है जो कहानी के कहानीपन में सजावट तो पैदा करता है साथ ही कहानी के केंद्र को भी उजागर करता है । इस कल्चर की विशेषता ये है कि यह मध्यवर्गीय मुसलमानी कल्चर से फूटता है जिससे आमतौर पर हिन्दी कहानी महरूम रहती है।

लालटेन और सुर्मादानी तो खैर मिली–जुली संस्कृति में पायी जाती है लेकिन शोश्द का सालन या देगची के कबाब, जनमाज और तस्बीह तो इस्लामी कल्चर की पहचान है और बड़े घरो में चाँदी के पानदान–चीनी की बर्तन, मर्तबान, कीमती चिमनी तो है ही, पुखराज भी है, जो अब बाजार में बिक रहा है।

ईरानी संस्कृति, सामाजिक जीवन, धार्मिक विश्वास, राजनैतिक घटनाओं को 'सात नदियॉ एक समन्दर' उपन्यास और जहॉ फव्वारे लहू रोते है' यात्रा वृतांत विद्या के रूप में प्रस्तुत किया है। ईरानी क्रांति के दौरान उनमें जिये और भोगे अनुभव रिपोतार्ज की शक्ल में इंडियन एक्सप्रेस, हिन्दूस्तान टाइम्स, असरी अदब, और दैनिक हिदूस्तान में भी प्रकाशित हुए है। 'सात नदियों एक समंदर' में ईरानी क्रांति, नागरिको की विद्रोह भावना सियासी उत्पीड़, दमन चक, व्यक्ति संघर्ष, युद्ध की विभीषिका नारी शोषण, युवा आक्रोश के साथ वहॉ के सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि के दृश्यों को पूरी सजीवता से उद्घाटित किया है।

वैश्वीकरण के दौर में अर्थ पक्ष प्रबल होकर मानव समाज के नियन्ता की भूमिका अदा कर रहा है। पारिवारिक भरण पोषण और आजीविका उपार्जन की समस्या न जाने कितने भारतीयों को खाड़ी देशों में जाने को विवश करती है। विदेश पलायन रोजगार समस्या को समाधान तो है लेकिन विदेशी धरती से रागात्मक भाव पैदा नहीं कर पाता । परिंदे कथा में विजय

का कथन ''मैं यानी विजय कुमार वल्द श्याम कुमार इस सरज़मी से इतनी आसी से पाँच साल का संबंध तोड़ किसी वेश्या की तरह अपनी कमाई का बोझ उठाए नए ग्राहक की तलाश में जा रहा हूँ।'' इंसानियत का पाठ पढ़ाता 'मिस्र की गयी' के नायक का कथन ''सांस का रूक जाना ही तो मौत नहीं है। इंसानियत का गिरना भी तो मौत है।

'अक्षयवट' में शिक्षा को लेकर भ्रष्टाचार और व्यवस्था का पर्दाफाश है तो वहीं 'जीरो रोड' में अंर्तराष्ट्रीय व्यापारिक केंद्र दुबई की भूमि में कर्मरत विश्व देशों के निवासियों के जीवन का दर्द। 'जिंदा मुहावरे' साम्प्रदायिकता की समस्या को रूबरू करता है तो शाल्मली अपने जीवन की सार्थकता से संघर्ष करती नजर आती है। कहीं लेखिका पानी की समस्या के दुनिया के सामने लाना चाहती है तो कही ईरानी क्रांति द्वारा युवा वर्ग का समाज परिवर्तन के स्वप्न को साकार करना चाहती है। लिविंग टू गेदर, लिव इन रिलेशनशिव जैसे पाश्चात्य अंधानुकरण से समाज को दूर रखने का प्रयत्न भी जीरो रोड' में दिखाया गया है।

लेखिका ने संस्कृति के हर से रंग से रूबरू कराया है

अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के साथ ही लज़ीज व्यंजनों की मिठास से जीवन को मीठा करने का भी भरपूर प्रयत्न लेखिका ने किया है।

संदर्भ ग्रंथ

- अक्षयवट
- जिंदा मुहावरे
- जीरो रोड
- शाल्मली
- पानी की पीड़ा लेख
- ठीकरे की मंगनी
- कुंइयाँजान

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Analysis of Water Samples

Dr. (Mrs.) Vidhi Jain
Dr. R.K. Shrivastava

The analysis of water samples were conducted as per standard methods prescribed by APHA (1985) and the procedures laid down by Trivedi and Goyal (1986). Various parameters for the anslysis of water samples taken into account were :

1. **Physical Parameters** – Colour, Odour, Temparature, Turbidity, pH, Electrical Conductivity (EC), Total Solids (TS), Tatal Dissolved Solids (TDS), Total Hardness.

2. **Chemical Parameters** – Calcium (Ca), Magnesium (Mg.), Chloride (Cl), Total Alkalinity, Acidity, Sulphate (SO_4).

3. **Indicator Parameter** – Dissolves Oxygen (DO), Biologycal Oxygen Demand (BOD), Chemical Oxygen Demand (COD).

4. **Biological Parameter** – Fecal coliform (FC).

All standard solutions were serially kept with date of preparation. 1,000 ms/1 stock solution and working dilutions were also prepared fresh for each use. All test instruments were standarlised each day. Entire chemical used were of (AR) grade. Some parameters as temperature, colour, and odure were analyzed at the field itself.

Dissolved oxygen samples samples were fixed in field and water sealed in Bod bottels and then titrated in the laboratory. Methods and instruments used for analysis of physicochemical and microbiological parameters of groundwater.

Physical Parameters

Colour, Odour and Temperature :- Colour and odour were determined by simple observations at the field. Temparature was recorded by appropriate mercury filled centigrade the mometers.

pH :- pH is measure of the intensity of acidity or alkalinity and measures the concentration of hydrogen ions in water. The normal acidity or alkalinity depends upon excess of H+ or OH- ions over the other. If free H+ ions are more than OH- ions, the water shall be acidic or alkaline the other way. The pH was measured with the help oh digital pH meter.

Electrical Conductivity (EC) :- Conductivity is the numerical expression of the ability of an aqueous solution to carry an electrical current. This ability depends on the presence of ions, their total concentration, mobility, valence and relative concentrations and on the temperature of measurement. The physical of resistanse, measured in ohms or mega ohms. The resistance of a conductor is inversely proportional to its cross sectional area and directly proportional to its length. The Ec was measured with thr help of digital conductivity meter in micromhos/cm using Systronics conductivity meter modal no. 307 in umhos/cm.

Turbidity :- turbidity was recorded by Systronics direct Nephelometer. Results sre presented in the form of Nephelometric Turbidity Units (NTU).

Total Solids (TS) :- Total solids were determined by gravimetric method. 50 ml of unfiltered samples was taken in evaporating dish and kept on a hot plate at 98^0 C. After evaloration of water, the residue was heated at $103\text{-}105^0$ C in an oven for one hour. After cooling in a desiccator final weight eas noted the results were computed as mg/1 by following formula.

$$\text{TS mg.1} = \frac{A - B \times 1000 \times 1000}{V}$$

Where,

A = Final wt. of the dish in gm

B = Initial wt. of dish in gm

V = Volume os samples taken in ml

Total Dissolved Solids (TDS) :- Total dissoived solids were determined by gravimetric method. 50 ml sampal was filtered through whatman 41 filter paper and the filtrate was evaporated to dryness in a clean pre weitghed. Beaker. Thereafter. The beaker was cooled in a desiccator and weighed for final weight. The concentration of total dissolved solids was calculated as below in mg/1.

$$\text{Total dissolved solid (TDS), mg/1} = \frac{A - B \times 1000 \times 1000}{V}$$

The concentration of total suspended solids was calculated as below.

Where,

A = final weight of beaker after drying in gm.

B = Initial weight of clean beaker before addition of water sample in gm.

V = Volume of sample taken in ml.

Total Hardness (TH) :- Hardness in generally caused by the calcium and magnesium ions present in the water. Polyvalent ions of some other metals like strontium, iron, aluminium. Zinc and manganese, etc. are also capable of precipitating the soap and thus contributing the hardness. However, the concentration of these ions are very low in natural waters, therefore, hardness is generally measured as concentration of only calcium and magnesium (as calcium carbonate), which are far higher in quantities over other hardness producing ions.

Calcium and magnesium form a complex of wine red colour with Eriohrome black T at pH of 10. The Ethylene Diamine Tetra Acetic Acid (EDTA) has got a stronger affinity towards Ca++ and Mg++ and therefore, by addition of EDTA, the former complex ix broken down and a new complex of blue colour is formed. The hardness in the water was measured using following formula.

$$\text{Hardness as mg/1,}CaCO_3 = \frac{\text{ml of EDTA used x 1000}}{\text{Ml sample}}$$

Chemical Parameter :- The chemical constituents in water are divided in two broad categories i.e. major constituents are divided in two categories i.e. Cationic and Anionic for the sake of understanding. The cationic constituents analyzed for water are Calcium (Ca), Magnesium (Mg), Sodium (Na), and Potassium (K). The anionic constituents analyzed for water were chloride (Cl), Total Alkalinity (TA) and Sulphate (SO_4). The minor constituents analyzed from water in present investigation are Phosphate (PO_4) and Nityrate (NO_3).

Calcium (Ca) :- When EDTA is addes to the waters containing both Ca and Mg, it combines forst with the Ca. Calcium was determined directly with EDTA, pH was made sufficiently high that the Magnisium was largely precipitated as the hydroxide and ammonium purparate was used as an indicator that combines wirh calcium only. 50 ml sample was taken and 2 ml Sodium hydroxide solution and a pinch of murexide were added in it. This pink colour solution was titrated against EDTA solution until the colour changed to purple.

$$\text{Calcium (Ca) mg/1} = \frac{\text{ml of EDTA used X 400.8}}{\text{ml sample}}$$

Magnesium (Mg) :- The value of Mg^{++} was obtained by subtracting thevalue of calcium from the total Ca^{++} + Mg^{++}. Magnesium was measured by calculation i.e. difference between hardness and calcium as $CaCo_3$.

$$\text{Mg, mg/1} = \frac{A - B \text{ X } 400.8}{\text{Ml sample X } 1.645}$$

Where,

A = EDTA used in hardness determination

B = EDTA used in Ca determination

Chloride (Cl) :- Chloride was determined by Argentometric method,. 50 ml sample aliquot was takwn and 2 ml potassium chromate was added. The treted sample was titrated with standard 0.02N Silver Nitrate to a brick red colour end point.

$$Cl, mg/1 = \frac{ml \times Normality\ of\ AgNO_3 \times 1000 \times 35.5}{ml\ of\ sample}$$

Biblography :-

Abed Syed, Sayed Hussain, and Vidya Pradhan (2011). Seasonal variation of ground water parameters in the Godavari basin at Paithan town. Archives od Appl. Sei. Res., 3 (4),

Ahialey E.K., Serfoh-Armah Y., Kortasi B.K. (2010). Hydrochemical analysis of groundwater in the Lower PRa basin of Ghana. J. Water Rosour. Prot.,2.

APHA (1985). Standard methods for the examination of water and waste water. American Public Health Association, New York, 16 Edn.

APHA, AWWA and and WEF (2005). Standard mrthods for the examination of water and waste water. American Public Health Association, New York, 21 Edn.

Agrawal S. and Swami Bl (2011). A study on traffic noise of two campuses of University, Balasore, India. J. Evviron Biol., 32

Al-Agha Mohammsd R. and Hamed A. El-Nakhal (2004). Hydrochemical Facies of Groundwater in the Gaza Strip, Palestine. Hydrological Sciences-Jounal-des Sciences Hydrologiques, Vol. 49 (3),

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

जनजाति समुदाय के विकास में साक्षर प्रतिनिधियों की भूमिका

श्रीमती अंजना दुबे, शोधार्थी
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर

प्रस्तावना : पश्चिमी मध्यप्रदेश के संदर्भ में एक ऐसे समाजशास्त्री अध्ययन की परिकल्पना की गई है, जहाँ जनजाति समुदाय का प्रदेश के अन्य जिलों की तुलना में बाहुल्य है। इसमें धार, झाबुआ, खरगोन जिल सम्पूर्णतः जनजातियों के नाम से ही जाने जाते हैं, पश्चिमी म.प्र. के इन जिलों के आदिवासियों में उच्च जातिगत स्तर पर भील, भिलाला, बारेला, ठाकरिया और तड़की समुदायों की स्वतंत्र पहचान है, क्षेत्रीयता के दायरों अथवा प्रादेशिक सीमाओं की अन्तर पृष्ठभूमि में जनजायितें की अपनी संरचना और व्यवस्था निश्चित होती है। इसी अवसर पर किसी भी जाति की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ, रूढ़ियाँ, प्रथाएँ, अंधविश्वास और ऐसी ही तमाम प्रकार की जीवन में विकास का रथ प्रवेश करता है, तब कोई परिवर्तन धीमी गति से अथवा प्रभाव उस क्षेत्र में छोड़ता है और व्यवस्था को प्रभावित करता है।

जनजातिय क्षेत्रों एवं ग्रामीण विकास के संदर्भ में यदि सूक्ष्म चिंतन किया जाए तो हमें ज्ञात होगा कि आजादी के बाद से बाद से लगातार 1960 के दशक तक केन्द्रीय सरकारों एवं प्रादेशिक सरकारों ग्रामीण विकास को लेकर उतनी चिंतित नहीं थी। यदि आजादी के पूर्व की सामाजिक पीठिका पर ध्यान केन्द्रत किया जाये तो हमें ज्ञात होगा कि विकास की गति बहुत धीमी थी। शिक्षा के लिये प्राथमिक शिक्षा की स्थिति बहुत दयनीय थी। न केवल शिक्षा ही वरन सड़क मार्ग की कमी, बिजली की कमी और नहीं कृषि के उतने संसाधन थे। जिससे हम नवीनतम मूल्यों के स्थापित हो जाने के लिये कुछ निश्चित पैमाने में परिस्थितियों को देख सकें। उन दिनों लगभग सूखे की स्थिति, अनाज का न्यून उत्पादन और आर्थिक संसाधनों का भी इतना आभाव था कि शासन चाहते हुए भी बहुत अधिक विकास की रूपरेखा नहीं बना सकी। किन्तु 60 के दशक के बाद धीरे–धीरे हर क्षेत्र में सुविधाओं का अंबार जैसा देखा जाने लगा। विकास के पैमानों पर सर्वप्रथम यह कि सड़कें और बिजली ही विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। तत्कालिक परिस्थितियों को देखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर हमारे जनप्रतिनिधियों ने भाँति प्रकार की विकासवादी संकल्पनाओं से देश के बेहतर विकास के लिये प्रयास किये। वे क्रमशः इतनी तीव्र गति से आगे बढ़े कि उस समय यह सोचा जाने लगा कि अब हम वास्तव में आधुनिकीकरण की ओर बढ़ रहे हैं। यदि आधुनिकीकरण के संवाद में चर्चा की जाये तो ज्ञात होता है कि यह प्रवृत्ति तो आजादी के बहुत पहले देश में अभिमंत्रित हो चुकी थी। अलग–अलग विद्वानों ने आधुनिकीकरण के काल को बहुत पीछे से देखा है। या उसके सम्बन्ध में अनेक विद्वान यह भी कहते हैं कि आजादी कके बाद से आधुनिक प्रवृत्तियों ने जन्म लिया है। वास्तव में देखा जाये तो समाज के अधिकांश चिन्तक इस बात को स्वीकार करते हैं कि 1960 के दशक के बाद से तो हर दशक में कुद न कुछ नवीन चमत्कारी अन्वेषण विकास के क्षेत्र मं हुए हैं। यही वजह है कि वर्तमान के समय हम विकास की अंतिम सीमा तक पहुँच हुआ देख रहे हैं। लगभग प्रदेश में हमारे जनप्रतिनिधियों ने और सांसदों ने पांच वर्षीय योजनाओं के माध्यम से अनेक प्रकार के ऐसे प्रोजेक्ट विकास को लेकर किये है जो वास्तव में विकास की धारा से देखे गये हैं। प्रारम्भिक स्तर पर यह केवल एक प्रयोग ही था। हमारे देश में पहली बार जब ट्रांजिस्टर आया तो उसे देखकर लोग इतने अचम्भित हुए कि गोया उन्हें सारा संसर ही मिल गया है। धीरे–धीरे इस ट्रांजिस्टर की संख्या इतनी बड़ी संख्या में देखी गई। उन दिनों सारे बारा में जनजातियों के सदस्यों और ग्रामीण किसानों को गले में टंगे हुए ट्रांजिस्टर वह भी साइकिल चलाता हुआ या जमीन में हल चलाता हुआ दिखता था। इसे ही प्रगति का संदेश कहा जाने लगा।

विकास के संदर्भ में ही ट्रांजिस्टर के बाद बहुत तेजी से शहरों, कस्बों और ग्रामीण क्षेत्रों को सड़क मार्गो से जोड़ा गया। वहीं दूसरी ओर बिजली से उत्पादकता को बढ़ावा मिला, वहीं

शिक्षा के क्षेत्र मं 1975 तक इतनी अधिक संख्या में स्कूल खोली कि हम यह महसूस करते रहे कि सच में अब हम गुलामी से मुक्त हुए हैं। 75 से 90 तक का काल भारतीय विकास का इतिहास और अधिक ऊँचे पैमाने पर देखा जाने लगा। पहले महाविद्यालय किसी बडे कस्बे में ही बी.ए. और एम.ए. तक ही पढ़ाई निश्चित थी अब इनकी संख्या इतनी तेजी से बढ़ने लगी कि शिक्षा के लिये ही सरकारें सबसे अधिक धन निवेशित कर रही है। तात्कालिक प्रादेशिक सरकारें उच्च शिक्षा के लिये इतने अधिक प्रयत्नशील है कि सन् 60 के मुकाबले 95 तक तीन चार गुने महाविद्यालय खोल दिये गये। दूर–दराज के क्षेत्रों में बिजली होने लगी, जिसके कारण कृषि के क्षेत्र में उत्पादन को बढ़ावा मिला।

विकास के सम्बन्ध में यह कहा गया कि विकास परिवर्तन कर शक्तियों वह रूप है, जिसमें मनुष्य प्राकृतिक और प्रोद्योगिक शक्तियों पर अपना अधिकार जमा लेता है, विशेषकर विकास ऐसा परिवर्तन के रूप में देखा जाता है, जिसमें व्यक्ति की आर्थिक वृद्धि दर बढ़ती रहती है, विकास से हम सामाजिक मूल्यों के अनुसार सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा अन्य क्षेत्रों में योजनाबद्ध तरीके से एक–दूसरे का सहयोग करते हुए निरन्तर आगे बढ़ते रहने की स्थिति मेमं हो जाते हैं। इसी सामाजिक एवं आर्थिक परिवत्रन को प्रगति के रूप में देखा जाता है। यह कहा जाए कि आर्थिक विकास ही लगभग सभी क्षत्रों में एक बड़े परिवर्तन को जन्म देता है। नवाचारों के द्वारा कृषि में पर्याप्त उन्नति होती है तथा ग्रामीण जनजाति क्षेत्र अपनी पुरानी रूढ़ी हो रही उत्पादन की तकनीक को भूलकर नये अविष्कारों के प्रति आकर्षित होने लगता है। विकास के सम्बन्ध में डॉ. निकुंज ने स्पष्ट किया है कि जब हम विकास शब्द को परिभाषित करते हैं तो हमें चहुंमुखी विकास का प्रतिदर्श दिखाई देत है। एक सबसे सराहनीय कदम विकास के क्षेत्र में शासन का यह रहा है, उसने सम्पूर्ण ग्रामीण समाज को विकासवादी चुनाव की वह लहर दी, जिसमें समस्त साधनविहीन वर्ग को सम्पन्नता की ओर आगे बढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ है।

विकास के सिद्धान्त यह स्पष्ट करते हैं कि जिसमें कोई भी ऐसा व्यक्ति छूट न जाये, जो आजादी के बाद भी विपन्नता की स्थिति में न हो, सभी के पास रोटी, कपड़ा और मकान हों तथा एक भौतिक उपकरण भी हों जो उन्हें जीवन जीने के तरीकों से बाँधता हो।

ग्रामीण विकास के संदर्भ में वीरेन्द्र कुमार शर्मा ने स्पष्ट किया है कि विकास शासकीय नीतियों के अभाव से शिखर प्राप्त नहीं करता। विकास के लिए सरकारों द्वरा समय–समय पर ऐसे कार्य किये जाते रहे हैं, जिसमें भारतीय समाज के लगभग सभी पहलुओं पर ध्यान देकर कमजोर वर्गों तथा इन निर्धन लोगों के लिए अनेक प्रकार की ऋण योजनाएँ तथा अन्य प्रकार की योजनाओं के द्वारा जो मूलक प्रयास किये हैं, उसने मानवीय सरोकारों को जन्म दिया है।

जनजातीय विकास और ग्रामीण विकास को लेकर दिल्ली सरकार की तर्ज पर प्रादेशिक सरकारें भी अनेक प्रकार की योजनाएँ संचालित कर रही है, जिसमें प्रमुख रूप से कृषि उद्यानिकी, शिक्षा, अल्पसंख्यक नीति, महिला बाल विकास, सामाजिक न्याय परिवहन, स्वास्थ्य योजनाएँ आदि पर विशेष जोर देकर विकास के लिए प्रतिबद्धताएँ निश्चित की गई।

समग्र मूल्यांकन को यदि सूत्रम दृष्टि से देखा जाए तो यह स्पष्ट हुआ कि सम्पूर्ण भारत के नक्शे पर क्षेत्र ही विकसित क्षेत्रों में दिखाई देने लगेंगे, जहाँ के प्रतिनिधि शिक्षित है। वस्तुतः शिक्षित प्रतिनिधि अपनी ग्रामीण सामाजिक संरचना को बेहतर बनाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है। अपने विकास के लिए अपनी प्रादेशिक राजधानी अथवा यदि वह संसाद हुआ तो वह दिल्ली से कुछ इस प्रकार के आर्थिक आवंटन प्राप्त करता है कि जिससे उसके क्षेत्र का समुचित विकास हो। एक संक्षिप्त शोध से यह स्पष्ट हुआ है कि न्यादर्श जनप्रतिनिधियों को मूल्यांकित किया गया है। उनमें लगभग 15 सांसद और विधायक ऐसे थे जो शिक्षा की ऊँची डिग्रियाँ प्राप्त की हुए थे। ऐसे ही प्रतिनिधियों के क्षेत्र में अध्ययन और अवलोकन से पाया कि वे क्षेत्र में न केवल सड़कें ही नहीं वरन् शिक्षा, बिजली, पानी, स्वासथ्य, लघु उद्योग तथा रोजगार के अन्य समीकरण जुटाने में सफल हुए थे। ऐसी स्थिति में वहाँ के समाज में सम्पन्नता और खुशहाली देखि गई। इसलिए यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि शिक्षित प्रतिनिधि अपने क्षेत्र के लिए वरदान सिद्ध होता है।

उपर्युक्त वस्तुस्थिति के संदर्भ में यह स्पष्ट हुआ हे कि आजादी के बाद इस देश में तीव्र गति से

हमारे जन–प्रतिनिधियों ने विकास के ताने बाने रचे हैं। यह भी सच है कि हमारा दुर्भाग्य है कि जिन क्षेत्रों में शिक्षित जन–प्रतिनिधि नहीं होते हैं, वह क्षेत्र संसाधनों की दृष्टि से बहुत पिछड़ जाता है। इस सम्बन्ध में नई दिल्ली की जनसत्ता में अपने उद्गार व्यकत करते डॉ. श्यामचरण दुबे ने लिखा है कि वास्तव में यदि हम सच्चे अर्थों में भारत को एक विकासशील देश के रूप में देखना चाहते हैं तो हमें यह निश्चित करना होगा कि हमारा जन–प्रतिनिधि उच्च शिक्षा प्राप्त हो, क्योंकि शिक्षा के अभाव मे विकास का अनुपात कहीं बहुत अधिक और कहीं न्यूनतम स्थिति में दिखाई देता है। इस दिशा में हमारे देश के प्रतिनिधि स्वयं यह निश्चित करें कि उन्हें किस प्रकार का भारत चाहिए। अशिक्षित प्रतिनिधियों के कारण समझ के अभाव में वह विकल्प नहीं दे पाता इसलिए यह क्षेत्र प्रायः पिछड़ जाते हैं।

शिक्षा के सम्बन्ध में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा है कि देश में शिक्षा के विकास के द्वारा ही हम विश्व में अपना स्थान बनाने में न केवल सफल होंगे वरन् ऐसे भारत की रचना कर पायेंगे, कि जिसमें न केवल होगा वरन माननीय दृष्टिकोण भी उसकी दृष्टि में बनाया होगा।

इसी सम्बन्ध में रावजी भट्ट ने अपनी पुस्तक सामाजिक दिशाएँ में स्पष्ट किया है कि हम एक स्वस्थ और विकासशील भारत का स्वप्न तब ही देख पायेंगे, जब हमारा देश अन्य देशों की तुलना में सबसे आगे दिखाई देने लगेगा और इसलिए उन्होंने यह भी कहा कि शीघ्र विकास हो इस हेतु हमारे जनप्रतिनिधियों का शिक्षित होना या हम उन्हीं जनप्रतिनिधियों का चयन करें, जो शिक्षा की न्यूनततम योग्यताओं से प्रतिपूरित हो। अनेक प्रकार के अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि यदि हमें बराबरी की स्थिति में कम या अधिक मूल्यांकन करना हो तो हमें उस क्षेत्र की स्थिति पर ध्यान को केन्द्रित करना होगा और यह भी देखना होगा कि वहाँ के जनप्रतिनिधि की क्या विशेषताएँ हैं।

विकास के सन्दर्भ में हमारी प्रादेशिक सरकारों के मुख्यमंत्री प्रायः अपने क्षेत्रों की विविध परियोजनाओं का जिक्र करते हुए देखे गये हैं कि हमें यदि अपने राज्य को अधिकतम विकास की स्थिति में देखना हो तो हमें न केवल शिक्षित होना होगा बल्कि शिक्षा के महत्व को जन–जन तक पहुँचाने का संकल्प भी लेना होगा, तभी हम हमारे प्रदेश को खुशहाली की ओर ले जा सकते हैं। वैश्वीकरण क इस युग में समूचा विश्व ही अपने–अपने देशों की विकास स्थिति में देखने में और प्रतिस्पर्धात्मक स्थितियों से जूझ रहा हे। तब यह निश्चित हे कि भारत सरकार को यह चाहिए कि क्षेत्रीय विकास से लेकर शहरी संस्कृति तक हम इस प्रकार की सामाजिक संरचना को जन्म दें कि कोई भी व्यक्ति अभागा या निर्धन न हो। सही अर्थों में शिक्षित जनप्रतिनिधियों की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है। क्षेत्रियता के सम्बन्ध में यह तो स्पष्ट है कि यह केवल एक छोटे से इलाके से सम्बन्धित है और यदि इसे विकास की राह पर देखा जाए तो यह स्पष्ट होना चाहिए कि वहाँ की निवासियों के लिए रोटी, कपड़ा और मकान है। इससे स्पष्ट होता है कि उस क्षेत्र मेमं लगभग सभी प्रकार के भौतिक संसाधन है जो उसे विकास की श्रेणी में ले जाते हैं।

जनजातियों के विकास से सम्बन्धित बात की जाये तो यह सर्वविदित है कि वर्तमान में लगभग सम्पूर्ण देश में जनजातीय विकास का चारों ओर वातावरण निर्मित हुआ है। इस वातावरण में जनजातीय नाम से जाना जाने वाला व्यक्ति अब इस बात से चौकन्ना है कि वह शासन की योजनाओं को किस प्रकार से लाभ लें। इस शोध पत्र में शोधर्थी यह स्पष्ट करना चाहता है कि यदि हम आजादी के बाद से वर्तमान तक समूचे भारत में अपनी दृष्टि को फैलाये तो हम यह अनुभव करते हैं तो हमें सब और विकास ही विकास और विकास ही दिखाई देता है।

संदर्भ :

1. रमणिका गुप्ता, सपांदक, आदिवासी साहित्य एकता, रामाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
2. डा. निकुंज, जनजातिय और संभावनाएँ, त्रैमासिक बुलेटिन उत्कर्ष, 2001
3. डॉ. राकेश कुमार तिवारी, आदिवासी समाज में आर्थिक परिवर्तन
4. वीरेन्द्र कुमार शर्मा, शासन की विकास नीतियाँ, मध्यप्रदेश संदेश सूचना एवं प्रशासन विभाग, म.प्र., भोपाल
5. विवेक पाराशर, जनजातीय विकास, जनसत्ता, नई दिल्ली, 2002
6. महात्मा गांधी, कुछ विचार, दिल्ली में संबोधित एक सभा द्वारा।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मानव अधिकारों के संरक्षण में पुलिस प्रशासन की भूमिका

खुशबू बम्होरे
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बी.एच.ई.एल., भोपाल

प्रस्तावना :– मानव अधिकारों स अभिप्राय है मानवीय मूल्यों की संरक्षा। राज्य के अस्तित्व में आने से पूर्व व्यक्ति इन अधिकारों का दावा अपने निजी सुरक्षा के लिए किया करता था, लेकिन वर्तमान में राज्य स्वंय अपनी ओर से मानव विकास के लिए युक्तियुक्त अवसरों की सुरक्षा प्रदान करता हैं। अतः दूसरे शब्दां में हम कह सकते है। कि राज्य द्वारा मानव प्रगति एवं विकास के लिए प्रदत्त सुविधाएं और संरक्षण ही मानवधिकार है।

मानवधिकारों कि शुरूआत ही संघर्ष के परिणामों से हुई है इसलिये इन अधिकारो की उपादेयता अथवा महत्व सभी आपसी सहयोग के आधार पर पारस्परिक सौहार्द का समाधान करना है। मानव अधिकारो का संरक्षण अति आवश्यक है, इसके बिना मानव के विकास को संभव नहीं बनाया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति में अंतनिर्हित क्षमता को निखारने से मानव संसाधन का संवर्धन होगा तथा देश प्रगति की राह में अग्रसर होगा। हर एक अव्यक्ति को सशक्त करने से ही वास्तविक विकास संभव है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को सुदृढ बनाने तथा विकास के लिए मानवधिकारों की आवश्यकता होती है।

मानवाधिकार के सार्वभौमिक विचार दर्शाने के संदर्भ में अंतनिर्हित क्षमताओं के समुचित विकास का भाव निहित है जब हम मानवधिकार की चर्चा करते है। तो सहज रूप में महात्मा गांधी का नाम ध्यान में आता है। गांधी जी देश को गुलामी से ही नही बल्कि सामाजिक अन्याय, शोषण और उत्पीड़न से भी मुक्त कराना चाहते थे। उन्होने राजनैतिक और सामाजिक आंदोलनो के लिए सत्य अंहिसा नामक अमोध अस्त्रों का प्रयोग किया। गांधी जी ने अस्पृश्यता यानी छुआछूत को समाज के लिए अपराध और अभिशाप माना है। उनका प्रमुख उदद्ेश्य एक ऐसे समतामूलक समाज को स्थापित करना था जिसमें पंथ, जाति आदि के आधार पर किसी तरह का भेदभाव न हो। गांधी जी ने इन सबको अपने जीवन के यथार्थ में उतार कर दिखाया। उनकी लड़ाई असल में मानवधिकार की ही लड़ाई थी इसकी प्ररणा शक्ति उन्हें अपनी भारतीय परम्परा से विरासत में मिली थी जिसका प्रयोग जीवन भर करते हुये अपने कर्तव्यों का पालन किया। प्रजातांत्रिक देश में मानवधिकार को आज जिस रूप में स्थापित किया जा रहा है वह सभ्य समाज में एक अनिवार्य आवश्यकता तौर पर नैतिक गारंटी और मानक के रूप में है। जीवन, स्वतंत्रता, राजनैतिक भागीदारी, सांस्कृतिक, आर्थिक भागीदारी आदि के संदर्भ विगत वर्षो में एक अंतराष्ट्रीय समझदारी बनी है। यह एक बड़े संतोष की बात है। देश के सामने आज कई गंभीर समस्याएं मुंह फैलाये खड़ी है। जीवन के सभी पक्षो में जीवन की रक्षा, जीवनयापन की समस्या, यंत्रणा से रक्षा, अभिव्यक्ति की स्वंतत्रता, शिक्षा रोजगार आत्मनिर्णय तथा राजनैतिक, सांस्कृतिक प्रवृत्ति जैसी समस्याएं है, फलतः समाज के विभिन्न वर्ग तरह–तरह की कठनाईयों में जी रहे है। कहना होगा कि भारत सामाजिक कारण है। भारतीय सोच या चितंन में सांस्कृतिक संपर्क तथा संस्कृतियो के मध्य आदान–प्रदान और समय के साथ आये परिवर्तन के बावजूद मूल दृष्टि अवश्य विघमान है जो प्रत्येक व्यक्ति की समानता तथा प्रकृति प्रदत्त अधिकार के रूप उपभोग करने पर बल देती है।

व्यक्ति को जन्म के साथ ही खुद मानव अधिकार मिल जाते है। प्रकृति प्रदत्त इन अधिकार को संविधान द्वारा संरक्षण मिला हुआ है। इन्हें छीनने का हक किसी को नही है। मानव अपने कार्य व्यवहार से जब सामाजिक नियमों का उल्लंघन करता है। तो समाज में अव्यवस्था को रोके तथा सभी व्यक्तियों के अधिकारो की सुरक्षा करें। इन्ही आवश्यकताओं के अनुरूप मानव समाज निर्मित होने के बाद से आज तक पुलिस व्यवस्था किसी न किसी रूप में समाज में विघमान रहती है।

भारत में पुलिस प्रशासन उतना ही पुराना है जितना कि भारतीय सभ्यता। प्राचीन युग का पुलिस संगठन इतना विकसित नही था, जितना

आज है। वर्तमान पुलिस प्रशासन ब्रिटिश सरकार की विरासत है, जिसकी बुनियाद पुलिस अधिनियम,1861 है। मानव समाज में हम यह कल्पना कर सकते है। कि प्रारंभ से ही ऐसा कोई न कोई संगठन रहा होगा। यह एक कल्पना भी हो सकती है। किंतु प्राकृतिक अवस्था को हम जंगलराज नही मान सकते।

अंग्रेजी हुकुमत की विरासत को बनाये रखने में पुलिस तंत्र का विकास किया गया था। दुर्भाग्यवश इस पुलिस तंत्र को स्वतंत्र भारत के नागरिको की आवश्यकतानुसार परिवर्तित नही किया गया, अधिकांश तौर पर प्रशिक्षण में भी अंग्रेजी शासनकाल की मानसिकता एवं तौर–तरीके विघमान रहे। स्वतंत्रता पश्चात् इस स्थिति में परिवर्तन अवश्य आया है। भारतवर्ष में कानून व्यवस्था कायम रखने में संविधान की अत्यंत भूमिका है। संविधान सम्मत ढ़ंग से भारत में विधि न्याय में प्रशासन का विकास किया गया है। इसके प्रमुख अंग न्यायपालिका और पुलिस है, जो भारतीय दण्ड संहिता, दण्ड़ प्रकिया संहिता, साक्ष्य अधिनियम, विविध अपराध अधिनियम एवं इसी तरह व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित विधियो के अनुरूप कार्य करती है।

पर सारा श्रेय पुलिस बल को ही मिलता है। ऐसे समय पुलिस को अपराधो के निवारण हेतु भी अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जिससे संविधान प्रदत्त मानवधिकारो की गरिमा बनी रहे। जहां अन्य शाखाओं की भागीदारी नही है। हमें इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि अपराध एक सामाजिक समस्या है और सामाजिक कारणो से ही अपराध होता है इसका निवारण पुलिस मात्र से संभव नही है। अतः अनियंत्रित परिस्थितियों में पुलिस पर संपूर्ण दोषारोपण करना उचित नही होगा।

लोक व्यवस्था तथा पुलिस प्रशासन के प्रभावकारी होने के तथ्यो को विकसित करने के लिए आवश्यक है कि समुदाय को स्वंय के हित के प्रति भी जागरूक किया जाए और अपराध नियंत्रण के संबंधो में शिक्षित कर सूचना प्रदान कर प्रोत्साहित किया जाए तथा अपराध के कारणो तथा व्यक्ति एवं समाज के संबंध में जानकारी प्राप्त करे। पुलिस को संगठित कर गतिशील बनाना चाहिए जिससे वह अपराध की दर में कमी लायेगी और पुलिस व्यवस्था में विश्वास बहाली कि स्थिति पैदा होगी।

मानव अधिकारा के संरक्षण में पुलिस का महत्वः–

मानव अधिकार संरक्षण और पुलिसतंत्र एक दूसरे के है। मानवाधिकारों की रक्षा में पुलिस की भूमिका धुरी की भांति है, चूंकि पुलिस न्याय व्यवस्था की प्रथम सीढ़ी है अतः मानवाधिकार संरक्षण पुलिस का प्रमुख कर्तव्य है।

आम लोगों को सुरक्षा प्रदान करने और दोषियों को दंडित करने के लिए समाज में पुलिस की स्थापना हुई। ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार पुलिस शब्द का अर्थ है '' एक नियन्त्रण करने की ऐसी कार्यप्रणाली जिसके द्वारा कानून को लागू कर व्यवस्था स्थापित की जा सके।

मानव अधिकारों की सुरक्षा के लिये पुलिस एक कियात्मक ईकाई के रूप में कार्य करती है। मानव अधिकारों के संरक्षण में पुलिस कायों को नकारा नहीं जा सकता। समाज में रहने वाले सभी गरीब, असहाय व कमजोर वर्गो, महिलाओं व बच्चों तथा अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों को सम्मानजनक स्थान दिलाने और उनको व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास करने में मानव अधिकार महत्वपूर्ण एवं उपयोगी भूमिका निभाते हैं समाज में सभी को आगे बढ़ने व उचित एवं समान अवसर प्रदान करने में प्रत्येक नागरिक के जीवन में मानव अधिकारों की आवश्यकता होती है। मानव अधिकार से संबंधित कानून पुलिस द्वारा लागू किए जाते है, क्योंकि यदि पुलिस न हो तो समाज में शांति व्यवस्था कायम नहीं रहेगी और अवयवस्था फैल जाएगी। अतः मानव अधिकारों की रक्षा के लिए पुलिस का होना आवश्यक है।

भारतीय संविधान दंड प्रकिया संहिता और भारतीय दंड विधान में विशेष व्यवस्थाएं की गई है जैसे संविधान के अंतर्गत प्रत्येक नागरिक को संरक्षण दिए जाने बगैर वारंट गिरफ्तार नहीं करने, गिरफ्तारी करने के चौबीस घंटों के अंदर न्यायालय में प्रस्तुत करने, जमानत पर रिहा करने, अनुरक्षण की अवधि में कूर व अमानवीय व्यवहार से रक्षा करने के लिए अधिकार दिए गए है परंतु फिर भी जाने अनजाने में पुलिस द्वारा कई तरीकों से मानवाधिकारों का उल्लंघन हो जाता है। जैसे आवश्यकता से अधिक बल प्रयोग, गलत व्यक्ति

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

की गिरफ्तारी करना, किसी व्यक्ति को झूठे प्रकरण में अभियोजित कर लेना, किसी व्यक्ति को अनाधिकृत रूप से अभिरक्षा में रखना आदि।

पुलिस मानवाधिकारों की रक्षा करें, इस संबंध में हाईकोर्ट के स्पष्ट निर्देश दिए गए हैं कि शासन पुलिस कर्मचारियों को संविधान में दिए अधिकारों के संबंध में विस्तृत प्रशिक्षण दे और मानवाधिकारों को आदर करना सिखाए। उनके उल्लंघनों को रोकने के उपाय पुलिस को भलीभांति ज्ञात हो।

अतः मानव अधिकारों के संरक्षण में पुलिस की भूमिका निम्नानुसार है –

1. मानव अधिकारों से संबंधित कानून को लागू करना।
2. मानव अधिकारों को लागू करने में सहायता प्रदान करना।
3. नागरिकों को सभी शोषणों से बचाने हेतु सुरक्षा प्रदान करना।
4. समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों को बहाल करना।
5. मानवीय मूल्यों एवं संबंधों को उचित स्थान दिलाना।
6. सभी नागरिकों को आगे बढ़ने का उचित अवसर प्रदान करना।
7. समाज में व्यक्ति को अधिकारों के अतिक्रमण होने पर उचित सहयोग एवं सहायता करना।
8. प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को कायम रखने में सहायता प्रदान करना।
9. सभी प्रकार के भेदभावों को दूर करने में सहायता प्रदान करना।
10. वृद्ध, असहाय, कमजोर वर्गो एवं अल्पसंख्यों के अधिकारों की रक्षा करना व उन्हें उचित सहायता व संरक्षण प्रदान करना।
11. नागरिकों को अपने अधिकारों के प्रति सचेत करना तथा इनका प्रयोग करने में उचित सहायता प्रदान करना।
12. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यक्तिगत स्वतंत्रता का कायम रखना।

अतः कहा जा सकता है कि मानव अधिकारों को लागू करने के साथ–साथ मानव अधिकारों से संबंधित कानूनों को लागू करने में पुलिस की भूमिका महत्वपूर्ण है। मानव अधिकारों को कियान्वयन सही ढंग से करना पुलिस का उत्तरदायित्व है।

निष्कर्ष – संविधान द्वारा प्रदत्त मानव अधिकारों के संरक्षण का दायित्व पुलिस पर है। जिसे पूरा करने हेतु पुलिस प्रशासन को ऐसे शक्तियां प्रदान की गई है, जो अन्य वर्गो से विशेष बनाती है। भारतीय पुलिस व्यवस्था में पुलिस का दायित्व अपराधों का निवारण तथा अपराधियों की खोज करना है। पुलिस द्वारा अपराध नियंत्रण की कार्यवाही मानव अधिकार संरक्षण का ही एक भाग है। परंतु इस कार्य के निमित्त पुलिस बल समाज के अंदर अपने अधिक प्रभावी ढंग से स्थापित नही कर पाया है जिसका कारण राजनैतिक हस्तक्षेप, संसाधना की कमी, जनता के सहयोग की कमी, कानून अड़चने, शीघ्र परिणाम का दबाव, न्यायिक व्यवस्था का लचीलापन तथा अविश्वास, व्यवसायिक प्रशिक्षण की कमी, वैज्ञानिक तरीके और सुविधाओं का आभाव, जीवन और कार्य की प्रतिकूल परिस्थितियां अपर्याप्त देख–रेख, भ्रष्ट उद्देश्य इत्यादि है। इस प्रकार की अनेको समस्याओं और दबावो के चलते पुलिस कभी–कभी अपने अधिकारो का दुरूपयोग कर बैठती है। जिससे जन–सामान्य द्वारा उसकी आलोचना तो की जाती है परंतु इन समस्याओं के निदान हेतु किसी का ध्यान नही जाता।

मानव अधिकार संरक्षण की ईकाई होने के नाते पुलिस प्रशासन के कर्तव्य निर्वहन में आने वाली समस्याओं के निवारण तथा उनके आधारभूत ढांचे को मजबूत किया जाना चाहिए। क्योकि अनेको कठिनाइयो और कमियो के बावजूत विषम परिस्थितियों के चलते समाज में सुरक्षा देने का कठिन काम पुलिस द्वारा ही किया जाता है।

संदर्भ :

1. सिंह अमित – मानवाधिकार विधि
2. यादव लेखराम – मानव अधिकार और पुलिस
3. सिंह दीपा – मानव अधिकार
4. अवस्थी राज किशोर – मानव अधिकार
5. प्रजापति आर.एस. – पुलिस और मानव अधिकार

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

माध्यमिक विद्यालयों के शासकीय एवं अशासकीय अध्यापकों की व्यावसायिक संतुष्टि का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करना

श्रीमति दीपिका त्यागी (शर्मा)
(सहायक प्राध्यापक) शिक्षा संकाय, एस.एस.एन.एम.आई.एम.टी., शिक्षा महाविद्यालय नरसिंहपुर

सारांश :– प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य शहरी तथा ग्रामीण अध्यापकां की व्यावसायिक संतुष्टि का उनके समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन करना है उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए शोधकर्त्ता ने नरसिंहपुर, जबलपुर, सिवनी के माध्यमिक विधालयों के 328 अध्यापकों का यादृच्छिक विधि के द्वारा चयन किया तथा चुने गये अध्यापकों पर व्यावसायिक संतुष्टि मापनी का प्रशासन किया गया तथा उच्च एवं निम्न व्यावसायिक संतुष्टि के अध्यापकों पर समायोजन मापनी का प्रशासन किया गया। इस हेतु डॉ. प्रमोद कुमार की व्यावसायिक मापनी एवं राम जी श्रीवास्तव की समायोजन परीक्षण मापनी का प्रयोग किया गया।

''शिक्षक शैक्षिक प्रक्रिया की रीढ़ है और राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शिक्षक एक धुरी के रूप में कार्य करते है जिनके चारों ओर सभी शैक्षिक कार्यक्रम संचालित होते है। एक उत्तम शिक्षक केवल छात्र का विकास ही नहीं करता अपितु समाज व राष्ट्र को भी लाभान्वित करता है। वह नागरिकों में दक्षता और कर्त्तव्यों को जाननें समझनें व राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर पहुँचाने का कार्य करता है।'' इस हेतु लक्ष्य प्राप्ति में कुछ न कुछ बाधाएँ होती हैं। इन बाधाओं के कारण उसके प्रयास में रूकावटें पड़ती है तथा लक्ष्य प्राप्त करने में समय अधिक लगता है। ये बाधाएँ यदि थोड़ी भी गंभीर हैं तो अध्यापक में तनाव और अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न हो जाता है। यदि अध्यापक की स्वयं के व्यवसाय व कार्य स्थिति के प्रति संतुष्टि है तो वह समायोजन करने में समर्थ हो जाता है। परंतु यदि उसके व्यवसाय की वजह से कोई परेशानियाँ है तो वह कुसमायोजन का शिकार हो जाता है।

शिक्षक अथवा अध्यापक वह व्यक्ति होता है जो दूसरों को पढ़ा–लिखाकर शिक्षा देने का काम कराता है। भारत देश सदैव से गुरूओं व शिक्षकों का देश रहा है। इस देश में शिक्षकों–अध्यापकों व गुरूओं का मान–सम्मान हमेशा से बहुत अधिक रहा है। जो आजकल प्रायः नगण्य है। आजकल भारत में भी संसार के अन्य देशों के समान शिक्षा का लेना देना एक व्यवसाय सा बन गया है। पौराणिक काल से ही गुरू ज्ञान के प्रसार के साथ–साथ समाज के विकास का बीड़ा उठाते रहे है। गुरू जो अंधकार से ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले जाता है

प्रत्येक अध्यापक अपने शिक्षणकार्य व अन्य कार्यो को विधिवत संचालित कर स्वयं के कार्य के प्रति आवश्यक प्रगति व विकास की आशा करता है। परंतु वास्तविकता इससे काफी दूर होती हैं।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली, सरकारी काम–काज, स्थानांतरण, साथियों का व्यवहार, वेतनमान, कटौती व अन्य के कारण निरंतर उसे परेशानियों का सामना करना पड़ता है। कई बार अध्यापक इन परिस्थितियों में सामंजस्य स्थापित कर परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को व परिस्थितियों को अपने अनुरूप समायोजित कर लेता है। परंतु कई बार जब वह इनमें समायोजन करने में असमर्थ रहता है तो परेशानियों का शिकार बनता जाता है।

बोरिंग और उनके साथियों के अनुसार– '' समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव अपनी आवश्यकता और इन आवश्यकताओं की पूर्ति को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में संतुलन रखता है।'' व्यावसायिक संतुष्टि व समायोजन के संबंध में सांधा रामू (2001) न अपने अध्ययन में पाया कि ग्रामीण क्षेत्रों कों अध्यापकों की व्यावसायिक संतुष्टि व समायोजन शहरी अध्यापकों की अपेक्षा कम है। सिंग वी.पी.(2005) ने यह पाया जिन अध्यापकों में समायोजन का स्तर कम पाया गया वे अधिक आक्रामक व भग्नाशे वाले होते है।

इसी क्रम में अजय कुमार (2013) ने अपने अध्ययन में व्यावसायिक संतुष्टि व समायोजन पर लिंग का भी प्रभाव पाया। सिंह रंजीत (2013) ने भी माध्यम व परिवेश का प्रभाव व्यावसायिक

संतुष्टि व समायोजन पर पाया। ''पिछले दशकों में कई कार्यो में इस वास्तविकता को जानन का प्रयास किया जिसमें कोलिन (1982) व रोगुफ बी. लेव (1984) केरी (1987),फॉक्स केलर (1987), डेविड बेसविक (2000) ने व्यावसायिक संतुष्टि और समायोजन के प्रभाव पर अध्ययन किया''उपरोक्त अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि व्यावसायिक संतुष्टि का होना व्यक्ति के जीवन में अहम् भूमिका निभाता है क्योकिं यदि व्यक्ति अपने व्यवसाय से ही असंतुष्ट है तो वह कुशल रूप से स्वयं के कार्य को सम्पादित नहीं कर सकता। इसी क्रम में अगर व्यवसाय के प्रति संतुष्टि व असंतुष्टि उसके समायोजन के स्तर को भी प्रकावित करेगी इस क्रम को ध्यान में रख कर यहाँ शोध कार्य किया गया।

अध्ययन का औचित्य :–वर्तमान में नित नयी विषमताओं से निकलकर छात्र को अपना भविष्य बनाना रहता है। इन विषमताओं से केवल और केवल सही ज्ञान रूपी शिक्षक ही निकाल सकता है आज शिक्षक के जीवन में नित नयी परेशानियाँ घिरी रहती है अगर इन परेशानियो से जो कि व्यक्ति के आर्थिक व व्यावसायिक पक्ष से जुड़ी रहती है अगर इन पर संतुष्टि अध्यापक के द्वारा पा ली जाती है या यू कहें कि इन परेशानियों के कारण उसका शिक्षण व अन्य विषय पर संतुलन व समायोजन निश्चित नहीं रहता तब असमायोजन की परेशानी खड़ी हो जाती है जिस कारण वह अपना अध्यापन व्यवस्थित रूप से नहीं कर पाता। प्रत्येक अध्यापक चाहे वह किसी भी संकाय का हो चाहेगा, कि उसका शिक्षण प्रभावशाली हो तथा वह अपने व्यवसाय से पूर्णरूपेण संतुष्ट हो। अध्यापक की संतुष्टि व समायोजन निश्चय ही अनेक कारणों के फलस्वरूप किये गये कार्यो के आधार से शिक्षा जगत में प्रभावी शिक्षक व अप्रभावी शिक्षक को मान्यता प्राप्त होती है। अतः प्रस्तुत शोध अध्ययन में शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों की व्यावसायिक संतुष्टि के कारण उनके समायोजन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने का प्रयास किया है।

परिकल्पनाएँ :–

1. शासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।
2. अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

शोध प्रविधि :– वैज्ञानिक सर्वेक्षण विधि।

न्यादर्श :– जबलपुरर संभाग के शासन द्वारा मान्यता प्राप्त माध्यमिक विद्यालयों के 328 अध्यापकों को न्यादर्श में शामिल किया गया है।

''शासकीय/अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक अध्ययन''

प्रबंधन	व्यावसाय संतुष्टि	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
शासकीय	उच्च	117	55.24	6.71	1.41	>0.05
	निम्न	47	53.59	6.80		
अशासकीय	उच्च	117	51.41	10.47	1.76	>0.05
	निम्न	47	53.71	6.07		

स्वतंत्रता के अंश – 161/163 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 1.98

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 2.61

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया, क्योंकि संख्यिकीय गणनानुसार प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान 0.05 एवं 0.01 के लिए निर्धारित मान की अपेक्षा कम है। इन विद्याालयों में शासकीय उच्च संतुष्टि वाले अध्यापकों का समायोजन सबसे ज्यादा (55.24) व अशासकीय विद्यालयों में उच्च

संतुष्टि वाले अध्यापकों का समायोजन सबसे कम (51.41) पाया गया है।

परिणामों की व्याख्या :– शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया है।

अतः परिणामों से स्पष्ट हो जाता है कि शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है। संभवतः शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के लिये उनका समायोजन महत्वपूर्ण होता है इसलिए उच्च एवं निम्न व्यावसायिक संतुष्टि वाले समूह के समायोजन में कोई अंतर नहीं है। समायोजन व्यक्ति के बौद्धिक स्तर पर निर्भर करता है इसलिए बुद्धि को समायोजन की योग्यता के रूप में भी परिभाषित किया गया है। अतः यहाँ व्यावसायिक संतुष्टि स्वतंत्र है क्योंकि व्यावसायिक संतुष्टि कार्य क्षेत्र में व्यक्ति के संतोष को प्रदर्शित करती है। उपरोक्त संदर्भ में मोहम्मद शब्बीर के निष्कर्ष समरूप है जिसमें उन्होंने शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों में समायोजन पर किसी प्रकार का कोई सार्थक अंतर नहीं पाया। इसी क्रम में अफरोज हैदर रिजबी ने अपने अध्ययन में पाया कि शहर एवं ग्रामीण परिवेश अध्यापकों के समायोजन को प्रभावित करता हैं।

शोध निष्कर्ष :–अनुसंधान के आकड़ों के संकलन सारणीयन तथा सांख्यिकीय गणना के प्रयोग के पश्चात् प्राप्त परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या की गई। संपूर्ण सामग्री के गहन अध्ययन के आधार पर प्रस्तुत शोध में अग्रलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं।

1. शासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का सार्थक प्रभाव नहीं आया है अतः शासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का सार्थक प्रभाव नहीं आया है अतः अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर व्यावसायिक संतुष्टि का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता हैं।
3. शासकीय व अशासकीय विद्यालयों के अध्यापकों के समायोजन पर शहरी एवं ग्रामीण परिवेश का प्रभाव नहीं पाया गया इस प्रकार हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम का प्रभाव भी समायोजन व व्यावसायिक संतुष्टि पर नहीं पड़ता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1- Afroz, Haider Rizvi (2014), studied the impact of the professional satisfaction of teacher of government and non-government school on their adjustment, International peer Rivide and Referred journals.
2- Bindu and Rumal (2006), Study the impaction their adjustment to professional satisfaction and stress for teacher of the secondary school. International journal of Information and futuristic
3. गैरिट एच.ई. (1989) शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग कल्याणी प्रकाशन नई दिल्ली,
4. डॉ. एस. पी. गुप्ता एवं उमा गुप्ता (2003) ''सांख्यिकी के सिद्धान्त'' सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स प्रकाशन दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

भक्तिकाल की धार्मिक पृष्ठभूमि में रामचरितमानस की भूमिका

डॉ. लता त्रेहन, भोपाल

मनुष्य एक विचारवान प्राणी है आर मानव सभ्यता के आदि काल से ही उसने अपनी परिस्थितियों और वातावरण को समझने का सतत प्रयास किया है। विभिन्न धार्मिक आस्थायें इस प्रकिया की उपज हैं और उनका मानव के सामाजिक एवं भौतिक परिवेश से घनिष्ठ संबंध है। भारत अनादिकाल से वैदिक सनातन धर्म के पथ पर चलता आ रहा है। प्राचीन काल में जैनों और बोद्धों के प्रभाव से सनातन धर्म विलुप्त सा हाने लगा था। ऐसे समय में गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस के माध्यम से विभिन्न दार्शनिक, धार्मिक सामाजिक एवं राजनैतिक, सांस्कृतिक अंतर्विरोधों में समन्वय स्थापित किया है।

चूंकि मानस के समकालीन समय, 1350–1650 ईस्वी को भक्ति काल कहा जाता है अतः भक्तिकाल की धार्मिक परिस्थितियॉं ही 1631 वि. में लिखी रामचरितमानस की धार्मिक प्रष्ठभूमि कहलायेगी। यह वही समय था जब बौद्ध धर्म विकृत होकर दो सम्प्रदायों में विभाजित हो गया था, हीनयान और महायान। धर्म की इस दिषा को लक्ष्य करके संभवतः तुलसीदास ने कहा था –''गारेख जगाओ जोग भक्ति जगाओ भोग। सिद्ध, बोद्ध और नाथ योगी भ्रष्ट होकर गृहस्थी बनने की कामना करते रहे किन्तु हिन्दू जाति के संकीर्ण घेरे में प्रवेश संभव न था। एक सामान्य भक्ति मार्ग की आवश्यकता महसूस हुई जिसे हिन्दू मुस्लिम, छुआछूत, उंच–नीच सभी अपना सके।''[1]

गोस्वामी तुलसीदास के समकालीन समाज की धार्मिक शक्ति को सुदृढ़ रखने को राजनीतिक शक्ति का सहारा नहीं के बराबर था। समाज मुगल शासन सूत्र में जकड़ा हुआ पतनोन्मुख था, उसकी दषा सोचनीय थी। इस काल में, चौदहवीं शती के मध्य से लेकर सत्रहवीं शती के मध्य तक दिल्ली के सिंहासन पर 1450–1526 ईसवीं तक लोदी वंश ने शासन किया उसके पश्चात निम्न मुगल –सम्राटों ने शासन किया जो कमानुसार निम्न प्रकार से वर्णित किये जा सकते :––

''बाबर – सन् 1526–1530 ई.
हुमायूं – सन् 1530–1539 ई.
अकबर – सन् 1556–1605 ई.
जहॉंगीर – सन् 1605–1628 ई.
शाहजहॉं – सन् 1628–1658 ई.।''[2]

अतः इस काल में अधिकांश समय मुसलमानों का शासनकाल था। ''मुस्लिम शासकों के राज्य का आदर्श इस्लामो कानूनों पर आधारित था, इस्लामी कानून के व्याख्याता और संरक्षक उल्मा लोग होते थे, जो सुल्तानों को प्रेरित करते थे। किया तो हिन्दुओं का इस्लाम धर्म स्वीकार करने के लिये विवष किया जाये या उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाये।''[3]

''तारीख ए–दाउदी के अनुसार उसने मुसलमानों ने मूर्तियों को कसाइयों को दे दिया, जिन्होंने उन्हें मांस तौलने के बॉंट बना लिये।''[4]

अनेक मुस्लिम शासकों ने गैर–मुस्लिम जनता पर 'जजिया' नामक धार्मिक कर लगा रखा था जो उसे इस्लामी राज्य में जीवित रहने के बदले में चुकाना पड़ता था। मुगल सम्राटों में अकबर एक कुषल और कूटनीतिज्ञ शासक होने के साथ–साथ महा विलासी भी था। इस संबंध में अबुलफजल में लिखा है कि – ''बादशाह अकबर के जनानखाने में पांच हजार से अधिक हिन्दू, मंगोल, पारसी और आरमीनियन आदि अनेक वर्गों की स्त्रियॉं थी। जहॉंगीर भी अत्यंत विलासी और शराबी था।''[5]

''सिकन्दर लोदी के विषय में प्रसिद्ध है कि उसने बोधन नामक ब्राह्मण को इस्लाम न स्वीकार करने के अपराध में मृत्युदण्ड दिया था और इस्लाम का प्रचार करने की दृष्टि से एक दिन में 1500 हिन्दुओं की हत्या करा दी थी।''[6]

''मुगलों का शासन मूलतः सैनिक शासन था। इसमें समस्त शक्ति एवं सत्ता एक व्यक्ति के हाथों में केंद्रित थी। शासक प्रजा के प्रति किसी प्रकार का नैतिक दायित्व अनुभव नहीं करते थे। संचार और यातायात की व्यवस्था ठीक न होने से एक स्थान के समाचार दूसरे स्थान पर बहुत विलम्ब से पहुंचते थे। न्याय–व्यवस्था अत्यधिक सदोश थी। स्थानीय जनता को कोई अधिकार प्राप्त न थे। बाहरी आकमण या आन्तरिक विद्रोह के समय ग्रामीण जनता को अपनी रक्षा स्वयं करनी पड़ती थी। संक्षेप में मुगल–शासन–प्रणाली

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

की रुपरेखा थी सभी प्रकार के सामाजिक दायित्वों से पराड्.मुखता।''[7]

''जहॉगीर के हरम में भी अनेक सुन्दरियॉ थीं, जिनकी संख्या तीन सौ तक पहुॅच गई थी।''[8]
मुगलकाल में गुलामी प्रथा प्रचलित थी। जो किसान राजस्व अदा नहीं कर वाते थे उन्हें परिवार सहित दासता की बेड़ी पहना दी जाती थी। निरक्षरता, गुलामी–प्रथा, बाल विवाह, जातिवाद, धार्मिक अंधविश्वास आदि ने हिन्दू समाज की जड़ों को खोखला कर दिया था। बाहर से आकान्त, शोषित, पीड़ित और भीतर से अपनी ही दुर्बलताओं से जर्जर हिन्दू समाज में आत्मरक्षा की चेतना का तीव्र हो उठना स्वाभाविक ही था। मुस्लिम शासन हिन्दू वर्णव्यवस्था के लिये एक चुनौती था। उस समय सामान्य जनता के ह्रदय की धर्म भावना दबती जा रही थी तथा उसका ह्रदय धर्म से दूर हटता जा रहा था। मानस के समकालीन तत्कालीन भारत में प्रचलित विभिन्न धर्मो में अनेकानेक मार्गो और सम्प्रदायों में बंटने की प्रवृत्ति चरम सीमा पर पहुॅच गई थी, न केवल हिन्दू धर्म के विभिन्न संप्रदाय कई–कई भागों में बंटे, बल्कि इस्लाम में भी ऐसे विभाजन दिखायी दिये। वे परस्पर एक एक दूसरे से संघर्ष करते रहते थे।

मानस के समकालीन समाज में व्याप्त धार्मिक स्थिति को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस प्रकार समझाया है – ''देश में मुसलमानों का राज्य प्रतिष्ठित हो जाने पर हिन्दू जनता के ह्रदय में गौरव, गर्व और उत्साह के लिये अवकाष न रह गया था। उसके सामने ही उनके देव मंदिर गिराये जाते थे, देव मूर्तियॉ तोड़ी जाती थीं और पूज्य पुरुषों का अपमान होता था और वे कुछ नहीं कर सकते थे। ऐसी दशा में वे अपनी वीरता के गीत न तो गा सकते थे और न बिना लज्जित हुये सुन ही सकते थे। आगे चलकर जब मुस्लिम साम्राज्य दूर तक स्थापित हो गया तब वे परस्पर पर लड़ने वाले स्वतंत्र राज्य भी न रह गये। इतने भारी राजनीतिक उलटफेर के पीछे हिंदूजन समुदाय पर बहुत दिनों तक उदासी सी छाई रही। अपने पौरुष से हताष जाति के लिये भगवान की भक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था ?''[9]

भारत वर्ष में मुसलमानों के आने से धर्म प्रायः लुप्त सा होता जा रहा था और हिन्दु धर्म के स्थान पर इस्लाम धर्म का प्रचार हो रहा था धर्म साधना समूहगत थी। इस्लाम के संपर्क में आने से हिन्दू जाति की कठोरता ओर बढ़ती गई इस कठोरता का परिणाम यह निकला कि एक नवीन मत का जन्म हुआ। जाति–पाति के बंधन बिल्कुल मिट गए और लोगों में यह विश्वास जम गया कि हिन्दू–मुस्लिम ह्रदयों का प्रार्थक्य ठीक नहीं। संभवतः इसी सम्मिलन के कारण आगे चलकर इस प्रकार की युक्तियॉ प्रचलित हुई होंगी जिनमें कहा गया है कि ––

> ''जाति–पाति पूछे नहीं कोई,
> हरि को भजै सो हरि का होई।''[10]

मुस्लिम शासन हो जाने से हिन्दुओं के संस्कार अत्यंत संकुचित हो गये थे। उनमें जादू–टोना, तंत्र–मंत्र आदि अंधविष्वासों में आस्था बढ़ती जा रही थी।
कुंअरपाल सिंह के शब्दों में –''सामंतवाद ने राजनीतिक अस्थिरल, सामाजिक असमानता अस्तित्व रक्षा के लिये सर्वत्र शंका भाव के प्रसार और अनेक कठोर बंधनों को जन्म दिया था। इस व्यवस्था के कारण हिन्दू समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को सामाजिक रुप से पद–दलित, पर–पीड़ित और धार्मिक दृष्टि से संत्रस्त बना दिया था।''[11]

डॉ. सुशील त्रिवेदी इस संबंध मे लिखा है कि– ''लगभग पूरे भारत पर मुसलमानों का आधिपत्य हो गया था। इनमें उदार शासक भी हुये और संकीर्ण शासक भी, इससे सामान्यतः हिन्दू जनता से भय और आत्म रक्षा के अलावा अपने अस्तित्व के संघर्ष की भावना पैदा हुई। ''[12]

''तत्कालीन भारत में सामंतवाद के उस घृणित दौर में न तो हिन्दू राजा न मुस्लिम शासन कोई हल निकाल सकते थे और न ब्राह्मण। ऐसे समय संतों और भक्तों के उद्‌भव ने ही लोगों की इस बीमार मानसिकता का इलाज किया। पूरे देष में गरीबी अशिक्षा, साम्प्रदायिक वैमनस्य राजनीतिक पराधीनता, अंधविष्वास, वर्णवैषम्य शोषण विस्थापन की समस्याओं से भरा दम घुटने वाला वातावरण छाया था।''[13]

सम्राट अकबर ने कहीं का ईट और कहीं का रोड़ा जोड़कर दीनइलाही धर्म चलाया। पर उसमें जीवन नहीं, चेतना नहीं और न थी मृतप्राय जीवन को अमृत देकर जीवित करने की शक्ति। उधर ब्रज की ओर कृष्ण के अत्यंत सुन्दर मनोमुग्धकारी रुप पर वैष्णव भक्त संगीत की स्वर–लहरी में खो रहे थे। कमनीय कृष्ण की चारुता में समाज को वे डुबाना चाहते थे। उसी से उन्हें से उन्हें संतोष–लाभ देना चाहते थे। पर उनका यह सामाजिक उपचार उसी प्रकार का था जिस प्रकार पीड़ा से आकुल होने पर कोई चिकित्सक ऐसी वस्तु का सेवन कराए जिसमें पीड़ित चेतना ही खो बैठे। यहॉ भी प्रायः गद्‌दी का झगड़ा था।

राग–रंग तभी भाता है, जब व्यक्ति का तन और मन तृप्त हो। भूखे रहने वाले भजन नहीं करते।

"अकबर की विलासिता का प्रमाण मीनाबाजार लगवाने स बढ़कर और क्या हो सकता है? उसके हरम में पॉच हजार चन्द्रमुखियों का जमघट था। उसने हिन्दू, फारसी, मुगल, यहॉ तक कि आरमीनियन जाति की चुनी हुई गजगामिनियॉ जुटाई थी।"[14]

"अकबर तितिक्षु था। उसमें पूर्ववर्ती मुसलमानों की कट्टरता नहीं थी। अपने साम्राज्य को स्थायी बनाने के लिये उसने हिन्दुओं को राज भक्त बनाना आवश्यक इसमझा उसने राजपूतों से मेलजोल कर हिन्दुओं से अच्छा बर्ताव किया। गुलामी की प्रथा बंद कर दी, जजिया कर माफ कर दिया और प्रजा को धर्म के मामले में पूरी स्वतंत्रता दे दी।"[15]

हिन्दुओं की कुछ प्रचलित कुरीतियों जैसे सती प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह आदि कुरीतियों को रोकने का प्रयास किया तथा हिन्दुओं को शासन प्रबंध में स्थान दिया और उन्हें उच्च पदों पर नियुक्त किया। उक्त परिवर्तनों का प्रभाव देश की शांति स्थापना में बहुत कुछ सहायक हुआ। मुगलों के पूर्ववर्ती मुसलमान शासकों की कठोरता के कारण जो अषांति फैली भी थी वह बहुत कुछ अंशो से दूर हो गई। मुगल–शासन के पूर्ववर्ती शासन काल की अशांति से तुलसीदास के समकालिक मुगल राज्य की शान्ति सम्पन्ता की तुलना की जाये तो दोनो परिस्थितियों में कितना अंतर है यह स्पष्ट हो जायेगा। अकबर के शासन काल तक स्थिति काफी परिवर्तित हो गई थी।

"यदि पूर्ववर्ती मुसलमानों का समय होता तो तुलसी और उनका मानस दोनों ही अग्नि में स्वाहा हो गये होते।"[16]

समूचे भक्तिकाल में तुलसी ही ऐसे कवि है जिन्होंने पराधीनता की पीड़ा को सबसे अधिक तीखेपन के साथ अनुभव किया था। यथा 'पराधीन सपने हूँ सुख नाही' की जो अनुभूति तुलसी को नारी–जाति के संदर्भ में हो रही थी वह राजनीतिक स्तर पर उससे भी कहीं अधिक तीव्र थी। दमनकारी यवन शासकों की अनीति और साम्राज्यवादी प्रवृत्ति को लक्षित करते हुये तुलसी ने रावण के दुराचार के संबंध में कहा है :––

"भुजकबल बिस्व बस्य करि, राखेति कोउन सुतन्त्र।
मंडलीक मनि रावन राज करइ निज मंत्र।।"[17]

तुलसी के समय की परिस्थितियों के विषय में डॉ. राजपति दीक्षित लिखते हैं कि –– "विविध विचार–पद्धतियों के पारस्परिक अन्तर के कारण धार्मिक शक्ति एक से अनेक हो चली। पहले शैव और वैष्णव का ही भेद था। पर कालान्तर में इन दोनों के सैकड़ों टुकड़े हो गये। इस प्रकार शाखा–प्रशाखाओं की उत्तोरोत्तर वृद्धि हुई और उसका परिणाम हुआ धार्मिक शक्ति की छिन्न–भिन्नता।"[18]

"तुलसीदास जी ने देखा कि सास्त्रज्ञानहीन अनधिकारियों द्वारा मनमाने ढ़ंग से विविध वन्थों और सम्प्रदायों को जन्म दिया जा रहा है।"[19]

इस स्थिति की ओर गोस्वामीजी ने निम्न पंक्तियों में संकेत किया है :––

"देव जच्छ गन्धर्व नर किन्नर नाग कुमारि ।
जीति बरों निज बाहुबल बहु सुंदर वर नारि।।"[20]

इन विषम परिस्थितियों में भक्तिकाल के कवियों ने जनता में समन्वय और साहचर्य की भावना पैदा की, उन्होंने इनमें से कुछ का उल्लेख किया है जो इस प्रकार है :––

1. निगुर्ण संत – "ये लोग हिन्दु मसलमानो में एकता स्थापित करने के स्थान पर हिन्दु धर्म के मान्य सिद्धांतो पर ही प्रहार कर रहे थे। ये भक्ति की आड़ लेकर वेदशास्त्रों की निन्दा करते थे और आर्य धर्म के सामाजिक तत्व को न समझ कर लोगों में वर्णाश्रम के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न कर रहे थे।"[21]

इन्होंने ज्ञान और भक्ति का आश्रय तो लिया किन्तु कर्म की सर्वथा उपेक्षा कर दी। दादू– पंथ, नानक पंथ, मलूकदासी पंथ, रैदास की परंपरा से संबंध साधो पंथ आदि ऐसे पंथ थे जिनके संस्थापक एवं प्रचारक अधिकतर समाज के दलित वर्ग से आये थे, अतः इनके द्वारा वेद शास्त्रों की हंसी उड़ाये जाने एवं वर्णाश्रम धर्म का विरोध किये जाने का परिणाम यह हुआ किस समाज में अधिकारी–अनाधिकारी का विचार जाता रहा।

"बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह तें कछु घाटि।
जानै ब्रह्म सो विप्रवर ऑखि देखा वहि डाटि।।"[22]

2. "द्वितीय कोटि में वे साधक आते हैं जो अंतर साधना पर जोर देते है। समाज में गुह्य और रहस्य की प्रवृत्ति को बढ़ावा दे रहे थें। ये रसायन आदि द्वारा अलौकिक सिद्धियों की दुराशा

जगा जनता को ठग रहे थे। सदाचार एवं नैतिकता की यह दशा थी कि उसे छोटी से छोटी वस्तु के लोभ में बड़े से बड़ा जघन्य पाप करते कोई हिचकन थी।''[23]

''आचरण की शुद्धि इतनी नगण्य बन गई थी कि किसी के बाह्य कंबर के देखकर ही लोग उसे सन्त समझ बैठते थे।''[24]

3. ''तृतीय कोटि में घोर अनाचार एवं अंधविश्वास फैलाने वाले निकृष्ट साधक आते हैं। इनके वेद–विरोधी स्वरुप के विषय में तो कहना ही क्या इन वेद विरोधी विविध मतमतान्तरों ने समाज में ऐसी घोर अव्यवस्था फैला दी थी कि शास्त्र और मर्यादा का अंकुश सर्वथा उठ गया था। प्रत्येक व्यक्ति अपनी मनमानी कर रहा था और उसी को उचित ठहराता था।''[25]

वेद विरोध करना एक फैशन जैसा बन गया था। आचार विचार को कोई महत्व नहीं देता था। जो सब प्रकार से आचरण भ्रष्ट होकर वेद मार्ग का परित्याग करने वाले थे वे ही बड़े ज्ञानी और वैरागी समझे जाते थे। इस कारण जनता में अंधविश्वास इस सीमा तक बढ़ चुका था कि वह विविध कामनायें लेकर न केवल पीरां और फकीरों की दरगाह पर नाक रगड़ती फिरती थी अपितु पहले के धर्म विद्वेशी अत्याचारियों की कब्र पर आँख मूदकर पहुँचती थी –

लही आँखि कब आँधरे, बाँस पूत कब ल्याई।
कब कोढी काया लही, जग बहराइच जाइ।।''[26]

''भारत में निगुर्ण का उपदेश देने वाले दा प्रकार के संत–फकीर उस समय दिखाई देते थे, एक तो वे जो मुक्तक, दोहों या पदों अथवा शब्दियों के माध्यम से उसका उपदेश देते थे और दूसरे वे जो कहानी, उपाख्यान या प्रबंध के माध्यम से उसका प्रचार करते थे।''[27]

रामभक्ति में दोनो का समन्वय है। भक्ति को तुलसीदास जी सबके लिये अनिवार्य मानते है। जैसे संसार में अन्न जल सबके लिये अनिवार्य है वैसे ही भक्ति भी अनिवार्य है।

''भक्ति के संबंध में तुलसी दास की मान्यता है कि भक्ति ऐसी सँहगी अर्थात् सरल होनी चाहिये कि उसे कनिष्ठ साधक भी सरलता से जीवन में उतार ले। इसीलिये भक्ति करने का अधिकार उन्होंने सबका माना है।''[28]

डॉ. दीनानाथ के अनुसार – ''रामचरितमानस में हमें मध्यकालीन भक्ति सम्प्रदाय की ईश्वर–जीव–विषयक मान्यताओं का उल्लेख प्राप्ता होता है। बौद्ध मार्ग, ज्ञान मार्ग, हठ योग की भक्ति विरोधी भावनाओं का प्रतिरोध करने के लिए ही मानस की रचना हुई।''[29]

रावण ने अपने भुजवल से अनेक जातियों की कुमारियो और अन्य उत्तम स्त्रियों को जीतकर अपनी पत्नी बना लिया था। इसका वर्णन करते हुये तुलसी ने मुगल राजाओं के अंतः पुरों की ओर निगूढ़ संकेत किया है :–

देव जच्छगन्धर्व नर किन्नरनाग कुमारि। जीत बरी निज बाहुबल बहुसुन्दर बर नारि।।''[30]

रामचरित मानस में आये 'कलियुग वर्णन' में भी तुलसी राम ने तत्कालीन राजनीतिक दुर्दशा का चित्र प्रस्तुत किया है। तुलसी मानस में एक ओर वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था की रक्षा में प्रयत्नशील दिखाई पड़ते हैं तो दूसरी ओर भक्ति का द्वार उन्होंने निम्न वर्णो के लिये खोलकर उन्मुक्त नजर आते हैं। तुलसीदास ने कुछ पूर्ववर्ती एवं समसामयिक चौदहवें शतक में आनन्द तीर्थ ने द्वेतवादी माध्य– वैष्णव–सम्प्रदाय की स्थापना करके भक्ति मार्ग का प्रवाह तीव्र कर दिया था।

निष्कर्षतः कह सकते है कि, तुलसी के समकालीन भारत में राजनीतिक सत्ता विधर्मियों के हाथों में थी। समाज विश्रृंखल हो चुका था। सनातन मर्यादाओं की कड़िया अपने आप टूटने लगीं थी उस समय समाज में घोर वैषम्य उपस्थित हो गया था। इन विधर्मियों ने धर्म–परिवर्तन के अतिरिक्त जनता का आर्थिक शोषण भी किया। फलतः समाज घोर अव्यवस्था और अशांति से आन्दोलन हो उठा। अनेक मत–मतान्तर उठ खड़े हुए और समाज को विघटित करने लगे। सर्वत्र अनाचार फैला हुआ था। मानस के समकालीन भारत में जिस संस्कृति का आयात हुआ उसमें निर्गुण की ही व्यवस्था थी, सगुण कि लिये स्थान नहीं था। वहाँ ब्रह्म का मूर्त रुप न लेकर अमूर्त रुप की ही साधना चल रही थी। उस समय की जटिल भक्तिकालीन परिवेश में तुलसीदास जी को मानस जैसा महाकाव्य लिखना परम आवश्यक हो गया था इसीलिये उन्होंने अधर्म और अंधकार की ओर अग्रसर जनमानस के समक्ष धर्म और भक्ति की स्थापना हेतु श्रीराम का आदर्श सामने रखा, जो जन सामान्य की बुद्धि और परिस्थिति के अनुरुप सिद्ध हुआ। तुलसीदास ने एक और तो तत्कालीन समाज में कई तरह से नष्ट होती हुई और बिखरी हुई धार्मिक वृत्ति को समन्वित किया निराष जनता के आत्मविश्वास को बल पहुँचाया और उन्हें उदात्त, व्यापक तथा कल्याण कारी जीवन का मार्ग दिखाया वहीं रामकथा के विविध प्रसंगों

के माध्यम से राजनीतिक सामाजिक और पारिवारिक आदर्शो की प्रतिष्ठा की। ऐसी विकट परिस्थिति में भी गोस्वामी जी ने जिस कुशलता से संभाला वह उनकी असामान्य प्रतिभा का परिचायक है। डॉ. ग्रियर्सन ने इसीलिये उनकी मुक्त कण्ड से सराहना करते हुये उन्हें बुद्ध देव के बाद उत्तर भारत का सबसे बड़ा लोक नायक बताया है।

संदर्भ

1. प्रो. ओम प्रकाश शर्मा एवं प्रो. राजकुमार शर्मा : हिन्दी साहित्य का इतिहास, संस्करण 1969, पृष्ठ कमांक 42
2. डॉ. हरिशचन्द्र वर्मा एवं डॉ. रामनिवास गुप्त : हिन्दी साहित्य का इतिहास,संस्करण 1982, पृष्ठ कमांक 75,
3. दे टिट्स इण्डियन इस्लाम, तारीख एक–दाउदी, पृष्ठ कमांक 11–12
4. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास, संस्करण 1941–1998,प्रष्ठ कमांक 34
5. प्रो. ओम प्रकाश शर्मा एवं प्रो. राजकुमार शर्मा : हिन्दी साहित्य का इतिहास, संस्करण 1969, पृष्ठ कमांक 41
6.सं. कुंअरपाल सिंह : भक्ति आंदोलन, इतिहास और संस्कृति, पृष्ठ कमांक 216
7.डॉ. सुशील त्रिवेदी : हिन्दी साहित्य का इतिहास, भाषा, संस्कृति और चिंतन, पृष्ठ क. 3
8.डॉ. राजपाल दीक्षित : तुलसीदास और उनका युग, संस्करण 1953, पृ. क. 12
9. गोस्वामी तुलसीदासकृत : श्रीरामचरितमानस, अनुवादक –– डॉ आर. सी. प्रसाद, संस्करण 1994, पृष्ठ कमांक 97, 9–10
10.गोस्वामी तुलसीदास : दोहावली, पृष्ठ क. 383
11.आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र : हिन्दी साहित्य का अतीत, संस्करण 1994, पृष्ठ कमांक 247
12.डॉ. दीनानाथ शुक्ल : चरितकाव्य की परम्परा और रामचरितमानस, संस्करण 1991, किताब महल, ईलाहबाद, पृष्ठ कमांक 243
13.डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा एवं डॉ. रामनिवास गुप्त : हिन्दी साहित्य का इतिहास,संस्करण 1982, पृष्ठ कमांक 80

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Morphometric Analysis of Pat River Basin Area Meghnagar Block, Jhabua District, Madhya Pradesh, India

Vinod Bhuriya[1] and Pramendra Dev[2]
[1] Department of Geology, Govt. Tilak P.G. College Katni, Madhya Pradesh, India.
[2] 9, Adarsh Vikram Nagar, Ujjain, Madhya Pradesh, India- 456010.

Abstract : Morphometric Analysis of Pat River Basin Area Meghnagar Block, Jhabua District, Madhya Pradesh, India, has been conducted with main purpose to recognize the characteristics of drainage basin. The morphometric analysis of Pat River Basin in around Meghnagar Area, covering an area of 328.9 km^2, has been conducted based on Survey of India (toposheet No 46 J/9, 46 J/5, 46 I/8 and 46 I/12, Figure 1) on 1:50,000 scale. The drainage basin is divided into 11 sub-basins A, B, C, D, E, F, G, H, I, J and K. The result of linear, areal and relief parameters recognized a fairly good variation range and their significance has been discussed. The outcome of Morphometric analysis would be useful in determining the groundwater potential sites & other significance characteristics.

Introduction : Morphometric analysis of a watershed provides a quantitative description of the drainage system, which is an important aspect of the characterization of watersheds (Strahler, 1964). Morphometry is the measurement and mathematical analysis of the configuration of the earth's surface, shape and dimension of its landforms (Clarke, 1966).

Geomorphological analysis of Pat River Basin around Meghnagar region located in Jhabua district of Madhya Pradesh, for the determining the groundwater potential zones, geological structure and topographical characteristics.

Study Area: The Meghnagar study area lies within the latitude 22º 55' to 23º 1' N and longitude 74º 26' to 74º 40' E, covering an area of 328.9 km^2 (Survey of India Toposheet No. 46 J/9, 46 J/5, 46 I/8 and 46 I/12, Figure 1) on 1:50,000 scale.

The landscape comprises of various lava plateau and dome shaped hillocks region. The temperature of study area is 3.5º C (minimum) and 43.5º C (maximum). The Meghnagar study area is generally dry. The relative humidity is the minimum 20 % (May) and maximum 50% (September). The average rainfall of the study area is 889.508 mm

Hydrogeological conditions : The Meghnagar study area belongs to Jhabua region of Madhya Pradesh, which is enclosed by Aravallis formations of Archaeans age and lava flows of Deccan Traps. Geologically, the study region is occupied by rocks such as the phyllite, quartzite, meta-conglomerate, limestone, sandstone and flows of the basalt. The region is characterized by the structural features such as the fold, fault, joint and foliation. The hydrogeological studies in the study region indicate the presence of groundwater under both unconfined and confined conditions.

Methodology of Morphometric Analysis : The morphologic parameters are determined by using conventional methods adopted by Horton (1945), Strahler (1957) and others. Geomorphologically investigations consist of two types**:** (A) Qualitative Analysis and (B) Quantitative Analysis

(A) Qualitative Analysis:

The qualitative analysis deals mainly with the phenomenon, which may or may not be based on numerical data. The geomorphic features of study area consist of the following: (1) Plateau, (2) Hill, (3) Valley, and (5) Soils.

(B) Quantitative Analysis :

The morphometric analysis study area has been carried out by Author preparing a drainage map of the Pat River basin on the basis of Survey of India, Toposheet No. 45 J/9, J/5 and 46 I/8, I/12 (Figure 1).

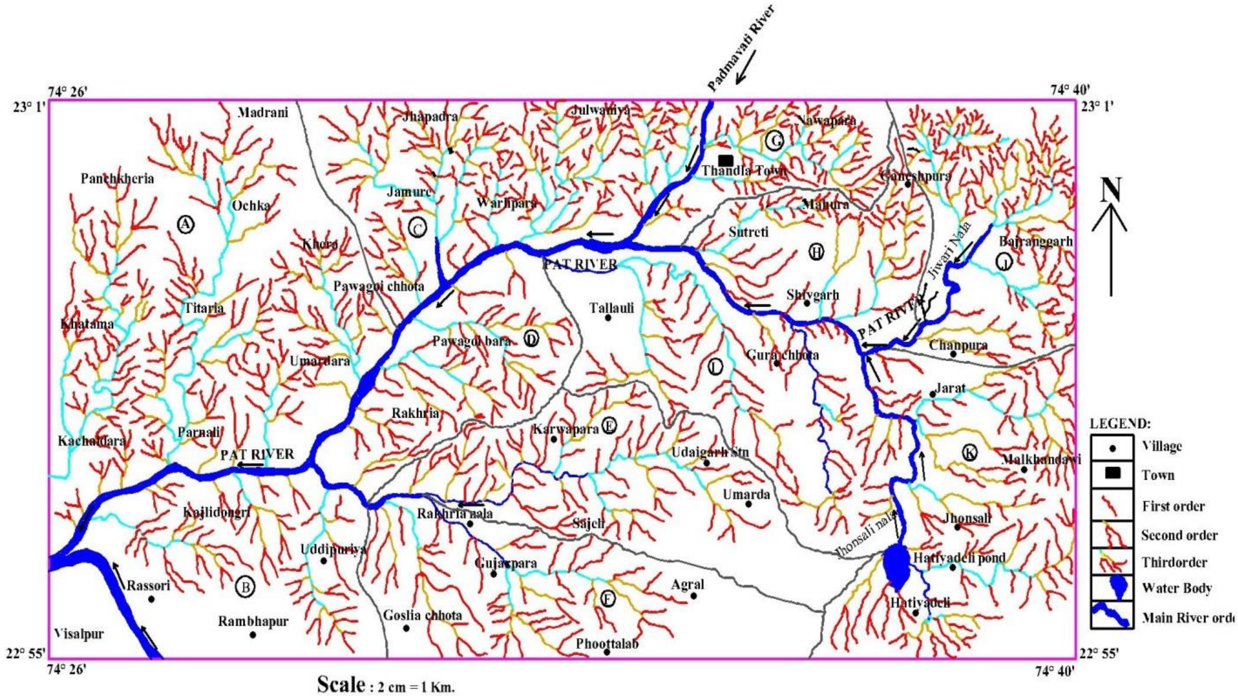

Fig. 1. Drainage pattern of Pat river basin in the Meghnagar block, Jhabua District, Madhya Pradesh.

LINEAR ASPECTS

The linear aspects computed include the following:

Stream order : First order streams are the fingertip tributaries in drainage basin. The two first order channel segments join to produce a stream segment of second order. A third order channel result from the meeting to two second order channel segments.

Bifurcation ratio : The calculated average values of bifurcation ratio in the sub basins show a variation from 0 to 8, which indicate the existence of an elongated basin (Horton, 1945; Strahler, 1964; Schumm, 1956).

Stream length : In the study basin area, the calculated values of Stream length in the sub basins of minimum 22.8 and maximum 128.5 km (Table 1). The maximum length of stream has been observed in sub basin "A" in the Madrani, Panchkheria, Ochka, Tetaria, Khatama and Kachaldara.

Table 1. Showing details of the Drainage basins in Meghnagar area, Jhabua District, Madhya Pradesh.

Morphometric Variable	**Drainage sub-basins of Meghnagar area, Jhabua District, M.P.**										
	A	**B**	**C**	**D**	**E**	**F**	**G**	**H**	**I**	**J**	**K**
No. of Ist order streams	221	57	162	68	71	48	102	38	71	141	97
No. of IInd order streams	63	17	48	14	18	11	33	6	16	36	26
No. of IIIrd order streams	11	3	11	3	3	3	8	3	4	13	7
No. of IVth order streams	3	-	2	1	1	1	1	1	2	4	2

1) **Total No. of streams**	**298**	**77**	**223**	**86**	**93**	**63**	**144**	**48**	**93**	**194**	**132**
Length of Ist order stream (km.)	74	39	24	30.5	36	26	19	11	29	32	39
Length of IInd order stream (km.)	29	9	19	10	11	16	10	5	8	20	22
Length of IIIrd order stream (km.)	16	6.5	11	5	5	5	3	4.8	10	6	7
Length of IVth order stream (km.)	9.5	-	3	2	5	3	3	2	3	5	4.8
Total Length of stream (km.)	**128.5**	**54.5**	**57**	**47.5**	**57**	**50**	**35**	**22.8**	**50**	**63**	**72.8**
Length of the sub basin (km.)	8	7.5	9.6	7.5	10.46	9.6	5.1	5.6	8	5.6	6.2
Width of the sub basin (km.)	8	4	4.8	3.2	3.2	3.3	1.7	2.8	3.7	4.1	4.8
Area of the sub basin (sq. km.)	**64**	**30**	**46.08**	**24**	**33.47**	**31.68**	**8.67**	**15.68**	**29.6**	**22.96**	**29.76**
Perimeter of the sub basin (km.)	29.77	20.92	24.13	19.31	25.74	24.94	15.28	17.70	26.55	19.31	25.74
Highest elevation within sub basin (m.)	300	310	320	300	320	340	340	340	320	340	360
Lowest elevation within sub basin (m.)	280	300	290	300	300	300	300	320	300	320	337
Area of circle with same perimeter as of basin (km.)	29.77	20.92	24.13	19.31	25.74	24.94	15.28	17.70	26.55	19.31	25.74

AREAL ASPECTS

Drainage Density : It has been observed that the drainage density ranges from 1.454 (sub-basin H) to 4.036 (Sub-basin G). The average drainage density has been computed to be 2.062 (Table 2).

Stream Frequency : The stream frequency of study area ranges from 1.988 (Sub-basin F) to 16.608 (Sub-basin G) with an average of 5.104 (Table 2). It indicates that with increase in stream numbers there is an increase in drainage density (Thandla town, Nawapara, Machliamata, Semalpara and Ganeshpura, Figure 2).

Form Factor : The form factor varies from 0.305 (Sub-basin E) to 1.0 (Sub-basin A), which indicates the elongated shape of the basin and Form Factor average value 0.537 (Table 2).

Elongation Ratio : The Elongation Ratio varies from 1.960 (Sub-basin E) to 3.544 (Sub-basin A) with an average value of 2.544 (Table 2).

Circularity Ratio : The Circularity Ratio of study area ranges from 0.466 (Sub-basin G) to 0.994 (Sub-basin C) with an average value of 0.709 (Table 2).

Lemniscate ratio : The Lemniscate ratio indicates a range from 0.25 (Sub-basin A) to 0.817 **(**Sub-basin E) for the study drainage basin and its average value of 0.527 (Table 2). The value of lemniscates ratio indicates elongated shape of the drainage basin.

Length of Overland Flow : The length of overland flow varies from 0.123 (Sub-basin G) to 0.404 (Sub-basin C) with an average 0.267 (Table 2). In the

study area, value of length of the overland flow is low indicating that the water covers a small distance on the surface before reaching into a definite channel.

RELIEF ASPECTS

The relief aspects computed include the following :

Basin Relief : The Lowest elevation point of sub-basin is minimum 280 m (Sub-basin A), and the maximum height of sub-basin is 360 (Sub-basin K) m. Therefore, the relief of the basin is 40 m. in Malkhandawi and Nawapara village.

Table 2 Morphometric parameter in respect of the Pat River basins, Meghnagar area, Jhabua District, Madhya Pradesh.

S. N.	Morphometric Parameters	Formula	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	K	Ave. Value
1	Bifurcation Ratio (Rb)	I^{st} / II^{nd} order	3.50	3.55	3.37	4.85	3.94	4.36	3.09	6.33	4.43	3.91	3.73	4.096
		II^{nd} / III^{rd} order	5.72	5.66	4.36	4.66	6	3.66	4.12	2.0	4.0	2.76	3.71	4.240
		III^{rd}/IV^{th} order	3.66	0	5.5	3.0	3.0	3.0	8.0	3.0	2.0	3.25	3.5	3.44
2	Drainage Density (Dd)	Lu/A	2.007	1.816	1.236	1.979	1.703	1.578	4.036	1.454	1.689	2.743	2.446	2.062
3	Length of overland flow (Lo)	$1/D_{d\times}2$	0.249	0.275	0.404	0.252	0.293	0.316	0.123	0.343	0.296	0.182	0.204	0.267
4	Stream frequency (S_f)	Nu/A	4.656	2.566	4.889	3.583	2.778	1.988	16.608	3.061	3.141	8.449	4.435	5.104
5	Circularity Ratio (R_c)	$4A/P^2$	0.907	0.860	0.994	0.808	0.634	0.639	0.466	0.628	0.527	0.773	0.564	0.709
6	Form factor (F_f)	A/Lb^2	1.0	0.533	0.5	0.426	0.305	0.343	0.333	0.5	0.462	0.732	0.774	0.537
7	Elongation Ratio (R_e)	$2\sqrt{A/\pi}$ /Lb	3.544	2.588	2.505	2.314	1.960	2.077	2.046	2.505	2.410	3.032	3.118	2.544
8	Lemniscate Ratio	$Lb^2/4A$	0.25	0.468	0.5	0.585	0.817	0.727	0.75	0.5	0.540	0.341	0.322	0.527
9	Basin Relief (H)	H_1-H_2	20	10	30	5	20	40	40	20	20	20	23	22.54

10	Relief Ratio (Rh)	H/Lb	2.5	1.333	3.125	0.66	1.912	4.166	7.84	3.571	2.5	3.57	3.709	3.171
11	Ruggedness Number (HD)	H×Dd	40.14	18.16	37.08	9.895	34.06	63.12	161.44	29.08	33.78	54.86	56.258	48.897
12	Ground surface slope (Sg)	H×2Dd	80.28	36.32	74.16	19.79	68.12	126.24	322.88	58.16	67.56	109.72	112.51	97.79

Relief Ratio : In the study area, relief ratio (Rh) ranges from 0.66 to 7.84 and its average value of 3.171, sub-basins having lowest value of basin relief points out the presence of flat basin (Talavalli, Pawagoi chhota villages) with low intensity of erosion (figure 2).

Ruggedness Number : In the present study drainage basin, determined values of ruggedness number indicates a range from 9.895 (Sub-basin D) to 161.44 (Sub-basin G) with an average of 48.897 in the study area (Table 2).

Ground surface slope : In the study area, ground surface slope point out a range from 19.79 (Sub-basin D) to 322.88 (Sub-basin G) with an average of value 97.79 (Table 2).

Demarcation of Groundwater potential sites using Morphological Parameters : Drainage pattern of the study area is very essential in conditions of its groundwater potential sites estimation. The drainage pattern in the present study area is dendritic to sub-dendritic in nature. The present study area Nawapara, Khalkhandawi, Malkhandawi Village high drainage density is observed over the hilly terrain with impermeable hard rock substratum, and low drainage density over the highly permeable sub-soils and low relief areas. Low drainage density areas Rajpura, Jarat, Gura chhota Village are favourable for detection of groundwater potential zones. A Gura chhota plane plays a very important role in determining infiltration process and alluvial fans on the flanks of hills (Hatyadeli Village) that may hold great quantity of water.

Conclusion : The quantitative analysis has been conducted with the help of drainage map of the study area. The linear, areal and relief parameters have been determined to delineate the characteristics of the drainage basin, which has been classified into eleventh sub-basins. The morphometric parameters have been determined in respect of present study area and results are described herein. Morphometric parameters such as stream order, bifurcation ratio (0 to 8.0), stream length (22.8 to 128.5 km), area of sub-basin (8.67 to 64), basin perimeter (15.28 to 29.77), length of basin (5.1 to 10.46), drainage density (1.236 to 4.036), stream frequency (1.988 to 16.608), form factor (0.305 to 1.0), elongation ratio (1.960 to 3.544), circulatory ratio (0.466 to 0.994), lemniscate ratio (0.25 to 0.817), length of overland flow (0.123 to 0.404), relief ratio (0.66 to 7.84), ruggedness number (9.895 to 161.44) and ground surface slope (19.79 to 322.88).

The geomorphic analysis indicates that the basin is more or less elongated and reveals that dendritic to sub-dendritic drainage pattern existing in the study area. The outcome of Morphometric analysis would be useful in determining the groundwater potential sites & other significance characteristics.

Acknowledgements : The deep sense of gratitude is recorded to parents for blessings, kindness, motivation and encouragement. Sincere thanks are expressed to Dr. Dilip Dixit, Dr. Eshwar lal Dangi, Dr. Shyamlal Bamniya, Dr. Sonu Paliwal and Anil Katara for their generous help.

Reference :

Bhuriya, V. (2014): Hydrogeological Analysis Using Satellite Imagery in Pat River Basin Area, Meghnagar Block, Jhabua District, Madhya Pradesh, Pub. Ph.D. Thesis, Vikram University, Ujjain M. P., 2014, 180 p.

Clarke, J.I. (1996): Morphometric from Maps, Essays in geomorphology, Elsevier pub. Co. New York, pp. 235- 274.

Easterbrook, D.J. (1969): Principles of geomorphology, McGraw- Hill, New York, 462 p.

Horton, R.E. (1932): Drainage basin characteristics, Trans. Amer. Geo. Union, Vol. 14, pp. 350- 361.

Horton, R.E. (1945): Erosional development of streams and their drainage basins hydrological approach to quantitative geomorphology, Geol. Soc. America Bull., Vol. 56, pp. 275- 370.

Khan, H.H, Ghosh, D.B., Soni, M.K., Sonakia, A., Zafar, M. (2005): Phosphate deposite of the Jhabua District, Madhya Pradesh, Cambridge Uni. Vol.2 no.76, pp.468-472.

Miller, V.C. (1953): A quantitative geomorphic study of drainage basin characteristics in the Clinch Mountain area, Varginia and Tennessee, Project NR- 389042, Tech. Rept. 3, Columbia University, Department of Geology, ONR, Geography Branch, New York.

Murray, A.B.; Lazarus, E.; Ashton, A.; Bass, A.; Coco, G.; Haff, P.; McNamara, D.; Paola, C. and Reinhardt, L. (2009): Geomorphology complexity and emerging science of the earth's surface, Geomorphology, 103, pp. 496- 505.

Nag, S.K. (1998): Morphometric analysis using remote sensing techniques in the Chaka sub-basin, Purulia district, West Bengal, India, Soci. Remote sensing 26, pp. 69-76.

Nongkynrih, J. M. and Husain, Z. (2011): Morphometric analysis of the Manas river basin using earth observation data and Geographical Information System, International Journal of Geomatics and Geosciences, Vol. 2, no.2, pp. 647.

Sarmah, K.; Jha, L.K. and Tiwari, B.K. (2012): Morphometric analysis of a highland micro watershed in East Khasi hills district of Meghalaya, India- using remote sensing and geographic information system (GIS) techniques, Journal of geography and regional planning, Vol. 5, no.5, pp.142- 150.

Schumm, S.A (1956): Evolution of Drainage Systems and Slopes in Badlands at Perth

Amboy, New Jersey, Geological Society of America Bull., Vol. 67, pp. 597– 646.

Senadeera K.P.G.W. (2001): The evaluation of Morphmetric Characteristics of Kotmale Reservoir catchment using GIS as a tool, Sri Lanka, The International Archives of the Photogrammetry, Remote Sensing and Spatial Information Sciences, Vol. 34, no.30.

Sengupta, C.K. and Kandpal, G.C.(1988): A report on systematic geological mapping of Deccan trap complex in parts of Dhar & Jhabua districts, Madhya Pradesh, Geological survey of India, Report no.19481, pp.1- 41.

Sreedevi, P. D., Owais, S., Khan, H. H., Ahmed, S. (2009): Morphometric Analysis of a Watershed of South India Using SRTM Data and GIS, Journal geological society of India Vol.73, pp. 543-552.

Strahelr, A.N. (1952): Hypsometric (area-altitude) analysis of erosional topography, Bull. Geol. Soc. America, 63 p.

Strahler, A.N. (1957): Quantitative Analysis of watershed geometry, Trans. Amer. Geo. Union, Vol. 38, pp. 913- 920.

Strahler, A.N. (1964): Quantitative geomorphology of drainage basins and channel networks. In: V.T. Chow (ed.) Handbook of Applied Hydrology, McGraw Hill Book Company, New York, pp. 439- 476.

Thornbury, W.D. (1954): Principles of Geomorphology, John Wiley and Sons, Inc., New York, 594 p

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

IMPACT OF MODERNITY ON TRIBALS IN INDIA

Dr. Prabha Soni
Associate Prof. Sociology, Swami Vivekanand Govt. P.G. College Harda MP.

According to Article 342 of the Constitution, the Scheduled Tribes are the tribes or tribal communities or part of or groups within these tribes and tribal communities which have been declared as such by the President through a public notification. The Scheduled Tribes account for 84.32 million representing 8.2 percent of the country's population. Scheduled Tribes are spread across the country mainly in forest and hilly regions.

The English word tribe has come from the Latin word 'Tribus' which signifies a particular type of common and political organisation which is alive in all these societies. The name 'tribe' refers to a category of people and designates a step of development in human society. As a type of society the term signifies a set of typical features and as a point of advancement it cannotes a definite form of social organisation. Tribal population is found in almost all parts of India . About 68 million people of the state of India are members of Scheduled Tribes.

The essential characteristics of these communities are (This criterion is not spelt out in the Constitution but has become well established).Primitive Traits,Geographical isolation ,Distinct culture ,Shy of contact with community at large ,Employed mostly in primary sector ,High levels of poverty and illiteracy, low nutritional levels. Modernity is a resultant of the development and advance of practical sciences which further leads to the development of industrialism, individualism, democracy, freedom and the ideologies of social philosophies opposed to metaphysics and theology. The concept of modernity is based upon the social structure prevailing in highly advanced countries mainly characterized by rapid urbanization, growing literacy, meaningful concourse of idea among people by means of new media, radio, television and books, etc; increase in proficiency and skill which builds up man power the support the economic progress of the country and growth of political consciousness. This results in increasing geographical mobility and mechanization invades most of the walks of life.

The role of modernity in bringing about social change in the lives of people especially people from tribe who have being exploited for centuries from the hands of upper class on various pretexts. India, a country with diversified cultural heritage, spread widely with various cultures, traditions, castes based on their respective professions. Tribes in India, meant for their efficient logistics is a shining beacon to the nation‟s culture

The major impact which tribal population faces is in the shape of loss of tribal identity through the establishment of industries that brings in development in the form of technology and its concurrent side-effects. Tribal customs and traditions come under pressure, due to contact with the town culture and a consequent change in the attitudes of the tribals can be seen. It can be seen that tribal religions are no longer in practice and dominant religions like Christianity and Hinduism have taken their place. Magical cures and herbs that the tribals practiced are considered archaic today. Tribal crafts and cultivation have also steadily declined. Yet, on the converse side, the benefits of modernisation also cannot be ignored which has aided the tribals from exploitation and provided them better living condition including education and health care.The government policy of industrializing remote areas has led to the emergence of high-tech industries and modernisation in the tribal belts.

Industrialisation in the tribal areas offered new jobs. But the tribals, unskilled in initial stages,

could only get the jobs at the lower rungs. At one time owners of land were now depressed into the class of industrial proletariat. This happened because of a number of factors. Firstly, their land had been usurped by the nontribal Zamindars in many areas, and they were looking for some alternatives. Secondly, installation of big industrial and developmental projects in tribal zones required the displacement of the native population, often to unknown areas . In these cases of uprooting local tribals and non-tribals were equally affected, but as the tribals outnumbered the nontribals in these areas, they suffered the maximum. Finally, as a result of overexploitation of forest resources by the outsiders, the tribal economics, which is to a large extent were forest-based, dwindled. Thus, a combination of local impoverishment and availability of new opportunities sent these tribals to seek jobs in heavy industries, tea plantations, construction sites, etc. These tribals now-turned labourers have changed a lot. The traditional dresses have been replaced by those that came with modernity. Their occupational structure has changed, and it has important implications. A sense of mobility is gradually instilled in the community. Mobility becomes inter-generational as the children of tribal workers aspire to do better in life than their parents, by taking hold of opportunities offered by modernity

In this process, some of the traditional institutions weaken. Their village institutions like the 'jajmani system', the cycle of festivals and rituals, the caste-affiliations etc., have completely been disintegrated, and all round depression and despair seems to have affected the life of the uprooted villages. This, however, does not mean that there is also a subsequent decline in the feeling of oneness amongst the tribals in a new set-up. Industrialisation has fostered a new sense of solidarity between the co-workers. Once there already exist ethnic and social ties between the tribals, the relations in the industry cement them further. Trade unions on the lines of tribal-workers crystallise The feeling of ethnicity becomes strong and they begin exerting pressure on the state and the centre.

Adverse Effects of Modernity-- The aim of modernisation is to bring the society on the path of progress, to diversify its occupational structure, to provide the people with efficient technology which vouchsafes higher production, to give them avenues of social mobility and to bring them on par with other developed sections of the society. But the results are not encouraging in all cases. With an introduction of development plans, some societies have found themselves disintegrated. Modernity has given rise to adverse effects.

Take the case of industrialisation. The establishment of heavy industries, construction of dams and launching of development plans in tribal zones has necessitated displacement of the local population. Thousands of tribal families were displaced from their traditional habitats. Compensation was supposed to be provided to them in terms of money and alternative land, but not all of them got an alternative place to live. The compensation provided to them in cash was recklessly spent. The tribals not fully conversant with cash economy squandered the money on various attractions that were available in nearby industrial towns. Soon their funds had depleted. With their land gone for developmental activities and left with no training, equipment or aptitude for skilled or semi-skilled jobs, they had no option but to enter the town as unskilled labourers, taking up various 'marginal jobs' of domestic servants, rickshaw pullers, vendors, hawkers, etc. They could enter the industrial sector at the lowest level, and their chances of moving up were meagre as they remained untrained for industrial jobs requiring technical know-how. Eventually they were proletarianised.

Modern diseases unknown to tribals have been introduced with the entry of outsiders in tribal areas. The tribal population in Andaman Islands has greatly declined because of high mortality rate. Measles and influenza, the killer diseases for those who had not developed any resistance to them, played havoc with the Andaman tribals.

Similarly, at the time of Independence, the Toda population had fallen to under 500. The chief cause of their decline was the prevalence of venereal diseases (Walker 1986: 283). In most cases, depopulation of a tribe was mainly because of rapid ecological changes that created imbalances in their habitats. For new schemes, either of medical treatment or development, the people were not fully prepared to accept them. Hence, they reacted in a lukewarm manner to all those institutions that could have changed and modernised them. Modernisation created economic disparities in various sections of the society. Those who could take advantages of new economic and educational frontiers were able to better their lot, while a large sections of the tribals, not adequately prepared to deal with new challenges, gradually depressed into poorer sections of the society. Against economic and social disparities, they have raised a collective voice. Modernisation, in other words, has given rise to a new consciousness amongst the people. The already existing solidarity between them has become strengthened.

As a response to modernity, and the fact that traditional institutions of the people disintegrate under its impact, there have been conscious attempts to revive traditional ways of living. Cultural identity is cemented, because it can be instrumental in achieving political goals. Consciously the tribals have tried to introspect into their cultures to single out and eradicate their 'evil customs and practices'. For regulating the behaviour of people, so that the feeling of collectivity remains intact, rules have been collectively arrived at. Nonconformity to any one of them may call for an imposition of fine. Modernity has made people conscious of their culture.

REFERENCES :

Anburaja, V. & Nandagopalan, V. (2012). Agricultural Activities of the Malayali Tribe for Subsistence and economic needs in the mid elevation forest of Pachamalai hills, Western Ghats, Tamil Nadu, India.

Beck, P. and Mishra, B.K. (2010). Socio-Economic Profile and Quality of Life of Selected Oraon Tribal Living in and Around Sambalpur Town, Orissa.

Furer- Haimendorf, Christoph. (1982) Tribes of India: The struggle for survival.

Kalyani, M. (2008). Dialogue on Modernisation and Tribal Culture.

Louis, P. (2000). "Marginalisation of Tribals." Economic and Political Weekly, Vol.35. No.47: pp. 4087-4091.

Mahapatra, S. (1997). The Celebration of Life. Tribal Language and Culture of Orissa.

Pal, T. (2011). "Changing Tribal Culture: A Photo-Geographical Explanation"

Panangatu, T.T. (2009, November 25). Comparative study of religious traditions of the Saora tribe of Orissa and the influence of Christian traditions.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

आधुनिकीकरण का अनुसूचित जनजातीय महिलाओं पर प्रभाव

डॉ. सारिका सरगरा
रिसर्च स्कॉलर (समाजशास्त्र), दवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

प्रस्तावना : भारत में आधुनिकीकरण का आरम्भ अंग्रेजों के शासनकाल से माना गया है। दूसरे शब्दों में, आधुनिकीकरण का प्रमुख आधार भारत में पश्चिमीकरण की प्रक्रिया भी रही है। रूडोल्फ एवं रूडोल्फ (1965) का स्पष्ट रूप से कहना है कि ''अंग्रेजों ने ही भारत में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया की नींव रखी थी।'' पाश्चात्य देशों की आधुनिक प्रगति विशेषकर इंग्लैण्ड की सामाजिक संरचना में हुए भौतिक विकास से प्रभावित होकर हुई हैं। आधुनिकता की अवधारणा भी आधुनिकीकरण से संबंधित है। सामान्यतः आधुनिकीकरण का तात्पर्य सभ्यता, साक्षरता का उच्च स्तर, भौगोलिक गतिशीलता, नगरीकरण, प्रति व्यक्ति उच्च आय एवं उत्पादन के क्षेत्र में यंत्रीकरण का प्रयोग आदि से माना गया हैं। इस आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से आज कोई भी समाज अछूता नहीं रहा हैं। भले ही फिर वह आदिम समाज या जनजातीय समाज ही क्यों ना हो। यह भी कहा जा सकता है कि आधुनिकता एक विशेष प्रकार की संस्कृति का स्त्रोंत है, जिसके अन्तर्गत विविधता, स्वतंत्रता, लौकिकता तथा व्यक्ति के गौरवपूर्ण गुणों का समावेश होता है। खासकर आधुनिकीकरण की इस प्रक्रिया से जनजातीय समाज में परंपरागत कृषि, लोक कलाएं एवं संस्कृति में भी बदलाव देखने को मिले हैं।

'जनजाति' शब्द अंग्रेजी के लैटिन शब्द 'ट्रिबस' से आया है, जो इन सभी समाजों में एक विशिष्ट प्रकार के आम और राजनीतिक संगठनों को जीवित करता है। 'जनजाति' नाम लोगां की श्रेणी को दर्शाता है और मानव समाज में विकास के एक चरण को निर्दिष्ट करता है। एक प्रकार से यह समाज की विशिष्ट विशेषताओं के समुह को दर्शाता है। और साथ ही उन्नति के एक बिंदु के रूप में सामाजिक संगठनों के एक निश्चित स्वरूप को भी दर्शाता हैं।

2011 की जनगणना के अनुसार 24,94,54,252 घरों में से 2,14,67,199 घरों की जनसंख्या अनुसूचित जनजाति के अंतर्गत आती है। देश की कुल आबादी 2,12,05,69,573 है, तथा इन 10,42,81,034 में से 5,24,09,823 पुरूष और 5,18,71,211 महिलाओं को अनुसूचित जनजाति के रूप में वर्गीकृत किया गया है। 2001–2011 के दौरान जनजातीय आबादी का दशकीय वृद्धि दर 23.7 प्रतिशत हैं, जो कि भारत की कुल दशकीय वृद्धि दर (17.6 प्रतिशत) से अधिक हैं। भारत की जनजातीय आबादी देश की कुल आबादी का 8.6 प्रतिशत है और उनमें से अधिकांश ग्रामीण इलाकें (90 प्रतिशत) में रहते है। जनजातीय आबादी का राज्यवार प्रतिशत वितरण जो कि जनजातीय जनसंख्या का उच्चतम अनुपात पूर्वोत्तर राज्यों में रहता है; मिजोरम, नागालैंड, मेघालय, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, सिक्किम और त्रिपुरा। लक्षद्विप द्वीपों में उत्तर पूर्वी राज्यों के आदिवासी आबादी के अलावा 94.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जनजातीय आबादी के रूप में देखा जाए तो मध्यप्रदेश देश में अव्वल नंबर पर आता है, जो भारत की कुल जनजातीय आबादी का 14.7 प्रतिशत है। वही महाराष्ट्र और ओड़िशा राज्य एक साथ देश में अतिरिक्त 19.3 प्रतिशत की जनजातीय आबादी जोड़ते हैं। इसके विपरीत, दमन और दीव संघ राज्य क्षेत्र में सबसे कम जनजातीय आबादी है। पंजाब, हरियाणा, चंडीगढ़, दिल्ली और पांडिचेरी राज्यों/संघ शासित प्रदेशों में कोई जनजातीय आबादी नहीं है।

आधुनिकीकरण –

सन् 1953 में काका कालेलकर समितो ने सुझाव दिया कि अनुसूचित जनजाति उसे कहा जाए जो, ''ऐसे समूह जो पहाड़ों में रहते हैं तथा जिनका मुख्य निवासियों की जीवन–धारा में सात्मीकरण नहीं हुआ है। इनका कोई भी धर्म हो सकता है। इन्हें अनुसूचित जनजातियों की सूची में इसलिए सम्मिलित किया जाये क्यों कि उनकी एक विशेष प्रकार की जीवन–शैली है।'' एक जनजाति परिवारों अथवा परिवार–समूहों का एक एसा संकलन है जिसका एक सामान्य नाम, विशिष्ट भाषा, समाज–व्यवस्था, संस्कृति और उत्पत्ति सम्बन्धी एक पुराकथा होती है, तथा जो एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करता है। जनजातीय समाज की बात करे तो हमें बरबस ही

शिकार, खानाबदोश, पेड़ की छाल से तन ढंकने वाले तथा जंगलों में निवास करने वाले लोगों की याद आ जाती है। प्रत्येक समाज परिवर्तन की प्रकिया से गुजरता है। चाहे फिर वह जनजातीय समाज ही क्यों ना हो, वह भी इस प्रकिया से अछुता नही रहा है। और इसी परिवर्तन की प्रकिया को आधुनिकिकरण कहते है।

जनजातीय परिप्रेक्ष्य में आधुनिकिकरण का अर्थ संस्कृति, लोक कला एवं पंरपरागत कृषि पद्धति के बदलाव को माना जाता है। आधुनिकीकरण राजनीतिक, सांस्कृतिक, एवं सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक विकास की एक ऐसी मिली–जुली पारस्परिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा ऐतिहासिक तथा आधुनिक अविकसित समाज अपने आपको विकसित करने में प्रयत्नशील है। आधुनिकीकरण एक ऐसा शब्द है जिसकी कोई एक अत्यांतिक एवं निश्चित परिभाषा देना कठिन है, क्योंकि यह एक निरंतर एवं गतिशील प्रक्रिया है। यह एक ऐसी अति व्यापक प्रक्रिया का संकेतक शब्द है जिसके द्वारा एक समाज पारम्परिक या अविकसित संस्थाओं से ऐसी विशेषताओं जैसे नगरीकरण, औद्योगीकरण, लौकिकीकरण, परिष्कृत एवं उन्नत संचार एवं यातायात व्यवस्था, शिक्षा आदि की ओर बढ़ता है जो अधिक विकसित समाजों की विशेषताएं है।

आधुनिकीकरण का जनजातीय महिलाओं पर प्रभाव–

जनजातीय महिलाएं, किसी भी अन्य सामाजिक समूह की तरह ही हैं। जनजातीयों में कुल जनसंख्या का आधा हिस्सा महिलाओं के रूप में देखा जा सकता है। किन्तु सभी सामाजिक समूहों में महिलाएं पुरूषों की तुलना में कम ही शिक्षित है। अन्य सामाजिक समूहों की तरह आदिवासी महिलाओं को भी प्रजनन और स्वास्थ्य से संबंधित समस्याओं का सामना करना होता है। यदि विभिन्न समाजों में महिलाओं के स्तर की स्थिति की प्राथमिक और माध्यमिक निर्वाह गतिविधियों के रूप में गणना की जाये तो महिलाएं पुरूषों के बराबर या उनकी तुलना में अधिक कार्य करते हुए पायी जाती है।

महिलाओं की भूमिका केवल आर्थिक गतिविधियों में ही नहीं है, बल्कि गैर–आर्थिक गतिविधियों में भी उनकी भूमिका समान रूप से महत्वपूर्ण है। जनजातीय महिलाएं बहुत मुश्किल काम करती हैं, कुछ मामलों में तो वह पुरूषों की तुलना में ज्यादा काम करती है।

उन्नीसवीं सदी के मध्य से ही हिन्दूओं की संस्कृति के सम्पर्क में आने से उनकी संस्कृति में महान परिवर्तन हुआ है और उनके सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन में हिन्दू एवं आदिवासो तत्वों का सम्मिश्रण पाया जाने लगा। आज आदिवासी समुदाय ब्राह्मण मूल्य व्यवस्था को क्रमशः अपना रहे हैं। उनकी श्रद्धा, संस्कार, रीति–रिवाजों को भी अपने शादी–ब्याह के समाराहों में सम्पन्न करना प्रारंभ कर दिया है। उच्च–जाति हिन्दूओं का अनुकरण करने के कारण उनके खान–पान, रहन–सहन, वेश–भूषा बदलती जा रही है। तथा आदिवासीयों की लोक संस्कृति एवं परंपरागत संस्कृति परिवर्तित हो रही है। आधुनिक युग में समाज के लोग परंपरागत संस्कृति को छोड़कर आधुनिकता वाली संस्कृति को अपनाने लगे हैं।

जनजातीय समाज के लोगों को आधुनिक समाज के द्वारा शहरी प्रवास के लिए प्रलोभित किया जाता है, जिससे वे अपना पंरपरागत जीवन नही जी पाए और वे शहरी लोगों के यहां बंधुआ मजदुरी के रूप में कार्य करते रहते हैं। जिसके कारण उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में सबसे अधिक कष्ट महिलाओं को होता है। गर्भावस्था में वे घर से दुर जाकर मजदुरी करती है। जिससे उनकी देखभाल नहीं हो पाती है। प्रसव कहां होगा ये भी निश्चित नहीं होता है। जिससे उन्हे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उचित देखभाल और पौष्टिक भोजन के अभाव में वे एनीमिया और कुपोषण जैसी भयंकर बीमारी का शिकार हो जाती है।

वैश्वीकरण के इस युग मे प्रायः हर वर्ग प्रभावित हुआ है और महिलाएं भी इसके प्रभाव से अछुती नहीं है। भारतीय समाज में महिलाएं सदियों से शोषित दमित, प्रताड़ित एवं सदैव हासिएं पर रही है। आज भी महिला आंदोलन, महिलाओं को उनकी वास्तविक स्थिति दिलाने के लिए संघर्षरत है। बड़े पैमाने पर रोजगार सृजन के माध्यम से महिलाओं को राष्ट्र की सामाजिक–आर्थिक प्रगति मे भागीदार बनाये जाने के प्रयत्न किये जा रहे है। इस प्रकिया के अन्तर्गत महिलाओं के अनुरूप भी रोजगार निर्मित किये जा रहे है। आज महिलाएं ज्यादा स्वतंत्र एवं खुद को ज्यादा आत्मनिर्भर महसुस करने लगी है

और विकास में पुरूष के साथ कंधा से कंधा मिलाकर चल रही है। इससे उनकी सामाजिक स्थिति भी सुदृढ़ हुई है। इसमें कोई संदेह नही है कि आधुनिकीकरण की इस प्रकिया के परिणामस्वरूप भारतीय महिलाओं विशेषकर जनजातीय महिलाओं की सामाजिक—आर्थिक स्थिति में व्यापक सुधार हुआ है।

निष्कर्ष—

भारत में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का शुभारंभ जो मूलतः ब्रिटिश शासन के दौरान प्रारंभ हुआ था। जो स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अत्यंत तीव्र गति से भारतीय जनजीवन पर छा गया। भारत के परंपरागत रहन—सहन, खान—पान, भाषा—शैली, वेश—भूषा, पारिवारिक संगठन, पारस्परिक संबंध, सामाजिक व्यवस्थाएं, नैतिकता, शिक्षा, धर्म, प्रथा आदि परंपराओं में आधुनिकीकरण की झलक दिखाई पड़ती है। संचार साधनों के विकसित होने से इस समाज में आधुनिकता देखने को मिलती है। भारतीय समाज में जीवन का शायद ही कोई ऐसा पक्ष हो, जो इस आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से पूर्णतः न गुजरा हो। ग्रामीण समाज में भी आधुनिकीकरण के कारण तेजी से बदलाव हो रहे है।

संदर्भ :

- रावत, हरिकृष्ण (2014): ''जनजाति'', 'उच्चत्तर समाजशास्त्र का विश्वकोश', रावत पब्लिकेशंस, जयपुर, पृ. 537.
- गुमाड़ी, नरेश (2014): ''वर्क पार्टिसिपेशन ऑफ ट्राइबल वुमेन इन इंडियाः अ डेवलपमेंट पर्सपेक्टिव'', 'आई ओ एस आर जर्नल एंड सोशल साइंस', वर्ष 19, अंक 12, (द्वितीय वर्जन), पृ. 35—38.
- वर्मा, पंकज कुमार और संध्या वर्मा (2016): ''जनजातीय समुदायों के संदर्भ में आधुनिकीकरण के विभिन्न पहलू: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण'', 'डॉ. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका', (सं.) सी. डी. नाईक, अंक 24, पृ. 97—103।
- तिवारी, अश्विन कुमार (2009): ''सूचना कांति का पारिवारिक, जातीय एवं ग्रामीण संरचना पर प्रभाव'', 'सुचना कांति और भारतीय समाज', शासकीय महाविद्यालय, सनावद, (सं.) डॉ. शोभा सुद्रास, पृ. 75—78।
- पांचाल, रमा (2016): ''वंचित वर्ग की महिलायें और सामाजिक न्याय'', 'डॉ. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका', (सं.) सी.डी. नाईक, अंक 24, पृ. 88—96।
- बोसन, लॉरेल (1975): ''वुमेन इन मॉडर्नाइजिंग सोसाइटिस'', आनलाइन लाइब्रेरी, वर्ष 2, अंक 4, पृ. 587—601. वेबसाइट& http://onlinelibrary.wiley.com. dte. 08/01/2018.
- http://citeseerx.ist.psu.edu/viewdoc/download?doi=10.1.1.544.2059&rep=rep1&type=pdf. Surfing dte. surfing dte. 10/01/2018.
- http://www.ijhssi.org/papers/v3(6)/Version-2/K03620810110.pdf. surfing dte. 10/01/2018.
- http://ethesis.nitrkl.ac.in/5085/1/411HS1002.pdf. surfing dte. 10/01/2018.
- http://citeseerx.ist.psu.edu/viewdoc/download?doi=10.1.1.544.2059&rep=rep1&type=pdf. surfing dte. 10/01/2018.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

आदिवासी बालिकाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि

ज्ञानेन्द्रधर बड़गैया
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर म.प्र.

प्रस्तावना : समानता के संदर्भ में मानव अधिकारों की विवेचना विशेषतः लिंगभेद के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्णहै। लिंगभेद से स्थायी विषमताएं, असंतोष और मानवता की हानि जैसी परिस्थितियां सामने आई है। अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने सामाजिक अवसरों को सभी के लिए व्यापक स्तर पर खोलने की आवश्यकता को विकास का मूल मुद्दा बताया है। लिंग आधारित भेदभाव विकसित, अविकसित, सभ्य–असभ्य समाजों में व्यापक या सूक्ष्य रूप में अवश्य मौजूद है और जब तक समान अवसरों को स्त्रियों के लिए व्यापक स्तर पर उपलब्ध नहीं कराया जाता, तब तक कोई सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक उपलब्धि, राजनैतिक सत्ता, समाज में शान्तिपूर्ण, सुरक्षित एवं पोषणीय विकास की नींव नहीं डाली जा सकती।

सभी क्षेत्रों में प्रगति एवं विकास को सुनिश्चित करने के लिए लिंग की समानता और महिलाओं को अधिकार प्रदान करने के सिद्धांतों को विश्वभर में एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप में स्वीकार किया गया। महिलाओं के विकास और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा में 18 दिसम्बर 1979 को महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार का भेदभाव समाप्त करने के बारे में प्रस्ताव पारित किया। जो 3 सितम्बर 1981 से प्रभावी हुआ। ग्रामीण महिलाओं की विशेष समस्याओं और उनके पारिवारिक जीवन के अस्तित्व को बनाये रखने में उनके महत्वपूर्ण योगदान को भी रेखांकित किया गया। किन्तु अंर्रराष्ट्रीय स्तर पर अनेक समझौतों के बावजूद भी महिलाओं की स्थिति दूसरे दर्ज की है। विश्व स्तर पर प्रोढ़ निरक्षरों में दो–तिहाई महिलाएं हैं। विश्व के निर्धनों में 70 प्रतिशत महिलाएं हैं। मातृदर और शिशु मृत्यु दर अत्यंत उच्च है। साक्षरता में सभी स्तरों पर लिंग संबंधी अंतराल बहुत गहरा है। बालिकाओं में स्कूली शिक्षा के मध्य में ही शाला छोड़ने की दर अधिक ऊंची है। महिलाओं के खिलाफ अपराध की घटनाएं निरंतर बढ़ती जा रही है।

आदिवासी बालिकाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि एवं शिक्षा :

एक समाजशास्त्रीय अध्ययन जबलपुर से 65 किलोमीटर दूर स्थित निवास तहसील के अंतर्गत निवास विकासखंड के 105 गांवों का अध्ययन है। आदिवासी बहुल क्षेत्र निवास तहसील में तीन विकासखंडों में क्रमशः 105,128 एवं 78 गांव है। सरकारी आयु वर्ग के समस्त बच्चों को स्कूलों, शिक्षा गारंटी योजना, ब्रिज कोर्स पाठ्यक्रमों में जनपद शिक्षा केन्द्र प्राथमिक, पूर्व माध्यमिक, माध्यमिक, हायर सेकेण्डरी विद्यालयों की स्थापना की गई है तथा शासन की ओर से प्रत्येक आदिवासी परिवार के बालक एवं बालिकाओं को इन विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने हेतु विभिन्न सुविधाएं प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित कर प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता पर बल देते हुए वर्ष 2010 तक सभी को शिक्षा मुहैया कर समस्त प्रकार के भेदभाव मिटाकर समाज के प्रत्येक वर्ग के बच्चों को बुनियादी शिक्षा उपलब्ध कराना प्राथमिकता है।

प्रस्तुत अध्ययन में सुविधाजनक निर्दशन प्रणाली में उत्तरदाताओं का चुनाव किया गया। धन, समय व शासन की उपलब्धता के आधार पर निवास संकुल क्षेत्र के आठ गांवों मे 20 विद्यालयों का चुनाव किया गया तथा विद्यालयों में प्रत्येक स्तरों में उपयुक्त बालिकाओं को चुनकर, चुनी हुई 268 बालिकाओं के अभिभावकों से संपर्क किया गया। सर्वप्रथम समग्र की सभी विशेषताओं की प्राथमिक जानकारी प्राप्त कर प्रत्येक वर्ग में से इकाईयों से संबंधित अभिभावकों से घर पर जाकर प्राथमिक अध्ययन हेतु विषय से संबंधित एक प्रश्नावली अनुसूची का निर्माण कर निर्वाचित विद्यार्थियों के परिवार में जाकर जिम्मेदारियों सदस्य से जानकारियां प्राप्त की गयी। कुल 5628 से चयनित 268 बालिकाओं को अध्ययन हेतु सम्मिलित किया गया।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

निष्कर्ष :

बालिकाएं निश्चित ही शासन की विभिन्न योजनाओं के माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर लाभान्वित हो रही है किन्तु बालिकाएं जो प्राथमिक से हायर सेकण्डरी कक्षाओं में अध्ययनरत है अभिभावक (माता–पिता) के अधीन है अतः माता–पिता की सामाजिक–आर्थिक स्थिति ही उन्हें शिक्षित होने में सहायक होती है। यद्यपि शासन द्वारा आदिवासी बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त कराने हेतु निःशुल्क व्यवस्था की गई है किन्तु सामाजिक–सांस्कृतिक तौर पर अभी भी बालिकाओं को माता–पिता की बिना अनुमति व सहयोग से शिक्षा प्राप्त करना असंभव है। अतः अभिभावकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति ही आदिवासी बालिकाओं की शिक्षा को सुनिश्चित करती है। अतः अभिभावकों की सामाजिक पृष्ठभूमि बालिकाओं की शिक्षा का मापक है।

अतः चयनित 268 बालिकाओं के अभिभावकों के अभिमतों से यह ज्ञात होता है कि अभिभावक उत्तरदाताओं में 31 से 41 वर्ष के आयु समूह के उत्तरदाता अधिक है। जिसमें पुरूष अभिभावकों मं पिता ही है जो बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त कराने या न कराने अथव बालिका का विद्यालय जाने या न जाने का निश्चय करते हैं। जो अधिकतर निरक्षर है इसमें गोंड़ जनजाति के उत्तरदाता अधिक है।

अभिभावकों के बहिर्जात कारकों के प्रभाव से सामाजिक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तन प्राचीन प्रथाओं, मूल्यों एवं प्रतिमानों के परिवर्तनों के विभिन्न पैमानों के अंतर्गत उत्तरदाताओं का अभिमत यह स्पष्ट करता है कि अभिभावक उत्तरदाताओं में आदर्श जनसंख्या के प्रति सकारात्मक मानसिकता एवं जागरूकता भी है लेकिन लड़के या लड़की की चाहत स आदर्श परिवार पीछे छूट जाता है चिकित्सीय सुविधाओं के अंतर्गत उत्तरदाताओं ने बताया कि स्वास्थ्य खराब होने पर प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र एवं स्वास्थ्यकर्मी के माध्यम से ही चिकित्सा करवाने को प्राथमिकता देते हैं। साथ ही सामाजिक पण्डे/पुजारियों से झाड़–फूॅक करवाने में भी विश्वास रखते हैं।

प्रगति की धारणा मानव समाज की धारणा जैसी पुरानी है अतः प्रत्येक समाज में एवं समाज के विकास के हर स्तर पर मनुष्यों ने प्रगति के बारे में सोचा है और समाज का लक्ष्य निर्धारित किया है। सामाजिक परिवर्तन को निर्धारित लक्ष्य देना तो असंभव है किन्तु समाज में राजनैतिक, सांस्कृतिक परिवर्तन अवश्य दृष्टिगत होता है। पंरतु आज भी आदिवासियों में मतदान करने हेतु स्वयं की इच्छा उतनी कारगर नहीं होती है अपितु पंचायत एवं पार्टी के लोगों की इच्छा ही प्रबल होती है। अधिकांश उत्तरदाता एकल परिवार के सदस्य हैं व गांव में उपलब्ध भौतिक साधनों से संतुष्ट हैं। उत्तरदाताओं में आधे निरक्षर एवं लगभग आधे साक्षर हैं व कुछ को शिक्षित कहा जा सकता हैं ये अधिकांशतः मजदूरी करते हैं। मजदूरी करके मासिक 900–1500 रू. तक मासिक आय अर्जित करते हैं। सहज ही उपलब्ध दूरदर्शन से उनका मनोरंजन होता हैं। निजी आवास में निवास करते हैं समुदाय में लोगों के साथ संबंध सामान्य रखते है केवल कुछ ही परिवार के साथ घनिष्ठता बनाये रखना उचित समझते है। परिवार में पारिवारिक एवं धार्मिक संस्कार दोसी अर्थात् समाज के पुजारी से करवाते है जिसे निशानी के रूप में कुछ देने की परंपरा है अथवा कुछ सम्पन्न लोग गांव के पुजारी से कराना पसंद करते हैं।

गांव में आधुनिक शिक्षा की सुविधा उपलब्ध हो न हो आधुनिक शिक्षा संस्थानों का प्रसार एवं शहरीकरण का प्रभाव तो है। राजनीतिक प्रशासनिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति आधुनिक शिक्षा के लिए मानसिकता में परिवर्तन अवश्य लाती है इस कारण अभिभावक बच्चों का विवाह गांव के बाहर उच्च गोत्र में करने के पक्ष में रहते है। माता–पिता की पसन्द से दहेज रहित मानसिकता रखते हैं विवाह में लेन–देन से पूर्ण असहमति व्यक्त करते हुए उनका यह कहना है कि सांस्कृतिक कार्यक्रमों में आधुनिक कार्यक्रमों को करना उन्हें पसंद हैं। उनमें आज भी अन्य समाज से संबंध बनाये रखने के प्रति उदासीनता देखने को मिलती है। समझ की कमी के कारण विकास कार्यक्रमों की जानकारी उन्हें अपेक्षाकृत कम होते हुए भी गांव में तथा उनके घरों में विद्युत व्यवस्था एवं समाज कल्याण के लिए किए जा रहे प्रयासों का प्रभाव दिखाई देता है।

संदर्भ :

1. जोशी, रामशरण, आदिवासी समाज और शिक्षा, ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, 1996
2. जैन, श्री चंद्र, आदिवासी के बीच, कमला प्रेस, नई दिल्ली, 1980
3. नायडू पी.आर. , भारत के आदिवासी : विकास की समस्याएं, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2002
4. पटेल, एम.एल. , प्लानिंग स्ट्रेटेजी फॉर ट्रायबल डेवलपमेंट, इण्टर इण्डिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1983
5. पाण्डेय, डॉ. रविप्रकाश, समाज शास्त्रीय सिद्धांत : अभिगम एवं परिप्रेक्ष्य, शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद, 2004
6. सलूजा, एस.एल. , अनुसूचित जाति और जनजाति कार्यकम, सलूजा प्रकाशन, बिलासपुर, 1992

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

स्टेट बैंक का लद्यु उद्योग एवम् लद्यु व्यवस्था कही प्रगति में योगदान

तुहिना द्विवेदी
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

लघु उद्योग :–

यघपि विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में लघु उघोग के विकास की बात कही गई थी किंतु इनके विकास की ओर विशेष ध्यान नही दिया गया था। भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उधोगो की महत्वपूर्ण भूमिका को दृष्टि में रखते हुये स्टेट बैंक ने प्रारंभ से ही इस क्षेत्र पर अधिक ध्यान दिया है। लद्यु तथा कुटीर उद्योग को वित्तीय सहायता प्रदान करने मं स्टेट बैंक सबसे आगे रहा है। लद्यु उद्योग के प्रति स्टेट बैंक की ऋण नीति उदार और लचीली रही है। प्रारंभ में बैंक द्वारा लद्यु उद्योग के वित्तपोषण की योजना देश के 9 केन्द्रों में आरंभ की गई फिर कमशः इन कन्द्रो की संख्या में वृद्धि की गई। 1959 में बैंक की समस्त शाखाये इस योजना में सम्मिलित कर ली गई। 1967 में बैंक ने एक उद्यमी योजना प्रारंभ की जिसके अंतर्गत तकनीकी योग्यता प्राप्त व्यक्तियों और अनुभवी शिल्पकारो को अपना रोजगार स्थापित करने हेतु 100 प्रतिशत तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस योजना के अंतर्गत 10 लाख रूपये तक की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। बाद में इस योजना में ऐसे व्यक्तियो कों सम्मिलित किया गया जिनमे तकनीकि योग्यता न होकर प्रबंधन योग्यता हो इस योजना के अंतर्गत वर्ष 2001 में 13033 करोड़ रूपये के अग्रिम प्रदान किये गये।

औद्योगिक क्षेत्र में स्टेट बैंक का एक अन्य महत्वपूर्ण योगदान इक्विटी निधि योजना है जो 1978 में प्रारंभ की गई थी। यह योजना लद्यु आद्योगिक ईकाईयो का पूंजी आधार सुदृढ़ करने हेतु निर्मित की गई थी। इसका उद्देश्य ऐसी लद्यु औद्योगिक ईकाईयों को सहायता प्रदान करना है। जिन्हें पूॅजी की आवश्यकता होती है। इसके अंतर्गत ब्याजमुक्त कोष प्रदान किये जाते है और जो लंबी अवधि में पुर्नभुगतान के योग्य होते है। बैंक द्वारा इस योजना के अंतर्गत नई लद्यु उद्योग ईकाईया स्थापित करने वाले जरूरतमंद उधमियों को एक लाख रूपये तथा व्यवसायियों एवं स्व–नियोजित व्यक्तियों को 5000 से 50000 रूपये तक की पूॅजीगत सहायता प्रदान की जा रही है। ये ऋण 5 से 7 वर्षो के लिये दिये जाते है।

ऋणो के अतिरिक्त स्टेट बैंक लद्यु उद्योगों को अब परामर्श और प्रशिक्षण सेवाये प्रदान कर रहा है। अपनी स्थापना के समय से लेकर अब तक स्टेट बैंक द्वारा प्रदत्त अग्रिमों की राशि मात्र 0.06 लाख रूपये थी जो वष 2004 में 13033 करोड़ रूपये हो गई।

ग्रमीण उद्योगो के लिये विशेष व्यवस्था :–

1977 में स्टेट बैंक ने अपने प्रत्येक स्थानीय प्रधान कार्यालय में एक विशेष ग्रमीण उद्योग प्रभाग की स्थापना की। यह विभाग ग्रमीण एवं कुटीर उद्योगों को वित्तीय सहायता देने संबंधी कार्य देखता है एवं उन ऐजेन्सियों की सहासता करता है जो ग्रमीण उधोग को दिये गये ऋणो में 9.4 करोड़ रूपये की वृद्धि हुई और यह बढकर 31.9 करोड़ रूपये हो गये। मार्च 2004 में बैंक द्वारा 64.1 करोड़ रूपये की वृद्धि हुई।

अध्ययन में एक उल्लेखनीय तथ्य यह है। कि स्टेट बैंक के प्रत्यक्ष कृषि अग्रिमो की वृद्धि की दर अप्रत्यक्ष अग्रिमों की तुलना में अधिक रही इससे स्पष्ट होता है कि स्टेट बैंक इस बात का प्रयास करता रहा है कि कृषको से अधिक से अधिक प्रत्यक्ष रूप से संपर्क किया जाये ताकि मध्यस्थ समितियों और संस्थाओं के द्वारा सामान्यतः अपनाई जाने वाली शोषण की प्रवृत्ति को रोका जा सके।

लद्यु उद्योग एव लद्यु व्यवसाय की प्रगति में योगदान :–

अध्ययन से यह तथ्य भी स्पष्ट हुआ कि स्टेट बैंक ने लद्यु उद्योग व्यवसाय के क्षेत्र को इस प्रकार योगदान दिया है कि वे उसके ऋणा के सहार अपने आपको छोटे लद्यु किंतु लाभदारी

रोजगार में लगा सके। बैक इस संबंध में फुटकर व्यापारियो, परिवहन परिचालको और व्यवसायियो को अधिक संख्या में वित प्रदान कर स्वनियोजन के अवसरो में वृद्धि करने के प्रयास कर रहा है।

बैक मध्यस्थ वस्तुओ वाले उद्योगों, आधारभूत उद्यागों तथा उपभोग पदार्थ के उद्योगों को ऋण सहायता दे रहा है। बैक द्वारा प्रदत्त विकास योजनाओ में निर्धारित प्राथमिकता प्राप्त योजना वाले उद्योगों को ऋण देने के प्रयास भी किये जा रहे है। अध्ययन से स्पष्ट है कि कृषि के साथ–साथ लद्यु उद्योग एवं व्यवसाय में भी सहयोग प्रदान कर रहा है। 1985 से 2003–04 तक बक द्वारा प्रदत्त लधु उधोग एवं लद्यु व्यवसाय के क्षेत्र में प्रदत्त अग्रिम की राशि और ईकाईयों की संख्या में भी बहुत अधिक वृद्धि हुई है। इससे स्पष्ट है कि स्टेट बैक के द्वारा यह प्रयास किया जा रहा है कि उसके द्वारा प्रदत्त ऋण एवं अग्रिम का लाभ यथा संभव अधिक से अधिक इन ईकाईयो को प्राप्त हो।

निष्कर्षतः यह स्पष्ट है कि स्टेट बैक ने भारतीय अर्थव्यवस्था के एक उपेक्षित क्षेत्र के विकास के लिये सराहनी प्रयास किये है।

संदर्भः–

1 Adackal B.N - Commercial banking in India after nationalization – bombay1971
2 Agrawal N.N – Management of nationalized commercial bank in India – commerce Rajasthan 1971-77
3 Basu A.K- Fundamentals of banking theory and practice – A Mukherj & Cocalcutta 1976
4Dinesh C. – Agricultural finance by commercial bank –
5 Deshmukh C.D – Central banking in India – Puna University Puna.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Indo-Iranian Relations under US Hammer

Shamim Ahmad Wagay
Former Research Scholar, Department of Political Science, Vikram University, Ujjain, MP, 451060, INDIA

Abstract : India and Iran relationships date back to the beginning of the Indo-Aryan civilization in the 7th century B.C. the two countries shared territorial borders until India's independence in 1947 and shared numerous common characteristics in their language, ethnicity, customs, gastronomy, Literature, Monuments, Architecture, trade, commerce, political, social, historical and people to people contact. The two countries shared cordial relations from times immemorial. Although there have been many ups and downs in the trajectory of India-Iranian relations both the countries managed to overhaul their policies. However it is believed that India has come under harsh pressure of US form several quarters. Several scholars have alleged that the US is influencing India's Iran policy. This article attempts to examine major issues which reflect the US pressure on India's Iran policy.

Key Words : Nuclear Power, Sanctions, Bilateral, Oil, Programme, Pressure.

Introduction : India and Iran relationships dates back to the beginning of the Indo-Aryan civilizations in the 7th century B.C. the two age old civilisations shared various common features in their ethnicity, architecture, literature and people to people contact. Independent India and Iran established diplomatic links on 15th March 1950. But with the establishment of the Islamic Republic in Iran in 1979 witnessed a novel chapter of engagement amid India-Iranian relationships. The epoch of Islamic revolution was marked by swap of high level visits of luminaries to each other's capital which thrashed out the pros and cons of bilateral issues including economic cooperation, energy security, development of mutual trade, surface transport, and regional issues and common apprehensions concerning terrorism. Post cold war also witnessed the paradigm shift of Indo-Iranian relations. The late eighties and early nineties witnessed increased dialogues between India and Iran. Even such as changes of the regime in Iran, the Gulf war, the disintegration of the Soviet Union and economic reforms in India paved way for the increased dialogues and cooperation. There were many visits form both the sides such as the visit of Indian Prime Minister P.V. Narasimha Rao to Iran on 1993 which was reciprocated by the Iran's President Akbar Hashemi Rafsanjani to India in 1995. The early nineties also witnessed Iran's change in the position on Kashmir issue, in 1991 for the first time Iran acknowledged Kashmir to be an integral part of India.[iii]

Though the amplified dialogue in the nineties arranged the foundation for strong footing it was after the trip of Indian Prime Minister A.B. Vajapayee to Iran in 2001 and the consequent signing of the 'Tehran Declaration' that Indo-Iran relations were taken to the higher levels, many consider this visit as a 'turning point' among the two countries which encouraged for the 'dialogue among civilizations' as advocated by Iranian President Mohammed Khatami. In 2003 India hosted President Khatami President Mohammed Khatami. In 2003 India hosted President Khatami as the chief guest of India's Republic Day celebrations. During this period the two sides shared deep concerns regarding the US preparations to invade Iraq.[iv]

Iranian Nuclear programme and India's stance : Iranian nuclear issue came into the international limelight in August 2002, when Iranian opposition group exposed the existence of the Natanz and Arak uranium enrichment plants in Iran which was countenanced to be inspected by International Atomic Energy Agency (IAEA). Despite concerns expressed by the US on Iran's nuclear programme it lumbered on till 2002 when a sensational disclosure by an exiled dissident Iranian group, the national council of resistance of Iran (NCRI) on 14

August 2002 revealed the existence of undeclared nuclear facilities in Iran, including pilot uranium enrichment plant at Natanz and a heavy water production plant under construction at Arak.[v]

The stand of India consistent with Iran's nuclear programme ceased to surface in straitjacket formula and rather maintained paradoxical stage on the issue and seconded not the latter to frequent the nuclear practice for "it certainly does not want another nuclear power in its neighbourhood. This partly explains its opposition to Iran's nuclear programme. Secondly, for many years Iran and India have had opposing views on the global nuclear order. While Iran is party to the NPT India is not. Iran has often called for global acceptance of the NPT, much to India's discomfiture.[vi]

For the reason of reciprocal repercussion India adopted denigratory abhorrence against India conforming to its proliferating nuclear tests and turned man-Friday to UN security council resolution 1172 and bested foot foremost to ward-off nuclear recalibration of India and Pakistan in order to emplace them within the ambit of Comprehensive Test Ban Treaty. India has remained in rapport with IAEA resolutions parallel to Iran and zeroed in to rebut the nuclear achievements of Iran which transpires its susceptibility to oscillate under the vicissitude of US attitude and the excerpt of Indo-US relations transcription papered on September 08, 2005 in the House Committee on International Relations which transcends the brazen pressure of US on India is in to the bargain. To ensample, Tom Lantas-Democrat-California (D-CA) wanted 'reciprocity' from India on referring Iran's violations of the NPT to the UN Security Council in return for the expansion of nuclear and security ties with the US. He warned anything less than full support for the US position on Iran would imperial the expansion of US nuclear and security cooperation with New Delhi he added that if the US was to accommodate India, he wanted to be sure that India was mindful of United States policies in critical areas, like the policy towards Iran, and that India could not pursue a policy towards Iran which did not take account of US foreign policy objectives.[vii]

The perpendicular waterfront left for India to pilot in the face of Iran against nuclear proliferation was the indicator of US directive consummately, the truisms and aphorisms of which have been led by the nose by India, which eventually resulted in the vilification of India as regards Iranian nuclear profusion. India savvied scrupulously that the disparagement of US dictate would implant ferocious sequel and acknowledged downrightly the ordinance of the Uncle Sam.

The Bush Administration also warned that the nuclear deal would not be approved by the US Congress if India voted against the EU and US-sponsored resolution. India's vote was appreciated by the US, which termed it a 'significant' move and expressed 'gratitude' for India's support.[viii] India ultimately voted Iran to be 'non-compliance' of NPT safeguards obligations, even while Russia and China abstained. However, the IAEA resolution was significantly diluted at the India's insistence and the final resolution omitted any mention of immediately referring Iran to the UN Security Council. Thus, despite domestic opposition and holding steadfastly to its claim that its vote had nothing to do with the US, India voted with the US in the IAEA as it faced the risk of jeopardizing its strategic ties with Washington if it acted otherwise.[ix] Another reason for India's vote was that it wanted to expose A.Q. Khan's links with Iran and China and Pakistan's role in nuclear proliferation.[x]

Iran Pakistan India (IPI) Pipeline Conundrum : The defilement of Iran Pakistan India Pipeline policy and the desecration of its advancement was the aftermath of US pressure on the part of India as she did not stead with the pipeline, the erstwhile nuance of which was otherwise kick-started by India for the progression of importation of LNG to hone up the cheaper delivery mechanism and rebate of gas price. In order to ameliorate the gas pipeline nexus between India and Iran through the bosom of Pakistan a memo for building the pipeline was signed in 1993 which emerged

abortive thanks to the slapdash repudiation of India. It is an outspoken veracity that it was in response to these energy security challenges and as a partial diversification strategy that the IPI pipeline came into focus. Initially proposed in 1989 to transport gas from Iran to India via Pakistan, the pipeline has run into trouble since then. A memorandum for building the pipeline was signed between India and Iran in 1993. The pipeline would have been four times cheaper than any other pipeline option, even after taking into account transit fees to Pakistan.[xi] However, discussion between India and Iran fell through when Pakistan refused to allow a feasibility study in its exclusive economic zone.[xii]

The Indo-US nuclear deal has played a major role in dampening India's enthusiasm for the IPI pipeline. Pant suggests that it is because of American pressure that India is not proceeding with the pipeline.[xiii]US concerns, he argues stem from fears that the Indo-Iranian energy relationship would revitalize the Iranian energy sector through oil revenues and open up new possibilities for export of energy from the wider Caspian region through Iran, ultimately undermining its policy of isolating Iran as well as the sanctions. The US also warned major oil companies as well as countries that energy deals with Iran could result in sanctions being imposed on them.[xiv] The reliable political excerptions source that the US discouraged India from importing gas from Iran and proved accommodating with regard to the Turkmenistan Afghanistan Pakistan India (TAPI) pipeline as it would make central Asia safer. As such it is as clear a mud that the IPI pipeline has not matured for the rhyme or reason of the Western pressure.

India's oil payments and US Pressure : The poser of the Reserve Bank of India sides with influencing ratiocination which showcases the US hand with regard to steering Indian inclination towards Iran. It is an amaranthine veracity that Iran had been supplying crude oil to India on credit and India was in turn making payments by way of Asian Clearing Union (ACU) in order to safeguard itself being triggered by American Sanctions. Not withstanding this radhamantine mechanism the Reserve Bank of India directives ordained that the like oil payments could no longer be settled by means of the longstanding clearing house system known as the ACU. Which is run by the central banks of nine countries including India and Iran. It was established to facilitate payments among its members for eligible transactions on a multilateral bases, thus economising on the use of foreign exchange reserves and transfer costs, as well as promoting trade among the participating countries. [xv]

The RBI's justification for the circular was that importers and exporters were facing difficulties in making payments to and receiving money from Iran.[xvi]The RBI directive concluded that all payments from imports of crude oil from would have to be settled in any permitted currency bypassing the ACU mechanism. This created a stond in oil payments of Iran as well as in the supply of oil and turned a king pin in the creation of crisis of Indo-Iran relations.

According to media reports the RBI has issued the decree under pressure form the US to act against Iran's nuclear ambitions. The RBI's decision brought the government under pressure form local oil companies as well as Iran. Members of the opposition also criticised the RBI's decision. Consequently, in early 2011 India decided to pay for Iranian oil using Euros through the German based Europisch-Iranische Handels Bank AG (EIH Bank). However, the EIH two buckled under US pressure. Subsequently, India used Turkish and UAE banks to settle its oil debuts with Iran, but these banks were not able to handle such large transactions of money. Therefore, on 28 October 2011, according to the Tehran times, India cleared all its debts through the Gazprombant of Russia. India's decision to stop using the ACU for making oil payments to Iran was hailed in the US. The white house assistant press secretary, Tommy Vietor, said that '[the] Reserve Bank of India has made the right decision to carefully scrutinising and reduce its financial dealings with the Central Bank of Iran', and this latest action adds to the growing list of companies, financial intuitions and

governments that are increasingly concerned about Iran's misuse of trade and financial relationships to support illicit activity, including its nuclear programme'. Thus one again sees a US hand in these decisions. [xvii]

Conclusion : US pressure got made to wring the perverse attitude of India towards Iran for the sake of maintaining the prestige of the former the justifiability of which has affected India to be at daggers drawn with Iran. The antagonistic approach of India towards Iran as regards its nuclear profusion has been established to be consummated at the back and call of US which furthered the rivalry between the nations inter se. India, inter alia, laughed in the wrong side of her mouth concerning not acknowledging the nuclear advancements of Iran and, furthermore, lost its marbles for bulldozing the IPI pipeline strategy with the dire sequel of horrendous pressure of US seeming not fleeting. The perturbing command of US for desecrating the recalibration of pipeline gasification pervaded to succumb the India-Iran nexus. The intrusion of US to backfire India's oil payment transaction with Iran in the semblance of ACU proved Heels of Achilles to be deodorized at ease. The inculcation of US commands by India over Iran is mayhap complished for the sake of her national interest the whence of which stems from India's alfred civil nuclear deal with US. Besides Iran was a spot-on signatory to NPT, and in its animadversion India laughed in the face of Iran by voting drawing a parallel with Iran. Ergo, India machinated against Iran for cementing its ties with U.S. and doomed Iran in enhancing nuclear power. However, after signing civil deal with U.S. India reiterated to help Iran to run riot in nuclear rocketing. The propitious stage for preferment of India-Iranian relations rests with their requited affinity.

References

Ashok Alex, Engaging with Iran: Contemporary Challenges to India's Policy, in R.Sidda Goud's, Manisha Mukherjees's (eds.), India and Iran in Contemporary Relations, P76, 2014.

Fair, C. Christine, Indo-Iranian Relations: What Prospects for Transformation, in Sumit Ganguly's (eds.), India's Foreign Policy: Retrospect and Prospect, P115,2010.

Rajeev Agarwal, Iran's Nuclear Weapons Programme--- How Real is the Threat, in R.Sidda Goud's, Manisha Mukherjees's (eds.), India and Iran in Contemporary Relations, P76, 2014.

Harash V.Pant, the US India Nuclear Pact: Policy, process, and Great Power Politics, P84, 2011.

Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, Strategic Analysis, Vol.36, No. 6, Novemebr December, P904, 2012.

Paul K.Kerr, U.S. Nuclear Cooperation with India: Issues for Congress, CRS Report, 30 July 2008, p. 8, at http://fpc.state.gov/committees/intlrel/hfa23323_of.htm.

Harash V. Pant, The US India Nuclear Pact, no iv. P84, 2011.

Ibid.

Iran-Pakistan -India Gas Pipeline, at http://www.Gulfoilandgas.com/webprol/projects/3dreport.asp?id=100730

Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, P 906, 2012.

Harash V.Pant, the US India Nuclear Pact: Policy, process, and Great Power Politics, P83, 2011.

Ibid.

http://www.rbi.org.in/scripts/FAQViews.aspx?Id=50

http://www.rbidocs.rbi.org.in/.docs/notification/PDFs/C1271210f.pdf.

Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, P 907, 2012

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

ग्रामीण अंचलों में मोबोलाईजेशन सुविधा का ग्रामीण विकास परियोजना में भूमिका का अध्ययन

डॉ. रमेश मंगल
विभा गोयल
पूर्व प्राचार्य (वाणिज्य) प.म.ब.गुजराती व श्री वैष्णव महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
शोधार्थी आर्ट्स एण्ड कामर्स कॉलेजए इन्दौर (म.प्र.) भारत

भारत का आर्थिक विकास ग्रामीण विकास में ही निहित हैं। ग्रामीण अंचलों का विकास किये बिना भारत विश्व आर्थिक विकास की दौड़ में अग्रणी नहीं हो सकता हैं। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास की नियोजन प्रणाली विकास की नियोजन प्रणाली में सदैव अग्रणी रही हैं। ग्रामीण विकास परियोजनायें जिनके लिये प्रारंभ की गई हैं उन ग्रामीण जनता द्वारा सक्रिय रुप से भाग लिया जा रहा हैं क्योंकि योजनाओं के प्रति चेतना दिन प्रतिदिन जागृत हो पायी हैं। सरकार द्वारा योजनाओं को ग्रामीण लोगों में जटिल प्रक्रिया को सरलीकरण द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है व जनसहयोग बैकिंग संस्थाओं व विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा अभिप्रेरित कर पूर्णरुपेण लाभ उठाने हेतु योजनाओं को सफल बनाया जा रहा हैं। जिसमें क्रेडिट मोबोलाईजेशन सुविधा परियोजना का प्रमुख योगदान है जिसके बारे में निम्न में जानेगें।

क्रेडिट मोबोलाईजेशन स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का एक प्रमुख घटक हैं। स्व सहायता समूहों को ग्रेडिंग के जरिये सूचीबद्ध करके चिह्नित बैकों द्वारा क्रेडिट मोबोलाईजेशन सुविधा मुहैया कराई जाती हैं। राशि का बंटन स्वसहायता समूहों को किश्तों के रुप में किया जाता हैं। यही कारण है कि एस.जी.एस.वाय. के अंतर्गत बैंकों की व्यापक भागीदारी होती हैं। बैंकें स्वसहायता समूहों को ऋण सुविधा मुहैया कराने से लेकर कई महत्वपूर्ण कार्यों जैसे – क्लस्तरों का चयन, आधारभूत ढांचा आयोजन, स्वरोजगारियों का चयन, क्षमता निर्माण एवं ऋण पूर्व एवं पश्चात् की कार्यवाहियों में सक्रिय रुप से भागीदारी करती हैं।

प्रत्येक वित्तीय वर्ष के प्रारंभ में क्रेडिट मोबोलाईजेशन की सीमा का एक लक्ष्य निर्धारित किया जाता हैं एवं इस लक्ष्य को पाने का एक न्यूनतम अनिवार्य कार्य होता है जो कि जिला विकास एजेन्सी द्वारा किया जाता हैं। इस निर्धारित लक्ष्य से ऊपर दिये गये ऋणों को एकसकारात्मक उपलब्धि के रुप में देखा जाता हैं। स्वसहायता समूहों को उनकी चयन प्रक्रिया के समय स्थानीय बैंकों के सम्पर्क में लाया जाता है ताकि वे संबंधित बैंक की सेवा क्षेत्र शाखा के अधीन अपना बचत खाता खुलवा सकें। इसके दो फायदे होते हैं। पहला यह कि स्वसहायता समूह बैंकिंग व्यवहार एवं उससे मिलने वाले विभिन्न वित्तीय अवसरों से अवगत हो जाते हैं एवं दूसरा यह कि संबंधित बैंकर स्वयं उन स्वसहायता समूहों से परिचित हो जाते हैं। इन दोनों पक्षों के मध्य जितनी शीघ्रता से सम्पर्क बनेंगे, भविष्य में वे परस्पर उतने ही लाभदायक सिद्ध होते हैं।

विगत वर्षों के उन्नति का अध्ययन :– विगत दशकों में स्वसहायता समूहों के प्रत्यक्ष आँकडे शोधार्थी द्वारा प्राप्त किये गये है जो शोध क्षेत्र में किये गये जिलों के ग्रामीण जनता के साक्षात्कार के आधार पर संपूर्ण रुप से प्राप्त हुए हैं वर्ष 2000 से वर्ष 2008 में एवं वर्तमान स्थिति में ग्रामीण जनता द्वारा परियोजना का 70 प्रतिशत लाभ प्राप्त ग्रामीण विकास के रुप में किया गया है जिसके परिणाम स्वरुप ग्रामीण क्षेत्र प्रगति की और अग्रसर हैं।

अंचल में बैंकिंग व्यवस्था :– प्रायः अंचल के जिलों के अंतर्गत सभी बैंकों ने कृषि व अकृषि कार्यों हेतु ऋण प्रदान किया हैं। जिसमें सबसे अधिक ऋण कृषि व अकृषि कार्यों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने उपलब्ध कराया हैं एवं जिला सहकारी बैंकों द्वारा तुलनात्मक रुप में कम किया गया है किन्तु दोनों ही बैंकों द्वारा ग्रामीण उत्थान हेतु सुविधा उपलब्ध करायी जिसका उपयोग ग्रामीण हितकारी परियोजनाओं में सफलतापूर्वक निवर्हन किया जा रहा हैं।

अंचल में वार्षिक साख योजना के अंतर्गत वर्तमान में वर्षानुसार क्रेडिट मोबोलाईजेशन परियोजनाओं के अध्ययन से पता चलता है कि योजना में बैंकों द्वारा लक्ष्य तथा उपलब्धि में निरन्तर वृद्धि को प्राप्त किया गया। किसानों एवं अन्य ग्रामीण जनता द्वारा ऋण परियोजनाओं का उपयोग भारी मात्रा में किया जा रहा है एवं उत्पादन में वृद्धि ली जा रही हैं।

अंचल में अनुकुल जलवायु मिट्टी एवं सिंचाई के पर्याप्त साधन पाये गये हैं। ग्रामवासियों को ग्रामीण विकास को विकसित करने में बैंकों की पूर्ण मदद से ग्राम विकास को बल दिया गया हैं। साथ ही बैंकों द्वारा

ऋण की मात्रा में निरंतर वृद्धि पाई गई इससे स्पष्ट होता है कि प्रस्तुत अध्ययन से ज्ञान प्राप्त होता है कि ग्रामीण विकास के आधुनिकीकरण एवं तकनीकी वृद्धि में बैंकिंग संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका विद्यमान रही हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में सुझाव :– शोधार्थी द्वारा किये गये शोध अध्ययन में ग्रामीण विकास परियोजनाओं के सफल क्रियान्वयन के अध्ययन में शोधार्थी द्वारा सुझाव हेतु बिन्दु निम्न हैं –

1. योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता।
2. निर्धन ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या नियंत्रण हेतु सुझाव प्रदान करना।
3. योजनाओं के उचित मूल्यांकन हेतु कार्यकारिणी बनाना।
4. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क परियोजना का उल्लेखनीय क्रियान्वयन करना।
5. योजनाओं के प्रचार–प्रसार प्रणाली को सुचारु रुप से व्यवस्थित करवाना।
6. कुशल व प्रशिक्षित व्यक्तियों का चयन बैंकिंग संस्थाओं में करवाना।
7. आरक्षण को हटाकर योग्य व्यक्तियों का चुनाव करना।

उपरोक्त सुझाव शोधार्थी द्वारा शोध अध्ययन में महत्वपूर्ण हैं व ग्रामीण विकास परियोजनाओं को सफलतम व श्रेष्ठतम बनाने में अहम भूमिका निभाते हैं। इसलिए कहा गया हैं :–

जब बनेंगे आदर्श ग्राम।
खुशहाल होगी देश की आवाम।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

ग्रामीण विकास परियोजना : यू.सी. गुप्ता, प्रतीक वर्मा
ग्रामीण विकास कार्यक्षेत्र : कुरुक्षेत्र योजना
वार्षिक व मासिक पत्रिका : इंडिया टूडे, कुरुक्षेत्र, ग्रामीण विकास परियोजना
दैनिक पत्रिका का संकलन : पत्रिका, नईदुनिया, दैनिक भास्कर

शिक्षा संबंधी योजना एवं जनजाति महिला सशक्तिकरण

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

डॉ. शंकरसिंह गोखले
अतिथि विद्वान, राजनीति विज्ञान, सरदार वल्लभ भाई पटेल, शासकीय महाविद्यालय कुक्षी

सारांश :— सम्पूर्ण विश्व में सर्वाधिक जनजातियाँ भारत में ही निवास करती है। भारत युगों से विभिन्न संस्कृतियों का संगम स्थल रहा है। इस कारण भारत को ''प्रजातियों का अजायबघर'' कहा जाता है।

महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य है कि महिला अधिकारिता पूर्ण सम्पन्न बनाया जाये और आत्मनिर्भरता एवं निर्णय प्रक्रिया से जोडना ताकि अपने सम्पूर्ण जीवन के सामाजिक,आर्थिक,राजनैतिक रूप से व्यक्तित्व का विकास कर सके।

जनजाति महिलाओं को शिक्षा संबंधी योजना से राष्ट्र के सामाजिक राजनैतिक आर्थिक जीवन की मुख्य धारा में उचित स्थान मिल सके ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार हो सके।

शोभा विजेन्दर के अनुसार– ''सशक्तिकरण एक प्रक्रिया है इसके अन्दर जनजाति महिलाओं को जागरूक कर उनको सभी क्षेत्रों में सामाजिक आर्थिक,राजनैतिक अवसरों को प्राप्त करना और तत्पश्चात महिलाओं को समान श्रेणी पर लाकर उनकी निर्णय शक्ति एवं एकता को मजबुत बनाकर उन्हें सामूहिक कार्य के लिए प्रेरित करना है।

शिक्षा ही भारतीय महिला सशक्तिकरण के रूप में जनजाति महिलाए आज भी घर की चार दीवारी से बाहर निकल कर राष्ट्र के चहुमुखी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका सकती है।

बहुआयामी प्रयासों के बाद भी प्रदेश की जनजाति महिलाएं गरीबी, भूखमरी, मंहगाई, बेरोजगारी के साथ ही महिला उत्पीडन, अपराध, अपहरण बलात्कार,घरेलु हिंसा, आदि से शोषण जारी है। इन जातियों की महिलाओं तक शिक्षा संबंधी योजना सही रूप से नही पहुच पा रही है।

केन्द्र सरकार द्वारा सितम्बर 2012 में 12 वीं पंचवर्षीय योजनाओं में 8.2 प्रतिशत विकास दर लक्ष्य 2012–17 तक रख है इसमें छात्रवृत्ति योजना 2700 करोड रूपये का खर्च करेगी।

शिक्षा संबंधी योजना व महिला सशक्तिकरण पर भी करोडो रूपये व्यय किया जा रहा है। लेकिन आज भी जनजाति महिलाओं का विकास एवं सशक्तिकरण अभी भी होना बाकी है। विकास योजनाओ का अधिकांश लाभ उन महिलाओं प्राप्त किया जो शिक्षित, नौकरी पैसा, आर्थिक रूप सक्षम एवं राजनेता ने परिवारवाद का बढावा दिया है।

प्रस्तावना :— भारतीय संविधान के अनुच्छेद 341,342 में अनुसूचित जाति एवं जनजाति को पारिभाषित किया है। संविधान में इन जनजाति के कल्याण हेतु उनके सामाजिक हितों की रक्षा हेतु आर्थिक एवं राजनैतिक दशा सुधारने के लिए संविधान में प्रावधान किये गये है।

अनुच्छेद 14 में समानता का अधिकार, लिंग भेदभाव निषेध, अवसर की समानता ,अस्पृश्यता का अंत, संवैधानिक प्रावधान किये गये है।

संवैधानिक स्तर पर लिंग भेदभाव को समाप्त किया और अवसरों को समानता एवं स्वतन्त्रता पर बल दिया है लेकिन व्यवहारिक स्तर पर जनजाति पुरूष–महिलाओं में समानता की खाई आज भी स्पष्ट दिखाई देती है।

86 वें सवैधानिक संशोधन 2002 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 21 (क) जोडकर शिक्षा को मौलिक अधिकार घोषित किया है। राज्य में 6 से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बालक–बालिकाओं को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा। पिछले कुछ वर्ष से अनिवार्य शिक्षा के अंतर्गत 1 से 8 वी तक किसी भी बालक–बालिकाओं को फैल नही कर सकते है। अमर्त्य सेन ने कहा है कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था आपत स्थिति में है। गुणवत्ता सुधार के बजाय शिक्षा क्षेत्र में अपनी भागीदारी बढाना चाहते है।

अनुच्छेद 46 के अनुसार जनजाति के शिक्षा एवं अर्थ संबंधी हितों की रक्षा राज्य द्वारा किये जाने की व्यवस्था है। भारत कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति व जनजाति का 16.20 प्रतिशत है। मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या 2001 के अनुसार अनुसूचित जाति की जनसंख्या 91,55,177 है। जिसमें पुरूषों व महिलाओं की जनसंख्या 48,04,881 तथा 43,50,296 है कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति का 15 प्रतिशत है। अनुसूचित जाति का 2001 के अनुसार कुल साक्षरता दर 58.57 है। पुरूष एवं महिला का 73.33 व 43.28 प्रतिशत है।

मध्यप्रदेश में 2001 के अनुसार कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति जनसंख्या 1,22,33,474 है। जिसमें पुरूष एवं महिला की जनसंख्या 61,95,240 एवं 16,38,234 है। मध्यप्रदेश में 2001 के अनुसार कुल जनसंख्या में से अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का 20.30 प्रतिशत है। इनकी साक्षरता दर 2001 के अनुसार 41 प्रतिशत है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा विकास योजना एवं महिला सशक्तिकरण के सामाजिक आर्थिक विकास एवं राजनैतिक चेतना हेतु सतत प्रयास किये जा रहे है। यद्यपि चुनौती का आकार बहुत बडा है। फिर भी जनजाति महिला सशक्तिकरण के लिए शिक्षा द्वारा उनके जीवन स्तर को उचा उठाने की दिशा में केन्द्र तथा राज्य शासन ने विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं को संचालित किये गये है। जैसे– कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय, राष्ट्रीय सेवा योजना, प्रतियोगी परीक्षा हेतु परीक्षापूर्व प्रशिक्षण,मीन्स कम मेरिट छात्रवृत्ति, राष्ट्रीय प्रतिभा खोज छात्रवृत्ति, उच्च शिक्षा में राजीव गांधी राष्ट्रीय फैलोशिफ,विदेश शोध छात्रवृत्ति,लाडली लक्ष्मी योजना,कन्या साक्षरता प्रोत्साहन,साइकिल वितरण योजना,निःशुल्क योजना, गांव की बेटी योजना, प्रतिभा किरण योजना, पंच परमेश्वर योजना, स्व–सहायता समूह, अम्बेडकर योजना, संत रविदास आवास योजना, आदि जनजाति महिलाओं के लिए शासन ने विभिन्न योजना से लाभान्वित होकर निरन्तर विकास के क्रम में आगे बढ रही है। भविष्य के लिए यह सुखद भी है। लेकिन जनजाति महिलाओं को इन योजनाओं का लाभ उठाने हेतु विभिन्न प्रक्रिया से गुजरना पढता है। भ्रष्ट कर्मचारी एवं अधिकारी होने से लाभ पूर्व ही पैसा खर्च करना पडता है। इस कारण गरीबी जनजाति की महिला इन योजनाओं का लाभ लेने से वंचित रहते है एवं जानकारी का अभाव भी रहता है। अभी भी सरकारी योजनाओं का लाभ उन तक नही पहुच रहा है।

''वूमन इन मार्डन इण्डिया'' में मीरा देसाई कहती है कि किसी देश की महिलाओं की स्थिति ही उस देश की सभ्यता, संस्कृति और समृद्धि की द्योतक है।

भारतीय महिलाओं की स्थिति का इतिहास से पता चलता है कि वैदिक काल महिलाओं की सामाजिक स्थिति अत्यंत उन्नत थी। पुरूषों के समान महिलाओं को अधिकार प्राप्त थे। उत्तर वैदिक काल तथा मध्यकाल में महिलाओ के स्थिति में परिवर्तन हुआ है। और घर की चार दिवारी में कैद रखा है। आधुनिक युग में भारतीय महिलाओं की स्थिति अत्यन्त ही दयनीय हो गई।

अरस्तु ने कहा, '' दास में विचार शक्ति नही होती,महिलाओं में विचार शक्ति होती है। परन्तु निर्णय की शक्ति नही होती है। विभिन्न समाज सुधारक ने जैसे राजाराममोहन राय ,दयानन्द सरस्वती, इश्वरचन्द्र विध्यासागर, केशवचन्द्र सेन आदि ने भारतीय महिलाओं की सामाजिक,शैक्षणिक व कानूनी स्थिति में सुधार हेतु संघर्ष किया और सुधार हुआ है।

नेपोलियन ने कहा था कि, ''तुम मुझे कुछ अच्छी मां दे दो, मैं तुम्हे एक अच्छा राष्ट्र दे सकता हूँ।

भारत में युगों से ही जनजाति के लोग व महिलाओं शोषण, अत्याचार, अपमान, साधनहीनता, भूखमारी, गरीबी, महिला उत्पीडन के शिकार होते रहें है। महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, डॉ. अम्बेडकर जैसे महान समाज सुधारकों ने इनकी दशा सुधार लाने के अथक प्रयास किये है।

वर्तमान में जनजाति महिलाओं के सामाजिक,आर्थिक, राजनैतिक और शैक्षणिक क्षेत्र में अर्थात् राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सभी क्षेत्रों में पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अपने अमूल्य योगदान से देश को प्रगति की नई राहों पर अग्रसर करने हेतु प्रयासरत है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के 68 वे वर्षों के उपरान्त भी जनजाति महिलाओं के विकास की गति अत्यन्त धीमी है। इन महिलाओं को सशक्त एवं सम्मानित करने पर वे राष्ट्र के विकास में अपना योगदान दे सकते है और इनको विकास की मुख्यधारा में जुडे बिना, समाज, राज्य, एवं देश के आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक विकास की कल्पना नही की जा सकती है।

निष्कर्ष :– शिक्षा संबंधी योजना व महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को अगर आगे बढाना है तो जनजाति महिलाओं को सरकारी योजनाओं से अधिकारी व कर्मचारी को नैतिक रूप से सहायता एवं लाभ हेतु प्रोत्साहन करना चाहिए। शिक्षा संबंधी योजना से इन जातियों की महिलाओं को शिक्षा संबंधी कोर्स की फीस माफ कर शेष राशि प्रदान करना एवं उच्च शिक्षा में वित्तीय सहायता एवं छात्रावास की व्यवस्था करना। किसी भी सरकारी योजना का लाभी लेने से पूर्व आधे पैसे खचे करने के बाद असल में मूल राशि उन तक प्राप्त होती है। अगर सरकारी योजना का लाभ लेना है

तो पहले कर्मचारी से लेन देन के बाद बैंक खाते में राशि डालते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. देसाई मीरा, ''वूमेन इप मार्डन इण्डिया'' वोरा एण्ड कम्पनी पब्लिशर्स,बम्बई 1957
2. अरस्तु, नन्दलाल पुस्तक,''राजनीतिक विज्ञान''शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी खजुरी बाजार इन्दौर 2010
3. श्रीवास्तव, डॉ.एन.आर.एन.,''जनजाति भारत'' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2007
4. शशांक द्विवेदी लेख, '' अमर्त्य सेन, दबंग दुनिया प्रकाशित उज्जैन 26 सितम्बर 2013
5. शोभा विजेन्द्र, '' महिला सशक्तिकरण ''लेख समाज कल्याण , अगस्त 2001
6. गौतम भदोरिया, ''म.प्र.सामान्य अध्ययन एक परिचय'' टाटा मैक्ग्रा हिल्स एज्युकेशन प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली 2010
7. पुणेकर, समसामायिकी वार्षिक 2012, पुणेकर पब्लिकेशन, खजूरी बाजार इन्दौर

उज्जैन जिले में संचालित शासकीय योजनाएँ एवं ग्रामीण विकास प्रशासन

सीमा परमार

सारांश :— भारत में विकास संस्थाओं का जाल सा बिछा दिया गया है। सत्ता के सर्वोच्च भिाखर से लेकर आम जनता तक को विकास प्रशासन के कार्यक्रमों में सहभागी बनाया गया है। जिला खण्ड और ग्राम स्तर तक विकास कार्यक्रमों को अधिक विकासोन्मुख बनाने के लिए कार्यक्रम की व्यवस्था की गयी है। विकास प्रशासन की दृष्टि से जिला स्तर पर अभिकरणों और अधिकारियों में जिलाधीश, जिला परिषद्, जिला पंचायत समितियाँ, विकास अधिकारी, खण्ड विकास अधिकारी, प्रसार अधिकारी, ग्राम सेवक, प्रधान आदि महत्वपूर्ण है। विकासशील भारत में स्वतन्त्रता के बाद से लेकर आज तक केन्द्रीय और राज्य सरकारों ने देश की प्रशासनिक व्यवस्था में सामयिक परिवर्तनों के लिए समय—समय पर कितने ही कदम उठाये है। प्रबोधन और उपदेशात्मक स्तर पर पर्याप्त नियोजन देखने को मिलते है। विभिन्न आयोगों और समितियों का गठन हुआ है जिन्होंने प्रशासनिक सुधारो के लिए विभिन्न सिफारिशें की है।[12] इस प्रकार ग्राम विकास के इन विविध आयामों का सफलतापूर्वक नेतृत्व स्थानीय प्रशासन द्वारा किया जाता है। अतः प्रशासन विकास की चुनौतियों का सफलतापूर्वक समाधान कर रहा है।

शब्द कुँजी :— शासकीय योजना, ग्रामीण विकास, ग्राम सभा, मूलभूत आवश्यकता

प्रस्तावना :— भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् ग्रामीण विकास की ओर ध्यान दिया जाना प्रारम्भ हुआ। भारतीय संविधान के अनुच्छेद—40 में प्रांतीय सरकारों को पंचायतों का पुनर्गठन कर उन्हें अधिकार सम्पन्न कर स्वायत्त शासन की इकाई बनाने के लिए आवश्यक निर्देश दिये गये परन्तु इस महत्वपूर्ण कार्य में पंचायतों के बजाय सामुदायिक विकासखण्डों, विकास अधिकारी, नौकरशाहों, विधायकों, सांसदों को अधिक अधिकार दिये गये। अनेक राज्यों में ग्राम पंचायतें तथा न्याय पंचायते गठित की गई परन्तु ग्रामीण विकास की पहल ग्राम पंचायतों के हाथ में नहीं रही।[13]

भारत की विकास यात्रा के 67 साल व्यतीत हो जाने तथा समृद्धि एवं सम्पन्नता की ऊँचाइयों पर पहुँच जाने के बाद भी, न तो इन लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सका है और नहीं ही आगे भविष्य में इन लक्ष्यों को प्राप्त करने की सम्भावना दिख रही है। राष्ट्रीय समृद्धि एवं सम्पन्नता के साथ ही कुपोषण ग्रस्त एवं गरीब लोगों की संख्या का बढ़ते जाना, शिक्षा संस्थानों की वृद्धि के साथ ही कार्य कुशल एवं योग्य लोगों का प्रतिशत कम होना, काम करने वाले लोगों की बढ़ रही आमदनी के साथ ही बेरोजगार और गरीब लोगों के लिए महंगाई का बोझ असहाय होता जाना, कल्याणकारी एवं सामाजिक न्याय आधारित विकास योजनाओं के कार्यान्वयन के साथ ही शोषण एवं भ्रष्टाचार आधारित कार्य संस्कृति का प्रभावी होना, कानून एवं व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण के साथ ही नक्सलवाद, माफियावाद एवं भ्रष्टाचार का भयावह स्वरूप ग्रहण करते जाना, विकासोन्मुख एवं विकास विरोधी भाक्तियों का समान रूप से प्रभावी होना, ऐसी घटनाएँ है, जो आभासित करती है कि हमारा विकास उत्थान एवं पतन दोनों का समान रूप से वाहक बनता जा रहा है।[14]

ग्रामीण विकास मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2013—14 के अनुसार विश्व में सबसे ज्यादा ग्रामीण आबादी भारत की है जो भारत की जनसंख्या का 69ः अर्थात् 833 मिलियन है। भारत की ग्रामीण आबादी विश्व की आबादी का लगभग 12ः है, जो कि यूरोप की कुल आबादी से भी ज्यादा है। इसके अलावा ग्रामीण भारत विविधताओं से भरपूर है। गांवों के आकार में काफी अंतर है, वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार 32.95ः गांवों की आबादी 500 से भी कम है जबकि 58.17ः गांव की आबादी 2000 से अधिक है। इस ग्रामीण आबादी में से लगभग 80ः आबादी कृषि पर निर्भर है। फिर भी ग्रामीण क्षेत्रों में में गरीबी वर्ष 1999—2010 के बील लगभग 6.2ः थी। गरीबों की कुल संख्या में बेहद गरीबों का प्रतिशत भी वर्ष 1980 में आधे से अधिक से कम होकर वर्ष 2010 तक लगभग एक तिहाई रह गया।[15]

भारत में लगभग 6 लाख गांव है, जिसमें 74.3 करोड़ (वर्ष 2001) ग्रामीण जनसंख्या मे एक चौथाई से अधिक व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे जीवन—यापन कर रहे हैं। कुल ग्रामीण जनसंख्या में 31 करोड़ व्यक्ति मजदूर हैं, जिनमें 8.08 करोड़ सीमांत मजदूर भी सम्मिलित हैं। साथ ही 12.47 करोड़ काश्तकार, 10.24 करोड़ खेतीहर मजदूर तथा 1.21 करोड़ घरेलू उद्योग मजदूर के रूप में विवशतापूर्ण जीवन व्यतीत करने को

[12]अवस्थी, विकास प्रशासन, पूर्व उद्धृत, पृ.क्र.—112, 113

[13]सबलोक, संदीप, पंचायती राज में ग्रामीण विकास, अमन प्रकाशन, सागर, 2002, पृ.क्र.—1

[14]मिश्र, सच्चिदानन्द, भारत में विकास : दशा एवं दिशा, लोक प्रशासन अर्द्धवार्शिक भाोध पत्रिका, आईआईपीए, नई दिल्ली,जुलाई—दिसम्बर, 2011, पृ.क्र.—45

[15]www.rural.nic.in, वार्षिक रिपोर्ट, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, 2013—14, पृ.क्र.—IV

अभिशप्त है।[16] जबकि सामुदायिक विकास कार्यक्रम स्वतंत्रता के पश्चात 1952 में ग्रामीण विकास के लिए एक आंदोलन था। जहाँ तक स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण विकास की समीक्षा करनी हो तो पहले 20वीं सदी के प्रारंभिक दशकों में उठाये गये कदमों पर दृष्टि डालना उचित होगा। क्योंकि इनके बगैर हमारा मूल्यांकन अधुरा सा लगेगा।

भारत के संविधान में भाग–4 में भारत को एक लोक कल्याणकारी राज्य के रूप में स्थापित करने की परिकल्पना की गई है। संविधान के भाग– 4 के अनुच्छेद 36 से 51 में राज्यों के लिए नीति–निर्देशक तत्वों का वर्णन है, ये तत्व न्याय योग्य न होते हुये भी सरकार के तत्वों का उल्लेख है, जिन्हें सरकार को अपनी नीतियों के निर्माण में ध्यान रखना है। अनुच्छेद 40 में राज्य को ग्राम पंचायतों के गठन और उन्हें ऐसी शक्तियाँ देने का निर्देश दिया गया है, जिससे उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में विकसित होने के अवसर मिले और ग्राम स्तर पर ग्राम निवासियों की स्वशासन में सहभागिता बढ़े। इसी प्रकार अनुच्छेद 48 में राज्य को कृषि और पशुपालन के विकास के लिए उपाय करने का निर्देश है। अनुच्छेद 46 में दुर्बल वर्गो को सामाजिक न्याय उपलब्ध कराने तथा अनुच्छेद 47 में पोशाहार के स्तर को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य में सुधार को राज्य का प्राथमिक कर्तव्य बताया गया है।

ग्रामीण विकास और लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को साथ देखने के लिए हम ग्रामीण विकास के इतिहास और जहाँ से ग्रामीण विकास की बात शुरू की गई। उन पक्षों को हम दो भागों में विभाजित कर सकते है– पहला सामुदायिक योजना से पहले लागू करने के प्रयास और दूसरा उसके बाद के लिये किये गये प्रयास। फिर पहले भाग को हम पुनः 1921–1930 की अवधि जिसे अग्रणी कहा जा सकता है, और दूसरा 1930–1952 की अवधि जिसे परीक्षण की अवधि कहा जा सकता है। इस अवधि में कुछ ऐसे सरकारी और गैर सरकारी कदम उठाये गये, जिन्होंने बाद में चलकर सामुदायिक विकास कार्यक्रम का स्वरूप दिया और हमारे संविधान में भी उनका यथा स्थान प्रावधान किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद किए गए प्रयास यानि 1952 के प्रयासों को हम फिर तीन भागों में विभाजित कर सकते है– प्रशासकीय अवग्रहण मंच (1952–1955), तकनीक समन्वित मंच (1956–1957), लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण 1958 से वर्तमान के नये पंचायती राज और ग्रामीण विकास तक।

शासन द्वारा भारत में ग्रामीण विकास के लिए 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम और 1953 में राष्ट्रीय प्रसार सेवा योजना प्रारम्भ की गई। इन कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों में आत्मनिर्भरता एवं परस्पर सहयोग की भावना विकसित करना था। परंतु जैसे–जैसे समय व्यतीत होता गया तो यह अनुभव किया जाने लगा कि ये कार्यक्रम जनता के कार्यक्रम न होकर सरकारी कार्यक्रम बन गये है। सरकार की ओर से नियुक्त विभिन्न मूल्यांकन समितियों ने भी ऐसे ही प्रतिवेदन सरकार को प्रस्तुत किये कि ये कार्यक्रम जन–जन के कार्यक्रम बनने में असफल रहे है। प्रथम पंचवर्षीय योजना 1951 में जब लागू की गई थी तो लोगों में काफी उत्साह था, लेकिन जब इसका मूल्यांकन किया गया तो बहुत सी कमियां सामने आई। इन कमियों को दूर करने के लिए बलवंतराय मेहता समिति का गठन 1957 में किया गया और इस समिति ने अपनी संस्तुती में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की बात कही और इसके बाद लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले से प्रारंभ किया गया।[17] यहाँ से ग्रामीण विकास के लिए स्थानीय स्वशासन संस्थाओं ने महत्वपूर्ण योगदान दिया।

अध्ययन के उद्देश्य :–

1. विकास कार्यक्रमों के लाभ का वास्तविक जरूरतमन्द व्यक्तियों तक पहुँच का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण विकास के लिए संचालित योजनाओं एवं कार्यक्रमों के संबंध में जानकारी प्राप्ति के लिए विभिन्न साधनों का अध्ययन।

शोध विधि :– मध्यप्रदेश के उज्जैन जिले को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित कर प्रस्तुत अध्ययन हेतु सम्मिलित किया गया। शोध अध्ययन में सामाजिक शोध अध्ययन की विधि के अन्तर्गत शोध प्ररचना का निर्माण कर शोध उद्देश्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए वर्णनात्मक शोध प्ररचना का उपयोग किया गया। साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण कर समंक एकत्रित किये गये। समंक एकत्रित करने के लिए दो विधियों का उपयोग किया गया– प्राथमिक समंक एकत्रित करने के

[16]कटारिया, सुरेन्द्र, भारत निर्माण में पंचायती राज की भूमिका : पंचायती राज विकास का राज, कुरूक्षेत्र, मासिक पत्रिका, पूर्व उद्धृत, अगस्त, 2008, पृ.क्र.–3

[17]सिसोदिया, यतीन्द्र सिंह, पंचायत राज एवं अनुसूचित, जाति महिला नेतृत्व, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000, पृ.क्र.–101

लिए साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से शोधार्थी द्वारा उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क पर शोध विषय से सम्बन्धित आँकड़े एकत्रित किये गये साथ ही अवलोकन विधि समूह चर्चा के माध्यम से भी प्राथमिक समंक एकत्रित किये गये। समंक संकलन हेतु उन व्यक्तियों से अनौपचारिक साक्षात्कार किया गया है, जिन्हें प्रस्तुत विषय का प्रत्यक्ष ज्ञान, संबंध व अनुभव है। द्वितीयक समंको में पत्र–पत्रिकाएँ, पुस्तकें, शोध पत्र एवं पत्रिकाएँ, इन्टरनेट, न्यूजपेपर इत्यादि से द्वितीयक समंक एकत्रित किए गए। तत्पश्चात् समंको को व्यवस्थित करने हेतु मास्टर चार्ट का निर्माण किया गया। जिसके आधार पर सारणीयन किया गया तथा उसका विश्लेषण किया गया। अध्ययन विषय के संबंध में वास्तविक तथ्यों की प्राप्ति हेतु एक वैज्ञानिक प्रविधि को अपनाया गया है जिसमें साक्षात्कार अनुसूची तथा प्रत्येक निरीक्षण के साथ सामूहिक चर्चा को अध्ययन का आधार बनाया गया है। इस प्रकार सामाजिक शोध विधि के द्वारा शोध अध्ययन का कार्य सम्पन्न किया गया। शोध अध्ययन के अन्तर्गत भोध विधि में 150 उत्तरदाताओं जिनमें से 75 उत्तरदाताओं (ग्राम सभा के सदस्य) का चयन दैव निदर्शन एवं 75 पंचायत प्रतिनिधि 75 उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के आधार पर किया गया। इस प्रकार सामाजिक शोध विधि के द्वारा अध्ययन का कार्य सम्पन्न किया गया।

तालिका 1

पंचायत राज व्यवस्था से लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति से संबंधित विवरण

क्र.	मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	117	78.00
2	नहीं	33	22.00
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**
	यदि हाँ तो किस प्रकार से?		
1	रहने के लिए मकान की व्यवस्था की गई	56	47.86
2	पीने के पानी की व्यवस्था की गई	23	19.65
3	बिजली की व्यवस्था की गई	17	14.52
4	सड़क मार्गों की व्यवस्था की गई	16	13.67
	कुल योग	**N = 117**	**100.00**

पंचायत राज व्यवस्था से लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होने से सम्बन्धित उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि 78 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि इस व्यवस्था से ग्रामीण लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हुई है ऐसा अधिकतर उत्तरदाताओं का मानना इसलिए है क्योंकि इनमें अधिकतर उत्तरदाता पंचायतों के प्रतिनिधि एवं कर्मचारी है। इन उत्तरदाताओं से पूँछे जाने पर कि किस प्रकार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हुई है तो 47.86 प्रतिशत उत्तरदाता मानते है कि सरकार ने ग्रामीणों के रहने के लिए इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत मकानों की व्यवस्था की है। 19.65 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि पीने के पानी की व्यवस्था की गई। उसी प्रकार 14.52 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा कि बिजली की व्यवस्था की गई है तथा 13.67 प्रतिशत उत्तरदाता मानते है कि ग्रामों में सड़कों की व्यवस्था की गई है।

पंचायत राज व्यवस्था से लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हुई है ऐसा मानना 22 प्रतिशत उत्तरदाताओं का है।

तालिका 2

आप शासन की योजनाओं से किस प्रकार से लाभ की उम्मीद करते है?

क्र.	शासन की योजनाओं से लाभ की उम्मीद	आवृत्ति	प्रतिशत
1	वित्तीय लाभ	7	4.66
2	रोजगार के अवसर	12	8.00
3	उपर्युक्त सभी	131	87.33
	कुल योग	**N = 150**	**100**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि 4.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उन्हें शासन की योजनाओं से वित्तीय लाभ की आवश्यकता है, 8 प्रतिशत उत्तरदाता रोजगार के अवसरों की उम्मीद करते है, तथा 87.33 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक लाभ के साथ–साथ उपर्युक्त दोनों प्रकार के लाभों की उम्मीद सरकार से करते है।

तालिका 3
ग्राम विकास के सम्बन्ध में आपके क्या विचार है

क्र.	ग्राम विकास के सम्बन्ध में विचार	आवृत्ति	प्रतिशत
1	आर्थिक विकास	4	2.66
2	सामाजिक सम्मान	8	5.33
3	शिक्षा के स्तर में वृद्धि	6	4.00
4	उपर्युक्त सभी	132	88.00
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

ग्राम विकास के सम्बन्ध में उत्तरदाताओं के विचारों से सम्बन्धित उपर्युक्त तालिका के समंकों से यह स्पष्ट होता है कि 2.66 प्रतिशत उत्तरदाता ग्राम विकास को आर्थिक विकास के रूप में देखते है, 5.33 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक सम्मान को ग्राम विकास समझते है, 4 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि शिक्षा के स्तर में वृद्धि होना ही ग्रामीण विकास है तथा 88 प्रतिशत भौतिक सुविधाओं का विकास के साथ उपर्युक्त सभी प्रकार के विचारों को ग्रामीण विकास के रूप में देखते हैं।

तालिका 4
पंचायत के द्वारा प्राथमिकता के आधार पर हल की जाने वाली समस्या

क्र.	गांव की प्राथमिकता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पेय जल व्यवस्था	10	6.66
2	सड़क निर्माण कार्य	16	10.66
3	रोजगार की व्यवस्था	83	55.33
4	ग्राम की स्वच्छता/सफाई	19	12.66
5	शौचालयों का निर्माण	7	4.66
6	स्वास्थ्य सुविधा	2	1.33
7	सार्वजनिक वितरण प्रणाली का उचित क्रियान्वयन	6	4.00
8	आवश्यक भवनों का निर्माण/मरम्मत	7	4.66
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में उत्तरदाताओं से अनुसंधाकर्ता द्वारा पूँछे जाने पर कि आपके विचार से गाँव की ऐसी कौन–सी समस्याएँ है जिनको पंचायत के द्वारा प्राथमिकता के आधार पर हल किया जाना चाहिए तो सभी उत्तरदाताओं ने अपने विचारानुसार जिन समस्याओं को दूर किया जाना चाहिए उन्हें प्राथमिकतानुसार बताने का प्रयास किया। इन उत्तरदाताओं में से 6.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने पेयजल की समस्या को प्राथमिकता दी, 10.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सड़क निर्माण कार्य सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी, 55.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने रोजगार सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी, 12.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने ग्राम की स्वच्छता/सफाई सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी, 4.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शौचालय सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी, 1.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वास्थ्य सुविधा सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी, 4 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली का उचित क्रियान्वयन नहीं होने सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी तथा 4.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने आवश्यक भवनों का निर्माण/मरम्मत सम्बन्धी समस्या को प्राथमिकता दी।

तालिका 5
ग्राम पंचायत का कार्य ग्रामसभा द्वारा की गयी सिफारिशों का क्रियान्वयन

क्र.	ग्राम सभा सिफारिशों का क्रियान्वयन	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	94	62.66

2	नहीं	56	37.33
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से यह स्पष्ट होता है कि 62.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इस बात की जानकारी है कि ग्राम पंचायत का कार्य ग्रामसभा द्वारा की गयी सिफारिशों को कार्यान्वित करना है तथा 37.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इस बात की जानकारी नहीं है। अतः कहा जा सकता है कि अधिकतर उत्तरदाता ग्रामसभा द्वारा की गयी सिफारिशों के कार्यान्वियन के बारे में सामान्य जानकारी रखते हैं।

तालिका 6

क्या आप लाड़ली लक्ष्मी योजना से परिचित है?

क्र.	लाड़ली लक्ष्मी योजना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	127	84.66
2	नहीं	23	15.33
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 84.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं को लाड़ली लक्ष्मी योजना के बारे में समान्य जानकारी है तथा केवल 15.33 प्रतिशत उत्तरदाता ही ऐसे है जिन्हें इस योजना के बारे में कोई जानकारी नहीं है। अतः स्पष्ट है कि अधिकतर उत्तरदाता लाड़ली लक्ष्मी योजना के बारे में सामान्य जानकारी रखते है।

तालिका 7

क्या आपके गांव में जननी सुरक्षा योजना का लाभ लिया जा रहा है?

क्र.	जननी सुरक्षा योजना से लाभ	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	141	94.00
2	पता नहीं	9	6.00
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि 94 प्रतिशत उत्तरदाता मानते है कि उनके ग्रामों में जननी सुरक्षा योजना का लाभ लिया जा रहा है। इस योजना के बारे में उत्तरदाताओं को पता है कि सरकारी अस्पताल की गाड़ी घर तक आती है और अस्पताल तक सुरक्षित पहुँचाती है। और सरकार से कुछ आर्थिक सहायता भी प्राप्त होती है। इसी प्रकार 6 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इस बारे में जानकारी नहीं है।

तालिका 8

इंदिरा आवास योजनांतर्गत किन परिवारों को लाभ प्राप्त होता है?

क्र.	इंदिरा आवास योजना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	स्वयं के कच्चे मकान वाले को	10	6.66
2	आवासहीन परिवार को	129	86.00
3	योजना की जानकारी नहीं	11	7.33
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि 6.66 उत्तरदाताओं का कहना है कि स्वयं के कच्चे मकान वाले व्यक्तियों को इंदिरा आवास योजना का लाभ प्राप्त होता है। इससे स्पष्ट होता है कि इन उत्तरदाताओं को इस योजना के बारे में सामान्य जानकारी नहीं है। 86 प्रतिशत उत्तरदाताओं को पता है कि आवासहीन परिवार को इस योजना का लाभ प्राप्त होता है तथा 7.33 प्रतिशत उत्तरदाता इस योजना से अनभिज्ञ है। अतः कहा जा सकता है कि अधिकतर उत्तरदाता इंदिरा आवास योजना के बारे में सामान्य जानकारी रखते हैं कि किन–किन परिवारों को इस योजना का लाभ मिलना चाहिए?

तालिका 9

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मनरेगा के अन्तर्गत कितने दिनों तक रोजगार उपलब्ध कराने का प्रावधान है?

क्र.	महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	100 दिन	150	100.00
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**
इस योजना हेतु वास्तविक हितग्राही कौन से परिवार है?			
1	प्रत्येक परिवार के व्यस्क सदस्य	132	88.00
2	नहीं जानते	18	12.00
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में शत प्रतिशत उत्तरदाताओं को पता है कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत 100 दिनों का रोजगार दिया जाता है। परन्तु इनमें से अधिकतर उत्तरदाताओं का कहना है कि एक वर्ष में पंचायत द्वारा 100 दिनों का रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जाता। सभी उत्तरदाताओं में से 88 प्रतिशत उत्तरदाता मानते है कि इस योजना हेतु वास्तविक हितग्राही प्रत्येक परिवार के व्यस्क सदस्य है तथा 12 प्रतिशत उत्तरदाताओं को यह जानकारी नही है। अतः कहा जा सकता है कि अधिकतर उत्तरदाता महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के बारे में सामान्य जानकारी रखते है।

तालिका 10

क्या आप 'दीनदयाल अंत्योदय उपचार योजना' के बारे में जानते है?

क्र.	दीनदयाल अंत्योदय उपचार योजना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	118	78.66
2	नहीं	32	21.33
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

अध्ययन क्षेत्र में अध्ययन के पश्चात् उपर्युक्त तालिका के समंकों से यह स्पष्ट होता है कि 78 प्रतिशत उत्तरदाता दीनदयाल अंत्योदय उपचार योजना के बारे में जानते हैं तथा 21.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इस योजना के बारे में कुछ जानकारी नहीं है। अतः स्पष्ट होता है कि अधिकतर उत्तरदाता इस योजना के बारे में सामान्य जानकारी रखते हैं।

तालिका 11

'कपिलधारा योजना' किस क्षेत्र से संबंधित है?

क्र.	कपिलधारा योजना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	सिंचाई सुविधा	116	77.33
2	नहीं जानते	34	22.66
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से यह स्पष्ट होता है कि 77.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कपिलधारा योजना सिंचाई सुविधाओं से सम्बन्धित है तथा 22.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इस योजना के बारे में जानकारी नही है। अतः स्पष्ट होता है कि अधिकतर उत्तरदाता कपिलधारा योजना के बारे में जानते है।

तालिका 12

प्राकृतिक आपदा पड़ने पर प्रशासन ग्रामीणों की सहायता करता है?

क्र.	प्राकृतिक आपदा	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	87	58.00
2	नहीं	63	42.00
	कुल योग	**N = 150**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका के समंकों से स्पष्ट होता है कि 58 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि प्राकृतिक आपदा पड़ने पर प्रशासन ग्रामीणों की सहायता करता है तथा 42 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसा नहीं मानते है। जो उत्तरदाता ऐसा नहीं मानते है उन्होंने यह भी बताया कि जब गरीब किसानों की पूरी फसल चौपट हो जाती है तो उन्हें पूर्णतः पर्याप्त मुआवजा भी नहीं मिल पाता, फसलों की सिंचाई के लिए ग्रामों में सरकार द्वारा अब तक ठीक से तालाबों की व्यवस्था भी नहीं की गई है ऐसे में और क्या सरकार से सहायता की गुजारिश की जा सकती है।

निष्कर्ष :– निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पंचायत राज व्यवस्था से ग्रामीणों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्णतः पूर्ति नहीं हो पाई है परन्तु ये संस्थाएँ मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमेशा प्रयासरत है।सरकार के सभी प्रकार के लाभों की उम्मीद अधिकतर उत्तरदाता करते हैं। क्योंकि लाभ के अन्य स्त्रोत ग्रामीणों के पास बहुत कम होते हैं। आर्थिक विकास के साथ भौतिक सुविधाओं का विकास, सामाजिक सम्मान एवं शिक्षा के स्तर में वृद्धि को अधिकतर उत्तरदाता ग्रामीण विकास के रूप में देखते हैं। अधिकतर उत्तरदाताओं ने रोजगार सम्बन्धी समस्या को पंचायत द्वारा सबसे पहले हल किए जाने की सलाह दी। उनका कहना है कि समस्याएँ तो ग्रामों में है ही और सभी समस्याओं को पंचायतों द्वारा एक साथ हल नहीं किया जा सकता, फिर भी एक–एक करके समस्याओं को पंचायतों द्वारा हल किया जाना चाहिए। ग्रामसभा द्वारा की गयी सिफारिशों के कार्यान्वयन के बारे में सामान्य जानकारी अधिकतर उत्तरदाता रखते हैं। उत्तरदाता लाड़ली लक्ष्मी योजना, जननी सुरक्षा योजना, इंदिरा आवास योजना के बारे में सामान्य जानकारी रखते हैं। उत्तरदाता सामान्य जानकारी रखते हैं कि किन–किन परिवारों को इस योजना का लाभ मिलना चाहिए? उत्तरदाताओं का मानना है कि प्राकृतिक आपदा पड़ने पर प्रशासन ग्रामीणों की सहायता करता है। सरकार प्राकृतिक आपदाओं से ग्रामीणों की मदद तो करती ही है परन्तु इस ओर और अधिक ध्यान देने की जरूरत है।

सन्दर्भ :–

1. अवस्थी, आनंद प्रकाश, विकास प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2006.
2. सबलोक, संदीप, पंचायती राज में ग्रामीण विकास, अमन प्रकाशन, सागर, 2002.
3. मिश्र, सच्चिदानन्द, भारत में विकास : दशा एवं दिशा, लोक प्रशासन अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका, आईआईपीए, नई दिल्ली, जुलाई–दिसम्बर, 2011, पृ.क्र.–45.
4. www.rural.nic.in, वार्षिक रिपोर्ट, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, 2013–14, पृ.क्र. –IV.
5. कटारिया, सुरेन्द्र, भारत निर्माण में पंचायती राज की भूमिका : पंचायती राज विकास का राज, कुरूक्षेत्र, मासिक पत्रिका, अगस्त, 2008, पृ.क्र.–3.
6. सिसोदिया, यतीन्द्र सिंह, पंचायत राज एवं अनुसूचित, जाति महिला नेतृत्व, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000, पृ.क्र.–101.

कृषि आधारित उद्योगों का इतिहास विकास एवं वर्तमान स्थिति

अमर सिंह मेहरा

कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाले देशों में औद्योगीकरण के माध्यम से ही आर्थिक विकास के उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। विकासशील देशों के परिपेक्ष्य में अनुमान है कि कृषि की उन्नति औद्योगीकरण के माध्यम से संभव है, क्योंकि विकासशील देशों हेतु औद्योगिक विकास ही विकास का पर्याय है।[18] भारत जैसे कृषि प्रधान देश में औद्योगीकरण के माध्यम से ही बेरोजगारी की समस्या को हल किया जा सकता है वहीं क्रय शक्ति में वृद्धि करके सामान्य जन के जीवन स्तर में वृद्धि होगी। अतएव औद्योगिक विकास ही समग्र विकास का आधार है। राष्ट्र नायक पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कारखानों को तीर्थ कहा था। सन् 1953 में नेहरूजी ने कहा था कि ''वास्तविक प्रगति अंत में औद्योगीकरण पर निर्भर रहनी चाहिए।''

कृषि आधारित उद्योगों के विकास की दशा :– कृषि आधारित उद्योगों का प्रत्यक्षतः सम्बंध कृषि से होता है। आशय यह है कि, यदि कृषि की दशा उत्तम होगी तो उद्योगों के लिये आवश्यक अन्य दशायें अनुकूल होने पर उद्योगों की दशा अच्छीं हो सकती है, क्योंकि उद्योगों की दशा हेतु कृषि की दशा बहुत कुछ उत्तरदायी है। औद्योगिक इकाईयाँ कच्चे माल की उपलब्धता वाले क्षेत्रों में सामान्यतः स्थापित की जाती है। उद्योगों के लिये कच्चे माल की प्राप्ति तथा पूर्ति औद्योगिक इकाई हेतु ऊर्जा के समान शक्ति प्रदायक स्त्रोत है क्योंकि ऊर्जा के अभाव में कोई शसक्त नहीं हो सकता है वही स्थिति कच्चे माल एवं उद्योगों की है। अतएव उद्योगों का विकास कच्चे माल एवं अन्य दशाओं पर आश्रित है वहीं कच्चें माल की प्राप्ति तथा पूर्ति कृषि विकास पर आधारित है। अप्रत्यक्ष रूप से कृषि का विकास ही उद्योगों का विकास है। भारत देश आज के विकसित देशों की अपेक्षा पुराना देश है। इसकी कृषि कई शताब्दी पहले से ही सापेक्षित दृष्टि से परिपक्वता की स्थिति में पहुँच चुकी थी और उस समय देश में कृषि तथा उद्योगों में संतुलन था, जिससे कृषक वर्ग की दशा उतनी खराब नहीं थी जितनी आज है। कृषि एवं कृषकों की सुदृढ़ता 18वीं शताब्दी के मध्य तक बनी रही लेकिन अंग्रेजों की घुसपैंठ के कारण यहाँ की अर्थव्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गई और कृषि तथा निर्माण उद्योगों में सहयोग समाप्त हो गया। नरसिंहपुर जिले एवं सिवनी जिले में कृषि आधारित अनेक औद्योगिक इकाईयों संचालित थी किन्तु ये औद्योगिक इकाईयाँ कुटीर उद्योग के रूप में कस्बा बस्तियों तक सीमित थी, जो कृषि के विकास का प्रमाण है अतएव अतीत काल में कृषि उन्नत अवस्था में थी इसलिये कृषि आधारित उद्योगों का अस्तित्व था यदि कृषि विकसित नहीं होती तो उद्योगों का अस्तित्व भी नहीं होता क्योंकि एक दूसरे का पारस्पारिक संबंध है।

कृषि आधारित उद्योगों का विकास :– कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाले राष्ट्रों में कृषि आधारित उद्योग अनेक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इन देशों के आर्थिक विकास का आधार कृषि ही हो सकती है। उन देशों का समस्त अर्थतंत्र कृषि के चतुर्दिक घूमता है। कृषि उनके लिये भरण पोषण का साधन नाम न होकर आर्थिक परिवेश को सृजित करने का उपागम है। यहाँ की सरकारों एवं अर्थ शास्त्रियों ने संतुलित आर्थिक विकास हेतु आधुनिकीकरण के परिपेक्ष्य में कृषि के परिवर्तित स्वरूप को अंगीकार करके कृषि आधारित उद्योगों को आधार बनाया है। कृषि के माध्यम से उद्योगों को नई दिशा देकर सबका कल्याण करते हुए विकास की दशा को अनुकूल दिशा प्रदान की है।

कृषि आधारित उद्योगों का इतिहास :– कृषि आधारित उद्योगों की जड़े सिन्धु घाटी सभ्यता के काल से आरम्भ होती है। इतिहास कारों ने सिन्धु घाटी सभ्यता का काल 3250–2750 ई.पू. के मध्य बताया गया है। यह सभ्यता पूर्णरूपेण नगरीय सभ्यता थी। इसका ज्ञान हमें अवशेषों, वर्तनों, जेवरों, खिलौनों को देखकर होता है। यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि था कृषि में खाद्यान्नों के साथ–साथ कपास का उत्पादन करते थे। इनका व्यापार मेसोपोटामिया से होता है। इनके नगरों में जुलाहा रहता था, जो कपड़ों को बुनता था। लोग सूती, ऊनी कपड़े पहनते थे। यहाँ के निवासी सिलाई करना जानते थे। गेहूँ और जौं को पीसने के लिए चक्कियों की व्यवस्था थी।[19] आर्यों की सभ्यता यद्यपि ग्रामीण सभ्यता थी, जिसके अवशेष भारतीय जन जीवन एवं ग्रामीण क्षेत्र में आज भी अल्पांश में विद्यमान है। वैदिक युग में अन्यान्यय व्यवसायों में कपड़ा बुनना

1. Ashok Kumar M.: Rural Industrialization in India : New Delhi : Mittal Publication : 1987 : Page- 102-103.

2. Majumdar R.C. : An Advanced History of India : New Delhi : Macmillan India Limited : 1946 : Page 135-140.

और उसे रंगना भी व्यवसाय था। ई.पू. छठी शताब्दी में उत्तर भारत अनेक गणतंत्रों एवं कुलीन तंत्रों में विभक्त था। इन राज्यों की राजधानियों तथा मुख्य नगरों, गाँवों में कृषि आधारित उद्योगों की कुटीर इकाईयाँ संचालित थी।[20]

मगध साम्राज्य का समय राजनैतिक उथल–पुथल का समय था, लेकिन कुटीर उद्योग में रोजमर्रा की वस्तुओं का निर्माण हो रहा था। कुटीर उद्योगों की अधिकांश इकाईयाँ कृषि आधारित उद्योगों की थी। मौर्य शासन काल उन्नति का समय था। व्यापार बहुत बढ़ा–चढ़ा था कुछ वस्तुओं का उत्पादन शासन स्वयं करता था। गुप्त शासकों ने उत्तर, उत्तर–पश्चिम भारत पर लगभग 200 वर्षों तक शासन किया। गुप्त शासक कला प्रिय उच्च शासक था। उनके शासन काल में शांति रही और ऐसा माना जाता है कि शांतिकाल में उद्योग–धंधों से स्वर्ण युग कहा जाता है। इसी अंतराल में चीनी यात्री फाहियान (यात्रा समय 400–411 ई.) भारत आया उसने मथुरा, समकस्य, कन्नौज, पाटिलीपुत्र, नालंदा, सारनाथ की उन्नति का उल्लेख किया है। वहीं भड़ौंच, उज्जयिनी, विदिशा, प्रयाग, बनारस, गया, वैशाली, आदि प्रमुख औद्योगिक स्थल थे।[21] हर्षवर्धन के पश्चात् सन् 647 से 1200 ई. तक उत्तर भारत में तथाकथित राजपूत युग रहा। इन शासकों ने अपने–अपने शासन क्षेत्रों में उद्योग धंधों की उन्नति की। इस समय कन्नौज का साम्राज्य, आयुध वंश के काल में कन्नौज एवं उसके निकटवर्ती क्षेत्र प्रतिहार वंश के काल में जोधपुर, भड़ौंच व नान्दीपुरी, उज्जैन प्रमुख औद्योगिक केन्द्र थे। सन् 1206 तक कृषि आधारित उद्योगों का व्यापक प्रचार–प्रसार था। प्रत्येक गांव में किसी न किसी कृषि उद्योग की औद्योगिक इकाई स्थापित होती थी, क्योंकि इन इकाईयों के उत्पादन का वितरण स्थानीय क्षेत्रों में होता था तथा अधिकता होने पर गांव या क्षेत्र से बाहर निर्यात कर दिया जाता था। सन् 1206 से भारतीय इतिहास में एक नये युग का सूत्रपात हुआ।

भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना से भारत का व्यापार गजनी, फारस, अरब, खुरासान, बल्ख तक व्यापार होने के कारण कृषि आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन मिला क्योंकि भारतीय वस्तुयें विशेषकर कपड़ा, मसाले, गुड़, शक्कर, मिश्री की विदेशों में बहुत माँग थी।[22] मुगलकाल में कृषि आधारित उद्योगों की स्थिति का विश्लेषण इस प्रकार किया है – One of the most important factors in the economic history of India during the period under review was the extensive and varied industrial activity of the people. which besides supplying the needs of local aristocracy and merchants could meet the demands of tradres coming from Europe and other parts of Asia. By for the most impartant industry in India during this period was the manufacture of catton cloth. The principal centres of cotton manufacture were distributed thoughout the country as for example at some places on the coromandal coast at patan in Gujrat, Burhanpur in Khandesh, Jaunpur, Beares, Patna and some other places in the United Provinces and Bihar and many cities and villageed in Orissa and Bangal. The whole country from Orissa to East Bangal looked like a big cotton fectory and the Dacca district was specially reputed for its delicate muslim fabrics "the best and fines cloth made of cotton. "that was in all India. Pelseter notes that at chabaspur and sonargoon in East Bangal". All live by the weaving industry and the produce has the hightest reputation and quality. Further as both berrier and pelseart tell us they suffered from harsh treatment at the hands of the nobles and offers who forced them to sell goods at low prices and exacted from them forbidden abwabs. This deprived the weavers and craftmen of the benefit of economic profit from their occupation. though the taste of the nobles for high class manufactures kept up the tradition of their quality. सन् 1707 के पश्चात् के जितने भी शासक हुए हैं वे सभी उत्तरोत्तर निर्बल होते गये और किसी भी प्रकार के विकास में उनका योगदान नहीं रहा है ऐसा तथ्यों से प्रमाणित हो रहा है।

मराठा शासकों ने कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना हेतु किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं दिया, परन्तु इनको हतोत्साहित करने का कार्य भी नहीं किया। किन्तु अंग्रेजों ने अपनी शक्ति एवं प्रभाव के

---

3. Tripathi Ramshankar : History of Ancient India : New Delhi : Macmillan India Limited : 1958 : Page 42-43.

4. अंतोनोवा को.अ. : भारत का इतिहास, नई दिल्ली : पीपुल्स पब्लिशिंग हाऊस (प्रा.) लिमिटेड : 1988 : पृष्ठ 219–221.

5. Mahajan V.D. : History of Medieval India : New Delhi : S. Chand & Company (Pvt.) Ltd. : Page 354-384.

प्रारम्भ होने से भारतीय कुटीर उद्योगों, कृषि आधारित उद्योगों को समाप्त करने के भरपूर प्रयास किये और अंततः कृषि आधारित उद्योगों को विशेषकर सूती वस्त्र उद्योग को समाप्त करके ही दम लिया है। अंग्रेजी शासनकाल भारत में जब–तक रहा बहुत से कृषि आधारित उद्योगों को तब–तक उठने का प्रयास नहीं करने दिया और सन् 1947 तक उनको दबाये रखा। [23]

विभिन्न औद्योगिक नीतियों का विश्लेषण :– किसी भी देश या प्रदेश के औद्योगिक विकास में उस देश की नीति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। औद्योगिक नीति का निर्धारण वहाँ की आर्थिक भौगोलिक, राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाता है। औद्योगिक विकास की गति और उसका स्वरूप क्या होगा। यह सब सरकार की औद्योगिक नीति पर निर्भर करता है। नीति निर्धारण के द्वारा ही उद्योगों की दशा और दिशा को निर्धारित किया जा सकता है। हमारे सामने प्रश्न उपस्थित होता है कि ''औद्योगिक नीति क्या है ? इस संबंध में कहा जा सकता है कि औद्योगिक नीति औद्योगीकरण के विकास की प्रस्तुत की गई एक सुनिश्चित और सक्षम व्यूह रचना है। सन् 1948 से 2009 तक अनेक नीतियों को संचालित किया है।

(1) 1948 की औद्योगिक नीति – पहली औद्योगिक नीति 06 अप्रैल सन् 1948 के दिन घोषित की थी। इस नीति के सामान्य लक्ष्य (1) ऐसी सामाजिक अवस्था का निर्माण करना जिसमें सभी व्यक्तियों को समान अवसर प्राप्त हो। (2) सभी व्यक्तियों को रोजगार के अवसर प्रदान करना। (3) राष्ट्रीय स्त्रोतों का जहाँ तक सम्भव हो इस्तेमाल (4) कृषि तथा उद्योग दोनों ही क्षेत्रों में उत्पादन को बढ़ाना। (5) सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के उत्तरदायित्व का निर्धारण (6) निजी क्षेत्रों में उद्यमों का नियमन और (7) आर्थिक आयोजन में तालमेल है।

(2) औद्योगिक नीति 1956 :– सन् 1948 में घोषित नीति के आधार पर आठ वर्षों (सन् 1956) तक भारत में औद्योगिक विकास का क्रम चला। देश की स्थिति परिस्थिति ने सन् 1948 की औद्योगिक नीति में संशोधन का रास्ता तैयार किया। कांग्रेस में सत्तारूढ़ दल ने राष्ट्र का लक्ष्य 'सामाजिक समाज' की स्थापना घोषित किया। इस कारण औद्योगिक नीति को मोड़ना आवश्यक हो गया। अतः 30 अप्रैल 1956 को नयी औद्योगिक नीति घोषित की। इस औद्योगिक नीति में अनेक लक्ष्यों को रखा गया यथा – (1) आर्थिक विकास की गति को तेज करना और औद्योगीकरण की प्रक्रिया में तेजी लाना। (2) सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार (3) सहकारी क्षेत्र का विकास (4) मशीन बनाने वाले भारी उद्योगों की देश में स्थापना तथा विकास (5) सम्पत्ति तथा आय के वितरण की असमानताओं को कम करना तथा (6) आर्थिक शक्ति के केन्द्रीयकरण को रोकने के लिए निजी एकाधिकारों की स्थापना को नियंत्रित करना।

(3) औद्योगिक नीति 1970 :– सन् 1951 में Industries Development and Regulation Act 1951 पास हुआ और 8 मई 1952 को लागू किया। इस अधिनियम में औद्योगिक प्रतिष्ठानों का रजिस्ट्रेशन तथा लाइसेंसिंग की व्यवस्था की गई थी। इसके निहित वांछित उद्देश्य थे उनको प्राप्त करने में शासन सफल नहीं हो सका। इसीलिए सन् 1970 की औद्योगिक नीति में सन् 1951 की नीति के प्रावधानों को दोहराया गया है। इसमें अनेक कृषि आधारित उद्योग भी शामिल थे। गन्ने, पटसन, व अन्य कृषि उत्पादों की परिष्करण इकाईयों (Processing Units) में सहकारी क्षेत्र से प्राप्त आवेदन पत्रों को प्राथमिकता देने का आश्वासन दिया। एक करोड़ रूपये से पाँच करोड़ रूपये के निवेश वाले उद्योगों को मध्यम क्षेत्र (Middle Sector) में रखा था। इन उद्योगों के लिए लाइसेंसिंग नीति को काफी उदार करने की बात की गई तथा लाइसेंसिंग कार्यप्रणाली को आसान बनाने का आश्वासन दिया। 25 लाख से एक करोड़ रूपये निवेश वाली औद्योगिक नीति में अनेक सुविधायें प्रदान की गई।

(4) जनता सरकार की औद्योगिक नीति 1977 :– सन् 1977 की जनता सरकार ने नवीन औद्योगिक नीति मुख्य रूप से ग्रामीण औद्योगिक नीति थी। इसमें ग्रामीण एवं लघु उद्योगों के विकास के साथ ग्राम्य परिवेश के उद्योगों के विकास पर सर्वाधिक ध्यान केन्द्रित किया गया। औद्योगिक नीति का स्वरूप इस प्रकार है – लघु एवं कुटीर उद्योगों के तीव्र विकास के दृष्टिकोण से इस क्षेत्र के लिए निर्धारित उत्पादित वस्तुओं की संख्या बढ़ाकर 500 से अधिक कर दी गई। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा उद्योगों को दिये जाने वाले ऋण की कुछ निर्धारित मात्रा इन उद्योगों को प्रदान करने का प्रावधान किया। वृहद उद्योगों के समूहों के अंतर्गत वित्तीय सुविधाओं से अनेक परियोजनाओं

[23]. जैन डॉ. किरन : छिंदवाड़ा जिले में कृषि आधारित उद्योगों का विकास आलोचनात्मक अध्ययन : सागर : सुप्रिया प्रिंटर्स एवं पब्लिकेशन्स : 1996 : पृष्ठ 06–10.

को पूर्ण किया। इस संबंध में रासायनिक खाद, कागज, सीमेंट, जहाजरानी उद्योगों में अत्याधिक पूँजी विनियोजन किया।

(5) औद्योगिक नीति 1980 :– 23 जुलाई 1980 को भारत की नयी औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। इस औद्योगिक नीति का तथ्यात्मक स्वरूप इस प्रकार है – ग्रामोद्योगों के विकास से रोजगार के अवसर अधिक प्राप्त होंगे, इस उद्देश्य से हाथकरघा, हस्तशिल्प, खादी ग्रामोद्योग की सुविधायें उपलब्ध कराने का निश्चिय किया। वृहत्तर उद्योगों में अतिरिक्त उत्पादन क्षमता को विकसित करने के लिए औद्योगिक संयंत्रों एवं तकनीकी सुविधाओं के अनुपात में वृद्धि करने का लक्ष्य रखा। प्रत्येक पिछड़े जिलों में एक वृहत उद्योग की स्थापना का लक्ष्य रखा गया। जो उस जिले में औद्योगिक वातावरण का निर्माण कर औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित करेगा।

(6) औद्योगिक नीति 1991 :– सन् 1991 की औद्योगिक नीति के स्वरूप में निवर्तमान औद्योगिक नीतियों की अपेक्षा आंशिक अंतर था और नयापन था, जिसके कुछ तथ्य अग्रलिखित हैं – सुरक्षा एवं सामरिक महत्व की वस्तुओं से संबंधित उद्योगों तथा कोयला, शक्कर, पेट्रोलियम, मोटरकार, सिगरेट, औषधि, खतरनाक रसायनिक उत्पाद, बिलासिता की वस्तुओं को छोड़कर सभी शेष उद्योगों पर लाइसेंस समाप्त कर दिया। उत्पादन व निर्यात वृद्धि के लिए पूँजी निवेश तथा तकनीकी सहयोग को प्रोत्साहन दिया गया। सार्वजनिक कम्पनियों के व्यापार सम्बंर्धन पर सरकार पूरा ध्यान देगी और सामरिक तथा राष्ट्रीय महत्व के उत्पादों के विकास और अनुसंधान को जारी रखेगा, प्रबंध में श्रमिकों की भागीदारी को प्रोत्साहित किया ताकि प्रगति और समृद्धि में वे समान रूप से भागीदार बन सकें। उच्च प्राथमिकता वाले उद्योगों में विदेशी तकनीकी सहयोग समझोते की स्वतः अनुमति होगी।

(7) औद्योगिक नीति 1993 :– जुलाई 1993 में विशाल औद्योगिक इकाईयों के लिए तैयार वस्त्र उद्योग के द्वार खोले दिए गए किन्तु शर्त रखी गई कि उन्हें अपने उत्पादन का आधा भाग निर्यात करना होगा। अब तक तैयार वस्त्र उद्योग सहायक/लघु औद्योगिक इकाईयों के लिए पूर्णतः सुरक्षित था। अत्याधिक महत्व के आठ उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र के लिए रक्षित कर दिये गये हैं। निजी क्षेत्र की वे योजनायें जिनमें पूँजीगत माल के आयात की व्यवस्था है, को अनुमति प्रदान की गई। 10 लाख से अधिक आबादी वाले नगरों में इलेक्ट्रानिक कम्प्यूटर तथा छापेखाने जैसे प्रदूषण मुक्त उद्योग लगाये जा सकेंगे आदि प्रावधान रखे गये।

(8) औद्यागिक नीति 1998 – सन् 1998 की नई औद्योगिक नीति अप्रैल 1998 से प्रारम्भ हुई। यह औद्योगिक नीति निवर्तमान औद्योगिक नीतियों से भिन्न थी। इस नीति का स्वरूप कुछ बिंदुओं में व्यक्त किया जा सकता है। सन् 1998 में प्रस्तुत नीति के अंतर्गत सरकार ने कर संरचना एवं सुलभ ऋण की व्यवस्था के साथ ब्याज की दरों में सुधार कर लघु क्षेत्र एवं निर्यात नीति में परिवर्तन किया। इस नीति के अंतर्गत लिये गये प्रमुख निर्णय निम्नलिखित है– सन् 1989–99 में कोयला एवं लिग्नाईट, पेट्रोलियम तथा उसके डिस्टलेशन प्रोडक्ट्स तथा शक्कर उद्योग को लाइसेंस से मुक्त कर दिया गया। अब केवल पाँच उद्योगों (रासायनिक, औषधि, जूट उद्योग, सीमेन्ट, लोह इस्पात) में केवल लाइसेंस लेना अनिवार्य था। पूँजीगत माल पर आयात करों में कमी, ऋणों पर ब्याज दरों में कमी पिछड़े क्षेत्रों के उद्योगों के लिए पाँच वर्ष तक कर की छूट प्रदान की गई।

उद्योग संवर्धन नीति 2004 :– केन्द्र सरकार द्वारा औद्योगिक संवर्धन नीति 2004 को अंगीकार किया, तथा सन् 2007 में संशोधन किया गया। इसका स्वरूप इस प्रकार है – औद्योगिक इकाईयों के विभिन्न अनुमति लायसेंस एवं प्रस्तावों का समय पर एवं आसानी से निराकरण हो इसके लिए इण्डस्ट्रियल फेसिलिटेशन एक्ट एवं मध्यप्रदेश ट्रेड एण्ड फेसिलिटेशन कार्पोरेशन बनाना। सिंगल विण्डो प्रणाली को प्रभावी सक्षम एवं सुदृढ़ बनाने के लिए नियमों में परिवर्तन/क्लस्तर चिन्हित कर अधोसंरचना विकसित करना। बंद एवं बीमार औद्योगिक इकाईयों को पुनर्जीवित करने हेतु पैकेज। रोजगार के अवसर सृजित करने एवं बेरोजगार युवकों को उद्यमिता हेतु प्रेरित करने हेतु मार्जिन मनी योजना। नियमों एवं प्रक्रियाओं का सरलीकरण कर प्रदेश प्रशासन को उद्योग मित्र बनाना। वाणिज्य कर की दरों की तुलना में प्रतिस्पर्धा बनाना। औद्योगीकरण के प्रयासों में निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

अग्रवाल ए.एन. : भारतीय अर्थव्यवस्था : नई दिल्ली : विकास प्रकाशन हाऊस : 1979.

अग्रवाल एवं पाण्डेय : सामाजिक अनुसंधान:आगरा : आगरा बुक स्टोर : 1989.

कपूर सुदर्शन : भारत में कृषि व्यवस्था : जयपुर राजस्थान : हिन्दी ग्रंथ अकादमी : 1974.

कुन्द्रा ओम प्रकाश : मध्यप्रदेश का विकास : भोपाल : कमल प्रकाशन : 1987–1989.

कुलश्रेष्ठ डॉ. आर.एस. : भारत में उद्योगों का संगठन एवं वित्त :आगरा : साहित्य भवन पब्लिकेशन : 2000.

गुप्ता डॉ. एम.के. : ग्रामीण अर्थशास्त्र : मेरठ : विशाल मंदिर लिंसाडी : 1989–90.

जैन सी.पी. : भारतीय अर्थव्यवस्था की समस्यायें : इलाहाबाद : चैतन्य पब्लिशिंग हाऊस इलाहाबाद : 1965.

जैन जिनेन्द्र कुमार : मध्यप्रदेश में शक्कर उद्योग का आर्थिक अध्ययन : भोपाल : पी.एस. पब्लिकेशन : 1992.

शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण छात्र/छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018

A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

श्रीमती पारुल जैन

श्री गुरू तेग बहादुर खालसा महाविद्यालय, जबलपुर

सारांश : प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण छात्रों/छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना है । इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। संवेगात्मक दक्षता के मापन हेतु डॉ. हरीश शर्मा व डॉ. राजीव लोचन भारद्वाज की संवेगात्मक दक्षता मापनी का प्रयोग जबलपुर शहर के शासकीय व अशासकीय मूक–बधिर व दृष्टि–बाधित विद्यालयों के 80 छात्र/छात्राओं पर प्रशासित किया गया । परिणामों से ज्ञात होता है कि दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता मूक–बधिर छात्रों की तुलना में अधिक पायी गयी जबकि मूक–बधिर व दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता में कोई अंतर नहीं है।

प्रस्तावना : भारत एक विकासशील राष्ट्र है, जो विकसित राष्ट्र बनने के लिए निरंतर अग्रसर है। किसी भी राष्ट्र का भविष्य वहाँ के विद्यार्थियों के हाथों में होता है और विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास शिक्षा द्वारा होता है। आज शिक्षा का उद्देश्य बालक के वर्तमान का निर्माण करना है। शिक्षा द्वारा बालक को अपनी योग्यताओं के प्रदर्शन के उचित अवसर मिल पाते हैं तथा बालक अपनी कमियों को कम करके अपनी क्षमताओं और रूचियों को विकसित कर पाता है। शिक्षा द्वारा बालक के व्यक्तित्व का समन्वित विकास किया जाता है।

सृष्टि के विकास से आधुनिक युग तक किन्हीं भी दो प्राणियों में समानता नहीं होती है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी विभिन्नताएँ होती हैं, जो उसे दूसरों से अलग प्राणी के रूप में प्रस्तुत करती है। सामान्यतः बालकों को दो श्रेणियों में बॉटा गया है – सामान्य बालक एवं विशिष्ट बालक। विशिष्ट बालकों के अंतर्गत प्रखर बुद्धि वाले, मानसिक रूप से अक्षम एवं शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण बालक आते हैं। शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण बालक, सामान्य बालकों की अपेक्षा शारीरिक रूप से भिन्न होते हैं, मानसिक दृष्टि से तीव्र या औसत हो सकते हैं। ऐसे बालकों की पहली आवश्यकता यह होती है कि उनके विशिष्ट गुणों, क्षमताओं और कमियों के आधार पर उनके अनुकूल शिक्षा व प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाये।

मानव जीवन में संवेगों का अत्यधिक महत्त्व है। यदि संवेगों का विकास संतुलित रूप से नहीं होता है तो व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यक्तित्व विघटित हो जाता है। विद्यालय में संवेगात्मक विकास में अध्यापक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वह बालक में अवांछित संवेगों को विकसित होने से रोकने के प्रयास कर, धनात्मक संवेगों को प्रोत्साहित कर सकता है।

किसी कार्य को अच्छे से करना, उसमें पारंगत होना ही उसकी उस कार्य में दक्षता है। जब दक्षता संवेग के साथ जुड़ जाती है तो संवेगात्मक दक्षता बनती है। संवेगात्मक दक्षता से तात्पर्य है कि व्यक्ति विशेष सांवेगिक परिस्थितियों का कितने प्रभावपूर्ण तरीके से निर्वाह कर पाता है। संवेगात्मक दक्षता में संवेगों की अभिव्यक्ति व उसका नियंत्रण दोनों ही जरूरी है। यदि विद्यार्थी सांवेगिक रूप से दक्ष है तो वह हर कार्य को पूरी एकाग्रता व लगन के साथ करता है और निश्चय ही सफल होता है।

शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण बालकों के लिए भी संवेगात्मक दक्षता उपयोगी होती है। यदि शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण बालक संवेगात्मक रूप से दक्ष है तो वह अनेको संवेगों जैसे – सुख, दुःख, प्रेम, भय, क्रोध, आशा, निराशा, लज्जा, गर्व, ईर्ष्या आदि सभी का संतुलन बनाये रख सकता है। खुशी के क्षणों का दिल खोलकर आनंद ले सकता है, बड़ी से बड़ी विपत्ति में सहज रह सकता है तथा विपरीत परिस्थितियों का सामना दृढ़ता से कर सकता है ।

उद्देश्य –

1. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता के स्तर का अध्ययन करना।
2. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता के स्तर का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ –

1. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता का स्तर औसत है।
2. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता का स्तर औसत है।

विधि –

प्रस्तुत शोधकार्य में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है ।

न्यादर्श –

शोधकार्य में जबलपुर शहर के शासकीय तथा अशासकीय मूक–बधिर व दृष्टि–बाधित विद्यालयों के मूक–बधिर विद्यार्थियों में से 20 छात्र व 20 छात्राएँ तथा दृष्टि–बाधित विद्यार्थियों में से 20 छात्र व 20 छात्राऍं ली गई हैं। इस प्रकार कुल 80 छात्र–छात्राओं को न्यादर्श में शामिल किया गया है ।

उपकरण –

संवेगात्मक दक्षता मापनी – डॉ. हरीश शर्मा व डॉ. राजीव लोचन भारद्वाज

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या

तालिका 1

मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	सार्थकता
मूक –बधिर छात्र	20	96.40	8.13	2.28	0.05 स्तर पर सार्थक
दृष्टि–बाधित छात्र	20	104.80	13.85		

स्वतंत्रता के अंश – 38

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.02

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.71

तालिका 1 में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि मूक–बधिर एवं दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता के मध्यमान क्रमशः 96.40 तथा 104.80 हैं, जिनमें 8.40 का अंतर है, जो सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है क्योंकि प्राप्त 'टी'–मान 2.28 है, जो 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 2.02 से अधिक है ।

तालिका में प्रदर्शित मानक विचलन के मानों से स्पष्ट है, कि दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता के प्राप्तांकों में मूक–बधिर छात्रों की अपेक्षा अधिक विचलनशीलता पायी गयी ।

अतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता में अंतर है तथा दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता मूक–बधिर छात्रों की तुलना में अधिक पायी गई ।

तालिका 2

मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	सार्थकता
मूक –बधिर छात्राएँ	20	96.05	12.33	0.94	सार्थक नहीं
दृष्टि–बाधित छात्राएँ	20	99.95	13.25		

स्वतंत्रता के अंश – 38

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.02

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.71

तालिका 2 में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता के मध्यमान क्रमशः 96.05 तथा 99.95 है, जिनमें 3.90 का अंतर है, जो सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है, क्योंकि प्राप्त 'टी'–मान 0.94 है, जो 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 2.02 से कम है ।

तालिका में प्रदर्शित मानक विचलन के मानों से स्पष्ट है कि मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता के प्राप्तांकों में लगभग समान विचलनशीलता है।

अतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता में कोई अंतर नहीं है ।

निष्कर्ष :

1. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता में अंतर है। दृष्टि–बाधित छात्रों की संवेगात्मक दक्षता मूक–बधिर छात्रों की तुलना में अधिक पायी गयी।
2. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित छात्राओं की संवेगात्मक दक्षता में कोई अंतर नहीं है, क्योंकि प्राप्त 'टी' मान 0.94, 0.05 विश्वास के स्तर पर सार्थक नहीं है।

सुझाव :

1. मूक–बधिर विद्यार्थियों हेतु चिन्ह भाषा, ओंठ पठन, संकेत भाषा व स्पर्श विधि का प्रयोग किया जाना चाहिये। दृष्टि–बाधित विद्यार्थियों को ब्रेल पद्धति, कुर्जबेल अध्ययन मशीन व आप्टाकॉन प्रणाली का प्रयोग किया जाना चाहिए।
2. मूक–बधिर तथा दृष्टि–बाधित विद्यार्थियों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिए जो उनके जीविकोपार्जन में सहायक सिद्ध हो सके।
3. विद्यालयों में अध्यापक इन छात्र–छात्राओं से समानता व सहयोग का व्यवहार करें जिससे उनमें हीनता की भावना न पनपने पाये।
4. अभिभावकों द्वारा इन बालकों के अवांछनीय संवेगों जैसे– ईर्श्या, आक्रोश आदि को पनपने से रोकना चाहिये और उनमें सामाजिकता का विकास करना चाहिये।
5. सामान्य छात्र–छात्राएँ, दृष्टि–बाधित व मूक–बधिर छात्र–छात्राओं को शिक्षा के क्षेत्र में सहायता करके, मनोबल बढा सकते हैं ।
6. सामान्य छात्र–छात्राएँ इन छात्र–छात्राओं के साथ सामाजिक समायोजन स्थापित करके उनके सामाजिक व संवेगात्मक दक्षता के विकास में सहायक हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. भार्गव, डॉ. महेश, (2009), ''विशिष्ट बालक–शिक्षा एवं पुनर्वास'', अष्टम संस्करण, एच.पी.भार्गव बुक हाउस , आगरा।
2. भटनागर, आर.पी. (2008), ''शिक्षा अनुसंधान'', द्वितीय संस्करण, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, लॉयल बुक डिपो, मेरठ।
3. माथुर, डॉ.एस.एस.(2007), ''शिक्षा मनोविज्ञान'', सत्ताईसवाँ संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।

सर्वे / जर्नल / लघु शोध प्रबंध –

4. खरे, सपना (2004–05), ''मूक बालिकाओं एव सामान्य बालिकाओं के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन'', लघु शोध प्रबंध, एम. ए. (मनोविज्ञान), शासकीय मनोविज्ञान एवं संदर्शन महाविद्यालय, जबलपुर।
5. सिंह, संध्या (2002–03), ''सहशिक्षा तथा एकल शिक्षा में अध्ययनरत् छात्र–छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता एवं संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन'', लघु शोध प्रबंध, एम.ए. (मनोविज्ञान), शासकीय मनोविज्ञान एवं संदर्शन महाविद्यालय जबलपुर।
6. सिंह, प्रमिला (2007), ''समेकित शिक्षा में अध्ययनरत्, शारीरिक अक्षम एवं सामान्य विद्यार्थियों के आत्म सम्मान तथा शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन'', रिसर्च लिंक–50 (I), मई (2008), वॉल्यूम – VII (3), पृ. 70–71

Medicinal value of some ethno medicinal plants found in Raisen district of Madhya Pradesh

Dr. Yashvant Shukla

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Atithi Vidwan Banspati Shahtra Vibhag, Govt. P.G. College Bareli, Raisen, M.P.

Introduction : Ethno medicines or folk medicines play very important and vital role in primary health care conservation in rural life. according to WHO about 70-80 % population of entire globe depends such type of remedies. India has great heritage knowledge of ethnomedicine utility of these plants since ancient times. The medicnal utility of these medicinal plants in not decrwAW of the thousand of the year. A lot of plant species occurs as self grown conditions which are known as weeds but these weeds are being used by tribal or rural people for treatment of various diseases.

Distict Raisen lies in the central part of Madhya Pradesh the district is situated between the latitude 22*47' and 23*33' north and the longitude 77*21' and 78*49'east. It is bounded in the west by Sehore district, in the north of Vidisha district, in the east and south east of Sagar district

In south east of Narsingpur district and in the south by Hoshangabad and Sehore district. The total area of district is 8,395 sq. Km which contains 1.93% of the state total area.

Present study based on the utility of ethno medicinal plants ad house hold, folk or ethno medicine in and around the Raisen district. in the study area there are 25 medicinal plants are identified and analyzed with their local name, botanical name , families, habit and habitate, medicinal utility against various diseases.

Material and Method : The survey to collect the data,presented in this paper was conducted during the period of 2015-1 some villages of Bari and Barili tahsil as Bagalwara, Jam garh, Partalai, Amravat, Bharkhera, Kelkchha etc.in Raisen district the local tribal men,Vaidhyas, old medicine men or herbal men information were collected. Data on the preparation of ethno medicine along with their uses were gathered from experienced and knowledgeable medicine men. Some plants used in different ailments were reported as medicine in this district. Detail are given in enumeration.

Enumerationn-

1. Botanical Name Achyranthes aspera Linn.

Local Name Chirchita, Latjira, Chirchiri

Family Acanthaceae

Status Common weed of mostly rainy season

Taxonomical Brief : Erect annual herb. Leaves are entire, exstipulete having thick coat of wooly hairs. Spike persistent. Minute, bracteate and bracteolate greenish-white flower. Periarth leaves are dry and membranous. Carpel 2-3, fused, Fruit membranous and seeds sub-cylindrical, brown.

Flowering and fruiting : September to January.

Medicinal uses : Root paste is applied on scorpion sting. Roasted and powdered seeds are useful in asthma. Root paste with heeng (asfoetida) is given to cows and oxen for bronchitis. Root is used as tooth brush. Some elder men and rural people belief that the root of this plant is useful to facilate child birth and safe delivery. Obviously, these medicinal virtues needs conservation.

2. Botanical Name Aegle marmelos (L.) Correa.

Local Name Bel

Family Rutaceae

Status Wild and cultivated, Common

Taxonomical Brief : Medium size, thorny, deciduous tree. Stem stout, trunk with grey bark. Leaves are tri foliate, leaf-lets petiolate, ovate, and lanceolate. Branches ascending with sharp straight axillaries spines. Inflorescence auxiliary panicles. Flowers greenish-white, bisexual, scented. Fruit globose, yellowish with sticky mucilage around the seeds.

Flowering and fruiting : March to July.

Medicinal uses : Leaves are regarded as an effective remedy for peptic ulcer. Ripe fruit pulp is recommended in gastric disorders including diarrhea, nausea and vomiting and dysentery. The pulp of ripe fruit is given to cattle as a cooling medicine. Plant worshipped by Hindus as Lord Shiva. Tri-foliate leaves are said to be symbol of trisul. It is a sacred and religious plant and planted near Shiva temple.

3. Botanical Name Allium sativum Linn.

Local Name Lahsun

Family Liliaceae

Status Common cultivated herb.

Taxonomical Brief : Annual herb with underground bulb consisting numerous fleshy, massive bulblets (tillers/ cloves), enclosed in a thick, whitish, transparent covering. Roots irregular, fibrous, arising from condensed, flattened stem. Leaves flat, fleshy, padrallel veined with sheathing leaf base. Flowers pale in lax umbel. It has an unpleasant odour due to presence of sulphur content.

Flowering and fruiting : Winter season

Medicinal uses : Crushed cloves may be infused in water and prescribed for digestive disorders. It has an antiseptic effect and is an excellent remedy for intestine. Garlic also stimulates the peristaltic and the secretion of digestive juices. Cloves are effective in the treatment of respiratory and chest diseases. It reduces fetidity of the breath in pulmonary gangrene. It is one of the most effective remedies for lowering blood pressure. It also shows the pulse and maintains heart-beat. Garlic is extensively used in the treatment of rheumatism and joint diseases. Fresh and raw cloves are given to cattles in common cold and cough. Ingredient of many ayurvedic preparations. Herbal garlic capsules are also available.

Local Name Ghritkumari, Gwarpatha, GheeKumar

4. Botanical Name Aloe vera Linn. Syn. A. barbadensis, Miller

Family Liliaceae

Status Wild and cultivated, Common.

Taxonomical Brief : Stoloniferous plant.Leaves pale green, convex below, tapering to a blunt point, with mucilaginous pulp and horny prickles at the margins. Flowers dull red coloured in terminal raceme. Stamens as long as perianth. Fruit loculicidal.

Flowering and fruiting : February to August.

Medicinal uses : Fresh leaf juice is prescribed to the delivered women to increase the flow of blood and also aid to clear the uterus.Leaf pulp have a soothing effect and useful in burn and headache.Mucilaginous pulp of leaves is a native remedy to cure swelling of feet and prevent miscarriage in cattle. Cultivated for medicinal and ornamental purpose.

Botanical Name Allium cepa Linn.

Local Name Pyaj

Family Liliaceae

Status common and cultivated

Taxonomical Brief : Leaves and Bulb (Red variety).A small herb with tunicated bulb, leaves tubular and cylindrical, flowers white in Head.

Flowering and fruiting : October to February.

Medicinal uses : Dysentery, piles, digestive, bronchitis, ischaemic heat disease, flattulance, hypoglycaemic, anti Tumors, also useful in Jaundice, anus prolapse, gum swelling, night blindness. 106.

Botanical Name Bacopa monnieri (Linn.)

Local Name Jalneem

Family Scrophulariaceae

Status weed and common

Taxonomical Brief : flowers. Whole plant, A small succulent herb creeping, rooting at nodes, aquatic with purple blue

Flowering and fruiting September to February

Medicinal uses : voice, less memory, tension, blood purifier. Dyspepsia, cough, fever, insomnia, epilepsy, debility after heart attack, hoarseness of

Botanical Name Barleria prionitis, Linn.

Local Name Piyavasa

Family Acanthaceae

Status common and weed in house side

Taxonomical Brief : Root and leaves. A small shrub, much branched, very prickly with yellow flowers.

Flowering and fruiting inwinter season

Medicinal uses Leaf juice in: catarrha, abadominal disorder, fever, dried bark in : cough, decoctionOf Glandular swellings juice of bark in anasarca.plant in: dropsy, cough, toothache, paralysis, paste of root applied in : boils and

Botanical Name Biophytum sensitivum (L.) DC. Syn. Oxalis sensitivum Linn.

Local Name Lajauni

Family Oxallidaceae

Status Common weed during the rains.

Taxonomical Brief Pretty small annual herb. Stem erect, slender, glabrous or hairy. Leaves crowed into a rosette on the top of the stem, leaflets 5-15 pairs, oblong .Flower dimorphic, yellow. Capsule curved ellipsoid and grooved.

Flowering and fruiting : July to November

Medicinal uses : The paste of whole plant is a safe remedy for burn. The extract of plant is given to children to put them to sleep.Chest complaints, cramp and inflammatory tumour; seed's powder. Applied on wounds, leaves astringent, diuretic, antiseptic andstyptic; juice or paste of whole plant applied on cuts, wounds; decotion in asthma, tuberculosis, root's decoction in: fever, gonorrhoea and urinary calculi.

Botanical Name Cassia tora Linn.

Local Name Chakarna

Family Calesalpinínceae

Status Popular & common weed of rainy season

Taxonomical Brief Annual herb. Stem erect, flexuous. Leaves alternate , pinnately compound with pulvinous leaf base. Flowers zygomorphic, bisexual and hypogynous in typical raceme. Pods indehiscent many seeded. Seeds shiny, brown in color.

Flowering and fruiting August to December. The leaves are applied externally to cure boils, cuts and skin diseases.Dried seeds are fed

Medicinal uses : to cattles to stimulate secretion of milk.taken internally in: asthma and for blood purification, leaves are used: as laxative, Seeds: applied externally on skindiseases: leucoderna and leprosy, piles, ring worm, anthelmintic and antipyretic, cough, eczema, cephalagia.

Botanical Name Cissus quardangularus Linn.

Local Name Harjor

Family Vitaceae

Status Wild and Endangered

Taxonomical Brief Large perennial climber. Stem fleshy, quadrangular, glabrous, margined, contrated the nodes. Tendrils modified in terminal vegetative buds. Leaves present at nodes, sub sessile, lobed. Inflorescence umbellate cynes. Flowers purple red with short pedicle. Berries ovoid, red in colour, 1-2 seeded and smoath.

Flowering and fruiting August to March

Medicinal uses : Extract of fleshy stem in given in bone fracture. Plant is a native remedy of cattle

bonefracture. Used as ornamental. Plant can be conserved by cultivating in home garden. Also used in Piles, union of fracture, irregular minsturation, asthma, treatment of eye, anthelmintic, antiscorbutic, scurvy, juice of plant given internally and applied externally on fractured bone .

Botanical Name Clitoria ternata Linn.

Local Name Aparajita

Family Fabaceae

Status Common along the wayside

Taxonomical Brief Cultivate ornamentally in garden & home. Woody twinner with slender downy stems. Leaves odd-pinnat 3-9 foliate, oval or oblong, obtuse. Flowers down axially, deep blue. Pods li near, flat, sub continuous, apically beaked, hairy, 6-10 seeds.

Flowering and fruiting : July to January

Medicinal uses : Dry and powdered seeds used as purgative. Root used in : leprosy, headach, cough disorder, snake poison, fever, urine disorder, scrofula, goiter, indigestion, eye infection, arthritis, insanity, migraine.

Botanical Name Curcuma longa Linn. C. domestica VAL.

Local Name Haldi

Family Zingiberaceae

Status Commonly cultivated

Taxonomical Brief Perennial, rhizomatous herb. Stem bearing scape from the centre of the leafy tuft. Rhizome, short and thick, cylindrical or ellipsoid . Leaves long petiolate, narrow to the base, glabrous and green on both sides. Spikes short ped ancled. Flowers in the centre of the tuft of leaves. Flowering bracts, greenish white. Corolla white or pale yellow. Ovary rather stiffly hairy at top.injuries to cattle.

Medicinal uses : throat irritations. It is a native remedy for treating sprains or the swelling caused by Turmeric with its antiseptic properties is an effective remedy for asthma, cough and sprains.skin diseases, abdominal worms, diabetes, scabies, leucoderma, polyuria, ulcer, anaemia, jaundice, conjectivities, and blood purifier. Externally applied on cut and

Flowering and fruiting October to December

Botanical Name Emblica officinalis (Gaerth.).

Local Name Amla

Family Euphorbiaceae

Status Wild and cultivated Common

Taxonomical Brief Middle size deciduous tree. Stem whitish grey, bark peeling off in flakes. Leaves closely on the branch. Flowers auxiliary fasicles on lower leaves, greenish yellow. Fruits globose, fleshy, distinctlyMarked, pale yellow when ripe.

Flowering and fruiting November to March

Medicinal uses : The fruits are useful in gastric disorders including diarrhea and dysentery. It is an effective remedy for heart disease. Leaf decoction is suggested in oral ulcer. Fruit powder along with harra, bahera and ajamain is a native remedy for abdominal disorders. Fruit juice is useful in promoting growth of hair & hair falling. Sacred and religious plant. Cultivated in wasteland and forest areas for sake of its fruits.

Botanical Name Ficus carica Linn.

Local Name Anjir

Family Moraceae.

Status common and cultivated

Taxonomical Brief Dried fleshy receptacles and fruits .

A moderate sized tree, 15-30 feet high, large cordate, serrate, deeply lobed Rough leaves.

Flowering and fruiting October to March

Medicinal uses : Constipation, asthma, chest pain, inflammation, livertonic, resolves spleen, Useful in blood purification, dyscrasia. 51

Botanical Name Gloriosa superba Linn.

Local Name Kalihari

Family Liliaceae

Status Wild and cultivated, Rare

Taxonomical Brief Climbling, glabrous branched herb with leafy tendrils and fleshy, cylindric, bifurcately branched tubers having fibrous roots. Leaves alternate, oblong-lanceolate, sessil tip spirally twisted to form a tendril. Climbling, glabrous branched herb with leafy tendrils and fleshy, cylindric, bifurcately branched tubers having fibrous roots. Leaves alternate, oblong-lanceolate, sessil tip spirally twisted to form a tendril. Solitary flowers on somewhat subcorymbose at the ends of branches. Flowers large, bisexual crimoson and showy. Capsule ellipsoid, oblong, translose. Seeds many.

Flowering and fruiting : August to December

Medicinal uses : Tuber poultice is externally applied in leprosy and the patches of leucoderma.Leaf extract is useful in stings of posinous insects. Tribal believes that if flowering branch thrown on a house top make its residents quarrel anong themselves or with their neighbour. Useful in: leprosy, piles, ulcers, colic and swellings, dermatitis. Root powder in: fever, rheumatism, spleenomegaly, tumours, gonorrhoea, erysipelas, sores, siphiis Herb can be conserved by cultivating in garden.

Botanical Name Lantana camera Linn.

Local Name Ban tulsi / kuri.

Family Verbenaceae.

Status common and wild

Taxonomical Brief Whole plant. A shrub with many recurved prickles and flowers of yellow white, orange colours.

Flowering and fruiting whole the year

Medicinal uses rheumatism. Leaves cure snake bite. Healing of wounds, fistul; decoctopn of whole plant is laxative and useful in Malaria and

Botanical Name Loranthus longiflorus Desr Syn.

Local Name Banda

Family Loranthaceae

Status wild and rare

Taxonomical Brief Leaves and flowers. A semi parasitic large shrub generally on Mango trees. Leaves opposite, thick , coriaceous ovate or linear-oblong, obtuse, midvein usually red. Flowers red or Yellow or pink white.

Medicinal uses : Oedema, epilepsy, insanity, fever, asthma, malarial fever, and for pregnancy.

Botanical Name Madhuca indica J. Gmel Syn. M. longifolia Mac. Br. Var. latifolia

Local Name Mahua

Status Wild and cultivated common tree.

Family Sapotaceae

Taxonomical Brief Large deciduous tree. Stem cylindrical, stout bark dull black with vertical cracks. Leaves clustered end on branches, thick, leathery and milky latex present .Flowers fleshy, pale, musk scented, on long rusty tomentose pedicles. Frits fleshy, greenish, with massive, brown and shining seeds.

Flowering and fruiting March to July.

Medicinal uses : The roasted dried flower powder is effective in bronchitis and coughs. Decoction of the bark is in diabetes. The leaves are effective in the treatment of eczema. Flowers and seeds are economic product. Seeds used for extracting oil and making cattle feed. Trees are protected because of their economic value.

Botanical Name Morgina oleifera Lamk.

Local Name Munga

Family Moringaceae

Status Wild and cultivated common plant.

Taxonomical Brief Medium sized deciduous tree. Stem stout with corky bark and soft wood. Branchlets wasty, young parts tomatoes . Leaves tripinnate; pinna 4-6 pairs; pinnulal opposite, 5-10 pairs, the upper most pair uni-folilalate with a hairy gland. Flowers white , in large axillary panicles scented pedicelled. Capsule angular, pendulous ribbed. Seed3anguled winged and light.

Flowering and fruiting January to June

Medicinal uses Paralytic affections, intermittent fever, epilepsy, chronic rheumatism, cardiac tonic, nervous debility, spasmodic, affections of bowels; hysteria, flatulace, titanus, seeds :in veneral affections, flowers:anti-ulcer, leprosy, hypotasive. Root is applied externally as poultice in inflammatory swelling. The bark decoction is used as a cardiac stimulant in asthma, cough and respiratory disorders. Leaves boiled and affected part washed with warm extract in swelling due to injury.

Botanical Name Oroxylum indicum Vint.

Local Name Talwar phalli / sona patha/ bhaisatada

Family Bignoniaceae

Status Wild and rare Root –bark, seed, flower and leaves. A large tree with large tri-pinnate compound leaves,

Taxonomical Brief each leaf is about 3-5 feet long. Flower large bluish purple, fleshy, foetid, follicle large sword shaped.

Flowering and fruiting October to March

Medicinal uses : vomiting, leucoderma. Root bark in: rheumatism, diarrhea, cough fever, piles, expectorant, bronchitis, Anorexia,

Botanical Name Oxalis corniculata Linn.

Local Name Chalmori, Khattamitha

Family Oxalidaceae

Status Common wild weed of moist places.

Taxonomical Brief Hairy herb with long, creeping and ascending shoots having pubescent and apprised hairs. Stems rooting at node. Leaves delicately trifoliate. Flowers in umbellate clusters brown rogues. born in long peducles. Capsule sub-cylindrical, 5-angled, beaked and tomatoes. Seeds

Flowering and fruiting: October to April

Medicinal uses stoamachic. Hypotensive, antipyretic, antidote, anti-inflammatory, antibacterial, useful in diarrhoea, piles and fever. Scurvy, menstrual disorder, helps in fertility, redness and vaginal watery discharge, The plant is cooling and ant scorbutic and used to cure scurvy. The botanical names are arranges in alphabetical order, followed by family, local name, locality, plant parts used and medicinal importance. Ethno medicine is a study or comparision of traditional medicine practiced by various ethno groups and especially by indigenous people.

Result and discussion : The study is provided with information of 25medicinal plants belong to different families which are used for the treatment of various diseases such as wounds, fever, snake bite, dibetes, blood pressure, headache, boils, jaundice etc. people usedmedicinal plant various parts such as root, bark, leaves, fruits, flower, seeds or whole plant. These are taken internally or applied externally in the form of infusion, decoction, paste or powder. Most of the plants used in medicines in the form of decoction or powder. Used mixed either with other ingredients or singly and are taken manly

In study area survey we think and suggested for some important medicinal plants need immediate conservation their cultivation and stem cell, C-DNA, library should be encouraged through which nearer Red data stage can be prevebted and local villagers may get house hold things, low-cost treatment and village cottage

industry for rural development. Or Most of the plants are useful in more than onne disease and easily available through the year. by conserving these plants can make treatment cheaper non reactive safer and easily accessible to every one. It is also observed that poor or less literate persons have more knowledge than well literate and higher income group of persons present study higherlights new oppurtunities about the medicinal plants relating conservation protection, documentation and sustainable rural development.

It is observed that the peoples of tribl communities are stile in the primitive stage and depend upon the wild resources around them for their needs. They have farly good knowledge of herbal medicines to cure diseases for their health treatment due to excessive deforestation in the forest area, the local health care shstem and practical is goinh less or minimum.

In survey the medicinal plants which are observed were cross checked and verified by the users of the herbal medicines (herbalist, vaidhyas) and were found to be correct.

References :-

Abraham, Z. 1986. Screening of Indian Plants for Biological Activity. Part XI. Ind. J.
Exp. Biol. 24:48-68.

Ambasta, S.P. 1986. The usefull plants of India, CSIR New Delhi.

Anonymus. 1997. Indian Medicinal plants : A sector study. Ethnodotany, 17:11.

Bhura, N.K. 1962, Meals and Food Habits in rural India. Bull. Antrop. Sarv. India.
11:111-137.

Dixit, R.D. 1982. Selaginella bryopteris (L.) Bak – an ethno-botanical study-IV J. Econ.
Tax. Soc. 3:309-311.

Dastur, J.F. 1951b. Medicinal Plants of India and Pakistan. Bombay.

Dastur J. F. 1951a. Aspects of folklore. Floklore, 6:23-27.

Gupta R.C. 1979. Status of Sarpgandha in Ayurvedic Litrecture, Ethnobotany 9 (1-2), 59-64.

Jadhav D. 2006. Ethnomedicinal Plants used by Bhil tribes of Bibdod, Madhya Pradesh
Indian J. of Tradit. Knowle. 5 (2) : 263-267.

Jain S.K. 1989. Methods and Approaches in Ethno-botany, Pub. Societies of
Ethnobotanist, Luchnow.

Jain, S.K 1965b. Medicinal plant lore of the tribals of the Bastar. Econ. Bot. 19:236-250.

Verma D.M., Balakrishnan N.P. & Dixit R.D. 1993. Flora of Madhya Pradesh, Vol I, (Botanical Survey of India, Calcutta).

Watt, G. 1889-1896. A Dictionery of economic product of India, 6th Vo. W. H. Allen,
London, Re-edn and printed in 1972, Cosmo publication new delhi.

A SYSTEMATIC REVIEW ON THE THERAPAUTIC POTENTIAL OF NIGELLA SATIVA L.: "A MARVELOUS HERB"

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Arif Ahmad Rather* Dr. Kirti Jain Shazia Tabasum and Arshad Ahmad

Department of Botany, Govt Science and Commerce College Benazeer, Bhopal (M.P), India

ABSTRACT : The primary objective of this review is to enhance the level of interest amongst agriculturists to cultivate Nigella sativa (a medicinal herb) to facilitate its conservation, researchers to investigate more and more of its physiological effects and therapeutic efficacy, pharmacological effects and pharmaceutical industries to dispense its herbal products. Nigella sativa commonly known as black seeds were searched and reviewed via Green Medinfo, Embase, Scopus, Pubmed, Web of Science and Google Scholar. The search terms were Nigella sativa, black seed, and medicinal plant, traditional, natural and herbal medicine. Nigella sativa can be used and cultivated for medicinal, fragrant, culinary and other household purposes. Infact it can be Anti-inflammatory, Anti hepatotoxic, Antibacterial, Antioxidant, Anti-diabetic, Analgesic and also possess Diuretic, stimulant, memory tonic and antiseptic properties. The propagation is generally done by cultivation of seeds. Herbal medicines have greatly contributed to human health and well-being, and at present, plant materials have provided the models for an excellent and significant proportion of western drugs. Nigella sativa has been prized for its pharmacological importance since time immemorial. This might prove fruitful to heal for a range of modern ailments including diabetes and cancer.

Key Words : Medicinal Plants, Herbal Medicine, Nigella sativa, Pharmacology.

INTRODUCTION : Plants are thought to be one of the natural bases for the production of bioactive compounds, several of which are utilized to support health and tackle pathological conditions and many of them are marketed as food or herbal medicines (Dubick, 1986). A plant can be considered as medicinal plant if it is used to reduce, avoid or cure an ailment and can change physiological and pathological process, even if it can be utilized as a precursor of drug then it will be categorized in same (Arias, 1999). The usage of herbal medicine has amplified dramatically for various diseases among general masses over last few years not only because of their easy accessibility without prescription, low cost and appointment to the health care specialists and more with the faith that natural remedies have not much of lethal effects in comparision to synthetic medicines (Ashraf R et al., 2011). Over the last few years, researchers have designed to determine and validate plant derived constituents for the treatment of various ailments. Medicinal plants have long been supposed as a source of therapeutic medication based on sacred and cultural customs (Huxtable, 1992; Ghazanfer, 1994). Medicinal plants play a significant role in health care management in different parts of the world (Kong et al., 2001; Taspel, 2006).

World Health Organization has found that about (WHO, 2001) 60% of the world's population live on traditional medicine, and 80% of the population in developing countries depend almost completely on traditional medical practices, in particular, herbal remedies for their primary health care practices (Fransworth, 1994; Zang, 2000).World Health Organization (WHO, 2002) has also depicted that an efficient health care program for developing countries can never be accomplished by western medicine alone, unless and untill it is complemented by herbal medicine as an alternative medicine and therefore has accordingly advised and urged developing countries of the world to utilize their medicinal plant resources and other traditional medicine systems to attain the goal of primary health care (WHO, 1980; 2002). As for developed countries, it is reported that patients of chronic diseases are turning towards herbal remedies as alternatives to present synthetic drugs (Calixto, 2000).

Nigella sativa (Black seed) **has been truly described as the spectacular Herb of the Century**, (W.Goreja,2003). Nigella sativa L. commonly known as (Black seed or Kalonji) a member of Ranunculaceae family, is one of the most admired medicinal seeds in history. It is an annual aromatic herb and its cultivation traced back more than three thousand to the kingdom of the Assyrians and ancient Egyptians (Khan, 2009). The black seeds possess antimalarial, antibacterial, anthelmintic, insecticidal, antifungal and antitumor properties. There are also findings that black seeds are bestowed by diuretic, carminative, digestive and antiseptic effects (Burits & Burcar, 2000; Morsi, 2000; Teicher, 2002; Ali & Blunden, 2003; Marsik et al., 2005; Saleh, 2006; Abdulelah & Abidin, 2007; Ahmad & Ghafoor, 2007; Ali et al., 2008)

Nigella sativa : Botanical details

Nigella sativa L. (Black seeds) **has been rightly described as the wonderful Herb of the Century,** (W.Goreja). Nigella sativa L. taxonomic classification depicts that it is a flowering; dicotyledon plant which belongs to family Ranunculaceae under kingdom plantae (Parvu C, 1997). Morphologically N. sativa is an annual medicinal herb, about 30-60 cm high with finely divided, linear leaves (Blatter et al., 1984). The flowers are usually pale blue and white, with 5-10 petals. The fruit is a large inflated capsule composed of 3-7 united follicles (Figure.1), each containing numerous black trigonal seeds (Prain, 1988; Aqel and Shaheen, 1996; Mozzafari et al., 2000).

The capsules contain black ovoid or pyramidal seeds attaining lengths and widths ranging from 2.5 to 3.5mm and widths from 1.5 to 2mm respectively. The comprehensive taxonomy of the plant was defined by (Muschler R). The stem is green, round, hairy, 2-5 mm diam., leaves alternate, pinnate, lower leaves small, upper leaves sessile, 6-10 cm long, flowers regular bisexual, terminal on branches, white, yellow, pink, pale blue or pale purple, with 5-10 petals. 3 stamens numerous, outer ones longer than the inner ones, filaments long, slender, anthers 1.5-2 mm long; ovary superior, 5 mm long.The different parts of the plant are used for medicinal purposes (Salem and Hossain, 2000; Salem, 2005).

Various Synonym used for Nigella sativa are - English: Black seed; Hindi: Kalonji; Arabic: Habbat-al-Barakah; Farsi: Sayahdanah; Hebrew: Ketzah; Italian: Nigekka; Malayalam: Karun jiragam; Marathi : Kalonjiszkasiewna; Persian: Shoonez; Punjabi: Kalvanji; Tamil: Karun jiragam; Telugu: Nallajilkarra; Kanada: Karijirigi; Kashmiri: Tukhme-e-Gandana; The seeds of Nigella sativa L. are adultered and mistakenly ustilized as onion seed, though both look similar but they are not the same seed.

Habitat :

ancient herbal specialists as 'the Herb from Heaven' a flowering plant originally from the Mediterranean region. It is cultivated in Turkey, Egypt, Arabia, Middle-East, Russia, France and is also widely distributed in tropical Africa. This extensively distributed plant is also native to Arab countries and many other parts of the Mediterranean region (Jansen, 1981). N. sativa cultivation, propagation and production has been reported in Pakistan (Iqbal et al., 2010; Rabbani et al., 2011). It is also found in India, particularly in eastern region Punjab, Himachal Pradesh, Bihar and Assam. The medicinal herb is also cultivated in Bengal and north-east India (Sharma et al., 2009).

Cultivation : Nigella sativa L. is generally cultivated on dry soil between November to April. The initial material for propagation of this medicinally significant herb generally includes cultivation from seeds that take 10-15 days to germinate. It can be also propagated through tissue culture technique via callus culture from leaf, stem and root explants (Atal et al., RRL Jammu -CSIR 1982).

Constituents : Nigella sativa L. seeds have rich and significant chemical composition. Historically, the first chemical investigation on the Nigella sativa seeds started on the year 1880 when the first report was published depicting the presence of

37% oil and 4.1% ash (calcium salts) in the seeds. (Greenish HG, 1880). Nigella sativa black seeds are reported to possess amino acids, carbohydrates, fixed and volatile oils (Khan, 1999).The yield of Nigella sativa L. fixed oil ranges from 22.0 to 40.35% (Sener et al., 1985; Ali and Blunden, 2003; Cheikh-Rouhou et al., 2007).

The additional constituents of N. sativa include 20.85% protein, 38.20% fats, 4.64%, moisture 4.37%, ash 7.94%, crude fiber 31.94% carbohydrate. Potassium, phosphorous, sodium and iron were also predominant elements, it also contains cholesterol, campestrol, stigmastrol, betasitosterol (Riazet al., 1996; Salma et al., 2006). Nigella sativa meal is a cheaper source of food as compared to other traditional meals like cotton, sun flower and soybean meal (Chaudhry& Tariq, 2008). Specific chemical analyses of the volatile oil started during the years 1960-1963, (Mahfouz and El-Dakhakhny, Canonica et al) revealed Thymoquinone (2-isopropyl-5-methyl-benzoquinone) that may attain up to 27.8% of the volatile oil (w/w), Carvacrol (2-methyl-5-(1-methyl ethyl) phenol (5.8-11.6% (w/w)). Researchers also investigated that the seeds are also rich in proteins, when Nigella. sativa seeds were fractionated using SDS-PAGE, they were found to contain a number of protein bands ranging from 10 to 94 kDa molecular mass (Haq et al., 1999).

The important minerals like calcium, phosphorus and iron were found to be in appreciable amounts, while zinc, calcium, magnesium, manganese and copper in meager quantities (Nergiz and Ötles, 1993; Abu Jadayilet al., 1999; Haqet al., 1999; Khan, 1999; Ali and Blunden, 2003). Similarly, Takruri and Dameh (1998) reported the presence of iron, copper, sodium, potassium, calcium, zinc and phosphorous in quantities of 105, 18.4, 496.0, 5257, 1859, 60.4 and 5265mg/kg, respectively (Ashraf et al., 2006; Cheikh-Rouhouet al., 2007).A qualitative analysis of N. sativa has revealed the presence of sterols, triterpenes, tannins, flavanoids, cardiac glycosides, alkaloids, saponins, volatile oils, volatile bases, glucosinolates and anthraquinones(A1-Yahya, 1986).Qualitative evaluation of the black seed oil via capillary GC-MS technique has enabled the identification of 67 compounds, when classified into various functional groups corresponded to the following data: monoterpenes (~46%); carbonyl compounds(~25%); phenols (~1.7%); alcohols (~0.9%) and esters (~16%) (Aboutable et al., 1986).

Toxicological studies : Researchers carried out some of the studies dealing with the acute toxicity of the Nigella sativa and its components. In these studies the acute LD50 values of the fixed oil and volatile oil were found to be 11.9 ml/kg i.p. and 0.54 ml/kg i.p. in mice, respectively (Ozbek H, Ozturk M et al., 2004). In another study mice tolerated the methanolic and the chloroform extracts for up to 21 g/kg orally (Vahdati-Mashhadian N et al., 2005). The LD50 of the fixed oil in rats was found to be 12 ml/kg i.p. (unpublished observations). With regard to the whole powdered seeds, mice tolerated doses of 2g/kg orally/day for 5 days (Ali BA and Erwa HH, 1993). Humans also tolerated doses of 2 g of the crushed seeds per day for 28 days (El Kadi M, Kandil O et al., 1990).In some recent studies, the oral administration of aqueous extracts of the black seeds of Nigella sativa for 14 days has been reported to cause no toxicity symptoms in male Sprague- Dawley rats (Tennekoon et al., 1991).The safety of consuming black seeds was also recently reported by Al-Homidan et al., (2002) whereby the seeds did not affect the growth of 7-day-old Hibro broiler chicks when fed to them at 20 and 100 g/kg of the diet for 7 weeks. However several studies have reported the safety of consuming Black seeds, a recent study has shown that the herb is relatively unsafe if consumed for prolonged periods of time (Zaoui et al., 2002b).LD50 values obtained by single doses, orally and intraperitoneally administered in mice were 28.8 and 2.06ml/kg b.w., respectively. Treatment of animals with a daily oral dose of 1 ml/kg b.w. of NSO for 12 weeks resulted in significant slowdown of the body weight inN. Sativa-treated animals compared to untreated control animals.

Nigella sativa oil with different dose schedules have been tried i.e. 400 mg/kg/day (Fararh, 2004), 0.5-2.0 mL/kg/day (Zaoui et al.,

2002) and 250 & 500 mg/kg (Al-Ghamdi, 2003) in rats and 40 to 80 mg/kg/day given as capsules in humans suffering from allergic diseases (allergic rhinitis, bronchial asthma and atopic eczema) (Kalus et al., 2003) and 2 gm Nigella sativa seeds in normal humans (Bamosa et al., 1997).

Reported pharmacological activities :- Herbal plants have been used since past times to improve human and animal health. Introduction of assays and standards in the early 20th century laid the foundation for modern western pharmacology (Vuorelaa et al., 2004; Costa-Lotufo et al., 2005; Ramaa et al., 2006; Rader et al., 2007).This chapter will review the medicinal potential of N. sativa seed extracts and emphasize the reasons for its long history of use in Nigella sativa medicinal plant is one among the extensively studied pharmacologically. The extracts of Nigella sativa seeds have been used by patients to suppress coughs (Mahfouz et al., 1960), disintegrate renal calculi (Hashem and El-Kiey, 1982), retard the carcinogenic process (Hassan and El-Dakhakhny, 1992; Worthen et al., 1998), treat abdominal pain, diarrhea, flatulence and polio (Enomoto et al., 2001), exert choleretic and uricosuric activities (El-Dakhakhny, 1965), anti-inflammatory(Chakravarty, 1993; Houghton et al., 1995) and antioxidant effects (Mansour et al., 2002).The essential oil was also shown to have antihelminthic (Agarwal et al., 1979), antischistosomal (Mahmoud et al., 2002), antimicrobial (Hanafy and Hatem, 1991; Aboul-Ela et al.,1996) and antiviral (Salem and Hossain, 2000) effects.

Besides, the crude oil formed from the seeds produce a wide variety of pharmacological actions such as antihistaminic (El-Dakhakhny, 1965; Mahfouz et al., 1965; Chakravarty, 1993), diuretic and antihypertensive (El-Tahir et al., 1993b; Zaoui et al., 2000), hypoglycemic(Al-Hader et al., 1993), antinociceptive(Abdel-Fattah et al., 2000), respiratory stimulation (El-Tahir et al., 1993), hematological (Enomoto et al., 2001) hepatoprotective (Daba and Abdel-Rahman, 1998) and immunopotentiating (Swamy and Tan, 2000) effects.The other pharmacological properties appear to be involved in the beneficial effects of black seed oil on headache, flatulence, blood homeostasis abnormalities, rheumatism and related inflammatory diseases (Boulos, 1983). Furthermore, the seeds are believed to possess carminative, stimulatory and diaphoretic properties and are utilized to cure bronchial asthma and eczema (Boulos, 1983). At the Cancer Research Laboratory of Hilton Head Island, South Carolina, USA, one of the major experimental studies so far proved that Nigella sativa oil had enormous success in tumour therapy without the negative side effects of common chemo-therapy.

Nigella sativa seeds have potential to treat oxidative stress (Singh et al., 2005), diabetes mellitus (Mansi, 2006; Kanter, 2008), respiratory problems (Boskabady et al., 2004, 2007)hypercholesterolemia & cardiovascular disorders (Bamosa et al., 2002; Ebru et al.,2008), chronic inflammation (Al-Othman et al., 2006; Sethi et al., 2008), immune dysfunction (Salem, 2005), and different types of cancers (Al-Johar et al., 2008; Yi et al., 2008). Health relating benefits of Nigella sativa are accredited to its rich nutritional profile.

Figure 1. Showing Nigella sativa whole plant, Mature capsule and black seeds

Plant with Inflorescence

Mature Capsule containing black seeds

Black Seeds

CONCLUSION : The WHO has recognized the contribution of traditional health care in tribal communities. It is very essential to have an appropriate documentation of medicinal plants and to know their potential for the improvement of health care system via an eco-friendly system. Therefore importance should be given to the potentiality of studies as these can provide a very effective strategy for the discovery of useful medicinally active identity.

Nigella sativa L. seeds possess over hundred chemical bioactive compounds.There are still many constituents in this herb that haven't been discovered and identified. There would be always some who doubt the miraculous power of black seeds and will doubt that they can cure all diseases and it has to do with trust and belief in the miracle. Coupling the mentioned beneficial effects with its use in folk medicine, Nigella sativa L. seeds are excellent source of active ingredients that possess potential therapeutic modalities in different clinical settings. However, the efficiency of the active ingredients should be measured by the nature of the disease. The present review on Nigella sativa L. might be useful to supplement information regarding its significance in the way of its acceptability as a medicinal herb to be conserved , cultivated and finally to fight a range of life threatening diseases.

ACKNOWLEDGEMENT : The author acknowledges the supervisor Dr. Kirti Jain, Prof. & Head, Department of Botany Govt Science and Commerce college Benazeer, Bhopal (M.P) India for her kind assistance and support and for her inspiration to begin my Ph.D. research work.

REFERENCES :

- A1-Yahya MA. Phytochemical studies of the plants used in traditionalmedicine of Saudi Arabia. Fitoterapia. 1986; 57(3): 179-182.
- Abdel-Fattah AM, Matsumoto K, Watanabe H. Antinociceptive effects of Nigella sativa oil and its major component, thymoquinone in mice. Eur J Pharmacol. 2000; 400: 89–97.

- Abdulelah HAA and Abidin BAHZ. In vivo anti-malarial tests of Nigella sativa (black seed) Different extracts. Am. J. Pharm. Toxic. 2007; 2: 46-50.
- Aboul Ela MA, El-Shaer NS, Ghanem NB. Antimicrobial evaluation and chromatographic analysis of some essential and fixed oils. Pharmazie. 1996; 51: 993–4.
- Abu-Jadayil S, Tukan SKH and Takruri HR. Bioavailability of iron from four different local food plants in Jordan. Pl. Foods.Human.Nut. 1999; 54: 285–294.
- Agarwal R, Kharya MD, Shrivastava R. Antimicrobial and anthelminthic activities of the essential oil of Nigella sativa Linn. Indian J Exp Biol. 1979; 17: 1264–1265.
- Ahmad Z and Ghafoor A. Nigella sativa – A potential commodity in crop diversification traditionally used in healthcare. In: Breeding of Neglected and Under- Utilized Crops, Spices and Herbs. (Eds.): S. Ochatt and S. 2007.
- Al-Ghamdi MS. The anti-inflammatory, analgesic and antipyretic activity of Nigella sativa. J Ethnopharmacol. 2001; 76: 45–48.
- Al-Ghamdi, MS. Protective effect of Nigella sativa seeds against carbontetrachloride-induced liver damage. Am. J. Chin. Med. 2003; 31: 721-728.
- Al-Hader AA, Aqel MB, Hasan ZA. Hypoglycemic effects of the volatile oil of Nigella sativa seeds. Int J Pharmacogn. 1993; 31: 96–100.
- Al-Homidan A, Al-Qarawi AA, Al-Waily SA, Adam SE. Response of broiler chicks todietary Rhazya stricta and Nigella sativa. Br Poult Sci. 2002; 43: 291–296.
- Ali A, Alkhawajah, Randhawa MA and Shaikh NA. Oral and interaperitoneal LD50 of thymoquinone an active principal of Nigella sativa in mice and rats. J. Ayub Med. Coll. 2008; 20(2): 25-27.
- Ali BA and Erwa HH. Effect of Nigella sativa on ingestion ability of mice peritoneal macrophages. Saudi Pharm J. 1993; 1: 18-22.
- Ali BH, Blunden G. Pharmacological and toxicological properties of Nigella sativa. Phytother Res. 2003; 17(4): 299-305.
- Al-Johar D, Shinwari N, Arif J, Al-Sanea N, Jabbar AA, El-Sayed R, Mashhour A, Billedo G, El-Doush I and Al-Saleh I. Role of Nigella sativa and anumber of its antioxidant constituents towards azoxymethane-inducedgenotoxic effects and colon cancer in rats. Phytother. Res. 2008; 22: 1311-1323.
- Al-Othman AM, Ahmad F, Al-Orf S, Al-Murshed SK and Arif Z. Effect of dietary supplementation of Ellataria cardamomum and Nigella sativa on the toxicity of rancid corn oil in Rats. Int. J. Pharmacol. 2006; 2: 60-65.
- Arias TD. Glosario de Medicamentos: desarrollo, evaluación y uso. Organización Panamericana de la Salud. OMS, Washington DC. 1999.
- Ashraf M, Ali Q and Iqbal Z. Effect of nitrogen application rate on the content and composition of oil, essential oil and minerals in black cumin (Nigella sativa L.) seeds. J. Sci. Food Agric. 2006; 86: 871–876.
- Ashraf, Rizwan et al., Plant (Garlic) Supplement with standard Antidiabetic agent provides better Diabetic control in Type-II Diabetes patients. Pakistan Journal of Pharmaceutical sciences. 2011; 24(4): 565-570.
- Atal CK and Kapur BM. Cultivation of Medicinal Plants, Regional Research Laboratory, CSIR, Jammu-Tawi. 1982; 19: 577.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

कृषि उपज मंडी का महत्व (मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में)

डॉ. महेन्द्र जैन
शैल कुमारी शर्मा
विभागाध्यक्ष, डॉ. महेन्द्र जैन, मातागुजरी महिला महाविद्यालय सिविक सन्टर, जबलपुर (म.प्र.)
शोधार्थी, शैल कुमारी शर्मा, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

शोध सार : कृषि उपज मंडिया कृषि उपज के विपणन के लिये महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कृषकों को उनकी कृषि उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो इसलिए कृषि उपज मंडियों की स्थापना की गयी। परंतु इनमें आज भी समस्याएं विद्मान है। जिनको दूर करना आवश्यक है। कृषि उपज मंडियां किसानों और व्यापारियों के अलावा सामान्य लोगों एवं शोशान्मुखी व्यक्तियों के लिए भी लाभप्रद सिद्ध हुई है। कृषि विपणन के क्षेत्र में कृषि उत्पादन मंडी समितियों में एक क्रांति को जन्म दिया है ये समितियां उनके क्षेत्र में आने वाली मंडी स्थलों पर कृषकों के द्वारा लाये जाने वाले कृषि उत्पादों को धूप, बरसात आदि से बचाने के लिए सुरक्षित चबूतरों एवं शेड्स की व्यवस्था करती है। कृषकों के आराम के लिए व्यवस्था करती है तथा उनके जानवरों के बांधने के लिए उचित स्थान व पीने के पानी की उचित व्यवस्था करती है। कृषि उपज मंडी एक ऐसा स्थान है जहॉ किसानों को विपणन समस्या का हर प्रकार से हल प्राप्त होता है एवं उन्हें उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त होता है।

म.प्र. में पिछले 15 वर्षों में खाद्य के संबंध में व्यापक बदलाव आया है बाजार और सरकार ने इस प्रदेश को प्रयोगों की धरती मान लिया है। 1990 के बाद म.प्र. में खाद्यान्न कृषि के बाजाय नकद फसलों के उत्पादन को बहुत ज्यादा प्रोत्साहित किया गया है। नकद फसलों के रूप में सोयाबीन और कपास को खूब तवज्जों मिली है। म.प्र. को देश सर्वाधिक सोयाबीन उत्पाादक राज्य माना जाता है इसे सोया प्रदेश भी कहते हैं। 2015–16 में सोयाबीन सर्वाधिक 45 लाख हेक्टेयर में बोयी गयी है। 2015–16 में राज्य की प्रमुख फसलों में गेंहू हो गयी जो 60 लाख हेक्टेयर में बोयी गयी है। वर्ष 2003–04 में जहॉ प्रदेश में कुल उत्पादन 158.72 लाख मीट्रिक टन अनाज का उत्पादन हुआ वहीं 2010–11 में 217.52 लाख मीट्रिक टन अनाज का उत्पादन हुआ। वर्ष 2014–15 में राज्य के क्षेत्रफल का 60.320 लाख मीट्रिक टन अनाज उत्पादित हुआ। स्थिर मूल्य पर राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का अंशदान 2014–15 में 28.60 प्रतिशत रहा। अनाज उत्पादन में म.प्र. का देश में 9वां स्थान है देश के कुल उत्पादन का 4.65 प्रतिशत। कृषि वृद्धि दर 2016–17 20.44 प्रतिशत अनुमानित है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2005 के अनुसार

प्रस्तावना :– मनुष्य को अपने जीवनयापन के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं में से मुख्य आवश्यकता भोजन, कपड़ा तथा मकान की होती है लेकिन सबसे आवश्यक है उसे जीवित रहने के लिए भोजन पर निर्भर रहना पड़ता है, जिसे हम कृषि उपज के रूप में प्राप्त करते हैं यह विद्रित है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है, की 70.2 जनसंख्या कृषि पर आश्रित है। यहां की अर्थव्यवस्था कृषि आधारित है। भारतीय कृषक हमारी अर्थव्यवस्था के आधार स्तंभ हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि एवं कृषकों की समस्याओं के निराकरण हेतु सुनियोजित प्रयास किये गये हैं जिसके सकारात्मक परिणाम भी सामने आये हैं। हरित क्रांति के पश्चात नई–नई तकनीकों कर खेती करने की पद्धति को महत्व दिया जा रहा है।

म.प्र. के कुल 6.32 लाख कृषक परिवार हैं। म.प्र. कृषक ऋण की दृष्टि से देश में 10वें स्थान पर है कुल खाद्यान्न में 9.2 प्रतिशत अंश 2015–16 में प्रथम स्थान प्राप्त राज्य बन गया है। म.प्र. में सर्वाधिक भू–उपयोग खाद्यान फसलों के अंतर्गत (लगभग 62 प्रतिशत) है। राज्य के लगभग 49 प्रतिशत भाग पर कृषि की जाती है।

कृषि उत्पादन एवं विपणन योग्य आधिक्य में वृद्धि के साथ–साथ कृषि विपणन का कार्यभार भी बढ़ रहा है। कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलाने प्रदेश में अधिसूचित कृषि उपजों का बेहतर नियमन एवं नियंत्रण स्थापित करने कृषकों को समयावधि में राष्ट्रीय आयोग की अनुशंसा के आधार पर म.प्र. राज्य कृषि विपणन बोर्ड ने गठन का प्रावधान वर्ष 1973 में मंडी अधिनियम में किया जिसमें शासन द्वारा म.प्र. कृषि उपज मंडी अधिनियम के प्रभावपूर्ण ढंग से अधिनियम किया गया। ताकि कृषि उत्पादव का विनियमन पूर्ण दक्षता एवं सुव्यवस्थित रूप से किया जा सके। राष्ट्रपति की अनुमति दिनांक 18 अप्रैल 1973 को प्राप्त हुई और इस अनुमति का प्रकाशन म.प्र. राजपत्र

दिनांक 27 अप्रैल 1973 को प्रथम बार किया गया। म.प्र. कृषि उपज मंडी अधिनियम की धारा 40 के अंतर्गत राज्य सरकार की अधिसूचना द्वारा एक बोर्ड स्थापित करने का प्रावधान किया गया है तदानुसार म.प्र. राज्य कृषि विपणन बोर्ड जून 1973 से कार्यरत हैं।

वर्तमान में प्रदेश में 257 मंडियां एवं 286.81 उपमंडियां कार्यरत हैं। प्रदेश की फल सब्जी हेतु 121 कृषि उपज मंडी समितियों को अधिसूचित किया गया है। प्रदेश की कृषि उपज मंडी समितियों में भूखंड, दुकान, गोदाम, केन्टीन आदि के आवंटन के लिए म.प्र. कृषि उपज मंडी नियम 2009 बनाये गये जो वर्तमान में प्रभावशील है। वर्तमान में जबलपुर जिले में 35 मंडी एवं उपमंडियों विद्मान है। कृषि विपणन के क्षेत्र में कृषि उत्पादन मंडी समितियों में एक क्रांति को जन्म दिया है। ये समितियां उनके क्षेत्र में आने वाली मंडी स्थलों पर कृषकों के द्वारा लाये जाने वाले कृषि उत्पादों को धूप, बरसात से बचाने के लिए सुरक्षित चबूतरों एवं शेड्स की व्यवस्था करती है।

मंडी बोर्ड सेवा में दो वर्ग के अधिकारी कर्मचारी मुख्यालय सहित प्रदेश की 257 मंडियों में कार्यरत हैं एक वर्ग है जो मंडी बोर्ड सेवा का कहलाता है दूसरा वर्ग है जो मंडी समिति सेवा के अधिकारी कर्मचारी होते हैं। मंडी सेवा में भृत्य से लेकर सहायक लेखापाल तक के कर्मचारी मंडी समिति सेवा के होते हैं।

उद्देश्य :

- नियमित कृषि उपज मंडियों की स्थापना की सार्थकता का परीक्षण करना।
- नियमित कृषि उपज मंडियों की विपणन प्रणाली के विकास हेतु मंडियों के विकास की संभावनाओं का पता लगाना।
- कृषि उपज मंडियों एवं उनकी समितियों की कार्य प्रणाली का मूल्यांकन करना।

महत्व :–

विश्व की प्रगति विभिन्न क्षेत्रों में किये गये शोध के कारण ही है। आज प्रत्येक क्षेत्र में इस बात का अनुभव किया जा रहा है कि यदि जान के विस्फोट को समझना है, प्रगति की होड़ में आगे बढ़ना है तो इसका एकमात्र साधन शोध कार्य ही हो सकता है।

म.प्र. शासन द्वारा किसानों को कृषि उपज का सही मूल्य दिलाने हेतु प्रमुख विपणन क्षेत्रों में कृषि उपज के विपणन हेतु कृषि उपज मंडी की स्थापना की गयी जिसका संचालन कृषि उपज अधिनियम 1972 के द्वारा किया जाता है। म.प्र. में कृषि उपज मंडी की बहुत अधिक उपयोगिता है क्योंकि यहां का कृषक वर्ग मंडी प्रांगण में ही अपनी उपज का विपणन करता है। किंतु कृषि उपज मंडी एवं समितियों में आज कुछ समस्याएं विद्यमान हैं उन्हीं समस्याओं का मूल्यांकन करने के लिए कृषि उपज मंडी विपणन बोर्ड की स्थापना की गयी है। म.प्र. सरकार द्वारा किसानों के लिए नई योजनाएं चलायी जाती हैं जिनका लाभ कृषकों को कृषि उपज मंडी समितियों द्वारा प्राप्त होता है। कृषि उपज मंडी में किसानों को नई सुविधाएं प्राप्त होती हैं। कृषि उपज मंडी के समुचित विकास के लिए कृषि उपज मंडी बोर्ड एवं शासन द्वारा नये–नये कदम उठाये जा रहे हैं। जिनका महत्व किसानों के लिए बढ़ गया है। कृषक के जीवन में कृषि उपज मंडी का वैसा ही महत्व है जैसा प्यासे को कुएं का महत्व होता है।

निष्कर्ष :–

कृषि उपज मंडी की स्थापना जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए की गयी थी, उन उद्देश्यों का पूर्ण होना आवश्यक है। कृषक वर्ग एवं व्यापारी वर्ग अपने माल का उचित मूल्य एवं लाभ प्राप्त कर सकें एवं उनकी समस्याओं का निवारण हो सके। अतः शासन को उचित नीतियों का निर्वाहन करना आवश्यक हो गया। कृषि उपज मंडी सभी वर्गों (किसान, व्यापारी, सामान्य वर्ग) के लिये महत्व रखती है। सबसे अधिक महत्व किसानों का है जिनको कृषि उपज का विपणन यहां पर किया जाता है। अतः सभी कार्य एवं योजनाओं का संचालन किसानों के लिए ही होना चाहिए। म.प्र. एक ऐसा राज्य जहां पर सबस पहले किसानों का हित ही देखा जाता है।

संदर्भ सूची

1. अनुसंधान परिचय – पारस नाथ – सी.पी. राय
2. पंचायती राज्य एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था – माहेश्वरी
3. म.प्र. कृषि उपज मंडी अधिनियम– प्रो.के.एल. सेठी
4. भारतीय कृषि विपणन – डॉ. ए. करूणा राय

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

सार्वजनिक वितरण प्रणाली में राशन वितरण व्यवस्था का अध्ययन

डॉ. अशोक सोनी
निकिता खरे
विभागाध्यक्ष, डॉ. अशोक सोनी, हवाबाग महिला महाविद्यालय नर्मदा रोड, जबलपुर (म.प्र.)
शोधार्थी, निकिता खरे, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

शोध सार : प्रस्तुत शोध पत्र में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत राशन वितरण व्यवस्था का अध्ययन किया गया है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली खाद्य सुरक्षा व्यवस्था का अभिन्न तथा महत्वपूर्ण भाग है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली एक प्रक्रिया के तहत खाद्यान्नों का वितरण किया जाता है। समाज का वह वर्ग जिनकी आय बहुत ही न्यूनतम है जो अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सक्षम नहीं है। उन्हें इस व्यवस्था के द्वारा सस्ती तथा रियासती कीमतों पर आवश्यक खाद्यान्न उपलब्ध कराये जाते है। यह सम्पूर्ण वितरण व्यवस्था एक प्रक्रिया के द्वारा पूर्ण होती है। जिसको कई चरणों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक चरण की अपनी प्रमुख भूमिका होती है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली खाद्य सुरक्षा व्यवस्था की महत्वपूर्ण कड़ी हैं जो उपभोक्ताओं को खाद्यान्न उपलब्ध करायी जाती है। उपयुक्त शोध पत्र में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत राशन का वितरण किस प्रकार किया जा रहा है उसका विवेचन शोध पत्र में किया गया।

मुख्य की वर्ड – सार्वजनिक वितरण प्रणाली

उद्देश्य :– सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत राशन वितरण व्यवस्था का अध्ययन।

प्रस्तावना :– स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत देश अपनी पुरानी स्थिति से निकलकर विकासशील अवस्था में पहुंचा है, वर्तमान समय में भारत देश ने बहुत सी विशाल समस्याओं का समाधान किया है तथा बहुत सी समस्याए हैं जिनके समाधान के लिए सरकार निरंतर प्रयासरत है। प्राचीन समय से ही खाद्यान्न की समस्या प्रमुख रही है। जिसके लिए सरकार द्वारा समय–समय पर आवश्यकताएँ लागू की गयी है। प्रथम पंचवर्षीय योजना जो 1951 में लागू की गयी थी उसमें ही खाद्य सुरक्षा के विषय में आवश्यक कदम उठाये गये थे।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की शुरूआत गरीब तथा अभावग्रस्त लोगों को रियासती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना था। इस राशन वितरण प्रणाली को प्रारंभ करने की अधारशिला केन्द्र सरकार द्वारा रखी गयी। यह व्यवस्था लोगों के जीवन स्तर से जुड़ी हुए है। भारत देश में ऐसे लोगों की संख्या अधिक है जिन्हें पर्याप्त भोजन प्राप्त नहीं हो पाता अन्यथा जो भोजन प्राप्त होता है उसमें भी पोशक तत्वों का अभाव होता है। उन्हें रियासती दरों पर उपलब्ध कराना। इसलिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रारंभ किया गया था।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रारंभ

सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रारंभ बंगाल राज्य में अकाल के समय वर्ष 1960 के दौरान किया गया था बाद में इसे भारत के कुछ शहरों तथा अभावस्त क्षेत्रों पर प्रारंभ किया। बाद के कुछ वर्षों में इस राशन वितरण व्यवस्था को संपूर्ण देश में लागू किया गया। प्रारंभिक दौर में यह व्यवस्था सम्पूर्ण प्रभाव दिखाने में असफल रही। इसमें बहुत सी कमियां पायी गयी तथा इनकी समीक्षा की गयी और इसे लक्ष्य केन्द्रित बनाने की आवश्यकता महसूस की गयी। जून 1997 को इसे लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के रूप में की गयी। इस प्रणाली का मूल्य उद्देश्य गरीबों की सहायता करना तथा उन्हें रियारती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना इस वितरण व्यवस्था का आधार तथा मुख्य लक्ष्य निर्धारित किया गया।

राशन वितरण व्यवस्था की प्रक्रिया

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत राशन का वितरण निश्चित प्रक्रिया के तहत किया जाता है। इस प्रक्रिया की प्रथम पद किसान होता है। यह संपूर्ण प्रक्रिया किसानों से प्रारंभ होकर उपभोक्ताओं पर समाप्त होती है। उपभोक्ता इस प्रक्रिया की अंतिम चरण होती हैं।

इस सम्पूर्ण वितरण को प्रस्तुत चित्र द्वारा समझा जा सकता है।

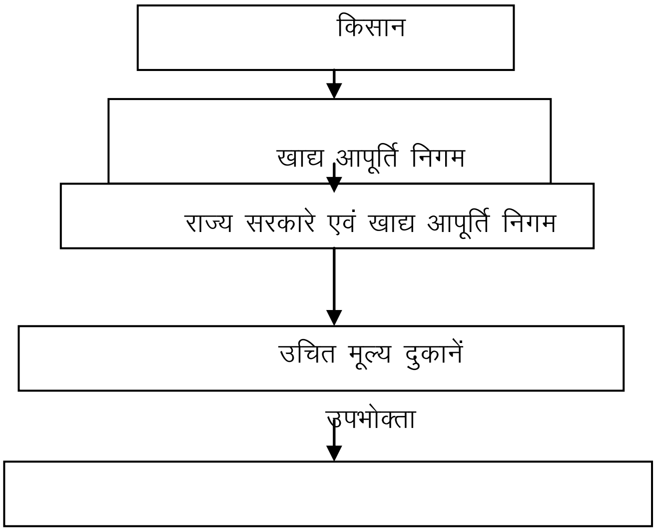

यह प्रक्रिया इन पांच चरणों में विभाजित होती है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत आव" यक खाद्य पदार्थों का उत्पादन किया जाता है यदि उत्पादन कम हो तो निर्यात किया जाता है।

1. **किसानों से खाद्य पदार्थों को क्रय करना** :– सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत जिन खाद्यान्नों का वितरण किया जाता है उनका क्रय सीधा किसानों से न्यूनतम समर्थन मूल्य पर किया जाता है। यह मूल्य सरकारों द्वारा किसानों को खाद्यान्न क्रय करने के बदले दिया जाता है। यह मूल्य बाजार मूल्य से अधिक होता है। यह किसानों को उचित मूल्य दिलाने का अच्छा साधन है तथा किसानों को अधिक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करने का उचित तरीका है।

2. **भारतीय खाद्य तथा आपूर्ति निगम** :– सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सरकार द्वारा खाद्यानों के भण्डारण तथा वितरण की जिम्मेदारी दी जाती है। जो खाद्यान्न संबंधित मामलों का प्रमुख विभाग है तथा इससे संबंधित कार्यों को संचालित करता है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत भारतीय खाद्य निगम निम्नलिखित कार्यों के लिए जिम्मेदार है–

1. किसानों से खाद्यान्नों को प्राप्त करना।

2. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के स्टॉक का रखरखाव करना।
3. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत वफर स्टॉक बनाए रखना।
4. खाद्यान्नों का आवंटन राज्य सरकार को करना।

3. **खाद्यान्नों का वितरण राज्य सरकारों** :– भारीय खाद्य एवं आपूर्ति निगम द्वारा खाद्यान्नों का वितरण राज्य सरकारों को राज्य में राशनकार्ड धारकों की संख्या के आधार पर किया जाता है। खाद्यान्नों के आवंटन के लिए गरीबी रेखा के नीचे तथा अन्तोदय अन्य योजना के परिवारों को प्राथमिकता दी जाती है। इसका वितरण गरीबों की संख्या के आधार पर किया जाता है। इन खाद्यान्नों के रखरखाव की जिम्मेदारी राज्य सरकारों द्वारा अपने राज्य के खाद्य तथा आपूर्ति विभाग को सौंप दी जाती है।

4. **उचित मूल्य की दुकानों पर वितरण** :– इस विभाग द्वारा जिले में खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति विभाग कहा जाता है। इस विभाग द्वारा खाद्यान्नों का वितरण उचित मूल्य दुकानों पर किया जाता है। जिन्हें आम बोलचाल की भाषा में राशन की दुकानों के नाम से जाना जाता है। यह दुकान व देश के प्रत्येक ग्रामीण तथा शहरी इलाकों में खोली जाती है। जिनके द्वारा उपभोक्ता को राशन आसानी से उपलब्ध हो सकता तथा इन दुकानों के संचालन द्वारा लोगों को रोजागार के अवसर भी प्राप्त हो रहे हैं।

5. **उपभोक्ताओं को खाद्यान्नों का वितरण**:– इन उचित मूल्य दुकानों द्वारा उपभोक्ताओं को राशन वितरण किया जाता है। यह इस राशन वितरण व्यवस्था का अंतिम चरण होता है। इन राशन दुकानों द्वारा ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में वितरण किया जाता है। इस वितरण व्यवस्था द्वारा उपभोक्ताओं को जो राशनकार्ड जारी किए जाते हैं उसी कार्ड के आधार पर उपभोक्ताओं को खाद्यान्न वितरण किया जाता है।

उपसंहार :– जैसा कि विदित है सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत खाद्य पदार्थों के वितरण की जिम्मेदारी का निर्वहन केन्द्र वह राज्य सरकार की साझेदारी द्वारा किया जाता है। जिसमें भारतीय खाद्य निगम इसके वितरण व भण्डारण की जिम्मेदारी होती है तथा राज्य खाद्य आपूर्ति निगम द्वारा इसका वितरण जिले में तथा ग्रामीण इलाकों में उचित मूल्य दुकानों पर किया जाता है। जहां से इन खाद्य पदार्थों को उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जा सकता है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत किसानों द्वारा खाद्य पदार्थों के उपार्जन से लेकर उपभोक्ताओं तक खाद्य पदार्थों को पहुँचाना एक सम्पूर्ण प्रक्रिया है। इस प्रणाली द्वारा समाज के उस वर्ग को लाभांवित किया जा रहा है, जिनकी आय बहुत सीमित है तथा जो खाद्य पदार्थों को क्रय करने हेतु सक्षम नहीं है, उनकी सहायता करती है। खाद्य पदार्थों के नये मूल्य को स्थायित्व प्रदान करती है, गरीबी तथा निम्न वर्ग को खाद्य सुरक्षा प्रदान करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारतीय अर्थशास्त्र, डॉ. जे.सी. पंत, डॉ. जे.पी मिश्रा, वर्ष 2010.
2. व्यवहारिक अर्थशास्त्र, डॉ. ए.सी. जैन, कैलाश पुस्तक सदन, 2009.
3. भारतीय अर्थशास्त्र, विकास एवं आयोजन
4. भारतवर्ष, 2014

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

नासिरा शर्मा के उपन्यासों की भाषा में नारी विमर्श की अभिव्यक्ति

डॉ.(श्रीमती) भावना यादव
शिवपुरी, टेमर भीटा, जबलपुर मध्यप्रदेश

भूमिका : साहित्य में सरसता, रोचकता, सहजता और स्वाभाविकता का श्रेय भाषा एवं शिल्प को जाता है। भाषा के द्वारा ही व्यक्ति अपनी अभिव्यक्ति कर पाता है। भाषा जिस तरह व्यक्ति को अभिव्यक्त करती है उसी भाँति व्यक्ति साहित्य द्वारा अभिव्यक्त होता है। साहित्य, व्यक्ति ही नहीं पूरे समाज को भी दर्शाता है। इसलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्यकार अपनी भाषा के हथियार से अपना मनोरथ पूरा करता है और इसमें नर–नारी पात्रों का भेद नहीं होता किन्तु नासिरा शर्मा का लक्ष्य नारी पीड़ा की अभिव्यक्ति है। अतः इसे दृष्टिगत रखते हुए हम उपन्यासकार की भाषा की समीक्षा प्रस्तुत करेगें।

आज नारी की स्थिति में परिवर्तन आ रहा है मानो वह अपनी सोच के पुरातन परिधान त्याग कर नए विचारों का श्रृंगार कर रही है, परन्तु पुरूष पात्रों की मानसिकता में अभी यह परिवर्तन हीं आए है। वह मानसिक रूप से परिवर्तन स्वीकारने को तैयार नहीं है। इसी कारण वह नारी से सामंजस्य नहीं बिठा पाता और अधिक आक्रमक होकर नारी पर प्रहार करता है। इससे अचंभित नारी अपने अस्तित्व और सम्बन्धों पर सोचने लगती है।

''हम औरते क्या है गीली मिट्टी कितनी बार हम अपने को मिटाकर नए–नए रूप से ढले यानी हमारा कोई अस्तित्व नहीं अधिकार नहीं विवाह का अर्थ है, अपना जन्म स्थान भुला देना और एक मनुष्य की इच्छा और रूचि का दास बन जाना''[1] अपने कठोर श्रम से नारी शिक्षा तो अर्जित कर रही है। कहीं–कहीं आर्थिक आत्म–निर्भरता भी पा सकी है किन्तु क्या वास्तव में वह आत्म–निर्भर या स्वतन्त्रता पाने की है। शाल्मली उपन्यास का नरेश यही सोचता है इसीलिए लेखिका लिखती है– ''उसे बनाने वाला स्वतन्त्रता देने वाला उसे इस शिखर पर पहुँचाने वाला और कोई नहीं, वह है, यानी शाल्मली का पति–नरेश।'' लेखिका पुरूषों के इस अहं भाव को समझाती है, तभी वह कहती है–''एक पुरूष की कुण्ठा का दास एक पति की आज्ञा का सेवक और नारी पर थोंपे शताब्दियों पुराने अभिशाप का नेतृत्व करेगा। संसार कहाँ से कहाँ पहुँच गया और आज पुरूषों के मस्तिष्क से अटकी नारी प्रतिभा इंच भर भी बदली नहीं।''[2] लेखिका मर्द की दोहरी मानसिकता को समझती है, इसीलिए लिखती है कि मर्द को चाहिए कि वह पहले स्वयं निर्णय करे कि उसे किस तरह की पत्नी चाहिए ''जब औरते अनपढ़, अनगढ़ मिलती हैं तो पुरूश उनसे कुढ़े ऊँचे बाहर की तरफ भागते है और जब शिक्षित, चुस्त औरते पत्नी के रूप में मिल जाती है तो उन्हें उनसे घबराहट का अहसास होता है और भयभीत होकर तीसरी किस्म की औरतों की तरफ भागते है क्या वे स्वयं जानते है उन्हें कैसी औरते कैसी पत्नियाँ''[3] इन पंक्तियों द्वारा लेखिका स्पष्ट करना चाहती है कि नारी आज भी पुरूष की दृष्टि में समाज की द्वितीय नागरिक हैं। उपर्युक्त पंक्तियों द्वारा लेखिका जिस भाषा का सहारा लेती है वह सटीक है।

आगे भी नारी को लम्बी यात्रा तय करनी है। नारी की स्थिति और परिस्थिति को नासिरा जी अपनी भाषा द्वारा प्रकट करती हैं। 'शाल्मली' उपन्यास में स्वतन्त्रता के लिए छटपटाती आधुनिक कामकाजी नारी शाल्मली के माध्यम से पति–पत्नि के अहंकार के टकराहटों तथा पुरूष नरेश के दर्प को लेखिका ने अपनी विवेचना का केन्द्र बताया है।

'ठीकरे की मँगनी' उपन्यास में अबोध शिशु को बाल विवाह न सही पर उसे जैसी मँगनी के फरे में डालकर इस कुरीति के दुष्परिणामों की शोक्ता नायिक महरूख भी नारी है। नायिका का धर्म संकट यह है कि एक ओर वह माता–पिता के दिए वचन और बाल्यकाल की मंगनी से बंधी है तो दूसरी ओर अपने मंगेतर रफत की जीवन शैली से दुखी है। अंततः न ही रफ से उसकी शादी हो पाती है। नायिका महरूख उच्च शिक्षा प्राप्त करती है। छोटे से कस्बे से दिल्ली पहुँचती है। वहाँ अपनी योग्यता प्रमाणित करके पुरानी जंजीरों को तोड़कर उन्मुक्त वातावरण में साँस लेती है, पर वह देखती है कि शिक्षा तो बहुतेरे पा रहे हैं, किन्तु संस्कार कहाँ है? इस बड़ी बात को लेखिका अपनी समर्थ भाषा द्वारा छोटे वाक्य में प्रकट कर देती है–''तालीम से समझ तो बढ़ी है, अपना हक तो पहचाना .... मगर लड़की अपना अच्छा बुरा समझे यह अक्ल तो नासिरा ही दे सकती है।''[4]

नासिरा जी अपनी भाषा के सहारे नारी की समस्या और शक्ति दोनों का चित्रण करती है। एक ओर वह पुरूष की हीनता को लक्ष्य करती है तो दूसरी ओर नारी की मनोग्रंथियों का विश्लेषण करती है। आत्महीनता की ग्रंथि का शिकार नरेश शाल्मली से

कहता है – ''तुक कभी–कभी मुझे उतनी ऊँची और गहरी लगती हो कि मेरा जैसा व्यक्ति न इतनी ऊँचाई पर चढ़ सकता है न गहरा उतर सकता है तुमसे मुझे भय लगने लगता है।'' यह पंक्ति पूरी तरह से नरेश के मन भावों और उसकी समस्या को व्यक्त करती है। लेखिका जहाँ नारी स्वान्तंन्र्य की बात करती है वहाँ उसकी मर्यादा को नहीं भूलती। वह मानती है कि नारी की आजादी का अर्थ पति से तलाक लेना मात्र नहीं है–''मेरी दृष्टि में स्वावलम्बी होने का अर्थ बिल्कुल नहीं है कि वह परिवार को तोड़ डाले और उन सारी भावनाओं से मुकर जाए, जो उसकी पहचान ही नहीं जरूरत भी है।

इस प्रकार नारी विमर्श की सारी स्थितियों पर लेखिका नासिरा भार्मा विचार करती हैं। वह पुरूष पात्रों का विवेचन भी करती हैं, उनका चरित्रांकन भी करती है तो इनके सहारे नारी ही उनके केन्द्र में होती है। यह कारण है कि 'कुइयाँजान' उपन्यास में वह छोटे से जल स्त्रोत को भी नारी भाव रूप ही चित्रित करती है। वह 'जीरो रोड' उपन्यास के माध्यम से भी धरती से कट गये लोगों के उस भावात्मक लगाव को प्रकट करती है। इस सारे चित्रण में भाषा उनकी शक्ति बनकर साथ रहती है। भाषा की इसी शक्ति का लक्ष्य कर डॉ. उदय नारायण तिवारी जैसे भाषाविद् लिखते हैं– ''भाषा एक सामाजिक दायित्व भी है और इसी से प्रेरित होकर साहित्य की सृष्टि होती है जब भाषा तथा भाषा शास्त्र के अध्ययन की गति मन्द पड़ जाती है तब साहित्य रचना में भी शिथिलता आ जाती है।''[5]

अन्ततोगत्वा यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा के पास न केवल समृद्ध शब्द भण्डार है अपितु वह अपनी भाषा का लोक संस्कार भी करती है और इसके लिए वह भाषा का शक्ति का बखूबी प्रयोग करती हैं, उनके उपन्यासों की भाषा अभिव्यक्ति में साहित्यिक सौष्ठव भी है। प्रसंग एवं पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग से वह पात्रों की मनः स्थिति और परिवेश को साकार कर देती है। अपनी भाषाई शक्ति के बल पर ही वह महिलाओं की सशक्ति और पीड़ा दोनों को वाणी दे पाती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 75
2. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 128
3. नासिरा शर्मा, शाल्मली, पृ. 154
4. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मँगनी, पृ. 22
5. डॉ. उदय नारायण तिवार, हिन्दी भाषा उद्भव और विकास

काव्य साहित्य में मानव जीवन और मानव मूल्य विकास

डॉ. ममता व्ही. त्रिपाठी
(HO.D. of Art Department)

मनुष्य ने अपने जीवन में श्रेष्ठ से श्रेष्ठ मूल्यों को अर्जित करने के लिए निरंतर तपमय संघर्ष किया है। यदि हम मूल्यों की खोज करते–करते उनकी परम्परा के उद्‌भव की ओर जाते है तो हमें विदित होता है कि सहस्त्रों वर्ष पूर्व से ही मानव ने मानवीय जीवन की अर्थवत्ता को समझने के लिए और उसे सुदृढ़ रूप से स्थापित करने के लिए तपमय साधकता का जीवन व्यतीत किया और परिणाम स्वरूप वह अपने मनावांछित कर्म में सफल भी हुआ। मनुष्य ने अपने जीवन को ज्यादातर आयामों में काम्य बनाने के लिए संघर्ष किया है और हो रहा है। वह व्यष्टि से समष्टि की ओर प्रसारित होता है, कहने का तात्पर्य यह है कि मानव–मूल्यों का विकास व्यक्तिगत स्तर से सामाजिक स्तर की दिशा में होता रहा है। जीवन में मूल्य–बोध की प्रक्रिया को समझना भी एक अहम् बात है – सभी जीवन मूल्यों का बोध व्यक्तिगत स्तर पर आविर्भूत होता है, परन्तु अन्य मनुष्यों की अनुभूतियों से सम्बन्ध होते–होते उन व्यक्तिगत स्तर के मूल्यों का परिष्कार हो जाता है। इस प्रकार मानव–मूल्यों की विकास यात्रा चलती रहती है।

भारतीय साहित्य में रस अथवा आनंद को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार किया गया है। काव्य से प्राप्त होने वाला आनंद इन्द्रिय–निर्पेक्ष होता है, जो कि भौतिक सुखों से सर्वथा अलग है। शब्द एवं दृष्य इन्द्रिय के माध्यम से या रस की प्रक्रिया सीधे–सीधे मन में प्रवाहित होती है। इस प्रक्रिया को देखते हुए यह बात निर्विवाद रूप से मान्य होनी चाहिए कि साहित्य में व्यक्त मूल्य अत्यंत महत्वपूर्ण और उदार होते है जो युग–युगान्तर तक आम जीवन में मूल्य प्रेरणा का सूत्रपात करते है।

जबकि मनुष्य का स्वभाव अप्रत्यक्ष होता है, परन्तु उसकी विशेषताएं एवं मूल्य सम्बन्धी धारणाएं तटस्थ नहीं होते, उन्हीं के आधार पर स्वभाव का मूल्यांकन होता है। मानव की उत्कृष्ट अच्छाई के रूप में ज्ञान, शील अथवा धर्म आदि को मानने पर उसकी उन्हीं विशेषताओं के अंतर्गत मूल्यवत्ता का संकेत कर सकते है।

मानव जीवन और मानव मूल्य :– इतनी प्रगति और विकास के बावजूद भी मानव–जीवन आज भी कई रहस्यों का पुंज है उसकी जीवनेच्छा के पीछे कई निगूढ़ विषय व्याप्त रहते है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्व के जीवन–जगत् का अवलोकन करने पर यही सिद्ध होता है कि मनुष्य सभी प्राणियों की अपेक्षा चिंतन–शक्ति से इतना ज्यादा समृद्ध हो गया है कि वह संसार के सभी प्राणियों में श्रेष्ठता हासिल कर गया। मनुष्य की निरंतर चिंतन–मननशीलता ने उसे मानवीय भावों से मंडित किया है, ''मानव जाति का इतिहास बताता है कि पशु–सुभ वृत्तियों से उभर उठने का प्रयत्न करते हुए ही मनुष्य ने मनुष्यता को पाया है। मनुष्य ने अपने निरंतर प्रयासों से जीवन को अत्यंत सुखपूर्ण बनाने की भरसक चेष्टा की है और अपने विकास के लिए नित्य नयी खोजों में श्रम करना जैसे अपना स्वभाव बना लिया है। परिणाम–सवरूप सम्पूर्ण विश्व में जो कुछ भी मनवेतर संसार है उसका अतिक्रमण कर लिया, अपनी व सम्पूर्ण मानवीय समाज की सुख सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए सश्रम विशिष्ट ज्ञान के नये आयाम खोजे जिस प्रकृति के आगोश में मनुष्य जन्मता है और जीवन यापन करता है वही सृष्टि या वही प्रकृति उसके जीवन की मूल अधिष्ठात्री पालनकर्मी और संहारक भी है। कहने का तात्पर्य यह है कि इसी प्रकृति में विस्तृत नियमों, सिद्धांतों आदि के निर्देश में चल रहा जीवन ही मानवीय जीवन कहलाता है। मनुष्य के अथक और सतत् श्रम से उसे जो श्रेष्ठताएं हासिल हुई है, उनमें नियम, सिद्धांत, मर्यादाओं आदि का उद्‌भव होता गया। इन्हीं सब बातों को मानव–मूल्यों की संज्ञा दी जाती रही है।

जीवन का विकास किस सीमा तक हुआ है इसकी एकमात्र कसौटी यह हो सकती है कि स्वयं मनुष्य का विकास कहां तक हुआ है? अस्तु, मानव–जीवन और जीवन–दृष्टि को सम्यक रूप में समझने के लिए आवश्यक यही है कि मानव चेतना का अध्ययन किया जाये, क्योंकि चेतना का सतत् प्रवाह ही जीवन है। मानव चेतना के विकास के स्तरों और दिशाओं का विश्लेषण करने से पूर्व हमें अपनी सीमाओं की परख कर लेनी चाहिए। यह निर्विवाद सत्य है कि

मानव का अन्तर्जगत्, बहिर्जगत् की तुलना में कहीं अधिक जटिल व्यापक एवं विशाल होता है, सृष्टि में आगे फेरबदल की संभावना न रहती। मानव–चेतना की अनेक सतहे है और कब कोई भाव अथवा विचार कितना बड़ा परिवर्तन उपस्थित कर दें यह नहीं कहा जा सकता। अतः इस सम्बन्ध में हम चेतना के विश्लेषण और तज्जनित निष्कर्षो को भी निश्चित और अंतिम नहीं कह सकते, फिर हमारा क्षेत्र और भी सीमति है। हमें केवल चेतना के उन विशिष्ट स्तरों को ही समझना है जहां मनुष्य अपने सृजनशील रूप में मूल्यों का उद्भावक एवं नियंता होता है, सृजन के क्षणों में चेतना अपनी निर्धारित और विच्छिन्न स्थिति से भिन्न स्थिति में होती है। इस क्षण में वह एक निश्चित संगति, एक अर्थ और एक क्रम में बंध जाती है। तब वह रिक्तता और विघटन को मानवीय गरिमा की प्रतिष्ठा और मूल्यों की खोज को प्रक्रिया में बाधक मानती है। उस क्षण में वह मानव–व्यष्टि को केन्द्र–बिन्दु तथा मानव सरणि को परिधि मानकर जीवन को अर्थवान बनाती है।

मानव की समग्रता भौतिक अथवा वैज्ञानिक तथ्य के साथ–साथ आध्यात्मिक सत्य में देखना समीचीन है। आत्मसत्य वे वस्तु–सत्य की प्रक्रिया अनिवार्यरूपेण साक्षात्कार करती है। मानव सदेह होता है, सप्राण होता है, दूसरी ओर निगूढ़ और उन्नत रहस्यों से मंडित। फिर भी जीवन को समझने के लिए इन तीन स्तरों से गुजरना अनिवार्य है – भाव बोध, विज्ञान और दर्शन। यह तीन प्रकार की मूल दृष्टियां जीवन को शासित करती है। भाव–बोध के अंतर्गत भौतिक अथवा स्थूल वस्तुओं का उपयोग एवं उपभोग किया जाता है। वैज्ञानिक दृष्टि के अंतर्गत वैज्ञानिक पद्धति द्वारा एक वस्तु को अन्य वस्तुओं के संदर्भ में देखा जाता है। दर्शन के अंतर्गत मूल्यात्म पद्धति का अनुसरण करते हुए वस्तु को कर्ता के परिप्रेक्ष्य में रखकर देखा जाता है।

समझने जैसी महत्वपूर्ण बात यह है कि विज्ञान का सम्बन्ध उन साध्यों से होता है, जो केवल अस्तित्व और सुरक्षा के लिए उपयोगी है, जहां तक कि मानव के ज्यादातार प्रयोजन शुद्ध रूप से आत्मिक या अध्यात्म सम्बन्धी होते है यों तो जीवन–यापन के प्रकृति प्रदत्त और मानव–निर्मित अनेक साधन एवं उपकरण अपनी सापेक्षिक, अनिवार्यता के कारण मूल्यवान लगते है परन्तु उनकी उपलब्धि के बाद भी मनुष्य को बहुत कुछ करना शेष रह जाता है जिसमें आत्मोपलब्धि सर्वोपरि है। जीवन पर्यन्त कहीं न कहीं से मानव के ऊपर दर्शन का प्रभाव देखा जा सकता है। इसीलिए शाश्वत और आध्यात्मिक मूल्य भी जीवन में विद्यमान रहते है।

प्रत्येक युग के मानवों में अनुभूति के कुछ भिन्न तो कुछ समान स्तर देखे जा सकते है। यह अनुभूतियां विशेष रूप से तीन आयामों से विभक्त की जाती है – स्थूल कलाएं, उपयोगी कलाएं और ललित कलाएं। स्थूल कलाएं एवं उपयोगी कलाएं जीवन में व्यवहार एवं सभ्यता से सीधा सम्बन्ध रखती है एवं ललित कलाओं के अंतर्गत साहित्य के माध्यम से सांस्कृतिक पक्ष का उद्घाटन होता है।

इस प्रकार मानव जीवन विभिन्न मूल्यों की परिधि में संचालित होता है, जहां–जहां भी श्रेष्ठ मानव–वाद का दर्शन होता है। वहां–वहां भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर उदात्त मानवीय मूल्य अनिवार्य रूप से होते है।

नयी प्रतीक योजना, नयी शैली तथा भाषा के नये रूप का स्वरूप भी नये मूल्यों के साथ देखने को मिलता है। काव्य के शिल्प सम्बन्धी मूल्यों के रूप निर्धारण की भूमिका में मानव–मूल्यों की सक्रियता सुनिश्चित रहती है।

काव्य में जीवन–मूल्यों की संगतता अनिवार्य रूप से रहती है। काव्य में कलापक्ष सम्बन्धी मूल्यों का महत्व भी भावपक्ष पर ही अवलम्बित होता है। मानव–मूल्य के तदन्तर ही जैसी भाव की गरिमा होती है। उसके आधार पर ही भाषा, छंद, अलंकार, इत्यादि कलागत स्वरूप पर विचार किया जाता है, यह बात अलग है कि युग परिवर्तन के साथ–साथ नये–नये मूल्यों का उद्भव भी हो जाता है, तब ऐसे मूल्यों की अभिव्यक्ति के लिये नये शिल्प का विकास करना पड़ता है।

सारांश :– मानव के जीवन में जितने भी मूल्य परम्परा से चले आते है, उनकी आवश्यकता के अनुरूप नवीन मूल्यों का सृजन भी नैतिकता के परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है। मनुष्य की सभी मूल्यों की उपलब्धि के पीछे नैतिक दृष्टि रहती है, इस रूप में नैतिका अर्जित मूल्यों की मूल्यवत्ता की परीक्षा के लिये प्रयुक्त एक मानदण्ड अथवा कसौटी है। जो मूल्य की मूल्यवत्ता की परीक्षा के लिए प्रयुक्त एक मानदण्ड व्यावहारिकता ''सर्वजनहिताय सिद्ध न होकर किन्हीं भी अंशों में अमंगलकारी है वह नैतिक नहीं हो सकता। जहां मनुष्य बातचीत करता है वहां समाज होता है और समाज का अस्तित्व आवश्यक रूप में नैतिक मूल्यांकन के अंतर्गत

संचारित होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि नैतिकता का अनुभव सभ्य मानवीय समाज के अंतर्गत होता है, जो कि एक सार्वभौम विशेषता है।

साहित्य के मूल्य जीवन के मूल्यों से भिन्न नहीं है। अतः यह बात सर्वमान्य है कि जिसका जीवन में मूल्य है उसका साहित्य में भी मूल्य है।[11] यह बात नितांत समझने योग्य है कि सृजन या रचना के क्षणों में मानव–मूल्य सृष्ट को सुनिश्चित रूप से प्रभावित करते है। कोई भी काव्य–कृति जो जमेशा आम जीवन के बीच विद्यमान रहती है, उसके मूल्य में श्रेष्ठतम मानव–मूल्य व्याप्त रहते है, वास्तव में मानव–मूल्य और काव्य के बीच तात्विक सम्बन्ध रहता है। जो मूल्य सर्वमान्य मानवीय अनुभव के आधार पर जीवन की अर्थवत्ता दर्शाते है, वही मूल्य कालान्तर में काव्य में प्रतिबिम्बित होते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. बैजनाथ सिंहल : नयी कविता : मूल्य मीमांसा, पृष्ठ 111
2. ध्वन्यालोक, पृष्ठ 488
3. आ. भामह : चक्रोक्ति जीवितम् – 1/3, 1/5
4. डॉ. नगेन्द्र : ज्ञानोदय : सितम्बर 1964, पृष्ठ 49
5. हेनरी आस्वर्न टायलर : ह्यूमन वैल्यूज एण्ड वैरायटीज, पृष्ठ 214
6. गुलाबराय : साहित्य के मूल्य सिद्धांत – साहित्य समीक्षा, पृष्ठ 18

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री–विमर्श

किरण हीरा
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

मैत्रेयी पुष्पा प्रतिभा सम्पन्न उपन्यासकार है। आधुनिक काल के हिन्दी साहिन्य के लेखन में मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य सृजन अपना विशिष्ट स्थान रखता है। स्त्री साहित्य में मैत्रेयी जी का विशेष महत्व है। समकालीन स्त्री लेखन में नारी अपनी दैहिक स्वतंत्रता की मांग हेतु नगर जीवन में क्रांति कर रही है, तो वहीं मैत्रेयी पुष्पा की सशक्त और समग्र लेखनी सामाजिक मूल्यों को प्रोत्साहित करते हुये नारी के सांस्कृतिक रूप को समग्र संचार कर नवीन और मर्यादित रूप प्रदान करने में प्रयत्नशील है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में नारी को पुरूष की तुलना में कमजोर माना जाता रहा है। भारतीय सामाजिक संरचनायें पुरूषों द्वारा निर्मित है, चाहे वह पुरूष धर्मगुरू हो, कवि, लेखक या पितृसत्तात्मक परिवार का सामान्य पुरूष समाज के पुरूषों के लिये जो मापदण्ड है, वे महिलाओं के लिए नहीं है। सामाजिक, सांस्कृतिक संरचनाओं में नारी की स्थिति को अधिक बंधनकारी व जटिल बनाया है। भारतीय समाज में दलित व स्त्री की स्थिति में कोई अंतर नहीं है। दोनों सदियों से अन्याय, शोषण की शिकार है। सदियों से पराधीनता का जीवन जी रही स्त्री, पुरूष की सामंती सोच व अहंकार के अधीन रही है।

मैत्रेयी जी ने अपने लेखन में नारी अस्तित्व की पक्षधर है। उनके महिला पात्र किसी काल्पनिक जगत के नहीं है। बल्कि हमारे आसपास के रोज की जिंदगी से परिचित साधारण स्वरूप में असाधारण व्यक्तित्व के धनी है।

मैत्रेयी पुष्पा के प्रथम उपन्यास इदन्नमम् में गांव की अपनी समस्यायें, मान्यताएं है, रूढ़ियों और परम्पराओं से जकड़ा गांव भारतीय ग्रामों की वास्तविक झांकी के आसपास यामली गांव है। मंदा की दादी अपनी अहीरवंशी मान मर्यादा को ध्यान में रखते हुये संपूर्ण जीवन वैधव्य में काटती है और अपने एक मात्र पुत्र महेन्द्र को पालती है, किन्तु महेन्द्र ग्रामीण साजिश और दूषित राजनीति से उसकी हत्या हो जाती है। महेन्द्र की विधवा मंदा की मां, बहु की तरह आजीवन कुल की मर्यादा के नाम पर अपने दैहिक यौन और इच्छाओं का दमन नहीं कर पाती और रतन यादव नामक रिश्तेदार के साथ भागकर अपना दूसरा परिवार बसाती है, किन्तु वहीं लोग मंदा की खेती छीनने की साजिश रचते है। मैत्रेयी पुष्पा ने मंदा की मां और दादी इन तीनों के माध्यम से तीन पीढ़ियों का विश्ले” ाण किया है।

कहीं ईसुरी फाग में लेखिका ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर समकालीन परिस्थितियों की रचना करते हुये समाज में नारी चेतना की प्रतिष्ठा का प्रयास किया है।

बेतवा बहती रही में मैत्रेयी जी ने बेतवा नदी के किनारे की भूमि वहां के जन तथा वहां की संस्कृति प्रस्तुत की है। उर्वशी का भाई अजीत स्वार्थी नवयुवकों का प्रतिनिधि है जो अपनी बहिन की संपूर्ण जीवन दांव पर लगा देता है। पुरूष की स्वार्थन्धता नारी जीवन को अभिशप्त करने में नहीं चूकती। अजीत उर्वशी का अनमोल विवाह मीरा के पिता से करवा देता है उर्वशी बेतवा की भांति उतार चढ़ाव से गुजरती हुई अपनी मंजिल तक का सफर तय करती है और जीवन लीला बेतवा के किनारे विलीन कर देती है।

चाक में मैत्रेयी पुष्पा ने गांव के तेजी से बदलते स्वरूप उसके अंदर पनपी गंदी मानसिकता, राजनैतिक कुचक्र, जाति प्रथा, नारी पोषण आदि अनेक बुराईयों को समग्रता से प्रस्तुत करने का सराहनीय प्रयास किया है। कथा का आरंभ रेशमा से होता है जो विधवा होने के बाद भी गर्भ धारण कर सामाजिक नियमों से विद्रोह कर पुरूषों पर करारी चोट करती है जिसकी सजा गुप्त शड्यंत्र द्वारा रेशमा की हत्या है।

झूलानट उपन्यास की नायिका शीला है जो सुन्दर नहीं है, बहुत सुधड़ उसका प्रति उसकी छाया से भी दूर भागता है पति से प्राप्त तिरस्कार, अपमान और उपेक्षाा के बावजूद उसमें जीवन के प्रति लगन है। झूलानट ग्रामीण परिवेश में पारिवारिक एवं सामाजिक स्थितियों से जूझती नारी की करूण व्यथा है।

अगनपाखी भुवन – मोहनी की कथा है भुवन सामंती परिवार का अर्थ विक्षिप्त लड़का है जिसका विवाह मोहनी से कर दिया जाता है और उसके बाद शुरू होती है सामंती राजनीति की छल कपटपूर्ण नीतियों के दाव पेच मोहनी का सामना भारतीय सामंती परिवार की राजनीति से है।

विजन उपन्यास में मैत्रेयी जी ने नेहा और आभा जैसी योग्य एवं सक्षम महिलाओं की विवशता और लाचारी को मुखर किया है। आभा एक सफल डाक्टर है किन्तु उसका विवाहिक जीवन सफल नहीं कहा जा सकता है। घर से बाहर कार्य करने वाली महिलाओं की जिम्मेदारी दो गुना हो जाती है। अपने कार्यक्षेत्र में दक्ष आभा अपने निकम्मे पति के संमुख महत्व नहीं रखती है। नेहा एक सफल आई सर्जन है उसकी योग्यता ही उसकी दुश्मन बन जाती है। जिसके परिणामस्वरूप उनकी योग्यता कुंठा के रूप में उभरकर उन्हें मानसिक तनाव देती है।

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि मैत्रेयी जी के उपन्यासों में 'समय' की दस्तकस्वरूप नारी चरित्र के अंतर बाह्य रूप को स्थिप्रज्ञ मानवीय जीवन – दृष्टि के आलोक में मनावोचित यथार्थ के धरातल पर परखकर स्त्री–विमर्श की सशक्त पहल हुई है।

संदर्भ ग्रंथ –

1. इदन्नमम – मैत्रेयी पुष्पा
2. कहीं ईसूरी फाग – मैत्रेयी पुष्पा
3. बेतवा बहती रहे – मैत्रेयी पुष्पा
4. चाक – मैत्रेयी पुष्पा
5. झूलानट – मैत्रेयी पुष्पा
6. विजन – मैत्रेयी पुष्पा

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

मध्यप्रदेश में आदिवासियों की स्थिति एवं विभिन्न योजनाएं

श्री किशोर पाली
जनभागीदार शिक्षक शासकीय महाविद्यालय रांझी, जबलपुर

व्यावसायिक आकांक्षाओं में सृजनात्मकता की भूमिका में आदिवासियों के विकास को ध्यान में रखा गया है इसके उद्योगों के विकास के लिए विभिन्न योजनाओं का अध्ययन किया गया है प्रस्तुत शोध पत्र में आदिवासियों के विकास में सृजनात्मकता के नवीन विचारों का जन्म होता है सृजनात्मकता का अर्थ नवीनता को व्यवहार में लाने वाली योग्यता से है। मध्यप्रदेश में विभिन्न जनजातियां रह रही हैं जिसके विकास हेतु मध्यप्रदेश सरकार भरसक प्रयास कर रही है व विभिन्न योजनाओं से लाभान्वित कर रही है। उन विभिन्न जनजातियों को नव उत्पाद परिचय नए बाजार की खाज, उत्पाद की नई प्रक्रिया, कच्चे माल के नये व श्रेष्ट स्त्रोतों की खोज, औद्योगिक संगठन के नए व श्रेष्ट प्रारूप का विकास को प्रेरित करता है।

मध्यप्रदेश आदिवासी बाहुल्य प्रदेश है। वर्तमान में 47 से अधिक जनजातियां है जिन्हे भारतीय संविधान अनुच्छेद (25) के अनुसार अनुसूचित जनजातियों के रूप में विशेष दर्जा प्राप्त है। मध्यप्रदेश में आदिवासियों की अनेक जातियां एवं उपजातियां पाई जाती है। जनजातियां समुदाय एक अति विविधता पूर्ण और अद्भुत समुदाय है। जनजातीय लोग यत्र–तत्र संपूर्ण भारत में पाए जाते है। इसकी जीवन शैली एवं निवास स्थल, खान–पान, वेश–भूषा व संस्कृति से लेकर उनके जीवन का प्रत्येक पहलू समाज की मुख्य धारा से आज भी भिन्न है, इसलिए इन्हें 'आदिवासी' भी संबोधित किया जाता है। आदिवासी भी संबोधित किया जाता है। आदिवासी अर्थात जनजातियां समुदाय के विकास हेतु न केवल स्वाधीन भारत में अपितु अति प्राचीन काल से शासकीय स्तर पर प्रयास किए जाते रहे है। दस संदर्भ में भारतीय प्रागैतिहासिक काल के मूल निवासियों के संबंध में अकादमिक दृष्टि से सर्वप्रथम ''भारत में निवास करने वाले आदिवासियों की 7 प्रजातियां है जिनमें कुछ प्रजातियां आर्थिक – सामाजिक रूप से अत्यंत पिछड़ी है। और उनको विकास की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए शेष प्रजातियों द्वारा प्रयास किए जाने चाहिए।

सरकार ने स्वतंत्रता पश्चात् से ही आदिवासी कल्याण विकास के लिए अनेक योजना लागू की है। आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र में स्कूल, हैंण्डपंप नलकूप, सुलभ शौचालय चिकित्सालय, मुख्यमार्ग जोड़ने वाले सड़क ?, कृषि हेतु खाद्य, बीज उर्वरक, उत्पाद विकृय हेतु विपणन समितियों का गठन, महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार देने का आश्वासन दिया है।

भारत सरकार द्वारा मान्य तीन विशेष पिछड़ी जनजातियों बैगा, भारिया एवं सहरिया मध्यप्रदेश में निवास करती है। इन जनजातियों के विकास हेतु योजनाएं बनाने व क्रियान्वयन हेतु 1 अभिकरण कार्यरत है। क्योंकि सहरिया एवं बैगा विशेष पिछड़ी जनजाति विकास अभिकरणों का कार्य केवल एक से अधिक जिलों में ही नही है, वरन् एक से अधिक राजस्व संभागों में है फैला हुआ है, कार्यरत अभिकरण मुख्यालय एवं उनके कार्यक्षेत्र का कववरण निम्नानुसार है–

मध्यप्रदेश राज्य में पिछड़ी जनजाति समूह अभिकरण

मुख्यालय		कार्यक्षेत्र
(1) सहरिया विकास अभिकरण		
श्योपुर कला		श्योपुर कला / मुरैना / भिण्ड जिला
शिवपुरी		शिवपुरी जिला
गुना		गुना जिला
ग्वालियर		ग्वालियर / दतिया जिला
(2) बैगा विकास प्राधिकरण		
मण्डला	–	मण्डला जिला
शहडोल	–	शहडोल जिला
बालाघाट	–	बालाघाट जिला
उमरिया	–	उमरिया जिला डिण्डौरी जिला
अनूपपुर	–	अनूपपुर जिला

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

(3) भारिया विकास प्राधिकरण

तामिया – तामिया (छिंदवाड़ा)

महिला उद्यमिता को आर्थिक प्रगति का एक महत्वपूर्ण स्त्रोंत माना गया है। महिला उद्यमी अपने लिए और अन्य लोगों के लिए समाज को सृजित करती है समाज को प्रबंध संगठन एवं व्यवसाय समस्याओं के भिन्न–भिन्न समधधान उपलब्ध कराती है किंतु फिर भी उद्यमियों में उनकी संचया काफी कम है। महिला उद्यमियों को अक्सर अपने व्यवसाय शुरू करने और उन्हें बढ़ाने में लिंग भेद आधारित बाधाओं का सामना करना पड़ता है। जैसे भेदपूर्ण संपत्ति, विवाह एवं उत्तराधिकारी कानून और या सांस्कृतिक परंपराएं, औपचारिक वित्त प्रणाली तक पहुंच न होना, सीमित गतिशीलता तथा सूचनाओं व नेटवर्क तक सीमित पहुंच आदि। महिला उद्यमी परिवार एवं समुदायों की आर्थिक सम्पन्नता गरीबी उन्मूलन और महिला सशक्तिकरण में विशेष रूप से अत्यंत सहयोग दे सकती है। और इस प्रकार सहसवादी विकास लक्ष्य प्रादा करने में योगदान कर सकती है। इसलिए पूरे विश्व में सभी सरकारें या साथ ही साथ विकास संगठन विभिन्न योजनाओं प्रोत्साहनों और संवर्द्धन उपायों के माध्यम से महिला उद्यमियों को प्रोत्साहित करने और उनके संवर्द्धन के लिए सक्रिय रूप से कार्य कर रहे है।

जनजातियों के सर्वांगिण विकास हेतु पांचवी पंचवर्षीय योजनाकाल से आदिवासी योजना की नीति अपनाई गई। जनजातियों के विकास हेतु विभिन्न विकास विभागों के माध्यम से आर्थिक मानव संसाधन, क्षेत्र विकास एवं अन्य विकास कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। आदिवासी उपयोजना हेतु अलग से बजट में मांग संख्या 41,42 एवं मांग संख्या 52,58 निर्मित की गई है।

आदिवासियों उपयोजना क्षेत्र अंतर्गत एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाएं माडा पॉकेट तथा लघु अंचल संचालित परियोजना सलाहकार मण्डल गठित है। जिसमें जन्म प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की गई है। ऐसे माडा एवं लघु अंचल जो किसी परियोजना से संबंध नहीं है। उनके लिए जिला योजना समिति की उप समिति अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति सामिति परियोजना सलाहकार मण्डल का दायित्व निभा सकेगी।

आदिवासी योजना के अंतर्गत विभिन्न वर्षों में विभिन्न विकास विभागों के राज्य योजना मद में प्राप्त बजट प्रावधान आबंटन एवं व्यय की जानकारी निम्नानुसार है।

वर्ष	बजट	आंबटन	व्यय
2010–11	393633.39	401155.85	392291.37
2011–12	456447.97	492361.98	443257.27
2012–13	552059.63	331488.30	554481.14
2013–14	645313.71	523545.14	566365.93
2014–15	735462.70	776071.89	642491.53
2015–16	841677.98	400889.25	273586.75

अनुसूचित जनजाति हेतु ग्रामीण विद्युतीकरण योजना :– ग्रामीण विद्युतीकरण की तीन योजनाएं एकल बत्ती कनेक्शन,पंपो का उर्जीकरण तथा मजरे टोलों का विद्युतीकरण राज्य आयोजना के अंतर्गत संचालित है। वित्तीय वर्ष 2011–12 तक विद्युतीकरण योजनान्तर्गत संचालित तीनों योजनाओं का एकीकरण का विद्युतीकरण योजना तीनों योजनाओं का एकीकरण करके एक योजना 'अनुसूचित जनजाति हेतु विद्युतीकरण योजना' बना दिया गया है। वर्ष 2014–15 में विद्युतीकरण योजना के अंतर्गत कुल बजट प्रावधान राशि 13,000.00 लाख रखा गया था। उक्त राशि में 693 मजरे टोलों को विद्युतीकरण करने एवं 26 पंपों को उर्जीकृत करने का रखा गया था। वित्तीय वर्ष 2015–16 में विद्युतीकरण योजना के अंतर्गत कुल राशि 13,000.00/– रूपये के बजट का प्रावधान रखा गया था अगामी वित्तीय वर्ष 2016–17 विद्युतीकरण योजना के अंतर्गत कुल राशि रूपये 8200.00 लाख का बजट प्रावधान प्रस्तावित किया गया है। जिसमें 410 मजरे टोलों को विद्युतीकरण करने एवं 1406 पंपों को उर्जीकृत करने का लक्ष्य रखा गया हैं।

विशेष केन्द्रीय सहायता :– विशेष केन्द्रीय सहायता आदिवासी योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले आदिवासी परिवारों को 70

प्रतिशत धनराशि राजस्व मद से दी जाती है। तथा शेष 30 प्रतिशत पुँजीगत मद से लघु सरंचनाओं के निर्माण पर व्यय की जाती है।

विगत तीन वर्षों की जानकारी निम्नानुसार है :–

वर्ष	बजट प्रावधान	भारत सरकार से निर्गमित राशि	व्यय
2013–14	19721.28	17525.00	16327.85
2014–15	19427.32	15274.22	6017.95
2015–16	24121.81	11501.21	–

(उपयुक्त आंकडे मध्यप्रदेश शासन आदिम जाति कल्याण विभाग प्रशासकीय प्रतिवेदन द्वारा लिया गया)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Raped women in India

Shilpa Bhangre

The status of **Women in India** has been subject to many great changes over the past few millennia.[4] With a decline in their status from the ancient to medieval times,[5][6] to the promotion of equal rights by many reformers, their history has been eventful. In modern India, women have held high offices including that of the President, Prime Minister, Speaker of the Lok Sabha, Leader of the Opposition, Union Ministers, Chief Ministers and Governors.

Women's rights under the Constitution of India — mainly includes equality, dignity, and freedom from discrimination; further, India has various statutes governing the rights of women.[7][8]

As of 2011, the President of India, the Speaker of the Lok Sabha and the Leader of the Opposition in the Lok Sabha (Lower House of the parliament) were women. However, women in India continue to face numerous problems such as crime, gender inequality.

Sexual harassment

Eve teasing is a euphemism used for sexual harassment or molestation of women by men. Many activists blame the rising incidents of sexual harassment against women on the influence of "Western culture". In 1987, The Indecent Representation of Women (Prohibition) Act was passed[118] to prohibit indecent representation of women through advertisements or in publications, writings, paintings or in any other manner.

Of the total number of crimes against women reported in 1990, half related to molestation and harassment in the workplace.[29] In 1997, in a landmark judgement[*ambiguous*], the Supreme Court of India took a strong stand against sexual harassment of women in the workplace. The Court also laid down detailed guidelines for prevention and redressal of grievances. The National Commission for Women subsequently elaborated these guidelines into a Code of Conduct for employers.[29] In 2013 India's top court investigated on a law graduate's allegation that she was sexually harassed by a recently retired Supreme Court judge.[119] The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act came into force in December 2013, to prevent Harassment of women at workplace.

A study by ActionAid UK found that 80% of women in India had experienced sexual harassment ranging from unwanted comments, being groped or assaulted. Many incidents go unreported as the victims fear being shunned by their families.[120]

Trafficking

Rape is the fourth most common crime against women in India.[1][2] According to the National Crime Records Bureau (NCRB) 2013 annual report, 24,923 rapecases were reported across India in 2012.[3] Out of these, 24,470 were committed by someone known to the victim (98% of the cases).[4]

India has been characterised as one of the "countries with the lowest per capita rates of rape".[5][6] A large number of rapes go unreported.[7] The willingness to report the rape has increased in recent years, after several incidents of rape received widespread media attention and triggered public protest.[8][9][10][11][12]This led the Government of India to reform its penal code for crimes of rape and sexual assault.[13]

According to NCRB 2015 statistics, Madhya Pradesh has the highest raw number of rape reports among Indian states,[14] while Jodhpur has the highest per capita rate of rape reports in cities.[15]

Definition in Indian Penal Code

Annual rape and all forms of sexual assaults per 100,000 people, for India compared to select nations[16][17]

Before 3 February 2013, Section 375 of the Indian Penal Codedefined rape as:[18]

§375. Rape. A man is said to commit "rape" who, except case hereinafter excepted, has sexual intercourse[19] with a woman in circumstances falling under any of the six following descriptions:-

Firstly. — Against her will.

Secondly. — Without her consent.

Thirdly. — With her consent, when her consent has been obtained by putting her or any person in whom she is interested, in fear of death or of hurt.

Fourthly. — With her consent, when the man knows that he is not her husband, and that her consent is given because she believes that he is another man to whom she is or believes herself to be lawfully married.

Fifthly. — With her consent, when, at the time of giving such consent, by reason of unsoundness of mind or intoxication or the administration by him personally or through another of any stupefying or unwholesome substance, she is unable to understand the nature and consequences of that to which she gives consent.

Sixthly. — With or without her consent, when she is under sixteen[20] years of age.

Explanation. — Penetration is sufficient to constitute the sexual intercourse necessary to the offence of rape.

Exception. — Sexual intercourse by a man with his own wife, the wife not being under fifteen years of age, is not rape.

The above definition excluded marital rape, same sex crimes and considered all sex with a minor below the age of sixteen as rape.

After 3 February 2013, the definition was revised through the Criminal Law (Amendment) Act 2013, which also raised the legal age of minor to eighteen.[21]

§375. A man is said to commit "rape" if he:— (a) penetrates his penis, to any extent, into the vagina, mouth, urethra or anus of a woman or makes her to do so with him or any other person; or (b) inserts, to any extent, any object or a part of the body, not being the penis, into the vagina, the urethra or anus of a woman or makes her to do so with him or any other person; or (c) manipulates any part of the body of a woman so as to cause penetration into the vagina, urethra, anus or any part of body of such woman or makes her to do so with him or any other person; or (d) applies his mouth to the vagina, anus, urethra of a woman or makes her to do so with him or any other person, under the circumstances falling under any of the following seven descriptions:

Firstly.— Against her will.

Secondly. — Without her consent.

Thirdly. — With her consent, when her consent has been obtained by putting her or any person in whom she is interested, in fear of death or of hurt.

Fourthly. — With her consent, when the man knows that he is not her husband and that her consent is given because she believes that he is another man to whom she is or believes herself to be lawfully married.

Fifthly.— With her consent when, at the time of giving such consent, by reason of unsoundness of mind or intoxication or the administration by him personally or through another of any stupefying or unwholesome Substance, she is unable to understand the nature and consequences of that to which she gives consent.

Sixthly. — With or without her consent, when she is under eighteen years of age.

Seventhly. — When she is unable to communicate consent.

Explanation 1.— For the purposes of this section, "vagina" shall also include labia majora.

Explanation 2.— Consent means an unequivocal voluntary agreement when the woman by words,

gestures or any form of verbal or non-verbal communication, communicates willingness to participate in the specific sexual act;

Provided that a woman who does not physically resist to the act of penetration shall not by the reason only of that fact, be regarded as consenting to the sexual activity. Exceptions — 1. A medical procedure or intervention shall not constitute rape; 2. Sexual intercourse or sexual acts by a man with his own wife, the wife not being under fifteen years of age, is not rape.

Even after the 2013 reform, marital rape when the wife and husband live together continued not to be a crime in India. Article 376B of the 2013 law made forced sexual intercourse by a man with his wife – if she is living separately – a crime, whether under a decree of separation or otherwise, punishable with at least a 2-year prison term.[13] Forced sex by a man on his wife may also be considered a prosecutable domestic violence under other sections of Indian Penal code, such as Section 498(A) as well as the *Protection of Women from Domestic Violence Act 2005*.[22] The crime of sexual assault on a child, that is anyone below the age of eighteen, is further outlined and mandatory punishments described in *The Protection of Children from Sexual Offences Act 2012*.[23]

All sexual acts between the members of the same sex, consensual or forced, remains a crime under Section 377 of Indian penal code, after the 2013 Criminal Law reform, with punishment the same as that of rape.[24]

Rape of minors

Using a small sample survey, Human Rights Watch projects more than 7,200 minors – 1.6 in 100,000 minors – are raped each year in India. Among these, victims who do report the assaults are alleged to suffer mistreatment and humiliation from the police.[25] Minor girls are trafficked into prostitution in India, thus rape of minors conflates into a lifetime of suffering.[26] Of the countries studied by Maplecroft on sex trafficking and crime against minors, India was ranked 7th worst.[26]

Estimates of unreported rapes

Most rapes go unreported because the rape victims fear retaliation and humiliation, both in India and throughout the world.[27]Indian parliamentarians have stated that the rape problem in India is being underestimated because a large number of cases are not reported, even though more victims are increasingly coming out and reporting rape and sexual assaults.[28] According to an estimate from 2014, only 5-6% of rape cases in India are reported to the police.[29]

Few states in India have tried to estimate or survey unreported cases sexual assault. The estimates for unreported rapes in India vary widely. A comparison between data from the National Crime Records Bureau (NCRB) and the National Family Health Survey (NFHS) in 2005 shows that 5.8% of rapes were reported.[30] India don't have marital rape law. so marital rapes don't get reported at all, so it can't be estimated[31]Madiha Kark estimates 54% of rape crimes are unreported.[32] A UN study of 57 countries estimates just 11% of rape and sexual assault cases worldwide are ever reported.[33]

मण्डला जिला में लघु उद्योगों का विकास

सतेन्द्र कुमार जैन (सहायक प्रध्यापक)

श्री गुरूनानक महिला महाविद्यालय, जबलपुर

औद्योगिक विकास : आदिवासी बहुल्य वाला यह जिला प्राकृतिक संसाधनों से (मुख्य रूप से वन संसाधन) से परिपूर्ण जिला मानवीय संसाधनों से भी ओत–प्रोत है, क्योंकि जिले की अधिकांश जनसंख्या आदिवासी है, जो बहुत अधिक शिक्षित तो नहीं है, लेकिन परिश्रमी, ईमानदार, एवं लग्नशील है । शासन द्वारा इस जिले को 'स' श्रेणी के उद्योग विहीन विकसित जिलों की श्रेणी में शामिल किया गया है । जिला व्यापर एवं उद्योग केन्द्र की स्थापना के उपरांत भी यहॉ के निवासी अपने परम्परागत जीविकोपार्जन के साधन से जुड़े हुए हैं, जिसके कारण जिले का अपेक्षित औद्योगिक विकास नहीं हो पाया है। वर्ष 1987–85 तक मण्डला जिले में 52 लघु उद्योगों का पंजीयन हो चुका था, जिसमें 12.43 लाख रूपये का पूँजी विनियोजन कर कुल 158 व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध हो पाया था। जिनमें मुख्य रूप से शॉ मिल, पीतल बर्तन, प्लास्टिक बैग निर्माण, चूना निर्माण, साबुन आदि की इकाईया प्रमुख थी। जिले में सीडो ग्रुप वाइज इकाईयों के अन्तर्गत 10 इकाईयों का पंजीयन हुआ था, जिनमें कृषि आधारित 4 इकाईयों, रसायन आधारित 1 इकाई रबर, प्लास्टिक पर आधारित 1 इकाई तथा अभियांत्रिकीय पर आधारित 4 इकाईयाँ कार्यरत् हैं और शासकीय प्रयासों से जिले के औद्योगिक विकासों में परिवर्तन व दृष्टिगोचर हो रहे हैं ।

मण्डला जिले में लघु उद्योगों का विकास

मण्डला जिले में मनेरी क्षेत्र में औद्योगिक विकास केन्द्र की स्थापना के बाद लघु उद्योग क्षेत्र में परम्परागत उद्योगों के अलावा भी अन्य लघु उद्योगों की स्थापना में वृद्धि हुई है, जो कि तालिका में दर्शाया गया है।।

मण्डला जिले की जनसंख्या में आदिवासी बहुल्यता होने के कारण परम्परागत उद्योगों की तुलना में बहुत ही कम मात्रा में बड़े किस्म के लघु उद्योग स्थापित हुए हैं । फिर भी जिले के अन्दर लघु उद्योगों में उल्लेखनीय प्रगति दृष्टिगोचर हो रही है, जो कि तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है, कि वर्ष 1999–2000 तक पंजीकृत लघु इकाईयों की संख्या 367 थी, जिनमें 1115.32 लाख रूपये की पूँजी विनियोजन के साथ 2142 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था। वर्ष 2009–10 में यह संख्या बढ़कर 2794 हो गयी, जिनमें 3572.99 लाख रूपये पूँजी विनियोजन के साथ 6709 व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध हो सका है और परम्परागत उद्यागों के अलावा कुछ बड़े किस्म के लघु उद्योग भी स्थापित हुए हैं । जैसे– डिम्पर्स, टिपर्स निर्माण, लीफ स्प्रिंग, यू बोल्ट सेन्टर, पी.व्ही.सी. आयटम, एच.डी.पी. बैग, धागे की रील, आर.सी.सी. हयूम पाइप, एम.एस. राउण्ड एंगिल पेपर, कन्टेनर्स, रबर गुड्स, केवल एण्ड कंडक्टर्स, आर.सी.सी. ट्यूब पाइप, फोम आयटम, एच.डी.पी.ई. ट्रांसफार्मर इत्यादि ।

तालिका कमांक 1

मण्डला जिले में पंजीकृत इकाईयों की वार्षिक प्रगति

	वर्ष	पंजीकृत इकाईयों की संख्या	रोजगार	विनियोग (लाखों रूपये)
तक	1999-2000	367	2142	1115.32
	2000-01	3	124	122.01
	2001-02	-	-	-
	2002-03	164	415	83.83
	2003-04	252	447	33.5
	2004-05	302	609	104.67

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

	2005-06	303	527	61.31
	2006-07	296	622	252.76
	2007-08	345	597	137.45
	2008-09	381	633	1400.3
	2009-10	381	593	261.84
	Total	**2794**	**6709**	**3572.99**

स्त्रोतः– जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र एवं इन्टरनेट

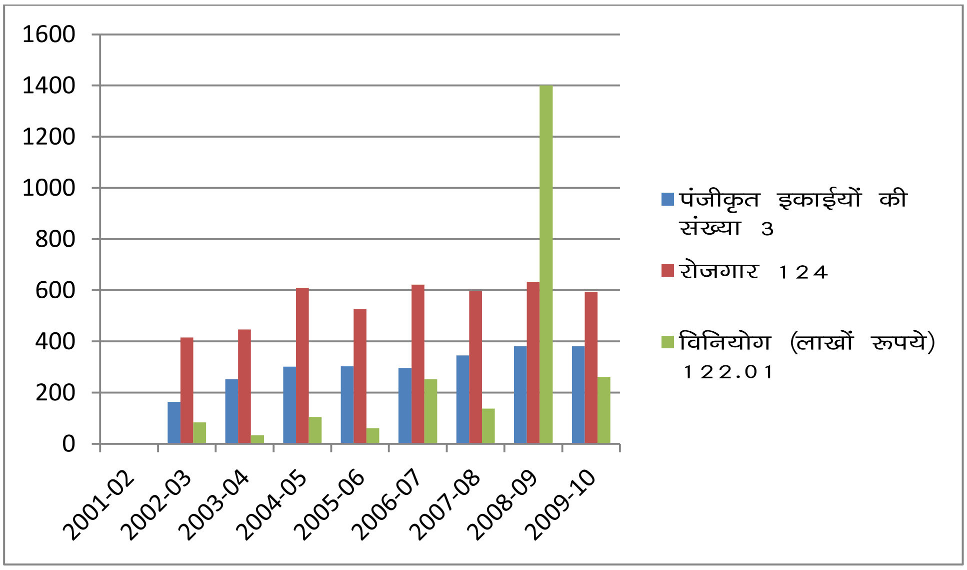

उपरोक्त तालिका क्रमांक के अवलोकन से स्पष्ट होता है, कि मण्डला में सन् 1999–2000 तक 367 इकाईयाँ पंजीकृत थीं, जिसमें पूँजी विनियोग 1115.32 लाख रू. व 2242 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त था। वर्ष 2000–2001 में स्थापित पंजीकृत इकाईयों की संख्या 3 थी, जिसमें 122.01 लाख रू. विनियोग हुआ व 124 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था। वर्ष 2005–2006 में स्थापित पंजीकृत इकाईयों की संख्या 303 हुयीं। जिसमें 61.31 लाख रू. विनियोग हुआ व 527 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था। 2009–2010 में स्थापित पंजीकृत इकाईयों की संख्या 381 थी, जिसमें 261.84 लाख रू. विनियोग हुआ व 593 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था। इस प्रकार 2009–2010 तक कुल पंजीकृत लद्यु उद्योग इकाईयों की संख्या 2794 थी, जिसमें कुल 3572.99 लाख रू. विनियोग हुआ व 6,709 कुल व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ था।

इस प्रकार यदि मण्डला जिले के कुल पंजीकृत लद्यु उद्योगों में रोजगार 6,709 की तुलना मण्डला की कुल जनसंख्या 10,55,522 (वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार) से की जाए तो जिले की जनसंख्या का केवल 0.64 प्रतिशत ही इन उद्योगों में कार्यरत है।

मण्डला जिले में ग्रुप वाइज सीडो इकाईयों की प्रगति

मध्यप्रदेश शासन उद्योग विभाग द्वारा अति लघु क्षेत्र की इकाईयों अर्थात् कुटीर उद्योग क्षेत्र की इकाईयों का सीडो (एस.आई.डी.ओ.) यूनिट के अन्तर्गत शामिल किये जाता है और इन इकाईयों का विभिन्न वर्गो में शामिल कर कोड नम्बर (टू डिजिट कोड) प्रदान किये गये हैं वस्तुतः ये इकाईयाँ पंजीकृत लघु उद्योगों में भी शामिल हैं, इन इकाईयों की संख्या बहुत कम और इसमें विनियोजन व रोजगार भी बहुत कम संख्या में शामिल है, अतः लघु उद्योग क्षेत्र के आर्थिक विकास और उत्पादन को दृष्टिगत रखते हुए इन इकाईयों का विश्लेषणात्मक अध्ययन आवश्यक हो जाता है जिसे तालिका क्रमांक 2 में स्पष्ट किया गया है।

तालिका कमांक 2

ग्रुप वाइज सीडो इकाईयों की प्रगति

एनआईसी कोड नं.	उद्योगों के प्रकार	इकाईयों की संख्या	विनियोग (लाखों में)	रोजगार
20	कृषि आधारित	4	41.68	161
30	रसायन आधारित	1	919	49
31	रबर, प्लास्टिक और, पेट्रो आधारित	1	5.38	7
35	अभियांत्रिकीय इकाईया	4	64.7	35
	Total	**10**	**1030.76**	**252**

स्त्रोत – जिला व्यापारी एवं उद्योग केन्द्र, मण्डला

तालिका क्रमांक 2 के अवलोकन के अध्ययन से स्पष्ट है कि वर्ष 2009–10 तक जिले में कुल 10 इकाईयाँ सीडो यूनिट के अंतर्गत पंजीकृत हुई जिसमें 1030.76 लाख रूपये का पूँजी विनियोजन करके 252 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हो रहा है । पंजीकृत सीडो इकाईयों के संबंध में निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट हुए हैं ।

- कुल पंजीकृत 10 सीडो इकाईयों में से 40 प्रतिशत (4) इकाईयों कृषि आधारित की, 40 प्रतिशत (4) इकाईयों अभियांत्रिकीय इकाईयाँ, 10 प्रतिशत (1) इकाई रसायन आधारित और 10 प्रतिशत (1) इकाई रबर एवं प्लास्टिक पर आधारित इकाई कार्यरत् हैं।
- तालिका कमांक 2 से यह स्पष्ट होता है कि कृषि, अभियांत्रिकीय, रसायन, रबर एवं प्लास्टि की इकाईयों को छोड़कर अन्य उत्पादों की एक भी इकाई जिले के अंदर पंजीकृत नहीं है।

उपर्युक्त पंजीकृत इकाईयों में केवल उद्योग की ही इकाईयाँ पंजीकृत हुई हैं, इसमें सेवा इकाईयाँ पंजीकृत नहीं हुई हैं ।

मण्डला जिले में विकसित औद्योगिक क्षेत्र (Industrial Area in the Mandla District)

किसी भी क्षेत्र के तीव्र औद्योगिक विकास के अधोसंरचना रक्त वाहिनी का कार्य करती हैं। कच्चे माल एवं अन्य संसाधनों को औद्योगिक स्थल तक पहुँचाने, तैयार माल को बजारों में भेजने के लिए एक सक्षम परिवहन व्यवस्था की आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त कारखानों के लिये भूखण्ड, बिजली, पानी एवं दूर संचार सेवाओं का होना भी नितांत होना आवश्यक होता है। विशेष अधोसंरचना के अन्तर्गत जिले में विकसित हो रहे विकास केन्द्र एवं औद्योगिक क्षेत्र की जानकारी निम्न प्रकार हैं ।

तालिका क्रमांक– 3

मण्डला जिले में औद्योगिक क्षेत्रों की वर्तमान स्थिति

क्र.	औद्योगिक क्षेत्रा के नाम	भूमि का अधिग्रहण(हैक्टर में)	विकसित भूमि (हैक्टर में)	प्रचलित दर प्रति वर्ग किमी. (रू. में)	प्लाटों की संख्या	आबंटित प्लाटों की संख्या	खाली प्लाटों की संख्या	उत्पादित इकाईयाँ की संख्या
1	औद्योगिक क्षेत्र मनेरी, जिला मंडला	517.271	162.386	-	-	-	-	-
	योग	517.271	162.386	-	-	-	-	-

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र तथा इंटरनेट से

उपरोक्त तालिका कमांक 3 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता कि मण्डला जिले में स्थित औद्योगिक विकास केन्द्र मनेरी में शासन द्वारा उपलब्ध कराई गई 517.271 हेक्टर भूमि में से 162.386 हेक्टेयर भूमि विकसित की गई है। फूड पार्क के लिए 30.354 हेक्टेयर भूमि में से 11.391 हेक्टर विकसित की गई है।

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का अध्ययन

डॉ. अमी राठौड़
सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर
कमल कुमार आमेटा
रिसर्च स्कोलर

प्रस्तावना :– वो शिक्षा ही हैं जिसने भारत को विश्व में महत्वपूर्ण स्थान दिलाया हैं। शिक्षा प्रदान करने का कार्य विद्यालय के माध्यम से किया जाता हैं जो वर्तमान मे प्रचलित शिक्षा पद्धति के माध्यम से विद्यार्थियों को प्रदान की जाती हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से भारत में समय–समय पर प्रचलित शिक्षा पद्धतियों में आवश्यकता के अनुरूप परिवर्तन किये गए हैं। वर्तमान समय में प्रचलित शिक्षा पद्धति (एन. पी. ई. 1986) के अनुसार शिक्षा प्रदान की जाती हैं।

इसके अतिरिक्त विद्यालय का पाठ्यक्रम कैसा हों? किस तकनीक का प्रयोग किया जाए? कौनसी पद्धतियों का उपयोग कर शिक्षा प्रदान की जाए? मूल्यांकन का आधार क्या होना चाहिए? आदि प्रश्नों के उत्तर हेतु वर्तमान शिक्षा पद्धति सुझाव देती है जो समय–समय पर अनुसंधान कर शिक्षा में आ रही समस्या का निराकरण प्रस्तुत करती रही है। शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् ही विद्यार्थी जीवन सम्बन्धी समस्याओं का समाधान कर पानें में सक्षम हो पाता हैं। विश्व के सभी शिक्षाशास्त्री इस सम्बन्ध में एक मत है कि शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है जो उसके मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक विकास सें संभव है।

वर्तमान समय में समाज व देश के विकास हेतु आवश्यक है कि वर्तमान पीढ़ी इन उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों की क्षमता से युक्त हो और यह सब तभी सम्भव हो सकता है जब पढ़ने की विषय–वस्तु, पढ़ाने का तरीका, मूल्यांकन प्रक्रिया और शैक्षिक व्यवस्था का उपयुक्त समन्वय विद्यार्थियों को प्रदान हो। यदि उपर्युक्त वर्णित सभी व्यवस्थाएं वर्तमान शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों को दी जाए तो विद्यार्थियों में चिंतन प्रक्रियाओं के विभिन्न रूपों का समावेश होगा और विद्यार्थी वर्तमान समय में समाज देश काल के सम्मुख उत्पन्न सभी समस्याओं का निराकरण करने में सक्षम होंगे। आज विश्व में लगभग सभी देश विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के उच्च स्तरीय चिंतन कौशल को बढ़ाने के प्रयास कर रहे है जिसमें भारत देश भी प्रयासरत है कि महाविद्यालय व विद्यालयी विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का विकास समुचित हो सकें।

उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों व इसके विभिन्न रूपों से (तार्किक चिंतन, आलोचनात्मक चिंतन, अभिसारी चिंतन) सम्बन्धित संदर्भ साहित्य के अध्ययन के उपरांत शोधकर्ता के मस्तिष्क में कई प्रश्न उभरकर आए जो इस प्रकार है–

(1) उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों से सम्बन्धित क्षेत्र कौन–कौन से है?

(2) क्या विद्यालय में भूगोल विषय में पढ़ायी जाने वाली विषय–वस्तु उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों से सम्बन्धित है?

(2) विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का स्तर क्या है?

शोध के उद्देश्य

1. माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में प्रचलित सामाजिक अध्ययन के भूगोल विषय की पाठ्य–पुस्तकों मे विद्यार्थियों के उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों से सम्बन्धित विषय–वस्तु का पता लगाना।
2. राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के विकास का पता लगाना।
3. सरकारी और निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना :– सरकारी और निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नही होता हैं।

शोध विधि :– शोध में दत्त संकलन हेतु विधि का प्रयोग आवश्यक होता है कि किस विधि से हम अपने

दत्तों का संकलन करेंगे। अतः इस शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

न्यादर्श :— प्रस्तुत शोध में 1000 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया। पहले उदयपुर संभाग के सरकारी और निजी विद्यालयों की सूची ली गई और उनमे से प्रत्येक जिले से दो सरकारी और निजी विद्यालय का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया। प्रत्येक जिले से चयनित विद्यालय में विद्यार्थियों का चयन भी यादृच्छिक विधि से किया गया।

शोध उपकरण :— प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित स्वनिर्मित उपकरण प्रयुक्त किये –

शिक्षकों के लिए चौकलिस्ट (विषय–वस्तु विश्लेषण हेतु)

उच्च स्तरीय चिंतन कौशल परीक्षण

सांख्यिकी प्रविधि

प्रतिशत

सी.आर. मान

दत्तों का संकलन विष्लेषण एवं व्याख्या :— शोध का प्रथम उद्देश्य माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में प्रचलित सामाजिक अध्ययन के भूगोल विषय की पाठ्य–पुस्तकों मे विद्यार्थियों के उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों से सम्बन्धित विषय–वस्तु का पता था, इसका पता लगाने हेतु शिक्षकों पर चेकलिस्ट प्रशाषित की गई जिसका विशलेषण कर निम्न सरणी में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 1

पाठ्य–पुस्तक में से विषय–वस्तु चयन के प्रति शिक्षकों के अभिमत

क्र. सं.	विषय–वस्तु	सरकारी विद्यालय				निजी विद्यालय			
		हॉ		नहीं		हॉ		नहीं	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	संसाधन एवं विकास	10	100	0	0	8	80	2	20
2	वन एवं वन्यजीव संरक्षण	09	90	1	10	10	100	0	0
3	जल संसाधन	09	90	1	10	9	90	1	10
4	कृषि	10	100	0	0	8	80	2	20
5	खनिज व ऊर्जा संसाधन	10	100	0	0	10	100	0	0
6	विनिर्माण ऊद्योग	09	90	1	10	10	100	0	0
7	राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की जीवन रेखाएं	10	100	0	0	10	100	0	0
	समग्र विषय–वस्तु : समकालीन भारत–2		95.71		4.29		92.86		7.14

व्याख्या :— उपर्युक्त सारणी एवं आरेख संख्या 1 से निम्न परिणाम परिलक्षित होते हैं–

माध्यमिक स्तर की कक्षाओं कक्षा 10वीं में प्रचलित सामाजिक अध्ययन की पाठ्य–पुस्तकों में विद्यार्थियों के उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों से सम्बन्धित

विषय–वस्तु समकालीन भारत–2 भूगोल के समग्र क्षेत्रों में सरकारी विद्यालय के 95-71 % शिक्षकों ने हाँ एवं 4.29 % शिक्षकों ने नहीं में अपना अभिमत चौक लिस्ट द्वारा प्रस्तुत किया ।

इसी प्रकार निजी विद्यालयों के 92.86% शिक्षकों ने हाँ एवं 7.14% शिक्षकों ने नहीं में अपना अभिमत दिया जो यह दर्शाता है कि सरकारी और निजी विद्यालय के शिक्षकों के अनुसार समग्र क्षेत्रों क्रमशः संसाधन एवं विकास, वन, जल, कृषि, खनिज, विनिर्माण, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था प्रकरणों (विषय–वस्तु) से विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का विकास होता है।

द्वितीय उद्देश्य माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौषलों के स्तर का पता लगाना है इसके लिया उच्चस्तरीय चिंतन कौशल परिक्षण का प्रशाशन किया गया।

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों पर कौशल परीक्षण के प्रशासन उपरांत उससे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर प्रतिशत की गणना की गई और क्षेत्रानुसार विश्लेषण किया गया। विश्लेषण के अंतर्गत प्रतिशत अनुसार चार श्रेणियां निर्धारित की गई। जिसमें क्रमशः 61%–70% के मध्य प्राप्त प्राप्तांकों के प्रतिशत को सामान्य से कम, 71%–80% के मध्य को सामान्य, 81%–90% के मध्य को उत्तम, 91%–100% के मध्य को श्रेष्ठ माना गया है। प्रतिशत की गणना विद्यार्थियों के परीक्षण के प्राप्तांकों के आधार पर की गई।

सारणी संख्या – 2

समग्र विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का क्षेत्रानुसार प्राप्तांकों का प्रतिशत

क्र.सं.	क्षेत्र	उच्च स्तरीय चिंतन कौशल परीक्षण के प्राप्तांक(N=1000) (प्रतिशत में)	कौशल स्तर
1	अनुप्रयोग	75.79	II
2	विश्लेषण	82.72	I
3	मूल्यांकन	74.26	III
4	सृजन	73.79	IV
	समग्र	76.53	

व्याख्या :– उपर्युक्त सारणी एवं सारणी संख्या 2 से निम्न परिणाम परिलक्षित होते है

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों (छत्र1000) में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का समग्र प्रतिशत 76.53% प्राप्त हुआ। यह मान, निर्धारित श्रेणी अनुसार 71%-80% के मध्य है। अतः पाया गया कि सभी विद्यार्थियों में इन कौशलों का विकास का स्तर सामान्य है इससे यह पता चलता है कि सभी विद्यार्थियों में 'उच्च स्तरीय चिंतन कौशल का स्तर' सामान्य है तथा क्षेत्रानुसार विश्लेषण में सर्वाधिक प्रतिशत 'विश्लेषण' क्षेत्र में पाया गया जो 82.72% है। यह प्रतिशत 'उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों' क्षेत्र 'विश्लेषण' क्षेत्र के विकास में उत्तम स्तर को इंगित करता है। इसी प्रकार क्षेत्रानुसार

विश्लेषण में सबसे कम प्रतिशत 'सृजन' क्षेत्र में 73.79% पाया गया जो विद्यार्थियों में 'उच्च स्तरीय चिंतन कौशल' के 'सृजन' क्षेत्र का स्तर सामान्य पाया गया।

अतः उपर्युक्त सारणी अनुसार विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि समग्र विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिन्तन कौशलों का स्तर सामान्य है। क्षेत्रवार विश्लेषण करने पर पाया गया कि 'विश्लेषण' क्षेत्र 82.72% प्रथम, 'अनुप्रयोग' क्षेत्र 75.79% द्वितीय, 'मूल्यांकन' क्षेत्र 74.26% तृतीय एवं 'सृजन' क्षेत्र 73.79% चतुर्थ स्थान पर रहा। चारों क्षेत्रों में से तीन क्षेत्र अनुप्रयोग, मूल्यांकन एवं सृजन में उच्च स्तरीय चिन्तन कौशल का स्तर सामान्य है। जबकि 'विश्लेषण' क्षेत्र में विद्यार्थी उत्तम स्तर का प्रदर्शन कर सके। 'सृजन' का क्षेत्र सामान्य किन्तु सबसे कम प्रदर्शन वाला रहा एवं किसी भी क्षेत्र में विद्यार्थी श्रेष्ठ प्रदर्शन नहीं कर सके।

निष्कर्षत :– कहा जा सकता है की समस्त विद्यार्थी चिंतन कौशलों के 'अनुप्रयोग' क्षेत्र में समग्र विद्यार्थी 'उपयोग' और लागू करना, उप–कौशलों से सम्बन्धित प्रश्नों को श्रेष्ठता से कर पाते है परन्तु 'दर्शाना' सम्बन्धित उप–कौशल के प्रश्नों को करने में कठिनाई आई। अतः 'दर्शाना' उप–कौशल के स्तर को बढ़ाने की आवश्यकता है।

इसी प्रकार 'विश्लेषण' क्षेत्र में समग्र विद्यार्थी 'जाँच' और 'तुलना' आधारित उप–कौशलों के प्रश्नों को श्रेष्ठता के साथ कर पाते है परन्तु 'खोज' सम्बन्धित उप–कौशल के प्रश्नों को करने में कठिनाई आई। अतः समस्त विद्यार्थियों में 'खोज' उप–कौशल के स्तर को बढ़ाने की आवश्यकता महसूस की गई।

समस्त विद्यार्थी चिंतन कौशल परीक्षण के 'मूल्यांकन' क्षेत्र में 'चुनाव' और 'बताईये क्यों' जैसे उप–कौशलों से सम्बन्धित विकास श्रेष्ठ स्तर तक पाया गया परन्तु 'निष्कर्ष' उप–कौशल को विद्यार्थियों में विकास सामान्य से भी कम पाया गया। अतः इस 'निष्कर्ष' उप–कौशल के स्तर को बढ़ाने की आवश्यकता है।

समस्त विद्यार्थी चिंतन कौशल परीक्षण के 'सृजन' क्षेत्र में 'कल्पना' और 'निर्माण' सम्बन्धित उप–कौशलों का विकास उत्तम स्तर तक पाया गया जबकि उप–कौशल 'प्रस्तुत करना', का विकास सामान्य से कम पाया गया। विद्यार्थियों में इस उप–कौशल 'प्र्स्तुत करना' के स्तर को बढ़ाने की आवश्यकता है।

तृतीय उद्देश्य सरकारी और निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना था ।

सरकारी और निजी विद्यालय के विद्यार्थियों (N=1000) में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए सरकारी और निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों (N=1000) पर उच्च स्तरीय चिंतन कौशल परीक्षण लिया गया। उसका अंकन कर प्रतिशत तथा सी.आर. मान ज्ञात कर तुलनात्मक अध्ययन किया गया।

सारणी संख्या 3

सरकारी और निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के परीक्षण में क्षेत्रानुसार से प्राप्त प्रश्नों के प्राप्त अंकों के प्रतिशत आधार पर सी.आर.मान आधारित तुलनात्मक सारणी

क्र. सं.	उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के क्षेत्र	परीक्षण से प्राप्त प्रतिशत (समग्र विद्यार्थी) (N=1000)		CR मान	.05/.01 स्तर पर सार्थकता (.5=1.96) (.01=2.58)
		सरकारी विद्यालय (N=500)	निजी विद्यालय (N=500)		
1	अनुप्रयोग	74.31	77.27	1.09	सार्थक नहीं
2	विश्लेशण	81.58	83.87	0.96	सार्थक नहीं

3	मूल्यांकन	75.35	73.37	0.71	सार्थक नहीं
4	सृजन	71.18	76.40	1.87	सार्थक नहीं
	समग्र	75.39	77.67	0.85	सार्थक नहीं

कत्रि 998 पर सार्थक 0.05 स्तर पर सारणी मान त्र 1.96

0.01 स्तर पर सारणी मान त्र 2.58

व्याख्या :– उपर्युक्त सारणी एवं आरेख संख्या 3 के अनुसार चिंतन कौशल परीक्षण के पश्चात् समस्त क्षेत्रों में सरकारी और निजी विद्यालय के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रतिशत क्रमशः 75.39%, 77.67% प्राप्त हुए। प्रतिशत के आधार पर उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के समग्र क्षेत्रों में सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों का प्रतिशत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों से कम पाया गया। प्रतिशत की अन्तर की सार्थकता की जॉच के लिए 'सी.आर. मान' (ब्तपजपबंस त्ंजपवद्ध ज्ञात किया गया। सी.आर.मान 0.85 प्राप्त हुआ जो कि C.R.k सारणी अनुसार .05 स्तर पर सारणी मान 1.96 से कम पाया गया। अतः प्रतिशत का अन्तर सार्थक नहीं पाया गया। इसका अर्थ यह हुआ कि सरकारी और निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों के प्रतिशत में सार्थक अन्तर नहीं है। दोनों विद्यालय के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों का स्तर लगभग समान पाया गया।

अतः परिकल्पना संख्या–1 राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड सम्बद्ध सरकारी और निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में उच्च स्तरीय चिंतन कौशलों के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है, स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है की

उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के 'अनुप्रयोग' क्षेत्र के उपकौशल 'दर्शाना' और 'हल' से सम्बन्धित प्रश्नों को निजी विद्यालय के विद्यार्थी अधिक अच्छे से कर पाते हैं। इसी प्रकार उपकौशल 'लागू' से सम्बन्धित प्रश्न को सरकारी विद्यालय के विद्यार्थी अधिक अच्छे से कर पाते हैं और 'उपयोग' उपकौशल से सम्बन्धित प्रश्न को दोनों ही विद्यालय के विद्यार्थी अच्छे से कर पाते हैं। उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के 'विश्लेषण' क्षेत्र के उपकौशल 'खोज' और 'चर्चा' से सम्बन्धित प्रश्नों को निजी विद्यालय के विद्यार्थी अधिक अच्छे से कर पाते हैं। इसी प्रकार उपकौशल 'व्यवस्थित' से सम्बन्धित प्रश्न को सरकारी विद्यालय के विद्यार्थी अधिक अच्छे से कर पाते हैं और 'तुलना' एवं 'जॉच' उपकौशल से सम्बन्धित प्रश्न को दोनों ही विद्यालय के विद्यार्थी अच्छे से कर पाते हैं।

उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के 'मूल्यांकन' क्षेत्र के उपकौशल 'चुनाव', 'तर्क' और 'निष्कर्ष' आधारित प्रश्नों का सरकारी विद्यालय के विद्यार्थी अधिक अच्छे से कर पाते हैं। इसी प्रकार उप कौशल 'बताइये क्यों' से सम्बन्धित प्रश्न को दोनों ही विद्यालय के विद्यार्थी अच्छे से कर पाते हैं।

उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के 'सृजन' क्षेत्र के उपकौशल 'निर्माण', 'भविष्य कथन', 'कल्पना' और 'प्रस्तुत' पर आधारित प्रश्नों का निजी विद्यालय के विद्यार्थी अधिक अच्छे से कर पाते हैं। इसी प्रकार उप कौशल 'सुधार' से सम्बन्धित प्रश्न को सरकारी विद्यालय के विद्यार्थी अच्छे से कर पाते हैं।

शैक्षिक निहितार्थ :– विद्यार्थियों को अधिक से अधिक गतिविधियों आधारित अधिगम करने का प्रयास करना चाहिए जिसमें उपयोग करना, लागू, समालोचना, निर्माण करना, भविष्य कथन करना, छॉटना, जॉच करना, व्यवस्था करना, तुलना करना, चर्चा करना, आदि गतिविधियों को किया जा सकता है। इसे कक्षा में सहपाठियों के साथ एवं स्वाध्याय अधिगम करने के समय किया जाये। निजी विद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थी को उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के क्षेत्र मूल्यांकन आधारित प्रश्नों को स्वाध्याय व स्वध्ययन के समय प्रमुखता से पढ़ने व हल करने चाहिए। सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थी को चाहिए कि कक्षा में अध्ययन करने के समय व सहपाठियों, मित्रों के साथ अध्ययन करते समय और स्वाध्याय व स्वध्ययन के समय सृजन क्षेत्र के उप कौशलों से सम्बन्धित प्रश्नों को प्रमुखता से

समझे व हल करने का प्रयास करें। छात्रों को चाहिए कि अधिगम के समय या स्वध्याय व स्वध्ययन के समय मूल्यांकन क्षेत्र के उप कौशलों 'बताइये क्यों', 'चुनाव', 'निश्कर्श' पर आधारित गतिविधियों को प्रमुखता से करें। सरकारी विद्यालय की छात्राओं को उच्च स्तरीय चिंतन कौशल के सभी क्षेत्रों में अधिक से अधिक अधिगम का प्रयास करना चाहिए।

उपसंहार :– यह अनुसंधान कुछ शीर्षकों एवं बिन्दुओं का समावेष करती है। अनुसंधान के स्तर, समय एवं साधनों की दृष्टि से इन आयामों को विस्तार दिया जा सकता है। कुल मिलाकर कहा जाए कि अनुसंधान अथाह ज्ञान के भण्डार में खुलने वाला वह द्वार है जिसमें प्रवेश कर व्यक्ति स्वयं को ज्ञान से सम्पन्न करता है तथा समाज एवं राष्ट्र की उन्नति में अपना योगदान देता है। आशा की जाती है कि ज्ञान की यह यात्रा जो अनादि काल से चली आ रही है। अनन्त काल तक चलती रहेगी तथा ज्ञान का प्रकाश इसी तरह सम्पूर्ण मानवता के पथ को अलोकित करता रहेगा।

सन्दर्भ :–

कपिल, एच.के. (2006). सांख्यिकी के मूल तत्व,आगरा:विनोद पुस्तक मंदिर। पचौरी, गिरिश (2007)उदीयमान
भारतीय समाज में शिक्षक, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस
श्रीवास्तव, डी.एन. (2008).सांख्यिकी एवं मापन, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
सिंह, हरपाल (2007–08 छठा संस्करण)उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, आगरा, राधा प्रकाशन, पृ. 285
व्यास, बी. एल. (2009)भारत में शैक्षिक व्यवस्था एवं विद्यालय संगठन, आगरा, राधा प्रकाशन पृ. 127
कपिल, एच.के. (2006) सांख्यिकी के मूल तत्व,आगरा:विनोद पुस्तक मंदिर।
पचौरी, गिरिश (2007)उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, मेरठ, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस
श्रीवास्तव, डी.एन. (2008).सांख्यिकी एवं मापन, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
सिंह, हरपाल (2007–08 छठा संस्करण) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, आगरा, राधा प्रकाशन, पृ. 285
व्यास, बी. एल. (2009)भारत में शैक्षिक व्यवस्था एवं विद्यालय संगठन, आगरा, राधा प्रकाशन पृ. 127

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Biodiversity and Bio-Indicator of Narmada River specially Phytoplankton

Khichi Yogesh
Head of the P.G.Department of Zoology, Umiya Girls College Rau Indore, M.P., INDIA

Abstract :- The narmada river is one of the major hot spot for aquatic biodiversity in India. The presented study is conducted on the variable account of Phytoplankton. Algal communities possess many attributes as biological indicators of spatial and temporal environmental changes. A total 38 algal taxa belonging to 16 genera have been collected and identified. Chlorophyceae was the most diverse class having 14 taxa followed by Bacillariophyceae with 9 taxas. The algal communities correlated with water pollution. The algal community correlated with water pollution. The total biodiversity shows a drastic decrement caused by globalization and human interference in the nature. Present studies examined the potential for algal bio-monitoring across a gradient of agriculturally impacted streams.

Keywords :- Phytoplankton, Bioindicator, Bio-Monitoring, River Narmada.

Introduction :- Algae are major producer of organic compounds. It has an important position in aquatic food chain. Since algae indicate the levels of pollution in water bodies as bio indicator and it also helps to determine the quality and conservation of water K.S.Effiong,A.I.Inyang and U.U.Robert(2018),(Palmer, 1980), but not much attention has been paid with reference to their occurrence and distribution in different lotic and lentic water bodies. India is a land of many rivers. Rivers are the most important water resource in the world in general and in India in particular. Great civilizations developed along the bank of the river and even today most of the development has taken place in the cities or in the areas located near the rivers. The river provides water for the industry, agriculture, commercial, aquaculture and domestic purpose. Unfortunately the same rivers are being polluted by indiscriminate disposal of sewage and industrial waste and a plethora of human activities. River pollution has already acquired a serious dimension in India, with most its India’s fourteen major, 55 minor and several hundred small rivers are facing acute water pollution problem. In India, the studies on riverine ecosystems have attracted the attention of quite a few investigators in last few decades, e.g. Roy (1955), Choko and srinivasan (1955), Kudesia and Sharma (1981) and Mathur (1990). Algae play an important role to purify the water by photosynthesis. In other words it helps in the process of rejuvenation of rivers (Sharma, 2005).

In central India, river narmada is a multipurpose river.Narmada river is considered to be the lifeline of Madhya Pradesh and most important west flowing river of India Intense farming has led to severe disturbance of watersheds throughout the world, resulting in fundamental changes in the structure and functioning of stream ecosystems. Modern intensive agriculture is responsible for chemical and physical alterations such as increased contaminant and nutrient runoff, an increase in suspended solids due to erosion, and changes in discharge and channel morphology. The traditional physico-chemical measurements used in water quality monitoring programs such as total phosphorus and suspended sediment load are an important guide to environmental change. However, they are only representative of short-term conditions found at the instant of sampling and do not provide information about the effects of these changes on biological communities. The need for a better comprehension of interactions between environmental quality and ecosystem integrity has increased the interest in finding biological indicators that provide a more accurate guide to changes in ecological conditions. From the earliest years of the last century, periphytic (benthic) algae have been identified as a valuable

option for the bio-monitoring of stream and river ecosystems (Kolkwitz and Marsson, 1908 cited by Hill et al., 1999). More recently, this approach has been applied with success to evaluate a variety of water quality problems (Rott et al., 1998; Hill et al., 1999; Winter and Duthie, 2000a; Potapova et al., 2005). Periphytic communities provide an integrated measurement of water quality as experienced by the aquatic biota and have many biological attributes that make them ideal organisms for biological monitoring. Algae lie at the base of aquatic food webs and therefore occupy a pivotal position at the interface between biological communities and their physico-chemical environment. Furthermore, benthic algae have short life cycles and can therefore be expected to respond quickly to changes in the environment (McCormick and Stevenson, 1998). However, few studies to date have examined the potential for algal bio-monitoring across a gradient of agriculturally impacted streams. Algae are involved in water pollution in a number of important ways. Due to the enrichment of inorganic phosphorous and nitrogen is responsible for the growth of algae in water bodies. Research in the freshwater ecology of algae related to water pollution is sparse, and it is necessary of detailed study for searching indicator species. The uses of algal communities correlating water pollution (Sonneman et al., 2001). Algae are one of the most rapid bio-indicator of water quality changes due to their short life spans, quick response to pollutants and easy to determine their numbers (Plafkin et al., 1989).

Material and Methods Study Area :- The present study is based on study the Phytoplankton population. Description of Study Area: The Narmada river is considered as the life line of Madhya Pradesh. The catchment area of the river exists in the States of Madhya Pradesh (86.18%), Gujarat (11.6%), Maharashtra (1.5%), and Chattisgarh (0.72%). During its course, the river drops from an elevation of 1051 m to sea level, and flows through narrow gorges in the head reaches. The basin is bounded on the north by the Vindhya ranges, on the east by the Maikal range, on the south by the Satpura ranges and on the west by the Arabian Sea. Deep black soil covers the major portion of the basin. The river has 41 tributaries, of which 22 are on the left bank and 19 are on the right bank. The Barna, Tawa, Kolar, and Sukta dams have been constructed on the tributaries. The Bargi is constructed on the mainstream, while the Indirasagar, Omkareshwar, Maheshwar and Sardar Sarovar dams are under construction.

Sample collection :- The points of study at the river where water samples were collected are referred as stations. The hydro biological study of the narmada river at the stretch selected has been done for round the year, by taking the samples monthly with a view to assess the nature and degree of pollution.The sampling was done usually in morning hours between 8 a.m. to 11 a.m. and samples were collected from just below the water surface. At each of the station, three types of water samples, first from 200 m upstream, second from the confluence and third from 200m downstream were collected, for all biological analysis.

Biological analysis :- Each of the 1 Liter samples collected was centrifuged to concentrate the plankton organisms. Every one of these samples was made up to 100 ml after removing the surface water in the centrifuge tube. General Phytoplankton was studied for quantitative and qualitative details. The identification of phytoplankton species was done with the help of literature of Fritsch (1959), Desikachary (1959) and APHA (1998).

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Fig 1. Map of Narmada river showing Sampling Stations

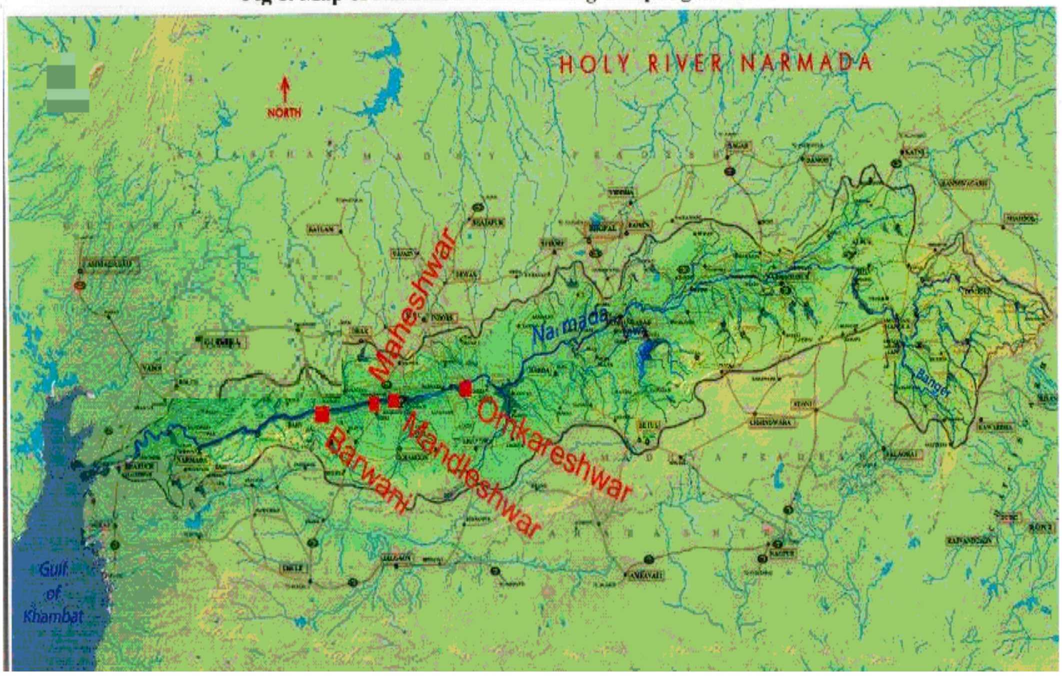

Result and Discussion :- A total 38 algal taxa belonging to 16 genera have been collected and identified from different session. The number of various member of class Chlorophyceae with 14 taxa (37%), Euglinophyceae with 3 taxa (08 %), Bacillariophyceae with 9 taxa (24%), Trebouxiophyceae with 2 taxa (5%), Ulvophyceae with 2 taxa (8%), Zygematophyceae with 2 taxa (5%) and Cyanophyceae with 5 taxa (13%) are as shown in Table 1, Fig II and Fig III.

Table 1 Composition of Phytoplankton

No.	**Algal groups**	**Composition of phytoplankton during study period**	
		GENERA	Texa
1.	Euglinophyceae	2	3
2.	Cyanophyceae	4	5
3.	Chlorophyceae	5	14
4.	Bacillariophyecae	2	9
5.	Trebouxiophyceae	1	2
6.	Ulvophyceae	1	2
7.	Zygematophyceae	1	3
	Total	16	38

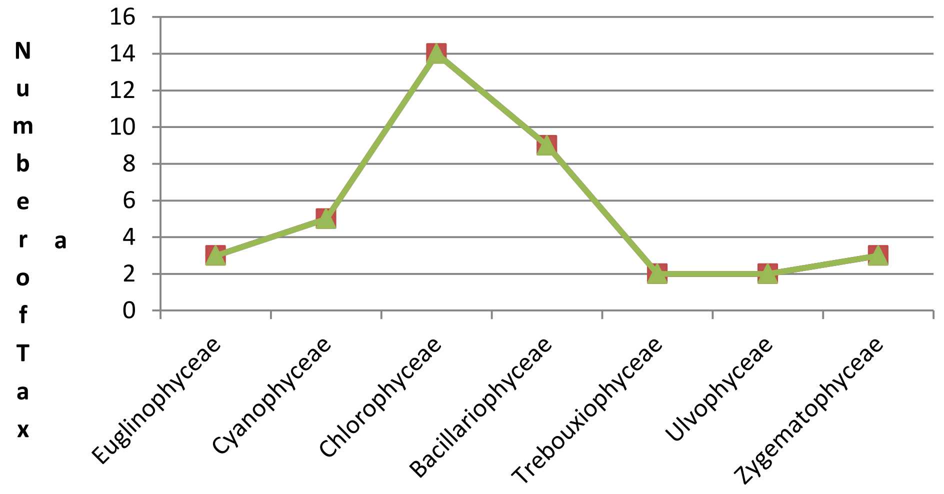

Fig.III.Algal Groups in narmada river with texa

The present investigation had been discussed to the Phytoplankton frequency of the aquatic environment. Most of the algae were planktonic, free floating and few are epizootic. The availability of phytoplankton in the reverie ecosystem depends upon its physiographic. Reduced numbers of phytoplankton had been reported from acidic water and it was supported by Lewitus et al., (1998). The maximum phytoplankton population found form post monsoon, it may be due to the favourable condition of the water Sharma et al., (2005). In monsoon season the population was low, probability due to increased rainfall, increase turbidity runoff and dilution effect of flood. Species of Chlorophyceae were maximum in early summer while the species of Cyanophyceae were highest in late summer. However Euglenophycae are rarely found in fast flowing water but few species were observed in early winters. Similarly, members of Bacillariophyceae were dominated during late winter (Mathur, 1990). Thus, the algal spectrum of river Narmada showing the oligotrophic nature at certain sites and due to dominance of filamentous green algae, the river Narmada can be classified under "Zygnema type of river" (Blum, 1956). At polluted water, a large number of algae tolerating organic pollution were reported, mostly belonging to Chlorococcales, Euglinoids, Desmids and few members of Cyanophyceae (Kapoor, et al., 1992; and Bowling, 1994).

Conclusion :- Biological monitoring using algae is a useful alternative tool for assessing the water quality of any aquatic ecosystem, as it can help in evaluation of environmental changes in the water bodies. The most convincing reason for including algal indicators in environmental monitoring programs is that changes in both algal production and taxonomic composition can greatly affect food web interactions and ecosystem dynamics and also bio-monitoring using algae is less expensive, more informative and convincing. The algal communities correlated with water pollution. The total biodiversity shows a drastic decrement caused by globalization and human interference in the nature. Bio-monitoring results can be used to identify the water body ecology problems and establish priorities for pollution control efforts. Among taxonomic analysis of algal assemblage, Community study are capable of measuring ecosystem changes in response to broad range of impact scenario, but require a suitable reference condition to be set up.

References :-

1. APHA (1998). Standard methods for Examination of water and waste water American public health Association 20th Ec. APHA, New York.

2. Blum JL (1956). The ecology of river algae. Bot. Rev. 22: 291-234.

3. Bowling L (1994). Occurrence and possible cause of severe Cyanobacterial blooms in lake Cargelligo. New South Wales; InCyanobacterial Research in Australia. G. Jones (Ed.): 1-197.

4. Chacko PI, Srinivasan R (1955). Observation on hydrobiology of the major river of Madras State, South India, Cortr. Fresh Biol. Stn., Madras, 13: 1-16.

5. Desikachary TV (1959). Cyanophyta, I.C.A.R., New Delhi.

Fritsch FE (1935). Structure and reproduction of the algae Vol. I and II. Cambridge University Press Cambridge.

6. Hill MO, Mountford JO, Roy DB, Bunce RGH (1999). Ellenberg's indicator values for British plants, ECOFACT, vol 2, Technical Annex. Huntingdon, UK: Institute for Terrestrial Ecology.

7. Kapoor K, Solanki PS (1992). Water management problems related to water resources of Udaipur (Raj.) India. In Proc. Of Nat. Sem. on Environ protection from industrialization, Gupta RS, Kapoor K, (Eds.) MLS University Udaipur: pp. 119-126.

8.khanna D.R. bhutani R. matta G, singh v, and bhaduriya G, 2012, Study of planktonic diversity of river ganga from devprayag to roorkee, uttrakhand (india), Environment conservation jouranal 13 (1 and 2) pp no 211-217, 2012.

9.K.S.Effiong,A.I.Inyang and U.U.Robert(2018).Spatial distribution and diversity of phytoplankton community in eastern obolo river estuary, Niger delta. Jouranal of oceanography and marine science. 9. 1-14.5897/Joms 2016.0139.

10. Kolkwitz R, Marsson M (1908). Oekologie der pflanzlichen Saprobien. Berichteder Deutschen Botanischen Gesell schaft. 26: 505–519.

11. Lewitus AJ, Koepfler ET, Morries JJ (1998). Seasonal variation in the regulation of phytoplankton by nitrogen and grazing in asalt-Marshestuary, Limnology and Oceanography. 43(4): 636-646.

12. Mathur M (1990). An ecological study of the algal flora of the river Narmada at Hoshangabad. Ph.D. thesis.

13. McCormick PV, Cairns JJr (1994). Algae as indicators of environmental change. Journal of Applied mycology. 6: 509–526.

14. Palmer CM (1969). A composite rating of algae tolerating organic pollution. Journal of Phycology, 5(1): 78–82.

15. Plafkin JL, Barbour MT, Porter SK, Gross and Hughes RM (1989). Rapid Assessment Protocols for Use in Streams & Rivers: Benthic Macro invertebrates & Fish. EPA: Washington, D.C. Rosenberg, D.M., V.H. Resh (eds). 1993. Freshwater Biomonitoring and Benthic Macroinvertebrates. Chapman & Hall: New York, NY.

16. Potapova M, Coles JF, Giddings EMP, Zappia H (2005). A comparison of the influences of urbanization in contrasting environmental settings on stream benthic algal assemblages. American Fisheries Society Symposium. 41: 333–359.

17. Roy H (1955). Plankton ecology of river Huoghli (West Bengal) Ecology 36: 169-175.

18. Rott E (1991). Methodological aspects and perspectives in the use of periphyton for monitoring and protecting rivers. In B.A. Whitton, E. Rott and G. Friedrich (eds.). Use of algae for monitoring rivers. Innsbruck, Austria: Institute for Botanic, Universidad Innsbruck.

19. Sharma PD (2005). Environmental Biology and Toxicology. pp. 290-91.

20. Tali I, Pir Z, Sharma S, Mudgal LK, Siddique A (2012). Physico Chemical properties of water of river Narmada at Madhya Pradesh, India. Researcher. 4(6): 5-9.

21. Winter JG, Duthie HC (2000). Epilithic diatoms as indicators of stream total N and total P concentration. Journal of North American Benthological Society. 19(1): 32–49.

ISSN : 2394-3580 **Swadeshi Research Foundation** Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Issues and Challenges of Human Resource Practice in Indian Retail Industry

Dr. Usha Porwal
Professor, Govt. College, Jhabua, M.P.
Ms. Jyoti Bathra
Assistant Professor, SJHS Guajarati Innovative College of Commerce and Science Indore, M.P.

ABSTRACT : *This paper explores the selling attitudes and perception of the retail industry. To sustain and competing the global market place a qualified talented human resource should be required for successful organisations. Human resource management practices are most effective when it matched with strategic objectives of organisation. In the present globalised era, HRM's role in the retail sector's success is growing rapidly. HRM is an important vital function in an organisation and becoming more important. The HRM practices are crucial in designing the structure for staffing, manpower, performance appraisal, compensation and training and development. Retailing is an important element of business around the globe. Retailing includes all the activities that offering for sale of merchandise to the worldwide users. In the chain of distribution retailing is last step in bringing goods and services to the consumers. In the retail sector an analysis of issues and challenges on human resource are essential. To achieve the demands of global environment a retail industry needs in order to develop, train, retain, cultivated, attractive, retention, knowledgeable human resource. This paper gives the effects of industrial culture on retail sector, workforce, diversity in the retail sector, rivals profiles of retail professionals.*

Key words : *Human Resource Management Practices, Organisation, Performance appraisal, Retail sector, Training.*

Introduction : Human resource is a term used to refer to how people are managed by organisations. The field has moved from a traditionally administrative function to a strategic one that recognizes the link between talented and engaged people and organisational success. The field draws upon concepts developed in Industrial/ Organisational Psychology and System Theory. Human resources have at least two related interpretations depending on context. The original usage derives from political economy and economics, where it was traditionally called labour, one of four factors of production although this perspective is changing as a function of new and ongoing research into more strategic approaches at national levels. This first usage is used more in terms of *'human resources development'*, and can go beyond just organisations to the level of nations. The more traditional usage within corporations and businesses refers to the individuals within a firm or agency, and to the portion of the organisation that deals with hiring, firing, training, and other personnel issues, typically referred to as *'human resources management'*.

Human resources represent the "*people at work*". They are the sum total of the inherent abilities, acquired knowledge, skills and aptitudes of employees. According to *Jucius*, human resources or human factors refer to "a whole consisting of interrelated, interdependent and interacting physiological, psychological, sociological and ethical components."

Key functions :

Human Resource Management serves these key functions:

a) Recruitment & Selection
b) Training and Development (People or Organisation)
c) Performance Evaluation and Management
d) Promotions/Transfer
e) Redundancy
f) Industrial and Employee Relations
g) Record keeping of all personal data.
h) Total Rewards: Employee Benefits & Compensation
i) Confidential advice to internal 'customers' in relation to problems at work

j) Career development

k) Competency Mapping (Competency mapping is a process an individual uses to identify and describe competencies that are the most critical to success in a work situation or work role.)

l) Time motion study is related to HR Function

m) Performance Appraisal

Importance of human resources :

David Decenzo says, "An organization is nothing without human resources." *Clarence Francis* writes, "I believe the greatest assets of a business are its human assets and that the improvement of their value is both a matter of material advantage and moral obligation. I believe, therefore, that employees must be treated as honorable individuals, justly rewarded, encouraged, in their progress, fully informed, properly assigned, and that their lives must be given meaning and dignity on and off the job." Today, progressive managers realize that the growth and development of human resources is essential for the survival and growth of an organization. *Lawrence Appley* describes the manager's job as "human relations job that functions through several major activities" and that "human relations is the beginning and the end of the management job." He stresses that management is the development of people are one and the same. They should never be separated. He says, "Management is personnel administration."

The importance of human resource management is described below:

- Important task of management
- Achievement of enterprise goals
- Realisation of intrinsic abilities
- Satisfaction from work
- Nervous system of the organisation
- Effectiveness and economy of operations
- Basis of success
- Performs the toughest job: dealing with the human beings
- Managerial necessity
- Twofold role
- Overcoming competition
- Managing environment
- Utilization human resources
- Building team work
- Professional growth
- Enhancing dignity of labour
- Social role

Need for human resource

Every organisation has to plan for Human Resource due to:

1) The shortage of certain categories of employees and/or variety of skills despite the problem of unemployment.
2) The rapid changes in technology, marketing, management etc. and the consequent need for new skills and new categories of employees.
3) The changes in organisation design and structure affecting manpower demand.
4) The demographic changes like the changing profile of the workforce in terms of age, sex, education etc.
5) The Government policies in respect to reservation, child labour, working conditions etc.
6) The labour laws affecting the demand for and supply of labour.
7) Pressure from trade unions, politicians, sons of the soil etc.
8) Introduction of lead time in manning the job with most suitable candidate.

Benefits of human resource

Human Resources (HR) anticipates not only the required kind and number of employees but also determine the action plan for all the functions of personnel management .The major benefits of Human resource are:

1) It checks the corporate plan of the organisation.
2) It offsets uncertainly and changes but the HR offsets uncertainties and changes to the maximum extent possible and enables the organization to have right men at right time and in right place.
3) It provides scope for advancement and development of employees through training, development etc.
4) It helps to anticipate the cost of salary enhancement, better benefits etc.

5) It helps to anticipate the cost of salary, benefits and all the cost of human resources facilitating the formulation of budgets in an organization.

6) To foresee the need for redundancy and plan to check it or to provide alternative employment in consultation with trade unions, other organizations and government through remodeling organizational, industrial and economic plans.

7) To foresee the changes in values, aptitude and attitude of human resources and to change the techniques of interpersonal, management etc.

8) To plan for physical facilities, working conditions and the volume of fringe benefits like canteen, schools, hospitals, conveyance, and child care centers. Quarters, company stores etc.

9) It gives an idea of type of tests to be used and interview techniques in selection based on the level of skills, qualifications, intelligence, values etc., of future human resources.

10) It causes the development of various sources of human resources to meet the organisational needs.

11) It helps to take steps to improve human resource contributions in the form of increased productivity, sales turnover etc.

12) It facilities the control of all the functions, operations, contribution and cost of human resources.

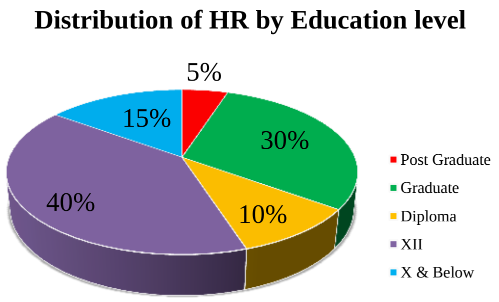

Total quality human resource approach

- **Philosophy**: Shared responsibility, commitments, rewards
- **Business objective**: Increase quality, customer satisfaction, productivity and employee satisfaction
- **Quality objective**: Total quality management and continuous quality improvement at and across each level.
- **Information sharing**: Broad information sharing on profit, quality, productivity, coast, capital spending plans
- **Major decision makers**: Customer, employees, shareholders
- **Employee involvement**: Extensive involvement within levels and functions
- **Education and training**: Quality and economic education. Training to improve multiple skills, problem solving skills, group spirit
- **Reward structure**: Designed and administered by management-employee committee. Formal early union involvement.
- **Job security**: Formal commitment, all possible job surety even during business downturn.

Indian retail industry

The Indian retail industry has emerged as one of the most dynamic and fast-paced industries due to the entry of several new players. It accounts for over 10% of the country's Gross Domestic Product (GDP) and around 8% of the employment. India is the world's fifth-largest global destination in the retail space. Indian Retail Industry has immense potential as India has the second largest population with affluent middle class, rapid urbanisation and solid growth of internet.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Country	Modern Retail (in 2011, % of total)
India	7%
Japan	16%
China	20%
Thailand	40%
United States	85%

Table 1 https://en.wikipedia.org/wiki/Retailing_in_India#cite_note-37

Indian market has high complexities in terms of a wide geographic spread and distinct consumer preferences varying by each region necessitating a need for localization even within the geographic zones. India has highest number of outlets per person (7 per thousand) Indian retail space per capita at 2 sq ft (0.19 m^2)/ person is lowest in the world Indian retail density of 6 percent is highest in the world. 1.8 million Households in India have an annual income of over 4.5 million (US$70,168.10).

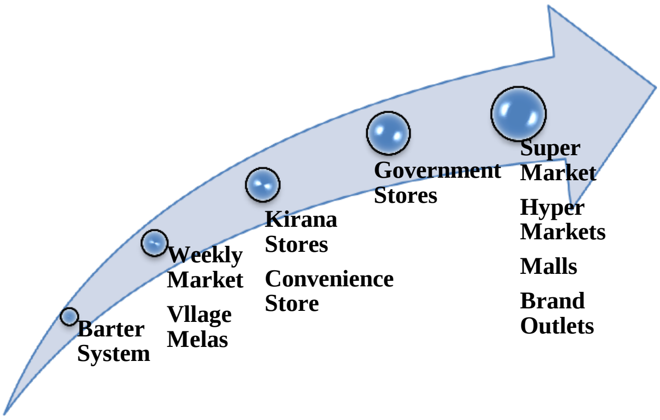

The organised retail market has a share of 8% as per 2012. While India presents a large market opportunity given the number and increasing purchasing power of consumers, there are significant challenges as well given that over 90% of trade is conducted through independent local stores. Challenges include: Geographically dispersed population, small ticket sizes, complex distribution network, and little use of IT systems, limitations of mass media and existence of counterfeit goods.

A number of merger and acquisitions have begun in Indian retail market. PWC estimates the multi-brand retail market to grow to $220 billion by 2020.

Indian Retail Group	Market Reach in 2011
Pantaloon Retail	65 stores and 21 factory outlets in 35 cities, 2 million square feet space
Shoppers Stop	51 stores in 23 cities, 3.2 million square feet space
Spencer's Retail	200 stores in 45 cities, 1 million square feet space

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Reliance Retail	708 mart and supermarkets, 20 wholesale stores in 15 cities, 508 fashion and lifestyle 1,206 crore (US$190 million) per month sales in 2013
Bharti Retail	74 Easy day stores, plans to add 10 million square feet by 2017
Birla More	575 stores nationwide
Tata Trent	59 Westside mall stores, 13 hypermarkets
Lifestyle Retail	15 lifestyle stores, 8 home centers
Future Group	193 stores in 3 cities, one of three largest supermarkets retailer in India by sales 916 crore (US$140 million) per month sales in 2013

Indian retailers

Revenue from Online retail in India (US$ billions)

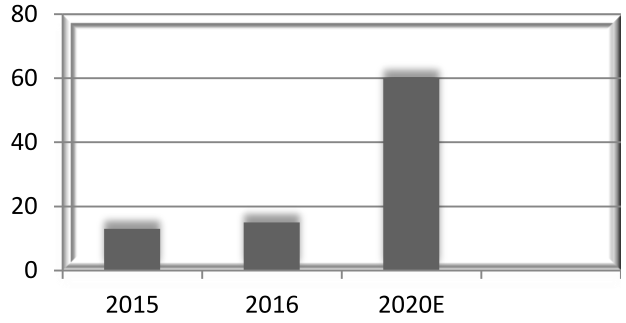

Figure 1 E-Estimate Source: indiaretailing.com

Indian market has high complexities in terms of a wide geographic spread and distinct consumer preferences varying by each region necessitating a need for localization even within the geographic zones. The organised retail market has a share of 8% as per 2012. While India presents a large market opportunity given the number and increasing purchasing power of consumers, there are significant challenges as well given that over 90% of trade is conducted through independent local stores. Challenges include: Geographically dispersed population, small ticket sizes, complex distribution network, and little use of IT systems, limitations of mass media and existence of counterfeit goods.

Market size

India's retail market is expected to grow at a Compound Annual Growth Rate (CAGR) of 10% to US$ 1.6 trillion by 2026 from US$ 641 billion in 2016. While the overall retail market is expected to grow at 12% per annum, modern trade would expand twice as fast at 20% per annum and traditional trade at 10%. Indian retail market is divided into "Organised Retail Market" which is valued at $60 billion which is only 9% of the total sector and "Unorganised Retail Market constitutes the rest 91% of the sector.

India's Business to Business (B2B) e-commerce market is expected to reach US$ 700 billion by 2020. Online retail is expected to be at par with the physical stores in the next five years. India's total potential of Business to Consumer (B2C) is estimated to be US$ 26 billion, of which $3 billion can be achieved in the next three years from 16 product categories, according to a study by Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI) and Indian Institute of Foreign Trade (IIFT).

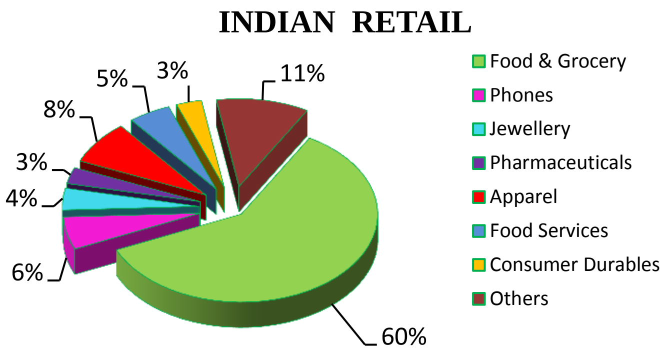

Figure 2 Impact of FDI on Retail Sector in India

India has replaced China as the most promising markets for retail expansion, supported by expanding economy, coupled with booming consumption rates, urbanizing population and growing middle class.

India is expected to become the world's fastest growing e-commerce market, driven by robust investment in the sector and rapid increase in the number of internet users. Various agencies have high expectations about growth of Indian e-commerce markets. Indian e-commerce sales are expected to reach US$ 120 billion by 2020 from US$ 30 billion in FY 2016. Further, India's e-commerce market is expected to reach US$ 220 billion in terms of gross merchandise value (GMV) and 530 million shoppers by 2025, led by faster speeds on reliable telecom networks, faster adoption of online services and better variety as well as convenience.

The size of modern retail in India is expected to double to Rs 171,800 crore (US$ 25.7 billion) from Rs 87,100 crore (US$ 13 billion) in three years driven by Omni-channel retail.

Research methodology :

Research Methodology is a way to find out the result of a given problem on a specific matter or problem that is also referred as research problem. In Methodology, researcher uses different criteria for solving/searching the given research problem. Different sources use different type of methods for solving the problem. If we think about the word "Methodology", it is the way of searching or solving the research problem.

This paper contains conceptual model, descriptive research methodology used in the research. Conceptual model will also be used to undertake for analysis of study. In last research methodology will be offered so that set objectives can be attained successfully.

Objectives of the study :

1) To study the current scenario of the Indian Retail Industry.
2) To analyse the HRM practices of the organised Indian Retail Industry.
3) To study the HR challenges faced by the organised retailers of the India.
4) To study the impact of HR issues in retail sector in emerging markets of India.
5) To suggest strategies for the HR should adopt which will help to cultivate, train and develop the competent workforce.

HR facing issues in retail sector

There are a number of issues involved in retail business in India which certainly affect the growth of the sector. Undoubtedly, the retail industry need large scale hiring and staffing in the retailing is unique due to the following reasons:

- Retail jobs in the frontline are low paid jobs with an industry average of Rs 3000. Hence salary paid cannot be used as motivators to induce people to apply for jobs.
- Retail jobs are also not career builders in the short run. Not many of the front lines can grow to become departmental /stores head.

- Value addition is very uncommon except in few professionally run retailing units. There is paucity in effective training imparted to the front liners.
- There is hardly any kind of human resource strategy devised in retailing sector. Though retailers spend a lot in incorporating international standards in to their outlets but fail in doing the same, when it comes to human resource.
- Retail jobs are physically very demanding. Employees are required to work for 10-12 hours a day, six days a week, work on weekends, holidays and festive days.
- Attrition level is very high in retail sector. The attrition in the middle and senior management is not as significant as that of front end personnel; it is almost 20% in front liners. But another key issue is lack of competency in modern retailing practices.

Challenges faced by HRM in retail sector

The HR managers in retail sector are currently facing the following challenges:

- Managing part –time employees is the biggest challenge for an HR manager in the retail firm, as they work only during their shift and are not totally involved in their work.
- Retailers operate on thin margins and hence have to be cautious in paying high wages. Paying high salaries will deprive them of good profits.
- Unavailability of experienced manpower.
- Threat of poaching
- Changing employee demographics with acute shortage of skilled sales force. As there are ample opportunities in the Indian economy with a large chunk of youngsters being recruited by the BPO‟s and call centers, there is acute shortage of freshers.
- Differences in work culture and values in the area of work.
- Work force diversity.
- Retailers have to compete with other high growth industries like telecom, insurance and more specifically IT's/BPO firms which look for similar skill sets like customer orientation, selling skills and communication skills. Salary levels offered in most IT companies are significantly higher and thus making it an attractive jump for front end employees in retail.
- Knowledge of the products and services can directly influence the sale in retail formats with assisted selling. Lack of competency can directly affect the stores reputation.
- Stressful environment.
- Lack of formal retailing education.
- Most retail employees come with very minimal qualification; therefore they cannot be subjected to intense conceptual inputs or classroom inputs. On the other hand employees in retail sector cannot be spared for long hours or days for training, hence providing them effective training without hindering their work becomes a real predicament and a major challenge.

Conclusion : Employees are the most important assets for any organization. So the organization must ensure that the right person is hired for the right position at the right time and he is trained and developed properly to accomplish his job activities effectively. Employees in the retail sector are required to be trained according to the demands of the industry. Due to competitive scenario prevailing the jobs are becoming challenging and skilled workforce is required to meet the demand. The graduates and postgraduates are trained for the job and conversion for the skilled workforce. From the survey it is found that employees are job satisfied and committed to their jobs. The commitment increases the performance of their employees and hence productivity of the organization.

References and Bibliography :

1) **Almas Sultana** (2014) ***"Human Resource Management in Organized Retail Industry in India"*** Global Journal of Finance and Management. ISSN 0975-6477 Volume 6, Number 6 (2014), pp. 491-496.

2) **Bhaskar, N.** (June, 2012). ***"Human Resource Management Practices in Organized Retailing: A Study of Select Retailers in Warangal District."*** Asian Journal of Research in Business Economics and Management, 2(6), 77-89.

1) **Dr. D. Maheswara Reddy; Suresh Chandra** (8, December 2011) ***"Human Resource Management Practices In***

Organized Retailing - A Study Of Select Retailers”, International Journal of Multidisciplinary Research Vol.1 Issue 8, December 2011, ISSN 2231 5780

Books and reports:-

1) **Research Methodology**: Methods And Techniques- C R Kothari
2) **Retail :**Organized Vs Unorganized Or Coexistence Of Organized &Unorganized- Pankaj Sharma
3) **Human Resource Management:** G.S. Sudha- Ramesh Book Depot Publication
4) **Personnel And Human Resource Management:** P. Subba Rao -Himalaya Publication House
5) **Human Resource Management** :K. Aswathappa- Indus Books Publications
6) **Research Methodology** : D K Bhattacharyya

Websites:

1) shodhganga.inflibnet.ac.in,
2) pqdtopen.proquest.com,
3) www.openthesis.org,
4) https://ideas.repec.org/a/mgn/journal

मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम में जातिवाद व धार्मिक भेदभाव

कु. सांत्वना अग्रवाल

शोधकर्ता ग्रामीण विकास विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम एक बहुत बड़े स्तर पर संचालित किया जा रहा है। पर जहाँ भी संचालित हो रहे है वह सरकारी की निगरानी पूर्णतः बनी हुई है क्या नहीं। सरकारी स्कूलों में मध्यान्ह भोजन के नाम से बच्चों के पोषक आहार के साथ खिलवाड़ हो रहा है और जहाँ–जहाँ भी सरकारी स्कूलों में बच्चो के मध्यान्ह भोजन का वितरण किया जाता है वहाँ साफ –सफाई का बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाता है। सरकारी स्कूलों में अधिकतर कम आय वालों और गरीब परिवार के बच्चे पढ़ते है जो शायद घर में एक समय का भोजन ही कर पाते हो वह शाला ही भोजन की लालच में आते हो तो वह इस भोजन का आनंद ले सके और शिक्षा के प्रति उसका रूझान हो सके। सरकार को योजना संचालित करते समय भ्रष्ट लोगों का भी ध्यान रखना चाहिए। क्योंकि ये बच्चे ही देश का भविष्य है और इन बच्चों का अच्छी शिक्षा व प्रोषित भोजन नहीं प्राप्त होगा तो वह देश कुपोषित ही रहेगा।

मध्यान्ह भोजन में बच्चों को जो पोषक आहार दिया जा रहा है वह बच्चों की रूचि का हो उनका मेन्यू सप्ताह का निर्धारित है तो बच्चों से सप्ता प्रारंभ होने के पूर्व उनसे उनकी रूचि का एक भोजन रखा जाए। मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम में जब बच्चों को सम्मिलित किया जाएगा तो बच्चों की रूचि बढ़ेगी और शाला आने के प्रति उत्सुकता जागृत होगी। आदिवासी क्षेत्रों में मध्यान्ह भोजन का कार्य स्व. सहायता समूहों को दिया गया है जबकि यह कार्य प्रशासनिक अधिकारी के संज्ञान में होना चाहिए। सरकारी व्यक्ति इस कार्य के लिए नियुक्त होना चाहिए क्योंकि ऐसी संस्थाएं अपने लाभ को देखेंगे। जिसमें बच्चों को हो सकता है कि सही भोजन प्राप्त न हो। सरकारी स्कूलों की छवि जो बिगड़ गयी है उसे सुधारने पर सरकार का ध्यान आकृष्ट हो, क्योंकि एक सर्वे के अनुसार 90 लाख छात्रों ने अपने नाम सरकारी स्कूलों से कटवा लिया है। अभिभावकों और बच्चों का मानना है कि स्कूल में अच्छी पढ़ाई होनी चाहिए अच्छे भोजन के साथ पढ़ाई भी अच्छी होगी तो बच्चे आकर्षित होगें। क्योंकि बच्चे अपने घर में अपने हैसियत के हिसाब से खाना खा के आते है।

FCI से कई बार आवंटन समय पर प्राप्त नही होता है, जिसके कारण मध्यान्ह भोजन योजना प्रभावित होती है। वित्तीय वर्ष 2009–10 के प्रथम एवं द्वितीय त्रैमास के लिये खाद्यान्न का आवंटन समय पर प्राप्त हुआ, लेकिन राज्य में भारतीय खाद्य निगम द्वारा राज्य खाद्य निगम को खाद्यान्न समय पर उपलब्ध नहीं कराया गया। राज्य खाद्य निगम भी समय खाद्यान्न संवेदकों को उपलब्ध नहीं कराती है। FCI के द्वारा Bag पर MDM अंकित करने का निर्णय हुआ था, जिस पर अमल नहीं हो रहा है फलतः चावल की गुणवत्ता पर नियंत्रण नहीं हो पाता है। FCI का बेहतर तालमेल SFC के साथ नहीं हो पाता है। विद्यालय स्तर पर प्रतिदिन मीनू का पालन नहीं होने संबंधित समस्या अनुश्रवण समिति की बैठक समय पर नहीं होना। विद्यालय शिक्षा समिति के स्तर पर समन्वय की कमी।

भोजन की गुणवत्ता सुनिश्चित करना राज्य सरकार की जिम्मेदारी है इसके लिए उनको नियमित रूप से डायटीशियन की मदद लेनी चाहिए लेकिन पर्याप्त सुविधा और व्यवस्था के अभाव में कई जगह दुर्घटनाएं घटित हो चुकी है। ऐसी कोई भी अप्रिय घटना के होने पर किसी भी जवाबदेही तय नहीं हो पाती है। मध्यान्ह भोजन बांटने से पहले वहॉं के प्रधानाध्यापक व शिक्षक व प्रभारी की जिम्मेदारी होनी चाहिए कि उसे खाकर देखे की ठीक है कि नहीं तब बच्चों को वितरित की जाए। जिस प्रकार से जिला स्तर पर सुप्रीम कोर्ट के अनुसार भूख से होने वाली मौतों के लिए मुख्य सचिव, जिला अधिकारी खण्ड विकास अधिकारी और पंचायत के मुखिया को जिम्मेदार माना जाता है।

1. मानव संसाधन विकास मंत्रालय के प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता विभाग के द्वारा मध्यान्ह भोजन योजना की निगरी और निरीक्षण के लिए विस्तृंत पद्धति निर्धारित की जानी चाहिए।
2. सूचना का अधिकार अधिनियम के अंतर्गत सूचना का प्रदर्शन करना चाहिए जहां भी स्कूल में ये कार्यक्रम मे ये कार्यक्रम या योजना लागू है वहाँ पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करना चाहिए जैसे –प्राप्त खाद्यान्न की मात्रा, प्राप्ति की तारीख, उपयोग किए खाद्यान्न की मात्र, अन्य खरीदे गए, उपयोग में लाए गए अंश, मध्यान्ह भोजन पाने वाले बच्चों की संख्या, दैनिक मेन्यू, कार्यक्रम में शामिल सामुदायिक सदस्यों का रोस्टर आदि।

3. राजस्व विभाग, ग्रामीण विकास, शिक्षा और महिला और बाल विकास, खाद्य, स्वास्थ्य जैसे अन्य संबंधित क्षेत्रों के राज्य। केन्द्रशासित प्रदेशों के अधिकारियों से जिन स्कूलों में कार्यक्रम लागू किया जा रहा है। वहां निरीक्षण के लिए लिए जाना चाहिए। प्रत्येक तिमाही में 25 प्रतिशत प्राथमिक स्कूलों 1 ई.जी.एस. और ए.आई.ई केन्द्रों के निरीक्षण की सिफारिश करना चाहिए।
4. एफ.सी.आई. के डिपो में पर्याप्त खाद्यान्न निरंतर उपलब्ध रहे इसकी जिम्मेदारी एफ.सी.आई. की है। यहां किसी महीने /तिमाही के लिए एक महीने पहले ही खाद्यान्न उठाने की अनुमति है ताकि खाद्यान्नों की आपूर्ति निर्बाध बनी रहे।
5. एम.डी.एम. कार्यक्रम के अंतर्गत खाद्यान्नों की आपूर्ति में आने वाली विभिन्न परेशानियों से निपटने के लिए एफ.सी.आई प्रत्येक राज्य में एक नोडल अधिकारी नियुक्त करें। जिलाधिकारी/जिला पंचायत प्रमुख सुनिश्चित करते है कि खाद्यान्न एफ.ए.क्यू से कम का न हो तथा एफ.सी.आई. और जिलाधिकारी तथा/या जिला पंचायत प्रमुख द्वारा नामित व्यक्तियों की संयुक्त टीम के निरीक्षण के बाद ही जारी किया जाता है।
6. भारत सरकार के स्कूली शिक्षा और साक्षात्कार विभाग द्वारा राज्य सरकार/केन्द्रशासित प्रदेशों को बच्चों और संस्थानों के कवरेज, खाना पकाने की लागत, परिवहन, किचन शैड का निर्माण और किचन के सामानों के प्राप्ति पर आवधिक सूचना दाखिल करना चाहिए जिससे सरकार को वार्षिक बजट मिल सके।
7. सर्वशिक्षा अभियान की निगरानी के लिए चिन्हित 41 सामाजिक विज्ञान शोध संस्थानों को मध्यान्ह भोजन की निगरानी का काम सौंपा जाना चाहिए।
8. राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों को कहा गया है कि जनशिकायतों के निवारण के लिए समुचित पद्धति विकसित करें जिसका बड़े पैमाने पर प्रचार होना चाहिए और आसान पहुंच में हो।

जातिवाद व धार्मिक भेदभाव :– जहाँ जातिवाद व धार्मिक भेदभाव नहीं होता वरन शिक्षा ही वह माध्यम है, जिसमें आने वाली पीढ़ियां जागरूक होती है और बुराई का नशा– धीरे–धीरे होता जाता है, इसलिए अभी भी समय है कि सरकार मिड डे मील में आवश्यक बदलाव करें क्योंकि यह भी सत्य है कि सर्वे के मुताबिक 5 में एक बच्चे को खाना देने का मतलब है। कि आवश्यक न्यूट्रीशियन नहीं मिल पा रहा है फिर यह योजना तो असफल रहेगी ही, लेकिन दलालों और भ्रष्टाचारियों की सफलता के बल्ले –बल्ले है।

मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम के अंतर्गत सप्ताह में एक दिन फल का वितरण होना चाहिए। बच्चो को वहीं भोजन मिलना चाहिए जो उनके लिए पोषक हो। गरीब बच्चों को स्कूल में ही पोषक भोजन प्राप्त हो पाता है। तो उनके हित के लिए सप्ताह में एक दिन दूध, फल, का भी वितरण किया जाना चाहिए। स्कूल में जो शिक्षक है वो गैर जिम्मेदाराना रवैया से भी सकारात्मक प्रभाव नही दिखाई दे रहे हैं और गांवों के स्कूल पिछड़ते जा रहे हैं सिर्फ कागजों में ही घोड़े दौड़ रहे हैं शिक्षक बच्चों के भविष्य के साथ खिलवाड़ कर रहे है ऐसे शिक्षकों पर सख्त कार्यवाही की जाए। चाहे शहर का बच्चा हो चाहे गॅाव का सभी को एक सामान शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए।

इस योजना को अब तक कम्प्यूटर प्राइस इंडेक्स से भी नहीं जोड़ा गया है। अतएव केन्द्र सरकार व विपक्ष की मिड डे मील पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है साथ ही प्रत्येक छात्र को पौष्टिक आहार मिल सके इसलिए अधिक बजट आवंटित किया जाए। यह कहना अतिश्योक्ति होगी कि इस योजना को बंद कर दिया जाए क्योंकि भूख मिटाने को एक निवाला ही बहुत है। कम से कम कुछ गरीब बच्चों को भोजन तो मिल ही रहा है, किन्तु देश की भलाई इसी में है कि अच्छे भोजन के साथ अच्छी शिक्षा मिले तो अभी भी समय है समाज को जागरूक हो जाना चाहिए। वो बच्चों की पढ़ाई में मदद करे और स्कूल की व्यवस्था तथा अध्यापकों की तरफ सी सी टीवी कैमरे की तरह नजर रखों।

मिड डे मील की व्यवस्था में समुदाय के लोगों का शामिल होना बहुत जरूरी है इसके तहत बच्चों के अभिभावकों की समिति बननी चाहिए इसे स्कूल प्रबंधक समिति भी कहते है। इसे स्कूल में बनने वाले भोजन और वहां हो रही पढ़ाई की निगरानी का अधिकार होता है। और यदि अभिभावकों के अनुसार कुछ गलत है तो अध्यापकों को सुझाव भी दे सकती है। मिड डे मील योजना का कार्य को देखने के लिए एक विशेष व्यक्ति की नियुक्ति करना चाहिए क्योंकि यह रोजमर्रा का कार्य है क्योंकि यह व्यवस्था शिक्षकों को दी जाएगी तो बच्चों की पढ़ाई पर असर पड़ेगा।

The Economic Survey, the Government of India, New Delhi, 2002-2003. The Five-Year Plans, the Planning Commission, Government of India, New Delhi.

Guidelines of National Program of Nutritional Support to Primary Education or MidDay Meal Scheme- 1993, 2004, and 2006. Department of Elementary Education and Literacy, Government of India, New Delhi.

India Country Report on the ‘onvention on the Rights of the Child, Government of India, 1997.

Non Performing Assets Management (A Study Of Public ~~Sector Banks~~ In Madhya Pradesh)

Author

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Mrs. Mona Jain
Assistant Professor In Management, Shri Ram Institute Of Technology, Jabalpur (M.P.)

INTRODUCTION :- The Indian history of Banking industry provides evidences, that the policy of nationalization of banks in India has undoubtedly contributed in the economic development of the country and banking has reached as a financial service to the rural areas too in India, but at the same time objectives of socialism and government policy has taken nationalized banks in the clutch of a lot many problems. Above all, debts raised by banks in Priority and Non Priority Sectors were converting into Non Performing Assets (NPAs) in a rapid manner and reached beyond the acceptable limits specified by Reserve Bank of India (RBI) from time to time. The financial performance of the bankers also did not show optimistic results and operational efficiency of bankers, in relation to realizing debts declined rapidly and became a matter of concern for the bankers. There were many hurdles in the recovery of loans and NPA recovery was also a challenging task for the bank management because the banker loan recoveries were a subject matter of a legal process, which was lacking a prompt system of finalizing such cases of recovery and data of pending cases in Tribunal Courts for recovery were increasing day by day. There was a long awaited demand for having separate judicial system and a law structure which could expedite recoveries to the bankers. Hence, having incremental NPAs became a prime challenge for the bankers to recover.

In India, it was within the command and control of the government to control the Nationalized Banks through RBI and the Ministry of Finance. The statistics of growth and development of banks in India were promising quantitatively, but at the same time the quality aspect of banking deteriorated and under the influence of strong unionism the Nationalized Banks failed to adopt global quality and standard of banking in India.[1]Even banking standard norms were broken, especially the ratio between lending and recovery was found unbridgeable. The customer services were deteriorated to the extent that the customer started realizing that there should be a banking system, which assures acknowledgement of customers and quality of services. Under World Trade Organization (WTO) Accord 1990- 1991, economic reforms led to the support and analysis of the bankers performance in the light of services and debt management.[2] Various bank committees such as Tandon Committee, Maheshwari Committee, Chore Committee etc. recommended from time to time, that the Indian Nationalized Banks must rationalize their lending strategies and follow the norms suggested for Non Performing Assets management. From 1991 onwards, economic rationales and financial sector reforms allowed the private sector to enter into banking sector and compete with the public sector, to ensure quality services to the customers and the investors. The emergence of the concept of profitable banking gave importance to Non Performing Assets management and its related issues. It was observed between 1982 to 1996 that Non Performing Assets structure of the Indian banks was becoming more complicated, the volumes of Non Performing Assets was increasing significantly, which was resulting in the dilution of financial health of the banks in India and at the same time issues were raised that how Non Performing Assets of Public Sector Banks can be brought to its ideal and minimal level. The RBI policies and the government strategies in this regard brought significant policy and legal support in favor of Indian banking. Out of the absolute banking operations, the management of Non Performing Assets emerged as an important function of the bank management.

It was observed that the existing loan recovery system and process were time taking and on the other hand the available legal environment and the different Act provisions were not supporting to bankers in their debt recoveries and the legal processing path were further allowing

defaulters to manage to carry cases up to the High Court and the Supreme Court.[3] Therefore the bankers were deprived off any amount quickly from outstanding. The voice was raised on various platforms by the bankers that there should be a legal support to banks in the recovery of NPA and the government also realized that until and unless a separate Act was established for enabling courts, giving the recovery rights / seizing rights must exist for bankers. Finally after analyzing various committee reports, the Ministry of Finance in collaboration with the Ministry of Law brought Securitization and Reconstruction of Financial Assets and Enforcement of Security Interest (SARFAESI) Act for the approval of the Parliament. It was realized that (SARFAESI Act) will not only safeguard the interest of the bankers but also enable them in realizing debts quickly. The SARFAESI Act also provided many legal remedies to loanees and defaulters but finally it appears to be an Act that strengthened banks in recovering their NPAS.[4] There were always many issues raised by the legal experts, by the officials of banks and the loanees as issues which were contemporary in nature but the emergence of SARFAESI Act undoubtedly supported the bank loan recovery system.

KEY WORDS :- Banks, Non Performing Assets, Credit Creation, Assets, Liquidity.

CONCEPTUAL FRAMEWORK OF NON PERFORMING ASSETS (NPA) :- The banks in their books have different kind of assets such as cash in hand balances with other banks, investment loans and advances, fixed assets and other assets. The Non Performing Assets (NPA) concept is restricted to loans, advances and investments. As long as an asset generates the income expected from it and does not disclose any unusual risk other than normal commercial risk, it is treated as Performing Assets, and when it fails to generate the expected income it becomes a Non Performing Assets. It other words, a loan asset becomes a NPA when it ceases to generate income, i.e. interest, fee, commission or any other due for the bank for more than 90 days.[5] The Non Performing Assets are also called Non Performing loans. Therefore, NPA can be defined as a debt obligation where the borrower has not paid any previously agreed upon interest and principal repayments to the lender for an extended period of time.

The Banks are urged to ensure that while granting loans and advances, realistic repayment schedules may be fixed on the basis of cash flows with the borrowers. This would go a long way to facilitate prompt repayment by the borrowers / loanees and thus improve the record of recovery in advances.[6] The RBI has further advised the banks that the non performing assets should be identified and it should be further ensured by the banks that the interest on such assets in not recognized as income and taken to the profit and loss account. The banks are required to recognize their income on accrual basis in respect of income on performing assets and on cash basis in respect of income on non-performing assets. [6]Further any interest accrued and credited to the income account should be cancelled by a reserve entry as soon as the credit facility comes under the non performing assets category.[7]

MANAGEMENT OF NPAs :- In the light of facts that Public Sector Bank (PSBs) were observing increasing NPAs in the Priority Sector as well as the Non Priority Sectors, there were many fold reasons which were responsible for the increasing NPAs in PSBs and somewhere the effects of management problems and the handling issues of the bankers.[8] The increasing cases for recovery and the pendency of the cases have also become the eye catching issues and there was a need of identifying and synchronizing the issues on their merits to determine the causes, effects and to establish the concluding remarks for NPA Management in PSBs.

Management of NPAs in a difficult task in practices. The NPA demon is eating away the Indian economy slowly and steadily as it is making the credit costly and scarce. Unless it is managed effectively and quickly, it will mar the economic development of the country. The Economic survey 2014 has observed that the deteriorating asset. The preventive measures for NPA undertaken by banks are: Early Recognition of the Problem, Focus

on cash flows, Identification of borrowers intent, Management effectiveness, timeliness and adequacy of response.[9] It is therefore important for all the concerned to understand the causes and consequences of rising NPA and accordingly take curative measures urgently so as to manage NPA at a minimum level.

BANKING IN MADHYA PRADESH :- Madhya Pradesh being an Agriculture dominant State, the banks share of lending to Agriculture sector is more than 30%. The farming community has played a key role in boosting the State's economy for decades. The banking channel is a useful tool and has been used extensively to support the financial delivery system. For filling the gap created by slowdown in overall credit and saturation level to production credit in Agriculture, Government of India has issued guidelines to allocate 30% of funds of Agriculture Sector towards Investment Credit. In Madhya Pradesh also we have been able to nearly match the level by allocating Rs. 19316 crores for Investment Credit to agriculture and Rs. 47871 crores for crop loans out of a total of Rs. 67187 Crore for Agriculture, which comes to around 29% for Investment Credit and 71% for Crop Loans.[10]

The M.P. State Government consolidated their various employment generation schemes run by various departments and launched three new schemes namely, Mukhya Mantri Arthik Kalyan Yojana for loan requirement up to Rs. 20000/-, Mukhya Mantri Swarojgar Yojana for loan requirement of above Rs. 20000 and upto Rs. 10.00 Lakhs and Mukhya Mantri Yuva Udyami Youjana for loan amount more than Rs. 10.00 Lakh and upto Rs. 1.0 Crore. A number of incentives like interest subsidy, margin money support and reimbursement of premium for CGTMSE coverage have made these schemes very attractive and a large number of beneficiaries got benefitted in the State resulting a handsome credit delivery under MSE sector thereby generating employment opportunities to the skilled and unskilled youth of the State. This will act as driver towards achieving prosperity and growth of economy in the State. The Chief Minister Rural Housing Mission is a flagship scheme of Government of M.P. targeted towards the residents not having pucca house. Bank Finance for more than 4.5 lakh houses have been made under the scheme wherein the State Government contributes 50% of EMI during the entire repayment period.

Madhya Pradesh been a developing state is basically an agricultural important state. The number of banks in the state are 6953 out of which PSBs are 2950 and out of this 2950, 1088 are urban branches, 889 are semi urban branches and 973 are rural branches. Total 21 PSBs are operating in M.P., of which Central Bank of India and Bank of Baroda has the largest number of branches 467 and 422 respectively. This shows a significant geographical distribution of nationalized banks in M.P. whereas State Bank of India has 1087 branches almost 45% of Nationalized Banks and these two jointly represent more than 50% branches in the state. State Bank of India has proportionately equal number of branches in rural, semi urban and urban areas of the state.[11]

With the network of 4037 (2950+1087)of PSBs in M.P. ,2473606 credit accounts are operated through which a credit worth Rs 572741524 is released in which about 50% are released in agriculture and allied sector through direct and indirect finances and the remaining finances are given for MSEs, Education and Housing Occupation under Priority Sector. The above is a significant contribution of PSBs in M.P.

AN ANALYSIS OF NON-PERFORMING ASSETS (NPA) OF BANKS IN MADHYA PRADESH :- In M.P. the bad loans of public sector banks have touched an alarming level and an-out effort is needed to arrest such alarming condition. The Public sector banks in the State are saddled with huge amounts of bad debts and their gross NPAs stood at Rs. 6036 crores at the half year end of September 2015 and reached to around 4% of total advances. NPA of private sector banks is comparatively low and have 1.11 of the total advances.

ACHIEVEMENTS UNDER ANNUAL CREDIT PLAN IN M.P. (2013-15)

TABLE 1

ANNUAL CREDIT PLAN BY PUBLIC SECTOR BANKS IN MP.

(ACP 2013-14) (Amt. in Crore)

S. No.	SECTOR	SUB-SECTOR	PERFORMANCE UNDER ACP 2013-14				
			NUMBER OF A/Cs		AMOUNT IN CRORES		% ACHIEVEMENT (Amt.)
			TARGET	ACHIEV.	TARGET	ACHIEV.	
1	PRIORITY	AGRI & ALLIED-DIRECT	3333873	2963276	40150	40628	101
2		AGRI & ALLIED-INDIRECT	212177	23953	1516	2990	197
3		TOTAL AGRICULTURE & ALLIED	3546050	2987229	41666	43618	105
4		MSE	282899	148484	7708	7181	93
5		EDUCATION	16822	15461	919	571	62
6		HOUSING	93157	199267	2232	4160	186
7		OTHERS	184912	41469	3145	368	12
8		SUB TOTAL (5+6+7)	294891	256197	6296	5099	81
9		TOTAL PRIORITY SECTOR = 3 + 8	4123840	3391910	55670	55898	100
10	NON PRIORITY	HEAVY INDUSTRIES	7	1899	235	452	192
11		MEDIUM INDUSTIRES	62	290	260	1013	390
12		EDUCATION	185	399	69	21	30
13		HOUSING	199	4797	85	632	743
14		OTHERS	103020	88380	8100	7065	228
15		TOTAL NON PRIORITY SECTOR	103473	95765	3749	9183	245
GRAND TOTAL = (9) + (15)			**4227313**	**3487675**	**59419**	**65081**	**182**

Source: 154 the State Level Bankers' Committee Report, Madhya Pradesh

The PSBs in M.P. have achieved a greater performance in financing to the Non Priority Sector. In heavy industries it targeted Rs 235 crores finance but achieved financing worth Rs 452 crores which is 192% of the target amount (Refer Table 5.45). In medium industries, against the target of 62 accounts for Rs 290 crores, it achieved 260 credit accounts with a finance of

Rs1013 crores, a significant 3.9 times higher achievements. In Educational loans against a target of 185 accounts for Rs 399 crores achievement of PSBs was 69 accounts with Rs 21 crores finances, just one third of the target is achieved. It shows bankers pessimistic approach towards financing for education whereas M.P. Government is targeting higher number of students to be benefitted with this scheme. In Housing Sector banks achieved its target significantly and for other finances PSBs could achieve 2.2 times of their stipulated targets as a whole in Non Priority Sector PSBs could achieve their targets by 1.82 times.

Table 2

COMPARATIVE DATA ON ANNUAL CREDIT PLAN (PRIORITY SECTOR) OVER LAST 3 YEARS (2012-13 TO 2014-15) (Amount in Crores)

Sector	2012-13			2013-14			2014-15			TARGET FOR FY 2015-16
	Target	Ach.	% Ach	Target	Ach.	% Ach	Target	Ach.	% Ach	
AGRICULTURE	32092	31651	99	41666	43618	105	53391	49871	93	67187
MSE	6028	5950	99	7708	7181	93	10197	13823	136	13396
OTHERS	4218	3594	85	6296	5099	81	7359	10934	149	9026
TOTAL PRIORITY SECTOR	42338	41195	97	55670	55898	100	70947	74628	105	89609

Source: 157 the State Level Bankers' Committee Report, Madhya Pradesh

The above table 2 on comparative data of Priority sector targets shows that in M.P. the targets in the sector of priority have been improving since 2012. The target in this sector for the 2012-13 was Rs 42338 crores while the achievement has been 41195 (97%), in the year 2013-14 the achievement has been 100% which is quite good. Further in 2014-15, the target of the priority sector was Rs 70947 crores and the achievement has been Rs 74628 crores, almost 105%, which is significant. Hence it can be seen that in M.P. the banks have been performing well in the Priority sector by achieving the targets significantly well in the area.

TABLE 3

SECTOR WISE NPA IN BANKS IN M.P.

(AS ON SEPTEMBER 2015) Amount in Crores

Sector	Total NPA	Total Outstanding	NPA %
Agriculture	3710	64465	5.76
MSE	2005	27703	7.24
Other Priority Sector	865	26466	3.27
Education Loan	107	1807	5.92
Housing Loan	407	15332	2.65
Priority Sector	6580	118634	5.55

Source: 158 the State Level Bankers' Committee Report, Madhya Pradesh

In Madhya Pradesh PSBs had a mixed experience of NPA. In agriculture sector it incurred 5.76% of NPA, in MSE sector NPA percentage was 7.24, in Education loan NPA was 5.9%, in Housing loan NPA was 2.65%. On an average NPA was 5.55% which is significantly higher as compared to expected 3% (Refer table 5.53).

Recovery Mechanism & BRISC

TABLE 4

REVENUE RECOVERY CERTIFICATE (RRC) STATUS

(FROM 01.04.2015 TO 21.09.2015) (Number in thousand & amount in crore)

Submited By Bank(s)		Forwarded By Their Nodal Dist. Branch(s)		Allotted by District Administration to Revenue Officers		Rejected/Returned By Dist. Admn.		Demand Notices Issues by Revenue Officers		Recovery Received Against Demand Notices		Disposed Off RRC(s) By Dist. Admn.		RRC(s) Pending for Disposal	
No	Amt.	No	Amt.	No	Amt.	No	Amt.	No	Amt.	No	Amt.	No	Amt.	No	Amt.
37	1543	16	319	8	157	0.2	2.65	18	249	0.3	1.88	0.01	0.02	19	248

Source: 158 the State Level Bankers' Committee Report, Madhya Pradesh

In Madhya Pradesh for banks to recover their overdues M.P.Government started a scheme for recovery known as M.P.Lok Dhan Adhiniyam 1987 known as Bank Recovery Incentive Schemes (BRISC), that came into force from 1995. Under this scheme recovery were possible on the basis of Revenue Recovery Certificate (RRC). The Table above shows that recovery of NPAs under this scheme was 50% against the target.

The pile of pending cases at Tehsils is a serious cause of concern. During current FY 37152 cases are filed by banks involving Rs. 1543 crores. (Refer Table 5.54). 18616 cases are pending at tehsils. These statistics serve as a reminder that while the Government and the banking regulator are moving towards stronger debt recovery rules, the process of actual loan recovery remains a slow grind. The Government should take necessary steps to activate the mechanism for recovery of dues.

In M.P. bankers have been financing weaker section directly and also in directly through various intermediately through various intermediary organization such as NULM, SHG, SRMS, Antyavyasai etc. The contribution of various social welfare organizations and their role as bridging component between needy from weaker section and the respective PSBs and other banks. Some PSBs like Central Bank of India, UCO Bank, Bank of India are those banks who have channalized funds through various social support organizations largely. But still the role of some social organizations is not upto the mark. They need to be involved more for spreading credits into weaker section of the society. there has been a trend of increase of NPA account in many of PSBs in M.P., like Allahabad Bank, Bank of Maharashtra and Central Bank of India are some banks that have observed increasing bad debts on the other side and in total also the trend is on an average towards the increasing side. This shows weakness in NPA management process and administration in banks. Similar trends is observed in SBI Group banks also a number of 184 bad debts account in 2010-11 has increased to 87189 in 2015-16 in SBI.

Hence a necessity is felt, to regulate and control the occurrence of NPAs through systematic management of credit accounts and prudence and governance on part of the PSBs is required, so that NPAs can be minimized in the banking sector in M.P.

CONCLUSION :- It is also observed that as the PSBs in M.P. are not offering financing schemes needed to the rural society hence the rural society is not interested in becoming a part of Financial Inclusion. The loans and credits in consumable loan category are matching to the needs of the urban society, but not for the rural segment. Hence there is a need of different structure of financing schemes for rural masses in M.P. It is observed that there is a gap between rural masses and bank officials for lending and borrowing understanding. The practices and process that are adopted by the bankers are tiring and seems to be needing more paper work and documentation. Therefore with the increasing branches of banks in the rural areas of the state of M.P. even today there is a sound existence of private money lenders or non banking money lending organizations, who on the basis of the goodwill and personal contacts, lend to the rural population. It is seen that the close ended association are lacking. Hence many bonzy investment schemes are popularly marketed by private unauthorized financial agencies in the rural areas of the state. There is a need of confidence of rural people to convey them that banks are for them.

In PSBs in M.P., a necessity is felt, to regulate and control the occurrence of NPAs through systematic management of credit accounts and governance on part of the PSBs is required, so that NPAs can be optimized and brought to minimal levels.

REFERENCES :-

1. Aggarwal, S and Mittal, P (2012), **"Non-Performing Asset: Comparative Position of Public and Private Sector Banks in India",** International Journal of Business and Management Tomorrow, Vol. 2, NO.1, 2012.
2. Ahmed, JU (2010), **An Empirical Estimation of Loan Recovery and Asset Quality of Commercial Banks**, The NEHU Journal, Vol. 8, No.1.
3. Ahtialan, P (2005**), The New Theory of Commercial Banking and Bank Lending Behavior**, Scottish Journal of Political Economy, Vol. 52, No.5, November 2005.
4. Anup Roy, A and Rebello, J (2011), **SBI to crack whip on willful defaulters to pare bad debts**, The Wall Street Journal [Online], URL: www.livemint.com.Basak, A (2009), **Performance Appraisal of Urban Cooperative Banks:** A Case Study, The ICFAI University Journal of Accounting Research, Vol. 8, No.1, January 2009.
5. Chaudhary, K and Sharma, M (2011), **Performance of Indian Public Sector Banks and Private Sector Banks: A comparative Study,** International Journal of Innovation, Management and Technology, Vol.2, No.3, June 2011.
6. Chaudhary, S and Singh, S (2012), **Impact of Reforms on the Asset Quality in Indian Banking**, International Journal of Multidisciplinary Research, Vol.2 Issue 1, January 2012.
7. Chijoriga, MM (2000), **The Interrelationship Between Bank Failure and Political Interventions in Tanzania in the Pre-Liberalization Period,** African Journal of Finance and Management Vol.9(1) 2000.
8. Chipalkatti, N and Rishi, M (2007), **Do Indian Bank understate their bad loans, The Journal of Developing Areas,** Volume 40, Number 2, Spring 2007.
9. Goyal, K.A and Joshi, V. (2012), **Indian Banking Industry: Challenges and Opportunities**, International Journal of Business Research and Management (IJBRM), Vol. 3 (1)
10. Jayasree, M and Radhika, R (2011), **Non Performing Assets: A study of Scheduled Commercial Banks in India**, International Journal of Research in Commerce, Economics and Management, Vol.No.1 (2011), Issue No.1
11. John, K and Thomas, T (2006), **Non Performing Assets in the Indian Banking Sector: A Study of Recovery through DRTs**, Journal of Banking Finance, November 2006.

12. Kaurnakar, M. Vasuki, K and Saravanan, S (2008), **Are Non-Performing Assets Gloomy or Greedy from Indian Perspective**?,
13. Pandey, V.K. and Kaur, H. (2012**), NPA in Banking Sector: Some Correlational Evidenc**e, Asian Journal of Research in Banking and Finance, Vol.2, Issue 5.
14. Poongavanam, S (2011), **Non Performing Assets: Issues, Cause and remedial solution,** Asian Journal of Management Research, Vol.2, Issue-1`.
15. Prasad, V.B. and Veena, D. (2011), **NPAs Reduction Strategies for Commercial Banks in India,** International Journal of Management & Business Studies, Vol.1, Issue-3.
16. Rajendar, K (2009), **Management of Non Performing Assets in Public Sector Banks,** The Indian Journal of Commerce, Vol. 62, January-March 2009.
17. Rajendar, K and Suresh, S (2007), **Management of NPAs in Indian Banking – A case of State Bank of Hyderabad**, Journal of Management Accountant, September 2007.
18. Rao, V.K. (2004), **Management of Non Performing Assets in Commercial Banks,** Journal of Banking Finance, February 2004.
19. Reddy, BK, Babu, PP. Mallikarjuna, V and Viswanath, P (2006), **Non Performing Asset in Public Sector Banks: An Investiation**. The IUP Journal of Financial Economics, Issue-1, Vol.4.

Employment Generation by Bamboo Resource Development and its impact on rural Communities

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 3 Jan. 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED, Peer Reviewed & Refereed Research Journal)

Shivangi Dwivedi
MBA, Research scholar, G.S. College. Jabalpur

Abstract :- Bamboo is an important resource in our socio-economic and cultural context. It is a fast growing, widespread, renewable, versatile and environment-enhancing resource. Apart from its traditional uses, bamboo has new applications as an alternative to depleting wood resources and as an option to expensive construction and furnishing materials. Bamboo resource development will help employment generation, and sustainable livelihoods in rural communities.Bamboo stands as an ideal species capable of achieving conservation of soil and moisture, restoration of degraded land, livelihood and economic security because of its manifold uses and industrial applications.

Policy initiatives are required in all inter-related fields of plantation, research and extension, technology, industry, trade and financing. Bamboos occupy 8.90 million ha of forest lands in India. Sporadic clumps are available in agricultural lands, homesteads etc. Though 135 species of bamboos, including some exotics are available, only three species constitute 78% of the natural growing stock.Dendrocalamus strictus accounts for 45% of the growing stock and occupies deciduous zones throughout India. Melocanna bambusoides is 20% of the total stock and is limited to North-eastern states. Bambusa bambos is the large thorny bamboo of the moist deciduous forests and accounts for 13% of the stock.

BACKGROUND :- Bamboo deserves to be developed as an economic and environment resource. Other species of commercial importance are Ochlandra travancorica of the wet Western ghats, Dendrocalamus hamiltonii, Bambusa tulda, B.pallida ,B.nutans in the northeastern parts and Oxytenathra species in western India. Bamboos have rural, domestic and industrial uses enabling it to play a vital role in economy and manpower generation. Various aspects of manpower generation in raising bamboos, their maintenance, harvest, transport, storage and end uses have been studied and quantified. It is possible to increase bamboo production and enhance its uses for higher economic returns to the country. Bamboo has a long and well established tradition for being used as a construction material throughout the tropical and sub-tropical regions of the world. With rising global concern, bamboo is a critical resource which is efficient in sequestering carbon and reduction of Green House gas emissions. With forest cover fast depleting and availability of wood becoming scarce, the research and development undertaken in the past few decades have stablished and amply demonstrated that bamboo could be a viable substitute for wood and other traditional materials for the housing and building construction sector and several infrastructure works. Its uses through industrial processing have shown a high potential for production of composite materials and components which are cost-effective and can be successfully utilised for structural and non-structural applications. It has a high tensile strength and very good weight to strength ratio. The strength-weight ratio of bamboo also supports its use as a highly resilient material against forces created by high velocity winds and earthquakes. Above all, bamboo is a renewable raw material resource from agro-forestry and if properly treated and industrially processed, components made by bamboo can have a life of 30 to 40 years though natural durability.

Applications in building construction have established bamboo as an environment-friendly, energy-efficient and cost-effective material. The commonly used species in construction are Bambusa balcooa, Bambusa bambos, Bambusa tulda, Dendrocalamus giganteous, Dendrocalamus hamiltonii and Dendrocalamus asper. A number of small and medium sized demonstration structures have already been constructed in the last few years. These have shown very good performance in

different climates. To extend this, awareness and confidence building amongst professionals and householders is required. This calls for organized actions on prototyping, demonstration and standardization aimed at improving acceptance levels and promoting appropriate construction practices.Distribution of Species Clump-forming bamboos are 67.3% of the total growing stock. Dendrocalamus strictus comprise 45%, Bambusa bambos 13% D.hamiltonii 7%, B.tulda 5%, B.pallida 4% and all other species 6% of the total growing stock.

Harvests and Yields :- The total growing stock as assessed in the forest areas by the Forest Survey of India is 80.42 million tonnes. The share of clump forming bamboos is 67.3%. The average growing stock is nearly 10 tonnes per ha. Being tall and larger in diameter, a Bambusa bambos has higher growing stock per unit area and higher yield. There are moist valleys which contain over 100 clumps of this species per ha and the total green weight of each clump is in excess of one tonne. The estimated annual harvest from recorded sources is 4.5 million tonne, about 5.9% of the growing stock. There are removals from unrecorded sources estimated at half the quantity of removals by recorded sources. The current yield of about 0.5 tonne per ha is too low due to improper management.Bamboos receive protection only in national parks and core zones of wildlife sanctuaries. Out of 70 national parks and sanctuaries covering about 34,700 sq. kms, 31 protected areas covering 13,400 Sq.kms contain bamboos. There is good protection for them in national parks and sanctuaries, though some fire and damage by wildlife is natural. There are 417 wildlife sanctuaries in India covering about 1,09,500 sq.kms. Approximately 50% of this area is bamboo forest and the core areas get legal protection. The total area receiving protection comes to about 4% of geographical area i.e. about 20% of the forest area. These protected areas should be of immense value for future conservation of bamboos in terms of bamboo biodiversity. Utilization eleven states and B.bambos is distributed widely in moist deciduous forests. Arundinaria and Chimonobambusa are two genera found in high altitudes in the hills of Western ghats and outer Himalayas. Ochlandra travancorica in Kerala, Oxytenanathra sp .in costal Karnataka, Goa and Maharashtra are the other commercially important species. A total of 135 species are reported in India.

Non-Industrial uses :- Bamboos occupy pride of place in the life of villagers in India literally from "cradle to coffin". They are a readily available material for fencing of agricultural lands,
Melcocanna bambu
compounds and homesteads. Different kinds to protect fields from cattle are in use. Thorny bamboos, cut together with their long branches and twigs, are carefully laid along boundaries, or the culms are split and woven or tied to bamboo posts in different shapes and styles to make effective fencing. Bamboos are used for making agricultural implements like tool handles, ladders, etc. Whole or split bamboos are used as posts, beams, rafters and scaffolding in housing. Bamboo splits or slivers are woven into baskets and used for grain silos, walling, partitions, ceiling, bridges and railings. They are used to make hand-fans, spears, bows, arrows, core of incense sticks, umbrellas, kites, toys .large number of handicraft items. Woven bamboo, in different shapes and forms, is put to extensive use in sericulture. It is employed in fishing, cages for poultry, packaging, transport and drying of grains, fruits and seeds. Flutes and other musical instruments made from bamboos are quite common in India. Hindus carry their dead for cremation on a bamboo bier. Soil and water conservation efforts also find bamboo a useful ally.

Industrial uses :- The bulk use of bamboo in industry is for the manufacture of paper pulp and rayon-grade pulp. Slivers of bamboo are woven into mats for use in the manufacture of bamboo mat boards. The woven bamboo is also employed as dunnage in storage of food grains, and drying of grains, sugar etc. in rice and sugar mills. Mat boards, strip boards, corrugated roofing sheets etc are increasingly being manufactured for use in housing and joinery. Significance of Bamboo as a Resource .

1. There are 1250 known species of bamboo, with 1500 possible uses.
2. 2.5 billion people worldwide use bamboo, of which 1 billion people use it for housing.
3. Trade in bamboo generates US $ 4.5 billion.
4. Bamboo provides livelihoods and ecological and food security as well as eco-friendly products.

Bamboo Resources Development :-

1-Inventory of resource.
2-Development of plant propagation facility.
3-Development and conservation of resources.
4-Capacity building and technology transfer.
5-Research and Extension.
6-Institutional development.
7-Policy intervention
8-Funding Bamboo as Building Material.
9-Civil Eng. material for construction of houses as per BIS/ISI specification for building code, CPWD/PWD designs.
10-Extraction and preservation of bamboo.
11-Display of engineering materials. Preservation techniques standardized.
12-Improved design of houses to be adopted, encouraged and promoted Bamboo marketing
13-Scope of value addition Bamboo Handicrafts - Proposed Interventions - New/ Innovative uses of Bamboo.
14-Industrial Products like Bamboo Ply, Bamboo Corrugated Sheets, Bamboo Tiles, Other Laminated Bamboo Products, Paper pulp etc.
15-Food Products like Bamboo Shoots, Bamboo Beer, Charcoal, etc.

Conclusion :- If enough emphasis is given to Bamboo Resource Development, we can help the below-poverty-line families in rural communities. Bamboo and bamboo-based secondary product trading is a profitable business in rural regions and a potential sector of employment generation. Bamboo is used extensively by local communities International Journal of Rural Studies. and plays an important role in subsistence strategies for many rural populations. Bamboo enterprises are continuously sustaining the national economy through providing employment opportunities for rural people, including raw material collection, processing and marketing. The analysis reported here indicates that small-scale bamboo-based enterprises could be developed more widely throughout the rural areas for socioeconomic development. Natural bamboo stocks must be utilized on a sustainable basis. Their cultivation on encroached forest land and revenue land should be expanded. Government and NGOs can work with enterprises by encouraging them to manufacture secondary products and promote them in urban markets. The present loan approval procedure, conditions and interest rates also need to be revised and made more flexible to support entrepreneurs.The forest administration can play a vital role in improving existing growing stock and yields and expanding the area under bamboo by planting higher yielding commercially important species. Establishment of good germ-plasm banks and multiplication facilities of elite stocks for use both in forests and farms can augment supplies to increase the uses of bamboo. Better management, harvesting, grading and preservative practices can lead to higher returns. Bamboo can play a major role in increasing employment potential and improving the rural economy.

Reference :-

1. Parameswaran, N. and Liese, W. 1977. Occurrence of warts in bamboo species. Wood Sci. Technol 11:313-318.
2. McClure, EA. 1966. The Bamboos: A Fresh Perspective. Harvard University Press, London: 347p.
3. Mohanan, C. 1990. Diseases of bamboos in Kerala. In: I. V. Ramanuja Rao, R. Gnanaharan and C.B.
4. Sastry (Eds.) Bamboos: Current Research. Kerala Forest Research Institute, India and International Development Research Centre, Canada: 173- 183.
5. Narayanamurti, D.; Prasad, B.N.; George, J. 1961. Protection of chipboards from fungi and termites. Norsk Skogind. 15(9): 375-376.
6. Rowell, R.M.; Norimoto, M. 1988. Dimensional stability of bamboo particleboards made from acetylated particles. Mokuzai Gakkaishi. 34(7): 627-629.

7. N.S. Adkoli (2008) Chairman, Bamboo Society of India.

[iii] Ashok Alex, Engaging with Iran: Contemporary Challenges to India's Policy, in R.Sidda Goud's, Manisha Mukherjees's (eds.), India and Iran in Contemporary Relations, P76, 2014.
[iv] Fair, C. Christine, Indo-Iranian Relations: What Prospects for Transformation, in Sumit Ganguly's (eds.), India's Foreign Policy: Retrospect and Prospect, P115,2010.
[v] Rajeev Agarwal, Iran's Nuclear Weapons Programme--- How Real is the Threat, in R.Sidda Goud's, Manisha Mukherjees's (eds.), India and Iran in Contemporary Relations, P76, 2014.

[vi] Harash V.Pant, the US India Nuclear Pact: Policy, process, and Great Power Politics, P84, 2011.
[vii] Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, Strategic Analysis, Vol.36, No. 6, Novemebr December, P904, 2012.
[viii] Paul K.Kerr, U.S. Nuclear Cooperation with India: Issues for Congress, CRS Report, 30 July 2008, p. 8, at http://fpc.state.gov/committees/intlrel/hfa23323_of.htm.
[ix] Harash V. Pant, The US India Nuclear Pact, no iv. P84, 2011.
[x] Ibid.
[xi] Iran-Pakistan -India Gas Pipeline, at http://www.Gulfoilandgas.com/webprol/projects/3dreport.asp?id=100730
[xii]Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, P 906, 2012.
[xiii]Harash V.Pant, the US India Nuclear Pact: Policy, process, and Great Power Politics, P83, 2011.
[xiv] Ibid.
[xv] http://www.rbi.org.in/scripts/FAQViews.aspx?Id=50
[xvi] http://www.rbidocs.rbi.org.in/.docs/notification/PDFs/C1271210f.pdf.
[xvii] Uma Purushothaman, American Shadow over India-Iran Relations, P 907, 2012.